INDIA SCIENCE WIRE IN INDIAN MEDIA

SEPTEMBER 2021 / Vol.5 / No. 9

Highlights of India Science Wire (ISW) Stories

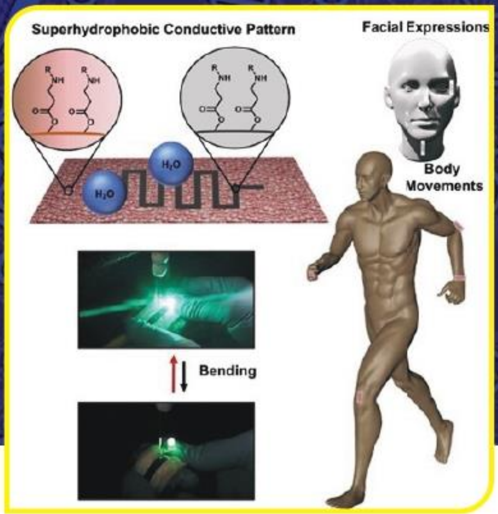

DST@ 1971-2021
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग
DEPARTMENT OF SCIENCE & TECHNOLOGY

वि P V प्र
VIGYAN PRASAR

India Science Wire - highlighting Indian science in Indian media

The coverage of science and technology particularly relating to research done in Indian research institutions, is generally very poor in Indian media. There are several reasons for this situation, one of them being the lack of credible and relevant science content. In order to bridge this gap, Vigyan Prasar launched a unique initiative - India Science Wire (ISW) – in January 2017.

The news service is dedicated to developments in Indian research laboratories, universities and academic institutions. Almost all news stories released by this service are based on research papers by Indian scientists published in leading Indian and foreign journals. All news stories and features are written and edited by a team of professional science journalists with decades of experience in science journalism.

News stories based on happenings in Indian research labs are released to media houses on a daily basis. These stories are also uploaded on ISW website and are simultaneously promoted though social media – Twitter and Facebook. At present, the service is available in English and Hindi.

Reach out ISW Editor with story ideas, comments and suggestions at indiasciencewire@gmail.com

ISW website: http://vigyanprasar.gov.in/isw/isw.htm

ISW stories released and published in September 2021

S. No.	Story title	Date of release	Name of the writer
1.	‘समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें’	Sep 01	Ramanshi Mishra
2.	डीएसटी की पहली महिला सचिव बनीं डॉ रेणु स्वरूप	Sep 01	Umashankar Mishra
3.	“स्टार्टअप तक सक्रिय तौर पर पहुँचे - प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड”	Sep 02	Umashankar Mishra
4.	A new technique to help avoid sudden power shutdowns	Sep 02	Sunderarajan Padmanabhan
5.	CFTRI to conduct online training on innovative & healthy snacks	Sep 02	Umashankar Mishra
6.	Innovations and startups must be discovered and supported: Dr. Jitendra Singh	Sep 02	Umashankar Mishra
7.	DCGI approves advanced trials for Biological E. Limited’s COVID- 19 vaccine	Sep 03	Sunderarajan Padmanabhan
8.	MoU to build academic excellence and R&D capacity	Sep 03	Sunderarajan Padmanabhan
9.	New mechanized scavenging system to tackle diverse sewerage chokages	Sep 03	Umashankar Mishra
10.	Scientists develop device to grow microorganisms in outer space	Sep 03	Sunderarajan Padmanabhan
11.	अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण	Sep 03	Umashankar Mishra
12.	शैक्षणिक उत्कृष्टता और शोध विकास क्षमता बढाने के लिए नई साझेदारी	Sep 03	Ramanshi Mishra
13.	Researchers sequence genome of	Sep 06	Sunderarajan Padmanabhan

S. No.	Story title	Date of release	Name of the writer
	herb, Giloy		
14.	चींटी के फौलादी दाँतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा	Sep 06	Umashankar Mishra
15.	शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना 'वायुशोधक-'	Sep 06	Ramanshi Mishra
16.	दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर	Sep 07	Umashankar Mishra
17.	प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेड-:एसिड बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रण अध्ययन	Sep 07	Ramanshi Mishra
18.	Study establishes relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability	Sep 08	Sunderarajan Padmanabhan
19.	थार मरुस्थल के संरक्षण के लिए आईआईटी जोधपुर की पहल	Sep 09	Ramanshi Mishra
20.	भारत में बढ़ रहा है गर्म हवाओं का प्रकोप	Sep 09	Ramanshi Mishra
21.	"मजबूत अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक है अन्वेषण उन्मुखी शिक्षा"	Sep 09	Umashankar Mishra
22.	'DESIGNS' to conserve and restore Thar desert	Sep 10	Sunderarajan Padmanabhan
23.	New nano-composite to beat antimicrobial resistance	Sep 10	Sunderarajan Padmanabhan
24.	कपड़ा उद्योग से निकले दूषित जल के शोधन की नयी तकनीक विकसित	Sep 10	Ramanshi Mishra
25.	बैक्टीरियल बायोफिल्म के विरुद्ध शोधकर्ताओं ने विकसित किया ग्राफीन नैनोकम्पोजिट-	Sep 10	Umashankar Mishra
26.	CSIR lab transfers know-how for new COVID-19 testing technique	Sep 13	Sunderarajan Padmanabhan

S. No.	Story title	Date of release	Name of the writer
27.	IIT Delhi to start bachelor of design from next session	Sep 13	Umashankar Mishra
28.	New study to help develop salt-tolerant plants	Sep 13	Sunderarajan Padmanabhan
29.	शोधकर्ताओं ने ड्रैगन फ्रूट को बताया सुपरफूड-	Sep 13	Umashankar Mishra
30.	India’s space sector offers huge scope for foreign companies to tie up with Indian companies: Dr. K. Sivan	Sep 14	Umashankar Mishra
31.	मधुमक्खी के छत्ते की अनुकृति आधारित ध्वनिअवशोषक तकनीक विकसित-	Sep 14	Ramanshi Mishra
32.	स्कूली छात्रों में रचनात्मकता और मौलिकता के विकास के लिए ‘एकलव्य’	Sep 14	Umashankar Mishra
33.	फलों को खराब होने से बचाएगा मिश्रित कागज से बना रैपर	Sep 15	Umashankar Mishra
34.	हेडेरा की गवर्निंग काउंसिल में शामिल हुआ आईआईटी मद्रास	Sep 15	Ramanshi Mishra
35.	Antiretroviral Therapy effectively reduces HIV deaths: Study	Sep 16	Umashankar Mishra
36.	Researchers develop low-carbon bricks for energy-efficient buildings	Sep 16	Umashankar Mishra
37.	भवन निर्माण से जुड़े कचरे के निस्तारण की नई तकनीक	Sep 16	Ramanshi Mishra
38.	Call for reforms in ease of doing science	Sep 17	Sunderarajan Padmanabhan
39.	Jurassic-age shark’s teeth discovered from Jaisalmer basin	Sep 17	Sunderarajan Padmanabhan
40.	जैसलमेर के रेगिस्तान में मिले जुरासिक-युगीन शार्क के दाँत	Sep 17	Umashankar Mishra

S. No.	Story title	Date of release	Name of the writer
41.	शोधकर्ताओं ने विकसित किया गुणवत्ता वाला पारदर्शी सेरेमिक	Sep 17	Ramanshi Mishra
42.	Researchers develop super-hydrophobic Cotton for oil-spill cleanup	Sep 20	Umashankar Mishra
43.	अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के परीक्षण के लिए नई प्रयोगशाला स्थापित	Sep 20	Umashankar Mishra
44.	New data processing technique to accurately measure soot	Sep 21	Umashankar Mishra
45.	Study to help develop better treatment for blood-related disorders	Sep 21	Sunderarajan Padmanabhan
46.	'अपशिष्ट जल से ऊर्जा बनाने में अधिक सक्षम है पौधाआधारित माइक्रोबियल -फ्यूल सेल': अध्ययन	Sep 21	Ramanshi Mishra
47.	"लिंग निर्धारण तक ही सीमित नहीं है 'वाई क्रोमोसोम' की भूमिका"	Sep 22	Umashankar Mishra
48.	India's rural Job scheme could also help sequester carbon	Sep 23	Sunderarajan Padmanabhan
49.	कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर, बताएगी नई तकनीक	Sep 23	Umashankar Mishra
50.	DBT Institute to help Vietnamese company develop COVID vaccine	Sep 24	Sunderarajan Padmanabhan
51.	Newly devised sensor can detect explosives swiftly	Sep 24	Sunderarajan Padmanabhan
52.	Researchers devise method to tackle COVID-19 PPE waste	Sep 24	Sunderarajan Padmanabhan
53.	व्यावसायिक उत्पादन के लिए हस्तांतरित की गई नई सोलर कुकिंग तकनीक	Sep 24	Ramanshi Mishra
54.	ताज की फीकी पड़ती चमक के पीछे	Sep 27	Umashankar Mishra

S. No.	Story title	Date of release	Name of the writer
	प्रदूषित यमुना अध्ययन :		
55.	विस्फोटकों का तुरंत पता लगाने वाला सेंसर विकसित	Sep 27	Ramanshi Mishra
56.	IIT Delhi launches new online platform to facilitate researchers	Sep 28	Umashankar Mishra
57.	कटहल के छिलके से बने नैनोकम्पोजिट - प्रदूषण-घटा सकते हैं जल	Sep 28	Umashankar Mishra
58.	किसी विद्युतचालक में पुनः शुरू हो - सकता है इलेक्ट्रॉन का अवरुद्ध प्रवाहः अध्ययन	Sep 28	Ramanshi Mishra
59.	A new water repellent material for improved wearable motion sensors	Sep 29	Sunderarajan Padmanabhan
60.	कोर्निया को चोट से होने वाले नुकसान के उपचार के लिए हाइड्रोजेल विकसित	Sep 29	Ramanshi Mishra
61.	तीव्र हो रहा है बृहस्पति के विशालकाय लाल धब्बे में चलने वाला तूफान	Sep 29	Umashankar Mishra
62.	बेहतर वीयरेबल मोशनसेंसर के लिए नई - जलरोधी सामग्री	Sep 30	Umashankar Mishra
63.	सौर ऊर्जा द्वारा स्वच्छ हाइड्रोजन और अमोनिया उत्पादन की राह हुई आसान	Sep 30	Umashankar Mishra

जनसत्ता

'समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें'

आज समूचा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उपजी चुनौतियों से जूझ रहा है।

Written By जनसत्ता ऑनलाइन

Updated: September 2, 2021 9:15:00 am

सांकेतिक फोटो।

आज समूचा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उपजी चुनौतियों से जूझ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के लिए यूँ तो कई कारक जिम्मेदार हैं, पर धरती का तापमान बढ़ाने में अंधाधुंध शहरीकरण और बेतहाशा ऊर्जाखपत वाली इमारतों - की भी बड़ी भूमिका है। इसे लेकर आवश्यक जागरूकता का भी अभाव है। ऐसे में, ऊर्जाखपत की दृष्टी से - मितव्ययी इमारतें आज की बड़ी आवश्यकता है। इस बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज के साथ मिलकर (बीईईपी) स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट-ने इंडो (सीएमएस इंडिया) किया। संयुक्त रूप से एक वेबिनार कार्यक्रम आयोजित

सीएमएस एडवोकेसी की डायरेक्टर अनु आनंद ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स पर मीडिया के सहयोग से आरंभ किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बताते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता लाने के प्रयास को सितम्बर 2019 में शुरू किया गया था। इसके लिए देश के अलगस्तरीय वर्कशॉप का -हिस्सों में राज्य अलग- आयोजन कर लोगों को एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में जानकारी दी गयी। इ ंडो स्विस बिल्डिंग एनर्जी

एफिशिएंसी प्रोजेक्ट की सदस्य वर्णिका प्रकाश ने बताया कि भारत में बीईईपी की शुरुआत वर्ष 2011 में हुई थी।

इस अवसर पर भारत स्थित स्विट्जरलैंड दूतावास में अंतरराष्ट्रीय सहयोग की प्रमुख और काउंसलर डॉ जॉनाथन डेमांज ने एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन द्वारा जलवायु परिवर्तन पर चलाए जा (एसडीसी) वह प्रकृति के रहे ग्लोबल प्रोग्राम पर चर्चा की। उन्होंने कहा कि ऊर्जा का इस प्रकार उपयोग होना चाहिए कि काम भी आ सके और उसे नुकसान न पहुंचाए। इस लिहाज से इमारतों को बनाने में भी ऊर्जा को सही तरह से और कम क्षय के साथ उपयोग किये जाने की विधि पर जोर देने की आवश्यकता है जिस पर हम काम कर रहे हैं। बीईईपी के अंतर्गत बनायीं जाने वाली आवासीय और व्यावसायिक भवनों और इमारतों में 30% तक कम ऊर्जा की खपत करने वाली इमारतों को बनाने में आवश्यक तकनीकी सहयोग किया जा रहा है। इस दौरान उन्होंने कम ऊर्जा की खपत और प्राकृतिक वायु प्रवाह के लिए हवा महल जैसे अनूठे भवनों का उदाहरण भी दिया।

इस कार्यक्रम में ब्यूरो आफ एनर्जी एफिशिएंसी के डायरेक्टर सौरभ दीद्दी ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार के दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि गर्मी से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोकना इस समय की एक बहुत बड़ी आवश्यकता बन गया है। भारत एयर कंडीशनिंग यानी एसी का उपयोग एक सामान्य चलन बन गया है।इससे जहां बिजली की बड़े पैमाने पर खपत होती है वही हाइड्रोफ्लोरोकार्बंस यानी एचएफसी का भारी मात्रा में उत्सर्जन होता है। हमारे गाँव में आज भी घरों को कुछ इस तरह से बनाया जाता है कि वहां एसी की आवशयकता नहीं पड़ती है। शहरों में भी घरों के लिए वह कार्यविधि अपनाई जा सकती है।

कार्यक्रम में आंध्र प्रदेश स्टेट हाउसिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड के प्रबंध निदेशक नारायण भारत गुप्ता ने आंध्र प्रदेश में चल रही बीएलसी स्कीम के तहत इकोफ्रेंडली अफॉर्डेबल हाउसेस के बारे में जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि यह समय हमारे लिए अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाकर ऊर्जा के नए स्रोतों का पता लगाने की है ताकि हम प्रकृति के संरक्षण में सहयोग कर सकें।

इस अवसर पर उपस्थित रहे एनवायर्नमेंटल डिजाइन सलूशन के डायरेक्टर तन्मय तथागत ने कहा कि कोरोना संक्रमण काल के बाद से लोगों की सोच में घर या किसी इमारत को बनाने को लेकर कई तरह से बदलाव आए हैं। इस बदलाव को समझने के लिए हमने एक सर्वे भी किया था जिसके परिणाम काफी आश्चर्यजनक रहे हैं। इसमें घर के अंदर की हवा को बेहतर रखने और रोगजनकों को कम फैलने, मौसम के आधार पर भवन की बेहतर डिजाईन, कम रखरखाव, स्पेस एफिशिएंसी और ग्रीन टेक्नोलॉजी को बढ़ावा देने की बात अधिकतम व्यक्तियों ने की। सौरभ ने बताया कि ऊर्जा की खपत भवनों द्वारा भी होती है इसके बारे में जागरूकता का काफी अभाव है। ऐसे में कम ऊर्जा की खपत वाले भवनों और इमारतों के निर्माण के लिए लोगों तक जानकारी पहुंचना और इसकी स्वीकार्यता ही समय सबसे बड़ी आवश्यकता है।

इंडो स्विस बिल्डिंग-एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट स्विस परिसंघ के विदेश मामलों के संघीय विभाग (बीप) है। इसमें ब्यूरो ऑफ बिजली मंत्रालय के बीच एक संयुक्त उपक्रम/और भारत सरकार के ऊर्जा (पीएफडीए) बिजली मंत्रालय की ओर से अधिकृत क्रियान्वयन एजेंसी है/एनर्जी एफिशिएंसी ऊर्जा, जबकि एफडीएफए की ओर से स्विस एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड को(इंडिया साइंस वायर) ऑपरेशन को यह दायित्व मिला है।-

प्रभासाक्षी

‘समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें’

इंडिया साइंस वायर Sep 04, 2021 10:40

> *सीएमएस एडवोकेसी की डायरेक्टर अनु आनंद ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स पर मीडिया के सहयोग से आरंभ किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बताते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता लाने के प्रयास को सितम्बर 2019 में शुरू किया गया था।*

आज समूचा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उपजी चुनौतियों से जूझ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के लिए यूँ तो कई कारक जिम्मेदार हैं, पर धरती का तापमान बढ़ाने में अंधाधुंध शहरीकरण और बेतहाशा ऊर्जाखपत वाली इमारतों की भी बड़ी भूमिका है। - इसे लेकर आवश्यक जागरूकता का भी अभाव है। ऐसे में, ऊर्जाखपत की दृष्टी से मितव्ययी इमारतें आज की बड़ी - आवश्यकता है। इस बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज स्विस -ने इंडो (सीएमएस इंडिया) के साथ मिलकर संयुक्त रूप से एक वेबिनार कार्यक्रम आयोजित किया। (बीईईपी) बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट

सीएमएस एडवोकेसी की डायरेक्टर अनु आनंद ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स पर मीडिया के सहयोग से आरंभ किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बताते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता लाने के प्रयास को सितम्बर 2019 में शुरू किया गया था। इसके लिए देश के अलगस्तरीय वर्कशॉप का आयोजन कर लोगों को एनर्जी -अलग हिस्सों में राज्य- एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में जानकारी दी गयी। इंडो स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट की सदस्य वर्णिका प्रकाश ने बताया कि भारत में बीईईपी की शुरुआत वर्ष 2011 में हुई थी।

इस अवसर पर भारत स्थित स्विट्जरलैंड दूतावास में अंतरराष्ट्रीय सहयोग की प्रमुख और काउंसलर डॉ जॉनाथन डेमांज ने एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन द्वारा जलवायु परिवर्तन पर चलाए जा रहे ग्लोबल प्रोग्राम पर (एसडीसी) चर्चा की। उन्होंने कहा कि ऊर्जा का इस प्रकार उपयोग होना चाहिए कि वह प्रकृति के काम भी आ सके और उसे नुकसान न पहुंचाए। इस लिहाज से इमारतों को बनाने में भी ऊर्जा को सही तरह से और कम क्षय के साथ उपयोग किये जाने की विधि पर जोर देने की आवश्यकता है जिस पर हम काम कर रहे हैं। बीईईपी के अंतर्गत बनायीं जाने वाली आवासीय और व्यावसायिक भवनों और इमारतों में 30% तक कम ऊर्जा की खपत करने वाली इमारतों को बनाने में आवश्यक तकनीकी सहयोग किया जा रहा है। इस दौरान उन्होंने कम ऊर्जा की खपत और प्राकृतिक वायु प्रवाह के लिए हवा महल जैसे अनूठे भवनों का उदाहरण भी दिया।

इस कार्यक्रम में ब्यूरो आफ एनर्जी एफिशिएंसी के डायरेक्टर सौरभ दीद्दी ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार के दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि गर्मी से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोकना इस समय की एक बहुत बड़ी आवश्यकता बन गया है। भारत एयर कंडीशनिंग यानी एसी का उपयोग एक सामान्य चलन बन गया है। इससे जहां बिजली की बड़े पैमाने पर खपत होती है वही हाइड्रोफ्लोरोकार्बंस यानी एचएफसी का भारी मात्रा में उत्सर्जन होता है। हमारे गाँव में आज भी घरों को कुछ इस तरह से बनाया जाता है कि वहां एसी की आवशयकता नहीं पड़ती है। शहरों में भी घरों के लिए वह कार्यविधि अपनाई जा सकती है।

कार्यक्रम में आंध्र प्रदेश स्टेट हाउसिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड के प्रबंध निदेशक नारायण भारत गुप्ता ने आंध्र प्रदेश में चल रही बीएलसी स्कीम के तहत इकोफ्रेंडली अफॉर्डेबल हाउसेस के बारे में जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि यह समय हमारे लिए अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाकर ऊर्जा के नए स्रोतों का पता लगाने की है ताकि हम प्रकृति के संरक्षण में सहयोग कर सकें।

इस अवसर पर उपस्थित रहे एनवायर्नमेंटल डिजाइन सलूशन के डायरेक्टर तन्मय तथागत ने कहा कि कोरोना संक्रमण काल के बाद से लोगों की सोच में घर या किसी इमारत को बनाने को लेकर कई तरह से बदलाव आए हैं। इस बदलाव को समझने के लिए हमने एक सर्वे भी किया था जिसके परिणाम काफी आश्चर्यजनक रहे हैं। इसमें घर के अंदर की हवा को बेहतर रखने और रोगजनकों को कम फैलने, मौसम के आधार पर भवन की बेहतर डिजाईन, कम रखरखाव, स्पेस एफिशिएंसी और ग्रीन टेक्नोलॉजी को बढ़ावा देने की बात अधिकतम व्यक्तियों ने की। सौरभ ने बताया कि ऊर्जा की खपत भवनों द्वारा भी होती है इसके बारे में जागरूकता का काफी अभाव है। ऐसे में कम ऊर्जा की खपत वाले भवनों और इमारतों के निर्माण के लिए लोगों तक जानकारी पहुंचना और इसकी स्वीकार्यता ही समय सबसे बड़ी आवश्यकता है।

इंडोस्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी- प्रोजेक्ट (पीएफडीए) स्विस परिसंघ के विदेश मामलों के संघीय विभाग (बीप) बिजली मंत्रालय के बीच एक संयुक्त उपक्रम है। इसमें ब्यूरो ऑफ एनर्जी एफिशिएंसी /और भारत सरकार के ऊर्जा बिजली मंत्रालय की ओर से अधिकृत क्रियान्वयन एजेंसी है/ऊर्जा, जबकि एफडीएफए की ओर से स्विस एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन को यह दायित्व मिला है।-

(इंडिया साइंस वायर(

WEBDUNiA
हिंदी

‘समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें’

Last Updated: गुरुवार, 2 सितम्बर 2021 (15:05 IST)

नई दिल्ली, आज समूचा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उपजी चुनौतियों से जूझ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के लिए यूं तो कई कारक जिम्मेदार हैं, पर धरती का तापमान बढ़ाने में अंधाधुंध शहरीकरण और बेतहाशा ऊर्जाखपत वाली इमारतों की - भी बड़ी भूमिका है।

इसे लेकर आवश्यक जागरूकता का भी अभाव है। ऐसे में, ऊर्जाकी ब खपत की दृष्टी से मितव्ययी इमारतें आज-ड़ी आवश्यकता है। इस बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज स्विस -ने इंडो (सीएमएस इंडिया) के साथ मिलकर संयुक्त रूप से एक वेबिनार कार्यक्रम आयोजित किया। (बीईईपी) बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट

सीएमएस एडवोकेसी की डायरेक्टर अनु आनंद ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स पर मीडिया के सहयोग से आरंभ किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बताते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता लाने के प्रयास को सितम्बर 2019 में शुरू किया गया था। इसके लिए देश के अलग गोंस्तरीय वर्कशॉप का आयोजन कर लो-अलग हिस्सों में राज्य-को एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में जानकारी दी गयी। इंडो स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट की सदस्य वर्णिका प्रकाश ने बताया कि भारत में बीईईपी की शुरुआत वर्ष 2011 में हुई थी।

इस अवसर पर भारत स्थित स्विट्जरलैंड दूतावास में अंतरराष्ट्रीय सहयोग की प्रमुख और काउंसलर डॉ जॉनाथन डेमांज

ने एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन द्वारा जलवायु परिवर्तन पर चलाए जा रहे ग्लोबल प्रोग्राम पर (एसडीसी) चर्चा की।

उन्होंने कहा कि ऊर्जा का इस प्रकार उपयोग होना चाहिए कि वह प्रकृति के काम भी आ सके और उसे नुकसान न पहुंचाए। इस लिहाज से इमारतों को बनाने में भी ऊर्जा को सही तरह से और कम क्षय के साथ उपयोग किये जाने की विधि पर जोर देने की आवश्यकता है जिस पर हम काम कर रहे हैं। बीईईपी के अंतर्गत बनायीं जाने वाली आवासीय और व्यावसायिक भवनों और इमारतों में 30% तक कम ऊर्जा की खपत करने वाली इमारतों को बनाने में आवश्यक तकनीकी सहयोग किया जा रहा है। इस दौरान उन्होंने कम ऊर्जा की खपत और प्राकृतिक वायु प्रवाह के लिए हवा महल जैसे अनूठे भवनों का उदाहरण भी दिया।

इस कार्यक्रम में ब्यूरो आफ एनर्जी एफिशिएंसी के डायरेक्टर सौरभ दीद्दी ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार के दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला।

उन्होंने बताया कि गर्मी से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोकना इस समय की एक बहुत बड़ी आवश्यकता बन गया है। भारत एयर कंडीशनिंग यानी एसी का उपयोग एक सामान्य चलन बन गया है।

इससे जहां बिजली की बड़े पैमाने पर खपत होती है वही हाइड्रोफ्लोरोकार्बंस यानी एचएफसी का भारी मात्रा में उत्सर्जन होता है। हमारे गांव में आज भी घरों को कुछ इस तरह से बनाया जाता है कि वहां एसी की आवशयकता नहीं पड़ती है। शहरों में भी घरों के लिए वह कार्यविधि अपनाई जा सकती है।

कार्यक्रम में आंध्र प्रदेश स्टेट हाउसिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड के प्रबंध निदेशक नारायण भारत गुप्ता ने आंध्र प्रदेश में चल रही बीएलसी स्कीम के तहत इकोफ्रेंडली अफॉर्डेबल हाउसेस के बारे में जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि यह समय हमारे लिए अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाकर ऊर्जा के नए स्रोतों का पता लगाने की है ताकि हम प्रकृति के संरक्षण में सहयोग कर सकें।

इस अवसर पर उपस्थित रहे एनवायर्नमेंटल डिजाइन सलूशन के डायरेक्टर तन्मय तथागत ने कहा कि कोरोना संक्रमण काल के बाद से लोगों की सोच में घर या किसी इमारत को बनाने को लेकर कई तरह से बदलाव आए हैं।
इस बदलाव को समझने के लिए हमने एक सर्वे भी किया था जिसके परिणाम काफी आश्चर्यजनक रहे हैं। इसमें घर के अंदर की हवा को बेहतर रखने और रोगजनकों को कम फैलने, मौसम के आधार पर भवन की बेहतर डिजाईन, कम रखरखाव, स्पेस एफिशिएंसी और ग्रीन टेक्नोलॉजी को बढ़ावा देने की बात अधिकतम व्यक्तियों ने की।

सौरभ ने बताया कि ऊर्जा की खपत भवनों द्वारा भी होती है इसके बारे में जागरूकता का काफी अभाव है। ऐसे में कम ऊर्जा की खपत वाले भवनों और इमारतों के निर्माण के लिए लोगों तक जानकारी पहुंचना और इसकी स्वीकार्यता ही समय सबसे बड़ी आवश्यकता है।

इंडो (पीएफडीए) स्विस परिसंघ के विदेश मामलों के संघीय विभाग (बीप) स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट-बिजली मंत्रालय के बीच एक संयुक्त उपक्रम है। इसमें ब्यूरो ऑफ एनर्जी एफिशिएंसी/और भारत सरकार के ऊर्जा ब/ऊर्जािजली मंत्रालय की ओर से अधिकृत क्रियान्वयन एजेंसी है, जबकि एफडीएफए की ओर से स्विस एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन को यह दायित्व मिला है।- **(इंडिया साइंस वायर(**

समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें

Green Building in India. What is green building? एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार का दृष्टिकोण क्या है? ग्लोबल वार्मिंग से उपजी चुनौतियां क्या हैं?

By amalendu upadhyay | Thu, 2 Sep 2021

स्रोतः टेरी

The need of the hour is buildings with low energy requirement

नई दिल्ली, 02 सितंबर 2021 : आज समूचा विश्व [ग्लोबल वार्मिंग] **से उपजी चुनौतियों (challenges arising from [global warming])** से जूझ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के लिए यूँ तो कई कारक जिम्मेदार हैं, पर धरती का तापमान बढ़ाने में अंधाधुंध शहरीकरण और बेतहाशा ऊर्जाखपत वाली इमारतों की भी बड़ी भूमिका है। इसे -लेकर आवश्यक जागरूकता का भी अभाव है। ऐसे में, ऊर्जापत की दृष्टिख- से मितव्ययी इमारतें आज की बड़ी आवश्यकता है।

इस बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज स्विस बिल्डिंग -ने इंडो (सीएमएस इंडिया) के साथ मिलकर संयुक्त र (बीईईपी) एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट ूप से एक वेबिनार कार्यक्रम आयोजित किया।

सीएमएस एडवोकेसी की डायरेक्टर अनु आनंद ने **एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स (Energy Efficient Buildings)** पर मीडिया के सहयोग से आरंभ किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बताते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता लाने के प्रयास को सितम्बर 2019 में शुरू किया गया था। इसके लिए देश के अलगअलग -स्तरीय वर्कशॉप का आयोजन कर लोगों को एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में जानकारी -हिस्सों में राज्य दी गयी।

इंडो स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट की सदस्य वर्णिका प्रकाश ने बताया कि भारत में बीईईपी की शुरुआत वर्ष 2011 में हुई थी।

Global program on [climate change]

इस अवसर पर भारत स्थित स्विट्जरलैंड दूतावास में अंतरराष्ट्रीय सहयोग की प्रमुख और काउंसलर डॉ जॉनाथन डेमांज ने एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन द्वारा (एसडीसी) **जलवायु परिवर्तन पर चलाए जा रहे ग्लोबल प्रोग्राम** पर चर्चा की।

Green Building in India | What is green building

उन्होंने कहा कि ऊर्जा का इस प्रकार उपयोग होना चाहिए कि वह प्रकृति के काम भी आ सके और उसे नुकसान न पहुंचाए। इस लिहाज से इमारतों को बनाने में भी ऊर्जा को सही तरह से और कम क्षय के साथ उपयोग किये जाने की विधि पर जोर देने की आवश्यकता है जिस पर हम काम कर रहे हैं। बीईईपी के अंतर्गत बनायीं जाने वाली आवासीय और व्यावसायिक भवनों और इमारतों में 30% तक कम ऊर्जा की खपत करने वाली इमारतों को बनाने में आवश्यक तकनीकी सहयोग किया जा रहा है।

इस दौरान उन्होंने कम ऊर्जा की खपत और प्राकृतिक वायु प्रवाह के लिए हवा महल जैसे अनूठे भवनों का उदाहरण भी दिया।

एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार का दृष्टिकोण | Government of India's vision of Energy Efficient Buildings

इस कार्यक्रम में ब्यूरो आफ एनर्जी एफिशिएंसी के डायरेक्टर सौरभ दीद्दी ने **एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार के दृष्टिकोण** पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि गर्मी से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोकना इस समय की एक बहुत बड़ी आवश्यकता बन गया है। भारत एयर कंडीशनिंग यानी एसी का उपयोग

एक सामान्य चलन बन गया है। इससे जहां बिजली की बड़े पैमाने पर खपत होती है वही हाइड्रोफ्लोरोकार्बस यानी एचएफसी का भारी मात्रा में उत्सर्जन होता है। हमारे गाँव में आज भी घरों को कुछ इस तरह से बनाया जाता है कि वहां एसी की आवशयकता नहीं पड़ती है। शहरों में भी घरों के लिए वह कार्यविधि अपनाई जा सकती है।

कार्यक्रम में आंध्र प्रदेश स्टेट हाउसिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड के प्रबंध निदेशक नारायण भारत गुप्ता ने आंध्र प्रदेश में चल रही बीएलसी स्कीम के तहत इकोफ्रेंडली अफॉर्डेबल हाउसेस के बारे में जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि यह समय हमारे लिए अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाकर ऊर्जा के नए स्रोतों का पता लगाने की है ताकि हम **प्रकृति के संरक्षण में सहयोग (cooperation in the conservation of nature)** कर सकें।

कोरोना के बाद भवन निर्माण को लेकर लोगों की सोच में बदलाव आया

इस अवसर पर उपस्थित रहे **एनवायर्नमेंटल डिजाइन सलूशन के डायरेक्टर तन्मय तथागत** (Tanmay Tathagat - Director - Environmental Design Solutions) ने कहा कि कोरोना संक्रमण काल के बाद से लोगों की सोच में घर या किसी इमारत को बनाने को लेकर कई तरह से बदलाव आए हैं। इस बदलाव को समझने के लिए हमने एक सर्वे भी किया था जिसके परिणाम काफी आश्चर्यजनक रहे हैं। इसमें घर के अंदर की हवा को बेहतर रखने और रोगजनकों को कम फैलने, मौसम के आधार पर भवन की बेहतर डिजाईन, कम रखरखाव, स्पेस एफिशिएंसी और ग्रीन टेक्नोलॉजी को बढ़ावा देने की बात अधिकतम व्यक्तियों ने की।

सौरभ ने बताया कि ऊर्जा की खपत भवनों द्वारा भी होती है इसके बारे में जागरूकता का काफी अभाव है। ऐसे में कम ऊर्जा की खपत वाले भवनों और इमारतों के निर्माण के लिए लोगों तक जानकारी पहुंचना और इसकी स्वीकार्यता ही समय सबसे बड़ी आवश्यकता है।

इंडो देशस्विस परिसंघ के वि (बीप) स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट-मामलों के संघीय विभाग बिजली मंत्रालय के बीच एक संयुक्त उपक्रम है। इसमें ब्यूरो ऑफ /और भारत सरकार के ऊर्जा (पीएफडीए) बिजली मंत्रालय की ओर से अधिकृत क्रियान्वयन एजेंसी है/एनर्जी एफिशिएंसी ऊर्जा, जबकि एफडीएफए की ओर से स्विस एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोशन कऑपरे-ो यह दायित्व मिला है।

(इंडिया साइंस वायर(

Topics: Science, Technology, National Media Consultation, Energy, Efficiency, Buildings, Climate Change, Global Warming, Air-Conditioned, Barriers, Covid-19, Corona, Pathogens, India, Switzerland.

‘समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें’

By RD Times Hindi | September 2, 2021

स्रोतः टेरी

नई दिल्ली: आज समूचा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उपजी चुनौतियों से जूझ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के लिए यूँ तो कई कारक जिम्मेदार हैं, पर धरती का तापमान बढ़ाने में अंधाधुंध शहरीकरण और बेतहाशा ऊर्जाखपत वाली - इमारतों की भी बड़ी भूमिका है। इसे लेकर आवश्यक जागरूकता का भी अभाव है। ऐसे में,ऊर्जाखपत की दृष्टी - कतासे मितव्ययी इमारतें आज की बड़ी आवश्यकता है। इस बारे में जागरूकबढ़ाने के लिए सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज के साथ मिलकर (बीईईपी) स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट-ने इंडो (सीएमएस इंडिया) संयुक्त रूप से एक वेबिनार कार्यक्रम आयोजित किया।

सीएमएस एडवोकेसी की डायरेक्टर अनु आनंद ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स पर मीडिया के सहयोग से आरंभ किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बताते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता लाने के प्रयास को सितम्बर 2019 में शुरू किया गया था। इसके लिए देश के अलगस्तरीय वर्कशॉप का -मेंराज्य अलग हिस्सों-

आयोजन कर लोगों को एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे मेें जानकारी दी गयी।इंडो स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट की सदस्य वर्णिका प्रकाश ने बताया कि भारत में बीईईपीकी शुरुआत वर्ष 2011 में हुई थी।

इस अवसर पर भारत स्थित स्विट्जरलैंड दूतावास में अंतरराष्ट्रीय सहयोग की प्रमुख और काउंसलर डॉ जॉनाथन डेमांज ने एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन द्वारा जलवायु परिवर्तन पर चलाए जा (एसडीसी) रहे ग्लोबल प्रोग्राम पर चर्चा की। उन्होंने कहा कि ऊर्जा का इस प्रकार उपयोग होना चाहिए कि वह प्रकृति के काम भी आ सके और उसे नुकसान न पहुंचाए। इस लिहाज से इमारतों को बनाने में भी ऊर्जा को सही तरह से और कम क्षय के साथ उपयोग किये जाने की विधि पर जोर देने की आवश्यकता है जिस पर हम काम कर रहे हैं। बीईईपी के अंतर्गत बनायीं जाने वाली आवासीय और व्यावसायिक भवनों और इमारतों में 30% तक कम ऊर्जा की खपत करने वाली इमारतों को बनाने में आवश्यक तकनीकी सहयोग किया जा रहा है। इस दौरान उन्होंने कम ऊर्जा की खपत और प्राकृतिक वायु प्रवाह के लिए हवा महल जैसे अनूठे भवनों का उदाहरण भी दिया।

इस कार्यक्रम में ब्यूरो आफ एनर्जी एफिशिएंसी के डायरेक्टर सौरभ दीद्दी ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार के दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि गर्मी से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोकना इस समय की एक बहुत बड़ी आवश्यकता बन गया है। भारत एयर कंडीशनिंग यानी एसी का उपयोग एक सामान्य चलन बन गया है।इससे जहां बिजली की बड़े पैमाने पर खपत होती है वही हाइड्रोफ्लोरोकार्बंस यानी एचएफसी का भारी मात्रा में उत्सर्जन होता है। हमारे गाँव में आज भी घरों को कुछ इस तरह से बनाया जाता है कि वहां एसी की आवशयकता नहीं पड़ती है। शहरों में भी घरों के लिए वह कार्यविधि अपनाई जा सकती है।

कार्यक्रम में आंध्र प्रदेश स्टेट हाउसिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड के प्रबंध निदेशक नारायण भारत गुप्ता ने आंध्र प्रदेश में चल रही बीएलसी स्कीम के तहत इकोफ्रेंडली अफॉर्डेबल हाउसेस के बारे में जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि यह समय हमारे लिए अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाकर ऊर्जा के नए स्रोतों का पता लगाने की है ताकि हम प्रकृति के संरक्षण में सहयोग कर सकें।

इस अवसर पर उपस्थित रहे एनवायर्नमेंटल डिजाइन सलूशन के डायरेक्टर तन्मय तथागत ने कहा कि कोरोना संक्रमण काल के बाद से लोगों की सोच में घर या किसी इमारत को बनाने को लेकर कई तरह से बदलाव आए हैं। इस बदलाव को समझने के लिए हमने एक सर्वे भी किया था जिसके परिणाम काफी आश्चर्यजनक रहे हैं। इसमें घर के अंदर की हवा को बेहतर रखने और रोगजनकों को कम फैलने, मौसम के आधार पर भवन की बेहतर डिजाईन, कम रखरखाव, स्पेस एफिशिएंसी और ग्रीन टेक्नोलॉजी को बढ़ावा देने की बात अधिकतम व्यक्तियों ने की। सौरभ ने बताया कि ऊर्जा की खपत भवनों द्वारा भी होती है इसके बारे में जागरूकता का काफी अभाव है। ऐसे में कम ऊर्जा की खपत वाले भवनों और इमारतों के निर्माण के लिए लोगों तक जानकारी पहुंचना और इसकी स्वीकार्यता ही समय सबसे बड़ी आवश्यकता है।

इंडो स्विस परिसंघ के विदेश मामलों के संघीय विभाग (बीप) स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट- बिजली मंत्रालय के बीच एक/और भारत सरकार के ऊर्जा (पीएफडीए)संयुक्त उपक्रम है। इसमें ब्यूरो ऑफ एनर्जी एफिशिएंसी ऊर्जाबिजली मंत्रालय की ओर से अधिकृत क्रियान्वयन एजेंसी है/, जबकि एफडीएफए की ओर से स्विस एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड को(इंडिया साइंस वायर) ऑपरेशन को यह दायित्व मिला है।-

Mnews24.in
खबर दिन भर..

‘समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें’

September 1, 2021 mnews24

आज पूरा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उत्पन्न चुनौतियों का सामना कर रहा है।

आज पूरा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उत्पन्न चुनौतियों का सामना कर रहा है। हालांकि ग्लोबल वार्मिंग के लिए कई कारक जिम्मेदार हैं, अंधाधुंध शहरीकरण और बेतहाशा ऊर्जा की खपत करने वाली इमारतें भी पृथ्वी के तापमान को बढ़ाने में बड़ी भूमिका निभाती हैं। इसको लेकर जरूरी जागरूकता का भी अभाव है। ऐसे में ऊर्जाखपत की दृष्टि से -किफायती भवन आज की सबसे बड़ी जरूरत है। इसके बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए, सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज के सहयोग (बीईईपी) स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट-ने संयुक्त रूप से इंडो (सीएमएस इंडिया) से एक वेबिनार कार्यक्रम आयोजित किया।

सीएमएस एडवोकेसी के निदेशक अनु आनंद ने ऊर्जा कुशल भवनों पर मीडिया के सहयोग से शुरू किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बात करते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता पैदा करने का प्रयास सितंबर 2019 में शुरू किया गया था। इसके लिए लोगों को ऊर्जा कुशल भवनों के बारे में बताया गया। देश के विभिन्न हिस्सों में

राज्य स्तरीय कार्यशालाओं का आयोजन करके। इंडो स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट की सदस्य वर्णिका प्रकाश ने कहा कि भारत में बीईईपी की शुरुआत साल 2011 में हुई थी।

इस अवसर पर भारत में स्विट्जरलैंड के दूतावास में अंतर्राष्ट्रीय सहयोग के प्रमुख और काउंसलर डॉजोनाथन . डेमन्ज़ ने एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन द्वारा चलाए जा रहे जलवायु परिवर्तन पर वैश्विक (एसडीसी) कार्यक्रम पर चर्चा की। उन्होंने कहा कि ऊर्जा का उपयोग इस तरह किया जाना चाहिए कि इसका उपयोग प्रकृति के लिए भी हो सके और इसे नुकसान न पहुंचे। इस संदर्भ में, जिन भवनों पर हम काम कर रहे हैं, उनके निर्माण में ऊर्जा का सही ढंग से उपयोग करने और कम बर्बादी के साथ ऊर्जा का उपयोग करने की विधि पर भी जोर देने की आवश्यकता है। 30% तक कम ऊर्जा की खपत करने वाले भवनों को बनाने के लिए बीईईपी के अंतर्गत बनने वाले आवासीय एवं व्यावसायिक भवनों एवं भवनों में आवश्यक तकनीकी सहयोग दिया जा रहा है। इस दौरान उन्होंने कम ऊर्जा खपत और प्राकृतिक वायु प्रवाह के लिए हवा महल जैसी अनूठी इमारतों का उदाहरण भी दिया।

इस कार्यक्रम में ऊर्जा दक्षता ब्यूरो के निदेशक सौरभ दीदी ने ऊर्जा कुशल भवनों के प्रति भारत सरकार के दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि स्वास्थ्य पर गर्मी के दुष्प्रभाव को रोकना समय की बहुत बड़ी जरूरत बन गई है। एयर कंडीशनिंग यानी एसी का इस्तेमाल भारत में एक आम चलन बन गया है। इसके कारण जहां बड़े पैमाने पर बिजली की खपत होती है, वहां भारी मात्रा में हाइड्रोफ्लोरोकार्बन यानी एचएफसी उत्सर्जन होता है। हमारे गांव में आज भी घर इस तरह से बनाए जाते हैं कि वहां एसी की जरूरत ही नहीं पड़ती। यही प्रक्रिया शहरों में घरों के लिए भी अपनाई जा सकती है।

कार्यक्रम में आंध्र प्रदेश राज्य आवास निगम लिमिटेड के प्रबंध निदेशक नारायण भारत गुप्ता ने आंध्र प्रदेश में चल रही बीएलसी योजना के तहत पर्यावरण के अनुकूल किफायती घरों के बारे में जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि यह हमारे लिए समय है कि हम अपनी जीवन शैली में बदलाव करके ऊर्जा के नए स्रोत खोजें ताकि हम प्रकृति के संरक्षण में सहयोग कर सकें।

इस मौके पर मौजूद पर्यावरण डिजाइन सॉल्यूशंस के निदेशक तन्मय तथागत ने कहा कि कोरोना संक्रमण काल के बाद से घर या कोई भी इमारत बनाने को लेकर लोगों की सोच में कई बदलाव आए हैंइस बदलाव को समझने के . लिए हमने एक सर्वे भी किया, जिसके नतीजे काफी चौंकाने वाले रहे हैंइसमें अधिकतम लोगों ने घर के अंदर की . हवा को बेहतर रखने और रोगजनकों के कम प्रसार, बेहतर मौसम आधारित भवन डिजाइन, कम रखरखाव, अंतरिक्ष दक्षता और हरित प्रौद्योगिकी को बढ़ावा देने की बात की। सौरभ ने बताया कि भवनों द्वारा भी ऊर्जा की खपत को लेकर जागरूकता की काफी कमी है। ऐसे में कम ऊर्जा खपत वाले भवनों और भवनों के निर्माण के लिए सूचना तक पहुंच और उसकी स्वीकृति समय की सबसे बड़ी जरूरत है।

इंडोस्विस परिसंघ के फेडरल डिपार्टमेंट फॉर फॉरे (बीआईपी) स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट-न अफेयर्स विद्युत मंत्रालय/और ऊर्जा (पीएफडीए), भारत सरकार के बीच एक संयुक्त उद्यम है। इसमें ऊर्जाऊर्जा मंत्रालय की / ओर से ब्यूरो ऑफ एनर्जी एफिशिएंसी अधिकृत क्रियान्वयन एजेंसी है, जबकि स्विस एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन को यह जिम्मेदारी एफडीए से मिली है। (साइंस वायर इंडिया)

HEAD TOPICS इंडिया

‘समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें’

‘समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें’ in a new tab)
02-09-2021 02:48:00

स्रोत

Jansatta

‘समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें’ in a new tab)

आज समूचा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उपजी चुनौतियों से जूझ रहा है।

सीएमएस एडवोकेसी की डायरेक्टर अनु आनंद ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स पर मीडिया के सहयोग से आरंभ किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बताते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता लाने के प्रयास को सितम्बर 2019 में शुरू किया गया था। इसके लिए देश के अलगस्तरीय वर्कशॉप का आयोजन कर -अलग हिस्सों में राज्य-लोगों को एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में जानकारी दी गयी। इंडो स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट की सदस्य वर्णिका प्रकाश ने बताया कि भारत में बीईईपी की शुरुआत वर्ष 2011 में हुई थी।

इस अवसर पर भारत स्थित स्विट्जरलैंड दूतावास में अंतरराष्ट्रीय सहयोग की प्रमुख और काउंसलर डॉ जॉनाथन डेमांज ने एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन द्वारा जलवायु परिवर्तन पर च (एसडीसी)लाए जा रहे ग्लोबल प्रोग्राम पर चर्चा की। उन्होंने कहा कि ऊर्जा का इस प्रकार उपयोग होना चाहिए कि वह प्रकृति के काम भी आ सके और उसे नुकसान न पहुंचाए। इस लिहाज से इमारतों को बनाने में भी ऊर्जा को सही तरह से और कम क्षय के साथ उपयोग किये जाने की विधि पर जोर देने की आवश्यकता है जिस पर हम काम कर रहे हैं। बीईईपी के अंतर्गत बनायीं जाने वाली आवासीय और व्यावसायिक भवनों और इमारतों में 30% तक कम ऊर्जा की खपत करने वाली इमारतों को बनाने में आवश्यक तकनीकी सहयोग किया जा रहा है। इस दौरान उन्होंने कम ऊर्जा की खपत और प्राकृतिक वायु प्रवाह के लिए हवा महल जैसे अनूठे भवनों का उदाहरण भी दिया।

इस कार्यक्रम में ब्यूरो आफ एनर्जी एफिशिएंसी के डायरेक्टर सौरभ दीद्दी ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार के दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि गर्मी से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोकना इस समय की एक बहुत बड़ी आवश्यकता बन गया है। भारत एयर कंडीशनिंग यानी एसी का उपयोग एक सामान्य चलन बन गया है।इससे जहां बिजली की बड़े पैमाने पर खपत होती है वही हाइड्रोफ्लोरोकार्बंस यानी एचएफसी का भारी मात्रा में उत्सर्जन होता है। हमारे गाँव में आज भी घरों को कुछ इस तरह से बनाया जाता है कि वहां एसी की आवशयकता नहीं पड़ती है। शहरों में भी घरों के लिए वह कार्यविधि अपनाई जा सकती है। headtopics.com

कार्यक्रम में आंध्र प्रदेश स्टेट हाउसिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड के प्रबंध निदेशक नारायण भारत गुप्ता ने आंध्र प्रदेश में चल रही बीएलसी स्कीम के तहत इकोफ्रेंडली अफॉर्डेबल हाउसेस के बारे में जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि यह समय हमारे लिए अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाकर ऊर्जा के नए स्रोतों का पता लगाने की है ताकि हम प्रकृति के संरक्षण में सहयोग कर सकें।

इस अवसर पर उपस्थित रहे एनवायर्नमेंटल डिजाइन सलूशन के डायरेक्टर तन्मय तथागत ने कहा कि कोरोना संक्रमण काल के बाद से लोगों की सोच में घर या किसी इमारत को बनाने को लेकर कई तरह से बदलाव आए हैं। इस बदलाव को समझने के लिए हमने एक सर्वे भी किया था जिसके परिणाम काफी आश्चर्यजनक रहे हैं। इसमें घर के अंदर की हवा को बेहतर रखने और रोगजनकों को कम फैलने, मौसम के आधार पर भवन की बेहतर डिजाईन, कम रखरखाव, स्पेस एफिशिएंसी और ग्रीन टेक्नोलॉजी को बढ़ावा देने की बात अधिकतम व्यक्तियों ने की। सौरभ ने बताया कि ऊर्जा की खपत भवनों द्वारा भी होती है इसके बारे में जागरूकता का काफी अभाव है। ऐसे में कम ऊर्जा की खपत वाले भवनों और इमारतों के निर्माण के लिए लोगों तक जानकारी पहुंचना और इसकी स्वीकार्यता ही समय सबसे बड़ी आवश्यकता है।

इंडो स्विस परिसंघ के विदेश मामलों के संघीय विभाग (बीप) स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट- और भारत सरकार के ऊ (पीएफडीए)र्जाबिजली मंत्रालय के बीच एक संयुक्त उपक्रम है। इसमें ब्यूरो ऑफ / बिजली मंत्रालय की ओर से अधिकृत क्रियान्वयन एजेंसी है/एनर्जी एफिशिएंसी ऊर्जा, जबकि एफडीएफए की ओर से स्विस एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड को(इंडिया साइंस वायर) ऑपरेशन को यह दायित्व मिला है।-

और पढो :Jansatta »

'समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें'

3 weeks ago

स्रोतः टेरी

नई दिल्ली: आज समूचा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उपजी चुनौतियों से जूझ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के लिए यूँ तो कई कारक जिम्मेदार हैं, पर धरती का तापमान बढ़ाने में अंधाधुंध शहरीकरण और बेतहाशा ऊर्जा वाली खपत-में ऐसे है। अभाव भी का जागरूकता आवश्यक लेकर इसे है। भूमिका बड़ी भी की इमारतों,ऊर्जा दृष्टी की खपत-बढ़ा जागरूकता में बारे इस है। आवश्यकता बड़ी की आज इमारतें मितव्ययी सेने के लिए सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज मिलकर साथ के (बीईईपी) प्रोजेक्ट एफिशिएंसी एनर्जी बिल्डिंग स्विस-इंडो ने (इंडिया सीएमएस) किया। आयोजित कार्यक्रम वेबिनार एक से रूप संयुक्त

सीएमएस एडवोकेसी की डायरेक्टर अनु आनंद ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स पर मीडिया के सहयोग से आरंभ किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बताते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता लाने के प्रयास को सितम्बर 2019 में शुरू किया गया था। इसके लिए देश के अलगहिस्सों अलग- मेंराज्य का वर्कशॉप स्तरीय-

एनर्जी बिल्डिंग स्विस गयी।इंडो दी जानकारी में बारे के बिल्डिंग्स एफिशिएंट एनर्जी को लोगों कर आयोजन वर्ष शुरुआत बीईईपीकी में भारत कि बताया ने प्रकाश वर्णिका सदस्य की प्रोजेक्ट एफिशिएंसी2011 में हुई थी।

इस अवसर पर भारत स्थित स्विट्जरलैंड दूतावास में अंतरराष्ट्रीय सहयोग की प्रमुख और काउंसलर डॉ जॉनाथन डेमांज ने एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन जा चलाए पर परिवर्तन जलवायु द्वारा (एसडीसी) प्रकृ वह कि चाहिए होना उपयोग प्रकार इस का ऊर्जा कि कहा उन्होंने की। चर्चा पर प्रोग्राम ग्लोबल रहेति के काम भी आ सके और उसे नुकसान न पहुंचाए। इस लिहाज से इमारतों को बनाने में भी ऊर्जा को सही तरह से और कम क्षय के साथ उपयोग किये जाने की विधि पर जोर देने की आवश्यकता है जिस पर हम काम कर रहे हैं। बीईईपी के अंतर्गत बनायीं जाने वाली आवासीय और व्यावसायिक भवनों और इमारतों में 30% तक कम ऊर्जा की खपत करने वाली इमारतों को बनाने में आवश्यक तकनीकी सहयोग किया जा रहा है। इस दौरान उन्होंने कम ऊर्जा की खपत और प्राकृतिक वायु प्रवाह के लिए हवा महल जैसे अनूठे भवनों का उदाहरण भी दिया।

इस कार्यक्रम में ब्यूरो आफ एनर्जी एफिशिएंसी के डायरेक्टर सौरभ दीद्दी ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार के दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि गर्मी से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोकना इस समय की एक बहुत बड़ी आवश्यकता बन गया है। भारत एयर कंडीशनिंग यानी एसी का उपयोग एक सामान्य चलन बन गया है।इससे जहां बिजली की बड़े पैमाने पर खपत होती है वही हाइड्रोफ्लोरोकार्बस यानी एचएफसी का भारी मात्रा में उत्सर्जन होता है। हमारे गाँव में आज भी घरों को कुछ इस तरह से बनाया जाता है कि वहां एसी की आवशयकता नहीं पड़ती है। शहरों में भी घरों के लिए वह कार्यविधि अपनाई जा सकती है।

कार्यक्रम में आंध्र प्रदेश स्टेट हाउसिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड के प्रबंध निदेशक नारायण भारत गुप्ता ने आंध्र प्रदेश में चल रही बीएलसी स्कीम के तहत इकोफ्रेंडली अफॉर्डेबल हाउसेस के बारे में जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि यह समय हमारे लिए अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाकर ऊर्जा के नए स्रोतों का पता लगाने की है ताकि हम प्रकृति के संरक्षण में सहयोग कर सकें।

इस अवसर पर उपस्थित रहे एनवायर्नमेंटल डिजाइन सलूशन के डायरेक्टर तन्मय तथागत ने कहा कि कोरोना संक्रमण काल के बाद से लोगों की सोच में घर या किसी इमारत को बनाने को लेकर कई तरह से बदलाव आए हैं। इस बदलाव को समझने के लिए हमने एक सर्वे भी किया था जिसके परिणाम काफी आश्चर्यजनक रहे हैं। इसमें घर के अंदर की हवा को बेहतर रखने और रोगजनकों को कम फैलने, मौसम के आधार पर भवन की बेहतर डिजाईन, कम रखरखाव, स्पेस एफिशिएंसी और ग्रीन टेक्नोलॉजी को बढ़ावा देने की बात अधिकतम व्यक्तियों ने की। सौरभ ने बताया कि ऊर्जा की खपत भवनों द्वारा भी होती है इसके बारे में जागरूकता का काफी अभाव है। ऐसे में कम ऊर्जा की खपत वाले भवनों और इमारतों के निर्माण के लिए लोगों तक जानकारी पहुंचना और इसकी स्वीकार्यता ही समय सबसे बड़ी आवश्यकता है।

इंडो विभाग संघीय के मामलों विदेश के परिसंघ स्विस (बीप) प्रोजेक्ट एफिशिएंसी एनर्जी बिल्डिंग स्विस-ब् इसमें है। उपक्रम संयुक्त एक बीच के मंत्रालय बिजली/ऊर्जा के सरकार भारत और (पीएफडीए)यूरो ऑफ एनर्जी एफिशिएंसी ऊर्जाहै एजेंसी क्रियान्वयन अधिकृत से ओर की मंत्रालय बिजली/, जबकि एफडीएफए की ओर से स्विस एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड को(वायर साइंस इंडिया) है। मिला दायित्व यह को ऑपरेशन-

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

‘समय की मांग है कम ऊर्जा आवश्यकता वाली इमारतें’

By **Rupesh Dharmik** - September 2, 2021

स्रोतः टेरी

नई दिल्ली: आज समूचा विश्व ग्लोबल वार्मिंग से उपजी चुनौतियों से जूझ रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के लिए यूँ तो कई कारक जिम्मेदार हैं, पर धरती का तापमान बढ़ाने में अंधाधुंध शहरीकरण और बेतहाशा ऊर्जाखपत वाली इमारतों की - भी बड़ी भूमिका है। इसे लेकर आवश्यक जागरूकता का भी अभाव है। ऐसे में,ऊर्जाखपत की दृष्टी से मितव्ययी इमारतें - आज की बड़ी आवश्यकता है। इस बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए सेंटर फॉर मीडिया स्टडीज ने (सीएमएस इंडिया) के साथ मिलकर संयुक्त रूप से एक वेबिनार कार्यक्रम (बीईईपी) स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट-इंडो आयोजित किया।

सीएमएस एडवोकेसी की डायरेक्टर अनु आनंद ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स पर मीडिया के सहयोग से आरंभ किए गए जागरूकता कार्यक्रम के बारे में बताते हुए कहा कि इस मुद्दे पर जागरूकता लाने के प्रयास को सितम्बर 2019 में शुरू किया गया था। इसके लिए देश के अलगस्तरीय वर्कशॉप का आयोजन कर लोगों को एनर्जी -अलग हिस्सों मेंराज्य- एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में जानकारी दी गयी।इंडो स्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्रोजेक्ट की सदस्य वर्णिका प्रकाश ने बताया कि भारत में बीईईपीकी शुरुआत वर्ष 2011 में हुई थी।

इस अवसर पर भारत स्थित स्विट्जरलैंड दूतावास में अंतरराष्ट्रीय सहयोग की प्रमुख और काउंसलर डॉ जॉनाथन डेमांज ने एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड कोऑपरेशन द्वारा जलवायु परिवर्तन पर चलाए जा रहे ग्लोबल प्रोग्राम पर (एसडीसी) चर्चा की। उन्होंने कहा कि ऊर्जा का इस प्रकार उपयोग होना चाहिए कि वह प्रकृति के काम भी आ सके और उसे नुकसान न पहुंचाए। इस लिहाज से इमारतों को बनाने में भी ऊर्जा को सही तरह से और कम क्षय के साथ उपयोग किये जाने की विधि पर जोर देने की आवश्यकता है जिस पर हम काम कर रहे हैं। बीईईपी के अंतर्गत बनायीं जाने वाली आवासीय और व्यावसायिक भवनों और इमारतों में 30% तक कम ऊर्जा की खपत करने वाली इमारतों को बनाने में आवश्यक तकनीकी सहयोग किया जा रहा है। इस दौरान उन्होंने कम ऊर्जा की खपत और प्राकृतिक वायु प्रवाह के लिए हवा महल जैसे अनूठे भवनों का उदाहरण भी दिया।

इस कार्यक्रम में ब्यूरो आफ एनर्जी एफिशिएंसी के डायरेक्टर सौरभ दीद्दी ने एनर्जी एफिशिएंट बिल्डिंग्स के बारे में भारत सरकार के दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला। उन्होंने बताया कि गर्मी से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव को रोकना इस समय की एक बहुत बड़ी आवश्यकता बन गया है। भारत एयर कंडीशनिंग यानी एसी का उपयोग एक सामान्य चलन बन गया है।इससे जहां बिजली की बड़े पैमाने पर खपत होती है वही हाइड्रोफ्लोरोकार्बंस यानी एचएफसी का भारी मात्रा में उत्सर्जन होता है। हमारे गाँव में आज भी घरों को कुछ इस तरह से बनाया जाता है कि वहां एसी की आवशयकता नहीं पड़ती है। शहरों में भी घरों के लिए वह कार्यविधि अपनाई जा सकती है।

कार्यक्रम में आंध्र प्रदेश स्टेट हाउसिंग कॉरपोरेशन लिमिटेड के प्रबंध निदेशक नारायण भारत गुप्ता ने आंध्र प्रदेश में चल रही बीएलसी स्कीम के तहत इकोफ्रेंडली अफॉर्डेबल हाउसेस के बारे में जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि यह समय हमारे लिए अपनी जीवनशैली में परिवर्तन लाकर ऊर्जा के नए स्रोतों का पता लगाने की है ताकि हम प्रकृति के संरक्षण में सहयोग कर सकें।

इस अवसर पर उपस्थित रहे एनवायर्नमेंटल डिजाइन सलूशन के डायरेक्टर तन्मय तथागत ने कहा कि कोरोना संक्रमण काल के बाद से लोगों की सोच में घर या किसी इमारत को बनाने को लेकर कई तरह से बदलाव आए हैं। इस बदलाव को समझने के लिए हमने एक सर्वे भी किया था जिसके परिणाम काफी आश्चर्यजनक रहे हैं। इसमें घर के अंदर की हवा को बेहतर रखने और रोगजनकों को कम फैलने, मौसम के आधार पर भवन की बेहतर डिजाईन, कम रखरखाव, स्पेस एफिशिएंसी और ग्रीन टेक्नोलॉजी को बढ़ावा देने की बात अधिकतम व्यक्तियों ने की। सौरभ ने बताया कि ऊर्जा की खपत भवनों द्वारा भी होती है इसके बारे में जागरूकता का काफी अभाव है। ऐसे में कम ऊर्जा की खपत वाले भवनों और इमारतों के निर्माण के लिए लोगों तक जानकारी पहुंचना और इसकी स्वीकार्यता ही समय सबसे बड़ी आवश्यकता है।

इंडोस्विस बिल्डिंग एनर्जी एफिशिएंसी प्-रोजेक्ट (पीएफडीए) स्विस परिसंघ के विदेश मामलों के संघीय विभाग (बीप) बिजली मंत्रालय के बीच एक संयुक्त उपक्रम है। इसमें ब्यूरो ऑफ एनर्जी एफिशिएंसी /और भारत सरकार के ऊर्जा बिजली मंत्रालय की ओर से अधिकृत क्रियान्वयन एजेंसी है/ऊर्जा, जबकि एफडीएफए की ओर से स्विस एजेंसी फॉर डेवलपमेंट एंड को(इंडिया साइंस वायर) ऑपरेशन को यह दायित्व मिला है।-

डीएसटी की पहली महिला सचिव बनीं डॉ रेणु स्वरूप

Last Updated: गुरुवार, 2 सितम्बर 2021 (15:15 IST)

नई दिल्ली, भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग की सचिव डॉ रेणु (डीबीटी)स्वरूप को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के सचिव के पद का अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया है। (डीएसटी)

कैबिनेट की नियुक्ति समिति की ओर से मंगलवार को इस संबंध में आदेश जारी किया गया है। नियमित पदाधिकारी की नियुक्ति या किसी अन्य आदेश तक उन्हें यह कार्यभार दिया गया है।

इस तरह, डॉ स्वरूप डीएसटी की पहली महिला सचिव बन गई हैं। डॉ रेणु स्वरूप अब प्रोफेसर आशुतोष शर्मा के स्थान पर डीएसटी सचिव की जिम्मेदारी संभालेंगी।

इसके साथ ही, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद के महानिदेशक एवं वैज्ञानिक तथा (सीएसआईआर) मांडे को पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय का अतिरिक्त प्रभार सौंपा .संधान विभाग के सचिव डॉ शेखर सीऔद्योगिक अनु

गया है। यहां यह बताना आवश्यक है कि कुछ समय पूर्व प्रोफेसर आशुतोष शर्मा कोपृथ्वी विज्ञान मंत्रालय के सचिव के रूप में अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया था।

डॉ रेणु स्वरूप ने 10 अप्रैल 2018 को दो साल के कार्यकाल के लिए डीबीटी सचिव के रूप में पदभार संभाला था। बाद में एक अन्य आदेश द्वारा उनका कार्यकाल बढ़ाकर 31 अक्तूबर 2021 तक कर दिया गया था।

डीबीटी सचिव होने के अलावा, डॉ स्वरूप जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान सहायता परिषद की (इरैकबा) अध्यक्ष भी हैं, जो डीबीटी द्वारा स्थापित एक गैरलाभकारी सार्वजनिक क्षेत्र का उद्यम है।-

बाइरैक को स्टार्टअप और छोटे एवं मध्यम उद्यमों पर विशेष ध्यान देने के साथ जैव प्रौद्योगिकी में नवीन अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए जाना जाता है। यहां यह उल्लेखनीय है कि डॉ स्वरूप विभिन्न रूपों में लगभग तीन दशक से जैव प्रौद्योगिकी विभाग में अपनी सेवाएं दे रही हैं।

जेनेटिक्स और प्लांट ब्रीडिंग में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएचडी), डॉ रेणु स्वरूप ने कॉमनवेल्थ स्कॉलरशिप के तहत जॉन इन्स सेंटर, नॉर्विच यूके में पोस्ट डॉक्टरेट पूरा किया है। वर्ष 1989 में वह भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के जैव प्रौद्योगिकी विभाग में एक विज्ञान प्रबंधक का कार्यभार संभालने के लिए भारत लौट आयीं। तभी से, डॉ स्वरूप भारत में जैव प्रौद्योगिकी से जुड़ी गतिविधियों को दिशा प्रदान करने में सक्रिय रूप से जुटी रही हैं।

वर्ष 2001 का जैव प्रौद्योगिकी दृष्टिपत्र और वर्ष 2007 की राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति का विकास इसके उदाहरण कहे जा सकते हैं।

डॉ स्वरूप वर्ष 2001 में विकसित किए गए जैव प्रौद्योगिकी विजन और वर्ष 2007 में विकसित राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति और रणनीति II, 2015-20 की विशेषज्ञ समिति के सदस्य सचिव के रूप में सक्रिय तौर पर जुड़ी हुई थीं।

डॉरेणु स्वरूप महिलाओं और विज्ञ .ान से संबंधित कार्यक्रमों और गतिविधियों में भी निकटता से शामिल रही हैं। महिला वैज्ञानिकों के लिए बायोटेक्नोलॉजी करियर एडवांसमेंट) बायो केयर -Bio CARE) योजना को लागू कराने में उनकी अग्रणी भूमिका रही है। वह प्रधानमंत्री की वैज्ञानिक सलाहकार समिति द्वारा गठित 'विज्ञान में महिलाएं' पर केंद्रित टास्क फोर्स की सदस्य भी थीं।

डॉ रेणु स्वरूप भारत की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी समेत कई राष्ट्रीय संस्थानों, विश्वविद्यालयों और केंद्रों के शासी निकाय की सदस्य हैं। वर्ष 2012 में, उन्हें बायोस्पेक्ट्रम पर्सन ऑफ द ईयर अवार्"डसे सम्मानित किया " गया था। ***(इंडिया साइंस वायर(***

RD TIMES.in हिंदी

डीएसटी की पहली महिला सचिव बनीं डॉ रेणु स्वरूप

By RD Times Hindi | September 2, 2021

नई दिल्ली: भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग की सचिव डॉ रेणु स्वरूप को विज्ञान एवं (डीबीटी) के पद का अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया है। कैबिनेट की नियुक्ति समिति के सचिव (डीएसटी) प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से मंगलवार को इस संबंध में आदेश जारी किया गया है। नियमित पदाधिकारी की नियुक्ति या किसी अन्य आदेश तक उन्‍हें यह कार्यभार दिया गया है। इस तरह, डॉ स्वरूप डीएसटी की पहली महिला सचिव बन गई हैं।डॉ रेणु स्वरूपअब प्रोफेसर आशुतोष शर्मा के स्थान पर डीएसटी सचिव की जिम्मेदारी संभालेंगी।

इसके साथ ही, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद के महानिदेशक एवं वैज्ञ (सीएसआईआर)ानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान विभाग के सचिव डॉ शेखर सीलय का अतिरिक्त प्रभार मांडे को पृथ्वी विज्ञान मंत्रा . सौंपा गया है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि कुछ समय पूर्व प्रोफेसर आशुतोष शर्मा को पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय के सचिव के रूप में अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया था।

डॉ रेणु स्वरूप ने 10 अप्रैल 2018 को दो साल के कार्यकाल के लिए डीबीटी सचिव के रूप में पदभार संभाला था।बाद में एक अन्य आदेश द्वारा उनका कार्यकाल बढ़ाकर 31 अक्तूबर 2021 तक कर दिया गया था।

डीबीटी सचिव होने के अलावा, डॉ स्वरूप जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान सहायता परिषद की (बाइरैक) हैं अध्यक्ष भी, जो डीबीटी द्वारा स्थापित एक गैरलाभकारी सार्वजनिक क्षेत्र का उद्यम है।बाइरैकको स्टार्टअप - और छोटे एवं मध्यम उद्यमों पर विशेष ध्यान देने के साथ जैव प्रौद्योगिकी में नवीन अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए जाना जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है किडॉ स्वरूप विभिन्न रूपों में लगभग तीन दशक से जैव प्रौद्योगिकी विभाग में अपनी सेवाएंदे रही हैं।

जेनेटिक्स और प्लांट ब्रीडिंग में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएचडी), डॉ रेणु स्वरूप ने कॉमनवेल्थ स्कॉलरशिप के तहत जॉन इन्स सेंटर, नॉर्विच यूके में पोस्ट डॉक्टरेट पूरा किया है। वर्ष 1989 में वह भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के जैव प्रौद्योगिकी विभाग में एक विज्ञान प्रबंधक का कार्यभार संभालने के लिए भारत लौट आयीं।तभी से, डॉ स्वरूप भारत में जैव प्रौद्योगिकी से जुड़ी गतिविधियों को दिशा प्रदान करने में सक्रिय रूप से जुटीरही हैं।

वर्ष 2001 का जैव प्रौद्योगिकी दृष्टिपत्र और वर्ष 2007 की राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति का विकासइसके उदाहरण कहे जा सकते हैं। डॉ स्वरूप वर्ष 2001 में विकसितकिए गए जैव प्रौद्योगिकी विजन और वर्ष2007 में विकसित राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति और रणनीति II, 2015-20 की विशेषज्ञ समिति के सदस्य सचिव के रूप में सक्रिय तौर पर जुड़ी हुई थीं।

डॉरेणु स्वरूप महिलाओं और विज्ञान से संबंधित कार्यक्रमों और गतिविधियों में भी निकटता से शामिल रही . हैं। महिला वैज्ञानिकों के लिए बायोटेक्नोलॉजी करियर एडवांसमेंट – बायो केयर)Bio CARE) योजना को लागू कराने में उनकी अग्रणी भूमिका रही है। वह प्रधानमंत्री की वैज्ञानिक सलाहकार समिति द्वारा गठित ‘विज्ञान में महिलाएं’ पर केंद्रित टास्क फोर्स की सदस्य भी थीं।

डॉ रेणु स्वरूप भारत की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी समेत कई राष्ट्रीय संस्थानों, विश्वविद्यालयों और केंद्रों के शासी निकाय की सदस्य हैं। वर्ष 2012 में, उन्हें “बायोस्पेक्ट्रम पर्सन ऑफ द ईयर अवार्ड” से सम्मानित किया गया था।(इंडिया साइंस वायर)

दी इंडियन बुलेटिन

डीएसटी की पहली महिला सचिव बनीं डॉ रेणु स्वरूप

3 weeks ago

नई दिल्ली: भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग एवं विज्ञान को स्वरूप रेणु डॉ सचिव की (डीबीटी) समिति नियुक्ति की कैबिनेट है। गया सौंपा प्रभार अतिरिक्त का पद के सचिव के (डीएसटी) विभाग प्रौद्योगिकी में संबंध इस को मंगलवार से ओर कीआदेश जारी किया गया है। नियमित पदाधिकारी की नियुक्ति या किसी अन्य आदेश तक उन्हें यह कार्यभार दिया गया है। इस तरह, डॉ स्वरूप डीएसटी की पहली महिला सचिव बन गई हैं।डॉ रेणु स्वरूपअब प्रोफेसर आशुतोष शर्मा के स्थान पर डीएसटी सचिव की जिम्मेदारी संभालेंगी।

इसके साथ ही, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद तथा वैज्ञानिक एवं महानिदेशक के (सीएसआईआर) सौंपा प्रभार अतिरिक्त का मंत्रालय विज्ञान पृथ्वी को मांडे .सी शेखर डॉ सचिव के विभाग अनुसंधान औद्योगिक शर्मा आशुतोष प्रोफेसर पूर्व समय कुछ कि है आवश्यक बताना यह यहाँ है। गया को पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय के सचिव के रूप में अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया था।

डॉ रेणु स्वरूप ने 10 अप्रैल 2018 को दो साल के कार्यकाल के लिए डीबीटी सचिव के रूप में पदभार संभाला था।बाद में एक अन्य आदेश द्वारा उनका कार्यकाल बढ़ाकर 31 अक्तूबर 2021 तक कर दिया गया था।

डीबीटी सचिव होने के अलावा, डॉ स्वरूप जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान सहायता परिषद की (बाइरैक) हैं भी अध्यक्ष, जो डीबीटी द्वारा स्थापित एक गैर स्टार्टअप है।बाइरैकको उद्यम का क्षेत्र सार्वजनिक लाभकारी-स के देने ध्यान विशेष पर उद्यमों मध्यम एवं छोटे और ाथ जैव प्रौद्योगिकी में नवीन अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए जाना जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है किडॉ स्वरूप विभिन्न रूपों में लगभग तीन दशक से जैव प्रौद्योगिकी विभाग में अपनी सेवाएंदे रही हैं।

जेनेटिक्स और प्लांट ब्रीडिंग में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएचडी), डॉ रेणु स्वरूप ने कॉमनवेल्थ स्कॉलरशिप के तहत जॉन इन्स सेंटर, नॉर्विच यूके में पोस्ट डॉक्टरेट पूरा किया है। वर्ष 1989 में वह भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के जैव प्रौद्योगिकी विभाग में एक विज्ञान प्रबंधक का कार्यभार संभालने के लिए भारत लौट आयीं।तभी से, डॉ स्वरूप भारत में जैव प्रौद्योगिकी से जुड़ी गतिविधियों को दिशा प्रदान करने में सक्रिय रूप से जुटीरही हैं।

वर्ष 2001 का जैव प्रौद्योगिकी दृष्टिपत्र और वर्ष 2007 की राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति का विकासइसके उदाहरण कहे जा सकते हैं। डॉ स्वरूप वर्ष 2001 में विकसितकिए गए जैव प्रौद्योगिकी विजन और वर्ष2007 में विकसित राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति और रणनीति II, 2015-20 की विशेषज्ञ समिति के सदस्य सचिव के रूप में सक्रिय तौर पर जुड़ी हुई थीं।

डॉसंबंधित से विज्ञान और महिलाओं स्वरूप रेणु . कार्यक्रमों और गतिविधियों में भी निकटता से शामिल रही हैं। महिला वैज्ञानिकों के लिए बायोटेक्नोलॉजी करियर एडवांसमेंट – बायो केयर)Bio CARE) योजना को लागू कराने में उनकी अग्रणी भूमिका रही है। वह प्रधानमंत्री की वैज्ञानिक सलाहकार समिति द्वारा गठित 'विज्ञान में महिलाएं' पर केंद्रित टास्क फोर्स की सदस्य भी थीं।

डॉ रेणु स्वरूप भारत की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी समेत कई राष्ट्रीय संस्थानों, विश्वविद्यालयों और केंद्रों के शासी निकाय की सदस्य हैं। वर्ष 2012 में, उन्हें "बायोस्पेक्ट्रम पर्सन ऑफ द ईयर अवार्ड" से सम्मानित किया गया था।(वायर साइंस इंडिया)

डीएसटी की पहली महिला सचिव बनीं डॉ रेणु स्वरूप

01/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 01 सितंबर की सचिव डॉ रेणु स्वरूप (डीबीटी) भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग :(इंडिया साइंस वायर) के सचिव के पद का अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया है। कैबिनेट की नियुक्ति समिति (डीएसटी) को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से मंगलवार को इस संबंध में आदेश जारी किया गया है। नियमित पदाधिकारी की नियुक्ति या किसी अन्य आदेश तक उन्हें यह कार्यभार दिया गया है।

इस तरह, डॉ स्वरूप डीएसटी की पहली महिला सचिव बन गई हैं। डॉ रेणु स्वरूप अब प्रोफेसर आशुतोष शर्मा के स्थान पर डीएसटी सचिव की जिम्मेदारी संभालेंगी। इसके साथ ही, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद के (सीएसआईआर) महानिदेशक एवं वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान विभाग के सचिव डॉ शेखर सीमांडे को पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय का . अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया है।

यहाँ यह बताना आवश्यक है कि कुछ समय पूर्व प्रोफेसर आशुतोष शर्मा को पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय के सचिव के रूप में अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया था। डॉ रेणु स्वरूप ने 10 अप्रैल 2018 को दो साल के कार्यकाल के लिए डीबीटी सचिव के रूप में पदभार संभाला था। बाद में एक अन्य आदेश द्वारा उनका कार्यकाल बढ़ाकर 31 अक्तूबर 2021 तक कर दिया गया था।

डीबीटी सचिव होने के अलावा, डॉ स्वरूप जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान सहायता परिषद की अध्यक्ष भी हैं (बाइरैक), जो डीबीटी द्वारा स्थापित एक गैरलाभकारी सार्वजनिक क्षेत्र का उद्यम है। बाइरै-क को स्टार्टअप और छोटे एवं मध्यम उद्यमों पर विशेष ध्यान देने के साथ जैव प्रौद्योगिकी में नवीन अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए जाना जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि डॉ स्वरूप विभिन्न रूपों में लगभग तीन दशक से जैव प्रौद्योगिकी विभाग में अपनी सेवाएं दे रही हैं।

जेनेटिक्स और प्लांट ब्रीडिंग में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएचडी), डॉ रेणु स्वरूप ने कॉमनवेल्थ स्कॉलरशिप के तहत जॉन इन्स सेंटर, नॉर्विच यूके में पोस्ट डॉक्टरेट पूरा किया है। वर्ष 1989 में वह भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के जैव प्रौद्योगिकी विभाग में एक विज्ञान प्रबंधक का कार्यभार संभालने के लिए भारत लौट आयीं। तभी से, डॉ स्वरूप भारत में जैव प्रौद्योगिकी से जुड़ी गतिविधियों को दिशा प्रदान करने में सक्रिय रूप से जुटी रही हैं।

वर्ष 2001 का जैव प्रौद्योगिकी दृष्टिपत्र और वर्ष 2007 की राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति का विकास इसके उदाहरण कहे जा सकते हैं। डॉ स्वरूप वर्ष 2001 में विकसित किए गए जैव प्रौद्योगिकी विजन और वर्ष 2007 में विकसित राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति और रणनीति II, 2015-20 की विशेषज्ञ समिति के सदस्य सचिव के रूप में सक्रिय तौर पर जुड़ी हुई थीं। डॉरेणु स्वरूप महिलाओं और विज्ञान से संबंधित कार्यक्रमों और गतिविधियों में भी निकटता से शामिल . रही हैं।

महिला वैज्ञानिकों के लिए बायोटेक्नोलॉजी करियर एडवांसमेंट – बायो केयर)Bio CARE) योजना को लागू कराने में उनकी अग्रणी भूमिका रही है। वह प्रधानमंत्री की वैज्ञानिक सलाहकार समिति द्वारा गठित 'विज्ञान में महिलाएं' पर केंद्रित टास्क फोर्स की सदस्य भी थीं। डॉ रेणु स्वरूप भारत की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी समेत कई राष्ट्रीय संस्थानों, विश्वविद्यालयों और केंद्रों के शासी निकाय की सदस्य हैं। वर्ष 2012 में, उन्हें "बायोस्पेक्ट्रम पर्सन ऑफ द ईयर अवार्ड" से सम्मानित किया गया था।

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

डीएसटी की पहली महिला सचिव बनीं डॉ रेणु स्वरूप

By **Rupesh Dharmik** - September 2, 2021

नई दिल्ली: भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग की सचिव डॉ रेणु स्वरूप को विज्ञान एवं (डीबीटी) के सचिव के पद का अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया है। कैबिनेट की नियुक्ति समिति (डीएसटी) प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से मंगलवार को इस संबंध में आदेश जारी किया गया है। नियमितपदाधिकारी की नियुक्ति या किसी अन्य आदेश तक उन्हें यह कार्यभार दिया गया है। इस तरह, डॉ स्वरूप डीएसटी की पहली महिला सचिव बन गई हैं।डॉ रेणु स्वरूपअब प्रोफेसर आशुतोष शर्मा के स्थान पर डीएसटी सचिव की जिम्मेदारी संभालेंगी।

इसके साथ ही, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद के महानिदेशक एवं वैज्ञानिक तथा (सीएसआईआर) न मंत्रालय का अतिरिक्त प्रभार सौंपा मांडे को पृथ्वी विज्ञा .औद्योगिक अनुसंधान विभाग के सचिव डॉ शेखर सी

गया है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि कुछ समय पूर्व प्रोफेसर आशुतोष शर्मा कोपृथ्वी विज्ञान मंत्रालय के सचिव के रूप में अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया था।

डॉ रेणु स्वरूप ने 10 अप्रैल 2018 को दो साल के कार्यकाल के लिए डीबीटी सचिव के रूप में पदभार संभाला था।बाद में एक अन्य आदेश द्वारा उनका कार्यकाल बढ़ाकर 31 अक्तूबर 2021 तक कर दिया गया था।

डीबीटी सचिव होने के अलावा, डॉ स्वरूप जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान सहायता परिषद की (बाइरैक) अध्यक्ष भी हैं, जो डीबीटी द्वारा स्थापित एक गैरभकारी सार्वजनिक क्षेत्र का उद्यम है।बाइरैकको स्टार्टअप ला- और छोटे एवं मध्यम उद्यमों पर विशेष ध्यान देने के साथ ज ैव प्रौद्योगिकी में नवीन अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए जाना जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है किडॉ स्वरूप विभिन्न रूपों में लगभग तीन दशक से जैव प्रौद्योगिकी विभाग में अपनी सेवाएंदे रही हैं।

जेनेटिक्स और प्लांट ब्रीडिंग में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएचडी), डॉ रेणु स्वरूप ने कॉमनवेल्थ स्कॉलरशिप के तहत जॉन इन्स सेंटर, नॉर्विच यूके में पोस्ट डॉक्टरेट पूरा किया है। वर्ष 1989 में वह भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के जैव प्रौद्योगिकी विभाग में एक विज्ञान प्रबंधक का कार्यभार संभालने के लिए भारत लौट आयीं।तभी से, डॉ स्वरूप भारत में जैव प्रौद्योगिकी से जुड़ी गतिविधियों को दिशा प्रदान करने में सक्रिय रूप से जुटीरही हैं।

वर्ष 2001 का जैव प्रौद्योगिकी दृष्टिपत्र और वर्ष 2007 की राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति का विकासइसके उदाहरण कहे जा सकते हैं। डॉ स्वरूप वर्ष 2001 में विकसितकिए गए जैव प्रौद्योगिकी विजन और वर्ष2007 में विकसित राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति और रणनीति II, 2015-20 की विशेषज्ञ समिति के सदस्य सचिव के रूप में सक्रिय तौर पर जुड़ी हुई थीं।

डॉरेणु स्वरूप महिलाओं और विज्ञान से संबंधित कार .्यक्रमों और गतिविधियों में भी निकटता से शामिल रही हैं। महिला वैज्ञानिकों के लिए बायोटेक्नोलॉजी करियर एडवांसमेंट – बायो केयर)Bio CARE) योजना को लागू कराने में उनकी अग्रणी भूमिका रही है। वह प्रधानमंत्री की वैज्ञानिक सलाहकार समिति द्वारा गठित ‘विज्ञान में महिलाएं’ पर केंद्रित टास्क फोर्स की सदस्य भी थीं।

डॉ रेणु स्वरूप भारत की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी समेत कई राष्ट्रीय संस्थानों, विश्वविद्यालयों और केंद्रों के शासी निकाय की सदस्य हैं। वर्ष 2012 में, उन्हें “बायोस्पेक्ट्रम पर्सन ऑफ द ईयर अवार्ड” से सम्मानित किया गया था।(इंडिया साइंस वायर)

भारतहेराल्ड

डीएसटी की पहली महिला सचिव बनीं डॉ रेणु स्वरूप

3 weeks ago

नई दिल्ली: भारत सरकार के जैव प्रौद्योगिकी विभाग एवं विज्ञान को स्वरूप रेणु डॉ सचिव की (डीबीटी) सौंपा प्रभार अतिरिक्त का पद के सचिव के (डीएसटी) विभाग प्रौद्योगिकीगया है। कैबिनेट की नियुक्ति समिति की ओर से मंगलवार को इस संबंध में आदेश जारी किया गया है। नियमित पदाधिकारी की नियुक्ति या किसी अन्य आदेश तक उन्हें यह कार्यभार दिया गया है। इस तरह, डॉ स्वरूप डीएसटी की पहली महिला सचिव बन गई हैं।डॉ रेणु स्वरूपअब प्रोफेसर आशुतोष शर्मा के स्थान पर डीएसटी सचिव की जिम्मेदारी संभालेंगी।

इसके साथ ही, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद तथा वैज्ञानिक एवं महानिदेशक के (सीएसआईआर) सौंपा प्रभार अतिरिक्त का मंत्रालय विज्ञान पृथ्वी को मांडे .सी शेखर डॉ सचिव के विभाग अनुसंधान औद्योगिक

गया है। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि कुछ समय पूर्व प्रोफेसर आशुतोष शर्मा को पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय के सचिव के रूप में अतिरिक्त प्रभार सौंपा गया था।

डॉ रेणु स्वरूप ने 10 अप्रैल 2018 को दो साल के कार्यकाल के लिए डीबीटी सचिव के रूप में पदभार संभाला था।बाद में एक अन्य आदेश द्वारा उनका कार्यकाल बढ़ाकर 31 अक्तूबर 2021 तक कर दिया गया था।

डीबीटी सचिव होने के अलावा, डॉ स्वरूप जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान सहायता परिषद की (बाइरैक) हैं भी अध्यक्ष, जो डीबीटी द्वारा स्थापित एक गैर उद्यम का क्षेत्र सार्वजनिक लाभकारी-है।बाइरैकको स्टार्टअप और छोटे एवं मध्यम उद्यमों पर विशेष ध्यान देने के साथ जैव प्रौद्योगिकी में नवीन अनुसंधान को बढ़ावा देने के लिए जाना जाता है। यहाँ यह उल्लेखनीय है किडॉ स्वरूप विभिन्न रूपों में लगभग तीन दशक से जैव प्रौद्योगिकी विभाग में अपनी सेवाएंदे रही हैं।

जेनेटिक्स और प्लांट ब्रीडिंग में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएचडी), डॉ रेणु स्वरूप ने कॉमनवेल्थ स्कॉलरशिप के तहत जॉन इन्स सेंटर, नॉर्विच यूके में पोस्ट डॉक्टरेट पूरा किया है। वर्ष 1989 में वह भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के जैव प्रौद्योगिकी विभाग में एक विज्ञान प्रबंधक का कार्यभार संभालने के लिए भारत लौट आयीं।तभी से, डॉ स्वरूप भारत में जैव प्रौद्योगिकी से जुड़ी गतिविधियों को दिशा प्रदान करने में सक्रिय रूप से जुटीरही हैं।

वर्ष 2001 का जैव प्रौद्योगिकी दृष्टिपत्र और वर्ष 2007 की राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति का विकासइसके उदाहरण कहे जा सकते हैं। डॉ स्वरूप वर्ष 2001 में विकसितकिए गए जैव प्रौद्योगिकी विजन और वर्ष2007 में विकसित राष्ट्रीय जैव प्रौद्योगिकी विकास रणनीति और रणनीति II, 2015-20 की विशेषज्ञ समिति के सदस्य सचिव के रूप में सक्रिय तौर पर जुड़ी हुई थीं।

डॉ रही शामिल से निकटता भी में गतिविधियों और कार्यक्रमों संबंधित से विज्ञान और महिलाओं स्वरूप रेणु .
 एडवांसमेंट करियर बायोटेक्नोलॉजी लिए के ज्ञानिकोंवै महिला हैं।– बायो केयर)Bio CARE) योजना को लागू कराने में उनकी अग्रणी भूमिका रही है। वह प्रधानमंत्री की वैज्ञानिक सलाहकार समिति द्वारा गठित 'विज्ञान में महिलाएं' पर केंद्रित टास्क फोर्स की सदस्य भी थीं।

डॉ रेणु स्वरूप भारत की राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी समेत कई राष्ट्रीय संस्थानों, विश्वविद्यालयों और केंद्रों के शासी निकाय की सदस्य हैं। वर्ष 2012 में, उन्हें "बायोस्पेक्ट्रम पर्सन ऑफ द ईयर अवार्ड" से सम्मानित किया गया था।(वायर साइंस इंडिया)

“स्टार्टपहुँचे प्रौद्योगिकी अप तक सक्रिय तौर पर-विकास बोर्ड”

02/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 02 सितंबर :(इंडिया साइंस वायर)"युवा स्टार्ट अप्स के सहायता माँगने से पहले ही प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड-को सफलतापूर्वक उत्पादों के (टीडीबी) को उनके पास सक्रिय रूप से स्वयं पहुँचना चाहिए। प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड (टीडीबी) विकास केलिए स्टार्टअप पारिस्थितिकी तंत्र की खोज और उसका पोषण प्रभावी रूप से करना चाहिए।-”

प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के (टीडीबी)25वें स्थापना दिवस पर बुधवार को आयोजित कार्यक्रम को संबोधित करते हुए केंद्रीय राज्य मंत्री पूर्वोत्तर क्षेत्र विकास (स्वतंत्र प्रभार), पीएमओ, कार्मिक, लोक शिकायत, पेंशन, परमाणु ऊर्जा राज्य मंत्री डॉ . प्रधानमंत्री मोदी के जितेंद्र सिंह ने ये बातें कही हैं। डॉ सिंह ने कहा कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी'आत्मनिर्भर भारत' के लक्ष्य को प्राप्त करने की कुंजी है।

डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नये भारत की कल्पना के अनुरूप अगले 25 वर्षों का रोडमैप; कृत्रिम बुद्धिमत्ता, खगोलविज्ञान-, डेटाविज्ञान-, सौरऊर्जा-, हरितहाइड्रोजन जैसे उभरते क्षेत्रों में भारत को वैश्विक नेतृत्वकर्ता के -रूप में विकसित करने के के उद्देश्य पर केंद्रित होना चाहिए। उन्होंने कहा कि सेमीकंडक्टर-, क्वांटम कंप्यूटिंग, क्लाइमेट चेंज

मिटिगेशन टेक्नोलॉजी और साइबर फिजिकल सिस्टम जैसे उभरते क्षेत्रों में वैश्विक नेतृत्व के रूप में भारत को स्थापित करने के लिए पहल की जानी चाहिए।

प्रधानमंत्री के 75वें स्वतंत्रता दिवस भाषण का उल्लेख करते हुए डॉ सिंह ने कहा, "हमें भारतीय स्वतंत्रता के 75 वर्ष के अवसर को केवल एक समारोह तक सीमित नहीं रखना चाहिए। हमें नये संकल्पों की नींव रखनी चाहिए और नये संकल्पों के साथ आगे बढ़ना चाहिए। अगले 25 वर्षों की यात्रा पूरी करके, जब हम भारतीय स्वतंत्रता की शताब्दी मना रहे होंगे, तो वह नये भारत के निर्माण की अमृतअवधि का प्रतीक होगा।-" डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि जीवन के सभी क्षेत्रों में वैज्ञानिक और तकनीकी नवाचार से ही अगले 25 वर्षों के लिए कार्ययोजना निर्धारित की जाएगी।

डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि भारत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रत्येक क्षेत्र में तेजी से उभर रहा है और प्रौद्योगिकी भारत के हर घर में प्रवेश कर चुकी है। उन्होंने कहा कि सच्ची सफलता का आकलन अधिकांश भारतीय नागरिकों को "ईज ऑफ लिविंग" का आनंद लेने में मदद करके किया जाएगा। केंद्रीय मंत्री ने इस अवसर पर टीडीबी की पत्रिका का भी विमोचन किया।

इस कार्यक्रम में नीति आयोग के सदस्य डॉसारस्वत .के.वी ., वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान विभाग के (डीएसआईआर) के (सीएसआईआर) सचिव एवं वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषदमहानिदेशक तथा टीडीबी बोर्ड सदस्य डॉशेखर . मांडे .सी, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग रेणु स्वरूप .की सचिव डॉ (डीबीटी) और जैव प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी), प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के सचिव राजेश कुमार पाठक (टीडीबी), प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के निदेशक राजेश जैन और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के पूर्व सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा शामिल थे।

भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार प्रोफेसर केविजयराघवन ने वर्चुअल माध्यम से कार्यक्रम को संबोधित किया। डॉ . कृष्णा एला, अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, भारत बायोटेक तथा युवा उद्यमी अक्षता कारी, सहसंस्थापक एवं सीओओ-, कोको लैब ने भी व्यक्तिगत रूप से इस कार्यक्रम को संबोधित किया। भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार प्रोफेसर के विजय राघवन ने कहा कि "टीडीबी लगातार महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है और इसने दिखाया है कि हमारे पारिस्थितिकी तंत्र में नये प्रकार के नवाचारों को भी बढ़ाया जा सकता है।"

डीएसटी और डीबीटी सचिव डॉरेणु स्वरूप . ने नवाचार पारिस्थितिकी तंत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के लिए टीडीबी के प्रयासों का उल्लेख किया। जबकि, डीएसआईआर सचिव, सीएसआईआर के महानिदेशक एवं टीडीबी बोर्ड के सदस्य डॉशेखर . सी मांडे ने अब तक किए गए टीडीबी के प्रयासों के साथ ही भारत के भविष्य के लिए उनके महत्व को रेखांकित किया। डीएसटी के पूर्व सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा ने समाज के लाभ के लिए विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार के नये और उभरते क्षेत्रों के दोहन में टीडीबी की भूमिका को विशेष रूप से रेखांकित किया।

डॉ मोदी के नेतृत्व में भारत में अनुसंधान एवं विकास का पारिस्थितिकी तंत्र सारस्वत ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेन्द्र .के.वी . परिवर्तित हुआ है, और अब अनुसंधान की व्यवहार्यता और उसके व्यावसायीकरण पर अधिक जोर दिया जा रहा है। उन्होंने कहा, भारत में 5,000 से अधिक स्टार्टअप काम कर रहे हैं-, जिनमें से लगभग 50 महिला उद्यमियों के नेतृत्व में चलाए जा रहे हैं। डॉसारस्वत ने कहा कि अब तो बहुराष्ट्रीय कंपनियां भी भारतीय नवाचारों और भारत में अनुसंधान एवं विकास . पना हेतु निवेश के लिए आगे आ रही हैंसुविधाओं की स्था, जो एक स्वागत योग्य बदलाव है।

दी इंडियन बुलेटिन

"स्टार्टअप तक सक्रिय- तौर पर पहुँचे प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड"

3 weeks ago

नई दिल्ली, 02 सितंबर: "युवा स्टार्ट उनके को (टीडीबी) बोर्ड विकास प्रौद्योगिकी ही पहले से माँगने सहायता के अप्स- सफलतापूर्वक को (टीडीबी) बोर्ड विकास प्रौद्योगिकी चाहिए। पहुँचना स्वयं से रूप सक्रिय पासउत्पादों के विकास के लिए स्टार्टचाहिए। करना से रूप प्रभावी पोषण उसका और खोज की तंत्र पारिस्थितिकी अप-" प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के (टीडीबी)25वें स्थापना दिवस पर बुधवार को आयोजित कार्यक्रम को संबोधित करते हुए केंद्रीय राज्य मंत्री स्वतंत्र) पूर्वोत (प्रभार्तर क्षेत्र विकास, पीएमओ, कार्मिक, लोक शिकायत, पेंशन, परमाणु ऊर्जा राज्य मंत्रीडॉ ये ने सिंह जितेंद्र . के मोदी प्रधानमंत्री प्रौद्योगिकी और विज्ञान कि कहा ने सिंह डॉ हैं। कही बातें'आत्मनिर्भर भारत' के लक्ष्य को प्राप्त करने की कुंजी है।

डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदीके नये भारत की कल्पना के अनुरूप अगले 25 वर्षों का रोडमैप;कृत्रिम बुद्धिमत्ता, खगोलविज्ञान-, डेटाविज्ञान-, सौरऊर्जा-, हरित के नेतृत्वकर्ता वैश्विक को भारत में क्षेत्रों उभरते जैसे हाइड्रोजन- उद्देश्य के के विकसितकरने में रूप पर केंद्रित होना चाहिए। उन्होंने कहा कि सेमीकंडक्टर-, क्वांटम कंप्यूटिंग, क्लाइमेट चेंज

मिटिगेशन टेक्नोलॉजी और साइबर फिजिकल सिस्टम जैसे उभरते क्षेत्रों में वैश्विक नेतृत्व के रूप में भारत को स्थापित करने के लिए पहल की जानी चाहिए।

प्रधानमंत्री के 75वें स्वतंत्रता दिवस भाषण का उल्लेख करते हुएडॉ सिंह ने कहा, "हमें भारतीय स्वतंत्रता के 75 वर्ष के अवसर को केवल एक समारोह तक सीमित नहीं रखना चाहिए। हमें नये संकल्पों की नींव रखनी चाहिए और नये संकल्पों के साथ आगे बढ़ना चाहिए। अगले 25 वर्षों की यात्रा पूरी करके, जब हम भारतीय स्वतंत्रता की शताब्दी मना रहे होंगे, तो वह नये भारत के निर्माण की अमृतहोगा। प्रतीक का अवधि-"डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि जीवन के सभी क्षेत्रों में वैज्ञानिक और तकनीकी नवाचार से ही अगले 25 वर्षों के लिए कार्ययोजना निर्धारित की जाएगी।

डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि भारत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रत्येक क्षेत्र में तेजी से उभर रहा हैऔर प्रौद्योगिकी भारत के हर घर में प्रवेश कर चुकी है। उन्होंने कहा कि सच्ची सफलता का आकलन अधिकांश भारतीय नागरिकों को "ईज ऑफ लिविंग" का आनंद लेने में मदद करके किया जाएगा। केंद्रीय मंत्री ने इस अवसर पर टीडीबी की पत्रिका का भी विमोचन किया।

इस कार्यक्रम में नीति आयोग के सदस्य डॉसारस्वत .के.वी ., वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान विभाग (डीएसआईआर) बोर टीडीबी तथा कमहानिदेश के (सीएसआईआर) परिषद अनुसंधान औद्योगिक तथा वैज्ञानिक एवं सचिव के्ड सदस्य डॉमांडे .सी शेखर ., विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग रेणु .डॉ सचिव की (डीबीटी) विभाग प्रौद्योगिकी जैव और (डीएसटी) स्वरूप, प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड पाठक कुमार राजेश सचिव के (टीडीबी), प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के निदेशक राजेश जैन और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के पूर्व सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा शामिल थे। भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार प्रोफेसर केएला कृष्णा डॉ किया। संबोधित को कार्यक्रम से माध्यम वर्चुअल ने विजयराघवन ., अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, भारत बायोटेक तथा युवा उद्यमी अक्षता कारी, सहसं-स्थापक एवं सीओओ, कोको लैब ने भी व्यक्तिगत रूप से इस कार्यक्रम को संबोधित किया।

भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार प्रोफेसर के विजय राघवन ने कहा कि "टीडीबी लगातार महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है और इसने दिखाया है कि हमारे पारिस्थितिकी तंत्र में नये प्रकार के नवाचारों को भी बढ़ाया जा सकता है।" डीएसटीऔर डीबीटीसचिव डॉस्वरूप रेणु . ने नवाचार पारिस्थितिकी तंत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के लिए टीडीबी के प्रयासों का उल्लेख किया। जबकि, डीएसआईआर सचिव, सीएसआईआर के महानिदेशक एवं टीडीबी बोर्ड के सदस्य डॉ . मा सी शेखरंडे ने अब तक किए गए टीडीबी के प्रयासों के साथ ही भारत के भविष्य के लिए उनके महत्व को रेखांकित किया। डीएसटी के पूर्व सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा ने समाज के लाभ के लिए विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार के नये और उभरते क्षेत्रों के दोहन में टीडीबी की भूमिका को विशेष रूप से रेखांकित किया।

डॉ पारिस्थितिकी का विकास एवं अनुसंधान में भारत में नेतृत्व के मोदी नरेन्द्र प्रधानमंत्री कि कहा ने सारस्वत .के.वी . है हुआ परिवर्तित तंत्र, और अब अनुसंधान की व्यवहार्यता और उसके व्यावसायीकरण पर अधिक जोर दिया जा रहा है। उन्होंने कहा, भारत में 5,000 से अधिक स्टार्टहैं रहे कर काम अप-, जिनमें से लगभग 50 महिला उद्यमियों के नेतृत्व में चलाए जा रहे हैं। डॉ अनुसंधान में भारत और नवाचारों भारतीय भी कंपनियां बहुराष्ट्रीय तो अब कि कहा ने सारस्वत . ल के निवेश हेतु नास्थाप की सुविधाओं विकास एवंिए आगे आ रही हैं, जो एक स्वागत योग्य बदलाव है। साइंस इंडिया) (वायर

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

“स्टार्टअप तक सक्रिय तौर पर पहुँचे - प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड”

By **Rupesh Dharmik**- September 2, 2021

नई दिल्ली, 02 सितंबर: “युवा स्टार्ट (टीडीबी) अप्स के सहायता माँगने से पहले ही प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड-को सफलतापूर्वक (टीडीबी) को उनके पास सक्रिय रूप से स्वयं पहुँचना चाहिए। प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड तंत्र की खोज और उ अप पारिस्थितिकी-उत्पादों के विकास के लिए स्टार्टसका पोषण प्रभावी रूप से करना चाहिए।” प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के (टीडीबी)25वें स्थापना दिवस पर बुधवार को आयोजित कार्यक्रम को संबोधित करते हुए केंद्रीय राज्य मंत्री पूर्वोत्तर क्षेत्र विकास (स्वतंत्र प्रभार), पीएमओ, कार्मिक, लोक शिकायत, पेंशन, परमाणु ऊर्जा राज्य मंत्रीडॉजितेंद्र सिंह ने ये बातें कही हैं। डॉ सिंह ने कहा कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी . प्रधानमंत्री मोदी के‘आत्मनिर्भर भारत’ के लक्ष्य को प्राप्त करने की कुंजी है।

डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदीके नये भारत की कल्पना के अनुरूप अगले 25 वर्षों का रोडमैप;कृत्रिम बुद्धिमत्ता, खगोलविज्ञान-, डेटाविज्ञान-, सौरऊर्जा-, हरितहाइड्रोजन जैसे उभरते क्षेत्रों में भारत --को वैश्विक नेतृत्वकर्ता के रूप में विकसितकरने के के उद्देश्य पर केंद्रित होना चाहिए। उन्होंने कहा कि सेमी

डक्टरकं, क्वांटम कंप्यूटिंग, क्लाइमेट चेंज मिटिगेशन टेक्नोलॉजी और साइबर फिजिकल सिस्टम जैसे उभरते क्षेत्रों में वैश्विक नेतृत्व के रूप में भारत को स्थापित करने के लिए पहल की जानी चाहिए।

प्रधानमंत्री के 75वें स्वतंत्रता दिवस भाषण का उल्लेख करते हुएडॉ सिंह ने कहा, "हमें भारतीय स्वतंत्रता के 75 वर्ष के अवसर को केवल एक समारोह तक सीमित नहीं रखना चाहिए। हमें नये संकल्पों की नींव रखनी चाहिए और नये संकल्पों के साथ आगे बढ़ना चाहिए। अगले 25 वर्षों की यात्रा पूरी करके, जब हम भारतीय स्वतंत्रता की शताब्दी मना रहे होंगे, तो वह नये भारत के निर्माण की अमृतअवधि का प्रतीक होगा।-"डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि जीवन के सभी क्षेत्रों में वैज्ञानिक और तकनीकी नवाचार से ही अगले 25 वर्षों के लिए कार्ययोजना निर्धारित की जाएगी।

डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि भारत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रत्येक क्षेत्र में तेजी से उभर रहा हैऔर प्रौद्योगिकी भारत के हर घर में प्रवेश कर चुकी है। उन्होंने कहा कि सच्ची सफलता का आकलन अधिकांश भारतीय नागरिकों को "ईज ऑफ लिविंग" का आनंद लेने में मदद करके किया जाएगा। केंद्रीय मंत्री ने इस अवसर पर टीडीबी की पत्रिका का भी विमोचन किया।

इस कार्यक्रम में नीति आयोग के सदस्य डॉसारस्वत .के.वी ., वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान विभाग के महानिदेशक (सीएसआईआर) के सचिव एवं वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (डीएसआईआर) मांडे .शेखर सी .तथा टीडीबी बोर्ड सदस्य डॉ, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग डी)एसटीऔर जैव प्रौद्योगिकी (रेणु स्वरूप .की सचिव डॉ (डीबीटी) विभाग, प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के सचिव राजेश कुमार पाठक (टीडीबी), प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के निदेशक राजेश जैन और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के पूर्व सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा शामिल थे। भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार प्रोफेसर केविजयराघवन ने वर्चुअल . माध्यम से कार्यक्रम को संबोधित किया। डॉ कृष्णा एला, अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, भारत बायोटेक तथा युवा उद्यमी अक्षता कारी, सहसंस्थापक एवं सीओओ-, कोको लैब ने भी व्यक्तिगत रूप से इस कार्यक्रम को संबोधित किया।

भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार प्रोफेसर के विजय राघवन ने कहा कि "टीडीबी लगातार महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है और इसने दिखाया है कि हमारे पारिस्थितिकी तंत्र में नये प्रकार के नवाचारों को भी बढ़ाया जा सकता है।" डीएसटीऔर डीबीटीसचिव डॉ .रेणु स्वरूप ने नवाचार पारिस्थितिकी तंत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के लिए टीडीबी के प्रयासों का उल्लेख किया। जबकि, डीएसआईआर सचिव, सीएसआईआर के महानिदेशक एवं टीडीबी बोर्ड के सदस्य डॉ शेखर सी मांडे ने अब तक किए गए टीडीबी के . प्रयासों के साथ ही भारत के भविष्य के लिए उनके महत्व को रेखांकित किया। डीएसटी के पूर्व सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा ने समाज के लाभ के लिए विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार के नये और उभरते क्षेत्रों के दोहन में टीडीबी की भूमिका को विशेष रूप से रेखांकित किया।

डॉसारस्वत ने कहा कि प्रधानम .के.वी .ंत्री नरेन्द्र मोदी के नेतृत्व में भारत में अनुसंधान एवं विकास का पारिस्थितिकी तंत्र परिवर्तित हुआ है, और अब अनुसंधान की व्यवहार्यता और उसके व्यावसायीकरण पर अधिक जोर दिया जा रहा है। उन्होंने कहा, भारत में 5,000 से अधिक स्टार्टअप काम कर रहे हैं-, जिनमें से लगभग 50 महिला उद्यमियों के नेतृत्व में चलाए जा रहे हैं। डॉसारस्वत ने कहा कि अब तो बहुराष्ट्रीय कंपनियां भी . भारतीय नवाचारों और भारत में अनुसंधान एवं विकास सुविधाओं की स्थापना हेतु निवेश के लिए आगे आ रही हैं, जो एक स्वागत योग्य बदलाव है।इंडिया स)ाइंस वायर(

“स्टार्टअप तक सक्रिय तौर पर पहुँचे - प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड”

3 weeks ago

नई दिल्ली, 02 सितंबर: “युवा स्टार्ट (टीडीबी) बोर्ड विकास प्रौद्योगिकी ही पहले से माँगने सहायता के अप्स- प्रौद्योगिकी चाहिए। पहुँचना स्वयं से रूप सक्रिय पास उनके कोविकास बोर्ड सफलतापूर्वक को (टीडीबी) करना से रूप प्रभावी पोषण उसका और खोज की तंत्र पारिस्थितिकी अप-स्टार्ट लिए के विकास के उत्पादों चाहिए।” प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के (टीडीबी)25वें स्थापना दिवस पर बुधवार को आयोजित कार्यक्रम को संबोधित करते हुए केंद्रीय राज्य मंत्री विकास क्षेत्र पूर्वोत्तर (प्रभार स्वतंत्र), पीएमओ, कार्मिक, लोक शिकायत, पेंशन, परमाणु ऊर्जा राज्य मंत्रीडॉ प्रौद्योगिकी और विज्ञान कि कहा ने सिंह डॉ हैं। कही बातें ये ने सिंह जितेंद्र . के मोदी प्रधानमंत्री’आत्मनिर्भर भारत’ के लक्ष्य को प्राप्त करने की कुंजी है।

डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदीके नये भारत की कल्पना के अनुरूप अगले 25 वर्षों का रोडमैप;कृत्रिम बुद्धिमत्ता, खगोलविज्ञान-, डेटाविज्ञान-, सौरऊर्जा-, हरित भारत में क्षेत्रों उभरते जैसे हाइड्रोजन- नेतृत्वकर्ता वैश्विक कोके रूप में विकसितकरने के के उद्देश्य पर केंद्रित होना चाहिए। उन्होंने कहा कि सेमी-कंडक्टर, क्वांटम कंप्यूटिंग, क्लाइमेट चेंज मिटिगेशन टेक्नोलॉजी और साइबर फिजिकल सिस्टम जैसे उभरते क्षेत्रों में वैश्विक नेतृत्व के रूप में भारत को स्थापित करने के लिए पहल की जानी चाहिए।

प्रधानमंत्री के 75वें स्वतंत्रता दिवस भाषण का उल्लेख करते हुएडॉ सिंह ने कहा, “हमें भारतीय स्वतंत्रता के 75 वर्ष के अवसर को केवल एक समारोह तक सीमित नहीं रखना चाहिए। हमें नये संकल्पों की नींव रखनी चाहिए और नये संकल्पों के साथ आगे बढ़ना चाहिए। अगले 25 वर्षों की यात्रा पूरी करके, जब हम भारतीय स्वतंत्रता की शताब्दी मना रहे होंगे, तो वह नये भारत के निर्माण की अमृतहोगा। प्रतीक का अवधि-”डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि जीवन के सभी क्षेत्रों में वैज्ञानिक और तकनीकी नवाचार से ही अगले 25 वर्षों के लिए कार्ययोजना निर्धारित की जाएगी।

डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि भारत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के प्रत्येक क्षेत्र में तेजी से उभर रहा हैऔर प्रौद्योगिकी भारत के हर घर में प्रवेश कर चुकी है। उन्होंने कहा कि सच्ची सफलता का आकलन अधिकांश भारतीय नागरिकों को “ईज ऑफ लिविंग” का आनंद लेने में मदद करके किया जाएगा। केंद्रीय मंत्री ने इस अवसर पर टीडीबी की पत्रिका का भी विमोचन किया।

इस कार्यक्रम में नीति आयोग के सदस्य डॉसारस्वत .के.वी ., वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान विभाग महानिदेशक के (सीएसआईआर) परिषद अनुसंधान औद्योगिक तथा वैज्ञानिक एवं सचिव के (डीएसआईआर)

मांडे .सी शेखर .डॉ सदस्य बोर्ड टीडीबी तथा, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग प्रौद्योगिकी जैव और (डीएसटी) स्वरूप रेणु .डॉ सचिव की (डीबीटी) विभाग, प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड पाठक कुमार राजेश सचिव के (टीडीबी), प्रौद्योगिकी विकास बोर्ड के निदेशक राजेश जैन और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के पूर्व सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा शामिल थे। भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार प्रोफेसर के वर्चुअल ने विजयराघवन . एला कृष्णा डॉ किया। बोधितसं को कार्यक्रम से माध्यम, अध्यक्ष और प्रबंध निदेशक, भारत बायोटेक तथा युवा उद्यमी अक्षता कारी, सहसीओओ एवं संस्थापक-, कोको लैब ने भी व्यक्तिगत रूप से इस कार्यक्रम को संबोधित किया।

भारत सरकार के प्रधान वैज्ञानिक सलाहकार प्रोफेसर के विजय राघवन ने कहा कि “टीडीबी लगातार महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है और इसने दिखाया है कि हमारे पारिस्थितिकी तंत्र में नये प्रकार के नवाचारों को भी बढ़ाया जा सकता है।” डीएसटीऔर डीबीटीसचिव डॉस्वरूप रेणु . ने नवाचार पारिस्थितिकी तंत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के लिए टीडीबी के प्रयासों का उल्लेख किया। जबकि, डीएसआईआर सचिव, सीएसआईआर के महानिदेशक एवं टीडीबी बोर्ड के सदस्य डॉ के टीडीबी गए किए तक अब ने मांडे सी शेखर . उनके लिए के भविष्य के भारत ही साथ के प्रयासों महत्व को रेखांकित किया। डीएसटी के पूर्व सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा ने समाज के लाभ के लिए विज्ञान, प्रौद्योगिकी और नवाचार के नये और उभरते क्षेत्रों के दोहन में टीडीबी की भूमिका को विशेष रूप से रेखांकित किया।

डॉ का विकास एवं अनुसंधान में भारत में नेतृत्व के मोदी नरेन्द्र प्रधानमंत्री कि कहा ने सारस्वत .के.वी . है हुआ परिवर्तित तंत्र पारिस्थितिकी, और अब अनुसंधान की व्यवहार्यता और उसके व्यावसायीकरण पर अधिक जोर दिया जा रहा है। उन्होंने कहा, भारत में 5,000 से अधिक स्टार्टहैं रहे कर काम अप-, जिनमें से लगभग 50 महिला उद्यमियों के नेतृत्व में चलाए जा रहे हैं। डॉ भी कंपनियां हुराष्ट्रीयब तो अब कि कहा ने सारस्वत . विक एवं अनुसंधान में भारत और नवाचारों भारतीयास सुविधाओं की स्थापना हेतु निवेश के लिए आगे आ रही हैं, जो एक स्वागत योग्य बदलाव है।(वायर साइंस इंडिया)

DownToEarth | डाउन टू अर्थ

IIT-Madras researchers develop new technique to help avoid sudden power shutdowns

The new technique works by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks

By India Science Wire
Published: Thursday 02 September 2021

Indian Institute of Technology (IIT)-Madras researchers have developed a new technique that promises to help avoid sudden power shutdowns by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks.

The reliability of electric power systems largely depends on the performance of the electrical insulation. But, the outdoor insulation on the transmission lines and the substation equipment are subjected to environmental pollution, in addition to the electrical, thermal, and mechanical stresses.

The pollution-related electrical flashover can lead to blackouts and the collapse of the system. Cleaning the polluted insulator under the working condition is the only fool-proof way of resolving the problem.

However, due to the high operating voltages and huge spatial span of the electrical transmission system, it would be better if the level of pollution deposition and the type of pollutant are known before undertaking any exercise to clean them.

The team of researchers at IIT-Madras led by R Sarathi of the Department of Electrical Engineering, IIT Madras and NJ Vasa of the Department of Engineering Design has developed a new method that can measure the contents and thickness of the deposits remotely.

With the new technique, one would have to just shine a laser beam on the insulators and identify the constituents of pollution deposition. Presently, the beam can be shone from a distance of even up to 40 metres.

The researchers are working to finetune it further to extend this distance to up to 100 m. This would enable assessing the pollution layer on transmission line insulators either from the ground or from a drone.

The scientists noted that there will be no more be need to interrupt power transmission nor for anyone to climb the tower. “The technique is simple and reliable. It can provide accurate results within no time. The entire length of the transmission line could be monitored effectively for its condition on pollution deposit level in a short time”, they said.

The team is planning to approach National Thermal Power Corporation, Power Grid and other utilities to demonstrate this technology and its use in the real power system network. The researchers have published a report on their study in the journal *IOP-Measurement Science and Technology*.

The work was financially supported under the National Perspective Plan of the Ministry of Power, Government of India through Central Power Research Institute, Bengaluru. (**India Science Wire**)

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

A New Technique to Help Avoid Sudden Power Shutdowns

By **ISW Desk** On **Sep 6, 2021**

Indian Institute of Technology (IIT)-Madras researchers have developed a new technique that promises to help avoid sudden power shutdowns by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks.

The reliability of electric power systems largely depends on the performance of the electrical insulation. But, the outdoor insulation on the transmission lines and the substation equipment are subjected to environmental pollution, in addition to the electrical, thermal, and mechanical stresses.

The pollution-related electrical flashover can lead to blackouts and the collapse of the system. Cleaning the polluted insulator under the working condition is the only fool-proof way of resolving the problem.

However, due to the high operating voltages and huge spatial span of the electrical transmission system, it would be better if the level of pollution deposition and the type of pollutant are known before undertaking any exercise to clean them.

The team of researchers at IIT-Madras led by Prof. R. Sarathi of the Department of Electrical Engineering, IIT Madras, and Prof. N.J. Vasa of the Department of Engineering Design has developed a new method that can measure the contents and thickness of the deposits remotely.

With the new technique, one would have to just shine a laser beam on the insulators and identify the constituents of pollution deposition. Presently, the beam can be shone from a distance of even up to 40 metres. The researchers are working to finetune it further to extend this distance to up to 100 m. This would enable assessing the pollution layer on transmission line insulators either from the ground or from a drone.

The scientists noted that there will be no more be need to interrupt power transmission nor for anyone to climb the tower. "The technique is simple and reliable. It can provide accurate results within no time. The entire length of the transmission line could be monitored effectively for its condition on pollution deposit level in a short time", they said.

The team is planning to approach National Thermal Power Corporation, Power Grid and other utilities to demonstrate this technology and its use in the real power system network. The researchers have published a report on their study in the journal `IOP-Measurement Science and Technology. The work was financially supported under the National Perspective Plan of the Ministry of Power, Government of India through Central Power Research Institute (CPRI), Bengaluru.

EET INDIA

IIT Madras Develops New Technique to Prevent Sudden Power Shutdowns

Article By : India Science Wire

Category : Energy | 2021-09-06

IIT Madras researchers have developed a new technique that promises to help avoid sudden power shutdowns by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks.

Indian Institute of Technology (IIT) – Madras researchers have developed a new technique that promises to help avoid sudden power shutdowns by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks.

The reliability of electric power systems largely depends on the performance of the electrical insulation. But, the outdoor insulation on the transmission lines and the substation equipment are subjected to environmental pollution, in addition to the electrical, thermal, and mechanical stresses.

The pollution-related electrical flashover can lead to blackouts and the collapse of the system. Cleaning the polluted insulator under the working condition is the only fool-proof way of resolving the problem.

However, due to the high operating voltages and huge spatial span of the electrical transmission system, it would be better if the level of pollution deposition and the type of pollutant are known before undertaking any exercise to clean them.

The team of researchers at IIT Madras, led by Prof. R. Sarathi of the Department of Electrical Engineering and Prof. N.J. Vasa of the Department of Engineering Design, has developed a new method that can measure the contents and thickness of the deposits remotely.

With the new technique, one would have to just shine a laser beam on the insulators and identify the constituents of pollution deposition. Presently, the beam can be shone from a distance of even up to 40m. The researchers are working to finetune it further to extend this distance to up to 100m. This would enable assessing the pollution layer on transmission line insulators either from the ground or from a drone.

The scientists noted that there will be no more be need to interrupt power transmission nor for anyone to climb the tower. The technique is simple and reliable. It can provide accurate results within no time. The entire length of the transmission line could be monitored effectively for its condition on pollution deposit level in a short time.

The team is planning to approach National Thermal Power Corp., Power Grid and other utilities to demonstrate this technology and its use in the real power system network. The researchers have published a report on their study in the journal IOP-Measurement Science and Technology. The work was financially supported under the National Perspective Plan of the Ministry of Power, Government of India through Central Power Research Institute (CPRI), Bengaluru.

Hindustan Saga

A new technique to help avoid sudden power shutdowns

Hindustan Saga | 3 weeks ago

Prof. R. Sarathi and Prof. N.J. Vasa with the Research Team and the Experiment Set-up at an IIT Madras laboratory

New Delhi, Sept. 02: Indian Institute of Technology (IIT)-Madras researchers have developed a new technique that promises to help avoid sudden power shutdowns by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks.

The reliability of electric power systems largely depends on the performance of the electrical insulation. But, the outdoor insulation on the transmission lines and the substation equipment are subjected to environmental pollution, in addition to the electrical, thermal, and mechanical stresses.

The pollution-related electrical flashover can lead to blackouts and the collapse of the system. Cleaning the polluted insulator under the working condition is the only fool-proof way of resolving the problem.

However, due to the high operating voltages and huge spatial span of the electrical transmission system, it would be better if the level of pollution deposition and the type of pollutant are known before undertaking any exercise to clean them.

The team of researchers at IIT-Madras led by Prof. R. Sarathi of the Department of Electrical Engineering, IIT Madras, and Prof. N.J. Vasa of the Department of Engineering Design has developed a new method that can measure the contents and thickness of the deposits remotely.

With the new technique, one would have to just shine a laser beam on the insulators and identify the constituents of pollution deposition. Presently, the beam can be shone from a distance of even up to 40 metres. The researchers are working to finetune it further to extend this distance to up to 100 m. This would enable assessing the pollution layer on transmission line insulators either from the ground or from a drone.

The scientists noted that there will be no more be need to interrupt power transmission nor for anyone to climb the tower. "The technique is simple and reliable. It can provide accurate results within no time. The entire length of the transmission line could be monitored effectively for its condition on pollution deposit level in a short time", they said.

The team is planning to approach National Thermal Power Corporation, Power Grid and other utilities to demonstrate this technology and its use in the real power system network. The researchers have published a report on their study in the journal `IOP-Measurement Science and Technology. The work was financially supported under the National Perspective Plan of the Ministry of Power, Government of India through Central Power Research Institute (CPRI), Bengaluru. (India Science Wire)

Indian Sentinel
www.indiansentinel.in

A new technique to help avoid sudden power shutdowns

3 weeks ago

Prof. R. Sarathi and Prof. N.J. Vasa with the Research Team and the Experiment Set-up at an IIT Madras laboratory

New Delhi, Sept. 02: Indian Institute of Technology (IIT)-Madras researchers have developed a new technique that promises to help avoid sudden power shutdowns by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks.

The reliability of electric power systems largely depends on the performance of the electrical insulation. But, the outdoor insulation on the transmission lines and the substation equipment are subjected to environmental pollution, in addition to the electrical, thermal, and mechanical stresses.

The pollution-related electrical flashover can lead to blackouts and the collapse of the system. Cleaning the polluted insulator under the working condition is the only fool-proof way of resolving the problem.

However, due to the high operating voltages and huge spatial span of the electrical transmission system, it would be better if the level of pollution deposition and the type of pollutant are known before undertaking any exercise to clean them.

The team of researchers at IIT-Madras led by Prof. R. Sarathi of the Department of Electrical Engineering, IIT Madras, and Prof. N.J. Vasa of the Department of Engineering Design has developed a new method that can measure the contents and thickness of the deposits remotely.

With the new technique, one would have to just shine a laser beam on the insulators and identify the constituents of pollution deposition. Presently, the beam can be shone from a distance of even up to 40 metres. The researchers are working to finetune it further to extend this distance to up to 100 m. This would enable assessing the pollution layer on transmission line insulators either from the ground or from a drone.

The scientists noted that there will be no more be need to interrupt power transmission nor for anyone to climb the tower. "The technique is simple and reliable. It can provide accurate results within no time. The entire length of the transmission line could be monitored effectively for its condition on pollution deposit level in a short time", they said.

The team is planning to approach National Thermal Power Corporation, Power Grid and other utilities to demonstrate this technology and its use in the real power system network. The researchers have published a report on their study in the journal `IOP-Measurement Science and Technology.   The work was financially supported under the National Perspective Plan of the Ministry of Power, Government of India through Central Power Research Institute (CPRI), Bengaluru. (India Science Wire)

Abhyuday Times

A new technique to help avoid sudden power shutdowns

By **Abhyuday Times** - September 2, 2021

New Delhi, Sept. 02: Indian Institute of Technology (IIT)-Madras researchers have developed a new technique that promises to help avoid sudden power shutdowns by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks.

The reliability of electric power systems largely depends on the performance of the electrical insulation. But, the outdoor insulation on the transmission lines and the substation equipment are subjected to environmental pollution, in addition to the electrical, thermal, and mechanical stresses.

The pollution-related electrical flashover can lead to blackouts and the collapse of the system. Cleaning the polluted insulator under the working condition is the only fool-proof way of resolving the problem.

However, due to the high operating voltages and huge spatial span of the electrical transmission system, it would be better if the level of pollution deposition and the type of pollutant are known before undertaking any exercise to clean them.

The team of researchers at IIT-Madras led by Prof. R. Sarathi of the Department of Electrical Engineering, IIT Madras, and Prof. N.J. Vasa of the Department of Engineering Design has developed a new method that can measure the contents and thickness of the deposits remotely.

With the new technique, one would have to just shine a laser beam on the insulators and identify the constituents of pollution deposition. Presently, the beam can be shone from a distance of even up to 40 metres. The researchers are working to finetune it further to extend this distance to up to 100 m. This would enable assessing the pollution layer on transmission line insulators either from the ground or from a drone.

The scientists noted that there will be no more be need to interrupt power transmission nor for anyone to climb the tower. "The technique is simple and reliable. It can provide accurate results within no time. The entire length of the transmission line could be monitored effectively for its condition on pollution deposit level in a short time", they said.

The team is planning to approach National Thermal Power Corporation, Power Grid and other utilities to demonstrate this technology and its use in the real power system network. The researchers have published a report on their study in the journal `IOP-Measurement Science and Technology. The work was financially supported under the National Perspective Plan of the Ministry of Power, Government of India through Central Power Research Institute (CPRI), Bengaluru. (India Science Wire)

airvibe

A new technique to help avoid sudden power shutdowns

Editor | Sep 3, 2021 - 09:18

Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT)-Madras have devised a novel technology that could help avert power outages by making it easier to monitor pollution levels in power transmission networks.

The electrical insulation's performance has a significant impact on the reliability of electric power systems. However, in addition to electrical, thermal, and mechanical stressors, the external insulation on transmission lines and substation equipment is vulnerable to environmental pollution.

Electrical flashovers caused by pollutants can result in blackouts and system failure. The only foolproof approach to solve the situation is to clean the dirty insulator while it is still in use.

However, because of the high working voltages and large spatial span of the electrical transmission system, it is preferable to know the level of pollution deposition and the type of pollutant before attempting to clean it.

Prof. R. Sarathi of IIT Madras' Department of Electrical Engineering and Prof. N.J. Vasa of IIT Madras' Department of Engineering Design have led a team of researchers at IIT-Madras to create a new approach for remotely measuring the contents and thickness of deposits.

Simply focus a laser beam on the insulators and determine the ingredients of pollution deposition with the new technology. The beam can now be emitted at a distance of up to 40 metres. The researchers are aiming to improve it even more so that it can reach a distance of up to 100 metres. This would allow for the evaluation of the contamination layer on transmission line insulators from either the ground or from a drone.

It will no longer be necessary to disrupt power transmission or for anyone to climb the tower, according to the experts. "The method is straightforward and dependable. It is capable of producing precise results in a short period of time. They claimed that the full length of the transmission line could be adequately monitored for its condition on pollutant deposit levels in a short amount of time.

The team intends to approach National Thermal Power Corporation, Power Grid, and other utilities to showcase the technology and its application in a real-world power system. The findings of the study were published in the journal IOP-Measurement Science and Technology. The investigation was supported financially by the Central Power Research Institute (CPRI), Bengaluru, as part of the Ministry of Power's National Perspective Plan.

IIT-Madras researchers develop new technique to help avoid sudden power shutdowns – Down To Earth Magazine

September 2, 2021

The new technique works by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks

Indian Institute of Technology (IIT)-Madras researchers have developed a new technique that promises to help avoid sudden power shutdowns by making it easier to monitor levels of pollution deposits in power transmission networks.

The reliability of electric power systems largely depends on the performance of the electrical insulation. But, the outdoor insulation on the transmission lines and the substation equipment are subjected to environmental pollution, in addition to the electrical, thermal, and mechanical stresses.

The pollution-related electrical flashover can lead to blackouts and the collapse of the system. Cleaning the polluted insulator under the working condition is the only fool-proof way of resolving the problem.

However, due to the high operating voltages and huge spatial span of the electrical transmission system, it would be better if the level of pollution deposition and the type of pollutant are known before undertaking any exercise to clean them.

The team of researchers at IIT-Madras led by R Sarathi of the Department of Electrical Engineering, IIT Madras and NJ Vasa of the Department of Engineering Design has developed a new method that can measure the contents and thickness of the deposits remotely.

With the new technique, one would have to just shine a laser beam on the insulators and identify the constituents of pollution deposition. Presently, the beam can be shone from a distance of even up to 40 metres.

The researchers are working to finetune it further to extend this distance to up to 100 m. This would enable assessing the pollution layer on transmission line insulators either from the ground or from a drone.

The scientists noted that there will be no more be need to interrupt power transmission nor for anyone to climb the tower. "The technique is simple and reliable. It can provide accurate results within no time. The entire length of the transmission line could be monitored effectively for its condition on pollution deposit level in a short time", they said.

The team is planning to approach National Thermal Power Corporation, Power Grid and other utilities to demonstrate this technology and its use in the real power system network. The researchers have published a report on their study in the journal *IOP-Measurement Science and Technology*.

The work was financially supported under the National Perspective Plan of the Ministry of Power, Government of India through Central Power Research Institute, Bengaluru. (**India Science Wire**)

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

CFTRI to Conduct Online Training on Innovative & Healthy Snacks

By Team DP On Sep 5, 2021

Consumer preferences for snacks that deliver on health, convenience, and taste have sparked recent innovation in several of the healthy snack segments. CSIR-Central Food Technological Research Institute (CFTRI) is organizing a two-day webinar on "Innovative & Healthy Snacks" during September 21-22, 2021 under the CSIR Integrated Skill Initiative forthebenefitof start-ups, MSMEs, entrepreneurs, and micro-entrepreneurs working in the area of food processing.

This webinar would focus on formulations, manufacturing, quality, and other regulatory requirements with the Indian snack food industry. The selected topics

would also cover various aspects for establishing a sustainable business model towards functional and health-promoting snacks in meeting the increasing demand along with changing lifestyles.

In addition, it will provide an insight into the opportunities for MSMEs & start-ups with respect to the Indian snack industry including Return on Investment (RoI), sensory and consumer acceptance studies, plant layout, and certifications. The target audience for this workshop is aspiring entrepreneurs who have completed their graduation or diploma in any subject.

The registration fee for joining this workshop has been fixed at Rs. 885/- (including GST) and can be paid through SBI Collect. More information about the workshop can be found on the CFTRI website. Interested participants can apply online for this program on or before Sept.9, 2021. For further details, one can also contact at pmc@cftri.res.in. (India Science Wire)

Republic NewsIndia

CFTRI to conduct online training on innovative & healthy snacks

By **Rupesh Dharmik** - September 2, 2021

New Delhi: Consumer preferences for snacks that deliver on health, convenience, and taste have sparked recent innovation in several of the healthy snack segments. CSIR-Central Food Technological Research Institute (CFTRI) is organizing a two-day webinar on "Innovative & Healthy Snacks" during Sep.21-22, 2021 under the CSIR Integrated Skill Initiative for the benefit of start-ups, MSMEs, entrepreneurs, and micro-entrepreneurs working in the area of food processing.

This webinar would focus on formulations, manufacturing, quality, and other regulatory requirements with the Indian snack food industry. The selected topics would also cover various aspects for establishing a sustainable business model towards functional and health-promoting snacks in meeting the increasing demand along with changing lifestyles.

In addition, it will provide an insight into the opportunities for MSMEs & start-ups with respect to the Indian snack industry including Return on Investment (RoI), sensory and consumer acceptance studies, plant layout, and certifications. The target audience for this workshop is aspiring entrepreneurs who have completed their graduation or diploma in any subject.

The registration fee for joining this workshop has been fixed at Rs. 885/- (including GST) and can be paid through SBI Collect. More information about the workshop can be found on the CFTRI website. Interested participants can apply online for this program on or before Sept.9, 2021. For further details, one can also contact at pmc@cftri.res.in. (India Science Wire)

BioVoice Get Heard!
www.biovoicenews.com

CFTRI to conduct online training on innovative & healthy snacks

This webinar would focus on formulations, manufacturing, quality, and other regulatory requirements with the Indian snack food industry

By **BioVoice News Desk** - September 4, 2021

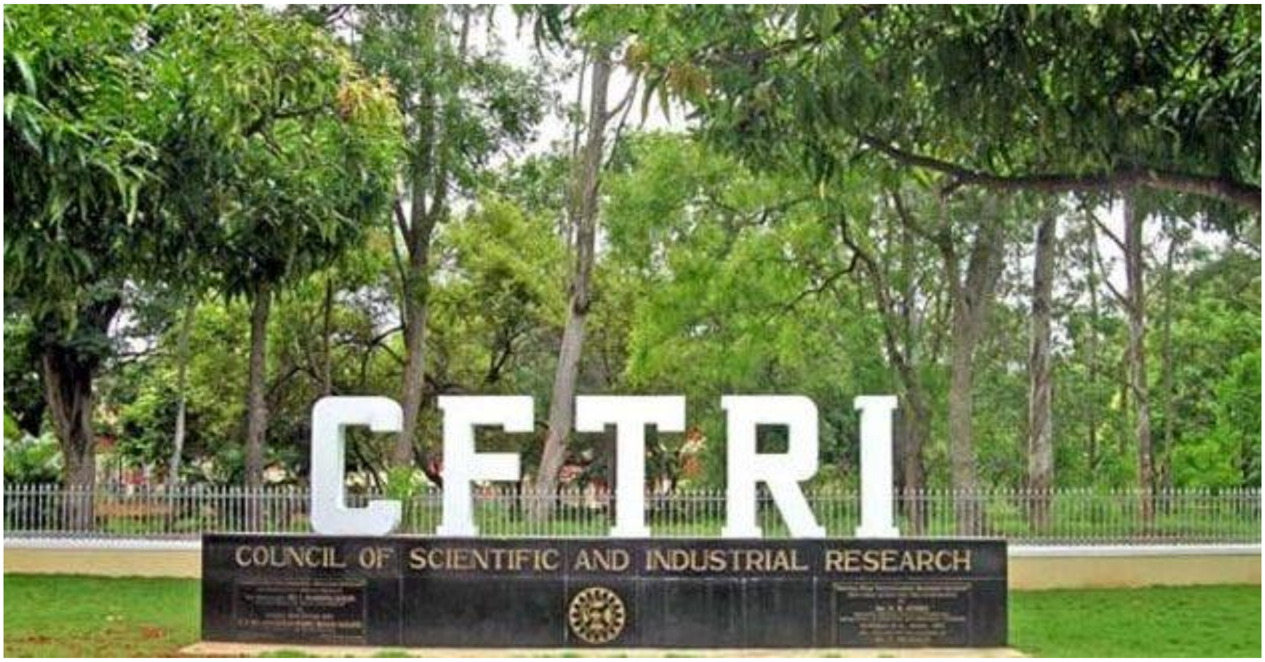

New Delhi: Consumer preferences for snacks that deliver on health, convenience, and taste have sparked recent innovation in several of the healthy snack segments. CSIR-Central Food Technological Research Institute (CFTRI) is organizing a two-day webinar on "Innovative & Healthy Snacks" during September 21-22, 2021 under the CSIR Integrated Skill Initiative for the benefit of start-ups, MSMEs, entrepreneurs, and micro-entrepreneurs working in the area of food processing.

This webinar would focus on formulations, manufacturing, quality, and other regulatory requirements with the Indian snack food industry. The selected topics would also cover various aspects for establishing a sustainable business model towards functional and health-promoting snacks in meeting the increasing demand along with changing lifestyles.

In addition, it will provide an insight into the opportunities for MSMEs & start-ups with respect to the Indian snack industry including Return on Investment (RoI), sensory and consumer acceptance studies, plant layout, and certifications. The target audience for this workshop is aspiring entrepreneurs who have completed their graduation or diploma in any subject.

The registration fee for joining this workshop has been fixed at Rs. 885/- (including GST) and can be paid through SBI Collect. More information about the workshop can be found on the CFTRI website. Interested participants can apply online for this program on or before Sept.9, 2021. For further details, one can also contact at pmc@cftri.res.in.

(India Science Wire)

CFTRI to conduct online training on innovative & healthy snacks

RKD Live | 3 weeks ago

New Delhi: Consumer preferences for snacks that deliver on health, convenience, and taste have sparked recent innovation in several of the healthy snack segments. CSIR-Central Food Technological Research Institute (CFTRI) is organizing a two-day webinar on "Innovative & Healthy Snacks" during Sep.21-22, 2021 under the CSIR Integrated Skill Initiative for the benefit of start-ups, MSMEs, entrepreneurs, and micro-entrepreneurs working in the area of food processing.

This webinar would focus on formulations, manufacturing, quality, and other regulatory requirements with the Indian snack food industry. The selected topics would also cover various aspects for establishing a sustainable business model towards functional and health-promoting snacks in meeting the increasing demand along with changing lifestyles.

In addition, it will provide an insight into the opportunities for MSMEs & start-ups with respect to the Indian snack industry including Return on Investment (RoI), sensory and consumer acceptance studies, plant layout, and certifications. The target audience for this workshop is aspiring entrepreneurs who have completed their graduation or diploma in any subject.

The registration fee for joining this workshop has been fixed at Rs. 885/- (including GST) and can be paid through SBI Collect. More information about the workshop can be found on the CFTRI website. Interested participants can apply online for this program on or before Sept.9, 2021. For further details, one can also contact at pmc@cftri.res.in. (India Science Wire)

CFTRI to conduct online training on innovative & healthy snacks

Editor | Sep 3, 2021 - 09:29

Recent innovation in numerous healthy snack niches has been inspired by consumer preferences for snacks that deliver on health, convenience, and taste. Under the CSIR Integrated Skill Initiative, the CSIR-Central Food Technological Research Institute (CFTRI) will host a two-day webinar on "Innovative & Healthy Snacks" on September 21-22, 2021 for the benefit of start-ups, MSMEs, entrepreneurs, and micro-entrepreneurs working in the food processing industry.

This webinar will focus on the Indian snack food industry's formulas, manufacturing, quality, and other regulatory requirements. The chosen subjects will also address a variety of elements for developing a long-term business

model for functional and health-promoting snacks in order to meet rising demand and changing lifestyles.

It will also include information on the potential for MSMEs and start-ups in the Indian snack market, such as return on investment (RoI), sensory and customer acceptance research, plant designs, and certifications. Aspiring entrepreneurs who have finished their graduation or diploma in any discipline are the target audience for this programme.

The registration price for this session is Rs. 885/- (including GST) and can be paid through SBI Collect. On the CFTRI website, you may learn more about the workshop. On or before September 9, 2021, interested individuals can apply online for this programme. PMC@cftri.res.in can also be contacted for more information. (Science Wire of India)

INA NEWS
Initiate | News | Agency

New Delhi: CFTRI to conduct online training on innovative & healthy snacks

News सितंबर 03, 2021

New Delhi: Consumer preferences for snacks that deliver on health, convenience, and taste have sparked recent innovation in several of the healthy snack segments. CSIR-Central Food Technological Research Institute (CFTRI) is organizing a two-day webinar on "Innovative & Healthy Snacks" during Sep.21-22, 2021 under the CSIR Integrated Skill Initiative for the benefit of start-ups, MSMEs, entrepreneurs, and micro-entrepreneurs working in the area of food processing.

This webinar would focus on formulations, manufacturing, quality, and other regulatory requirements with the Indian snack food industry. The selected topics would also cover various aspects for establishing a sustainable business model towards functional and health-promoting snacks in meeting the increasing demand along with changing lifestyles.

In addition, it will provide an insight into the opportunities for MSMEs & start-ups with respect to the Indian snack industry including Return on Investment (RoI), sensory and consumer acceptance studies, plant layout, and certifications. The target audience for this workshop is aspiring entrepreneurs who have completed their graduation or diploma in any subject.

The registration fee for joining this workshop has been fixed at Rs. 885/- (including GST) and can be paid through SBI Collect. More information about the workshop can be found on the CFTRI website. Interested participants can apply online for this program on or before Sept.9, 2021. For further details, one can also contact at pmc@cftri.res.in.

Initiate News Agency (INA)

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Innovations and Startups Must Be Discovered and Supported: Dr. Jitendra Singh

By **ISW Desk** On **Sep 5, 2021**

Union Minister of State (Independent Charge) Science & Technology; Minister of State (Independent Charge) Earth Sciences; MoS PMO, Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy and Space, Dr. Jitendra Singh has said that the Technology Development Board (TDB) must pro-actively reach out to young startups.

Union Minister Dr Jitendra Singh

Addressing the 25th Foundation Day of the TDB, Dr. Jitendra Singh emphasized that the board must discover and nurture the startup ecosystem for successful product development.

“Though there is no dearth of talented HR pool in the Country, the main challenge is to channelize it for evolving new paradigms. The confidence of self-reliance will percolate down to the next generation and will help in attracting the best brains in the field of Science and Technology,” Dr. Singh said.

Referring to Prime Minister’s 75th Independence Day Speech, where he said, “We should not limit the occasion of 75 years of Indian independence to just one ceremony. We must lay the groundwork for new resolutions and move forward with new resolutions. Starting from here, the entire journey of the next 25 years, when we celebrate the centenary of Indian independence, marks the Amrit period of creation of a new India”, Dr.Jitendra Singh said, the roadmap for the next 25 years will be determined by scientific and technological innovations in all walks of life.

Dr VK Saraswat, Member, NITI Aayog; Dr Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and Director General, CSIR, and Board Member, TDB; Dr Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Department of Science & Technology (DST);Rajesh Kumar Pathak, Secretary, Technology Development Board(TDB); Rajesh Jain, Director, TDB and Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST. Prof. K.Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, Government of India, participated in the event through the virtual medium. Dr Krishna Ella, Chairman and Managing Director, Bharat Biotech and young entrepreneur Akshata Kari, Co-founder and COO, Coco lab also addressed the event in person.

Lauding the role of TDB for its successful journey of 25 years, Dr Jitendra Singh said, the roadmap for next 25 years should be to make India a World Leader in emerging fields like Artificial Intelligence, Astronomy, Data Science, Solar Energy, Green Hydrogen, Semiconductor, Quantum Computing Climate Change mitigation technologies and Cyber Physical System as desired by Prime Minister for his New India Vision. The Union Minister of State also released the TDB journal on the occasion.

Referring to Prime Minister’s exhortation for use of Science and Technology for societal benefits, Dr Jitendra Singh said, our founding fathers have envisaged this when Dr Bhabha announced to the world that India’s Nuclear Energy Programme will be for peaceful purposes. Irradiation is very effective in treating agricultural produce to

enhance its shelf life. Moreover, during peak COVID crisis Department of Atomic Energy developed the reusable PPE kits, he added.

“India is emerging fast in every sphere of Science and Technology and remarked that Technology has entered every household in India. He said, the true success will be judged by helping majority of Indian citizens to enjoy ease of living,” said Dr. Singh in his concluding remarks.

In his address, Dr V.K. Saraswat said, R&D ecosystem has changed in India under Prime Minister Narendra Modi and now there is more focus on translational research and commercialisation. He said there are more than 5,000 Start-ups working in India with nearly 50 of them headed by Women entrepreneurs. “Even multinational companies have started pitching up with funds for Indian innovations and setting up R&D facilities in India, which he said is a welcome change,” added Dr. Saraswat.

“TDB continues to play a key role and has shown that new kind of innovation can be scaled in our ecosystem,” said Prof K Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, Government of India.

Dr Renu Swarup, Secretary, DST and DBT; emphasised on the efforts of TDB for its crucial role in innovation ecosystem; while Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and DG, CSIR, and Board Member, TDB, underlined the efforts and initiatives undertaken by the TDB and their importance for India’s future. Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST, highlighted the role of TDB in harnessing the new and emerging areas of science, technology and innovation for the benefit of society. (India Science Wire)

Republic NewsIndia

Innovations and startups must be discovered and supported: Dr. Jitendra Singh

By **Rupesh Dharmik** - September 2, 2021

New Delhi: Union Minister of State (Independent Charge) Science & Technology; Minister of State (Independent Charge) Earth Sciences; MoS PMO, Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy and Space, Dr. Jitendra Singh has said that the Technology Development Board (TDB) must pro-actively reach out to young startups.

Addressing the 25th Foundation Day of the TDB, Dr.Jitendra Singh emphasized that the board must discover and nurture the startup ecosystem for successful product development.

"Though there is no dearth of talented HR pool in the Country, the main challenge is to channelize it for evolving new paradigms. The confidence of

self-reliance will percolate down to the next generation and will help in attracting the best brains in the field of Science and Technology," Dr. Singh said.

Referring to Prime Minister's 75th Independence Day Speech, where he said, "We should not limit the occasion of 75 years of Indian independence to just one ceremony. We must lay the groundwork for new resolutions and move forward with new resolutions. Starting from here, the entire journey of the next 25 years, when we celebrate the centenary of Indian independence, marks the Amrit period of creation of a new India", Dr. Jitendra Singh said, the roadmap for the next 25 years will be determined by scientific and technological innovations in all walks of life.

Dr V K Saraswat, Member, NITI Aayog; Dr Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and Director General, CSIR, and Board Member, TDB; Dr Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Department of Science & Technology (DST) ;Rajesh Kumar Pathak, Secretary, Technology Development Board(TDB); Rajesh Jain, Director, TDB and Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST.Prof. K. Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, Government of India, participated in the event through the virtual medium. Dr Krishna Ella, Chairman and Managing Director, Bharat Biotech and young entrepreneur Akshata Kari, Co-founder and COO, Coco lab also addressed the event in person.

Lauding the role of TDB for its successful journey of 25 years, Dr Jitendra Singh said, the roadmap for next 25 years should be to make India a World Leader in emerging fields like Artificial Intelligence, Astronomy, Data Science, Solar Energy, Green Hydrogen, Semiconductor, Quantum Computing Climate Change mitigation technologies and Cyber Physical System as desired by Prime Minister for his New India Vision. The Union Minister of State also released the TDB journal on the occasion.

Referring to Prime Minister's exhortation for use of Science and Technology for societal benefits, Dr Jitendra Singh said, our founding fathers have envisaged this when Dr Bhabha announced to the world that India's Nuclear Energy Programme will be for peaceful purposes. Irradiation is very effective in treating agricultural produce to enhance its shelf life. Moreover, during peak COVID crisis Department of Atomic Energy developed the reusable PPE kits, he added.

"India is emerging fast in every sphere of Science and Technology and remarked that Technology has entered every household in India. He said,

the true success will be judged by helping majority of Indian citizens to enjoy ease of living," said Dr. Singh in his concluding remarks.

In his address, Dr V. K. Saraswat said, R&D ecosystem has changed in India under Prime Minister Narendra Modi and now there is more focus on translational research and commercialisation. He said there are more than 5,000 Start-ups working in India with nearly 50 of them headed by Women entrepreneurs. "Even multinational companies have started pitching up with funds for Indian innovations and setting up R&D facilities in India, which he said is a welcome change," added Dr. Saraswat.

"TDB continues to play a key role and has shown that new kind of innovation can be scaled in our ecosystem," said Prof K Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, The Government of India.

DrRenuSwarup, Secretary, DST and DBT; emphasised on the efforts of TDB for its crucial role in innovation ecosystem; while Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and DG, CSIR, and Board Member, TDB, underlined the efforts and initiatives undertaken by the TDB and their importance for India's future. Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST, highlighted the role of TDB in harnessing the new and emerging areas of science, technology and innovation for the benefit of society. (India Science Wire)

Innovations and Startups Must Be Discovered and Supported

Research Stash | News | Sep 2, 2021

The Union Minister of State Dr. Jitendra Singh has said that the Technology Development Board (TDB) must proactively reach out to young startups.
Addressing the 25th Foundation Day of the TDB, Dr. Jitendra Singh emphasized that the board must discover and nurture the startup ecosystem for successful product development.

"Though there is no dearth of talented HR pool in the Country, the main challenge is to channelize it for evolving new paradigms. The confidence of self-reliance will percolate down to the next generation and will help in attracting the best brains in the field of Science and Technology," Dr. Singh said.
Referring to Prime Minister's 75th Independence Day Speech, where he said, "We should not limit the occasion of 75 years of the Indian independence to just one ceremony. We must lay the groundwork for new resolutions and move forward with new resolutions. Starting from here, the entire journey of the next 25 years, when we celebrate the centenary of Indian independence, marks the Amrit period of creation of a new India", Dr. Jitendra Singh said, the roadmap for the next 25 years will be determined by scientific and technological innovations in all walks of life.

Dr VK Saraswat, Member, NITI Aayog; Dr Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and Director General, CSIR, and Board Member, TDB; Dr Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Department of Science & Technology (DST); Rajesh Kumar Pathak, Secretary, Technology Development Board (TDB); Rajesh Jain, Director, TDB and Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST. Prof. K. Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, Government of India, participated in the event through the virtual medium. Dr Krishna Ella, Chairman and Managing Director, Bharat Biotech, and young entrepreneur Akshata Kari, Co-founder and COO, Coco lab also addressed the event in person.

Lauding the role of TDB for its successful journey of 25 years, Dr. Jitendra Singh said, the roadmap for the next 25 years should be to make India a World Leader in emerging fields like Artificial Intelligence, Astronomy, Data Science, Solar Energy, Green Hydrogen,

Semiconductor, Quantum Computing Climate Change mitigation technologies and Cyber-Physical System as desired by Prime Minister for his New India Vision. The Union Minister of State also released the TDB journal on the occasion.

Referring to Prime Minister's exhortation for use of Science and Technology for societal benefits, Dr Jitendra Singh said, our founding fathers have envisaged this when Dr. Bhabha announced to the world that India's Nuclear Energy Programme will be for peaceful purposes. Irradiation is very effective in treating agricultural products to enhance their shelf life. Moreover, during the peak COVID crisis Department of Atomic Energy developed the reusable PPE kits, he added.

"India is emerging fast in every sphere of Science and Technology and remarked that Technology has entered every household in India. He said the true success will be judged by helping the majority of Indian citizens to enjoy the ease of living," said Dr Singh in his concluding remarks.

In his address, Dr. V.K. Saraswat said, R&D ecosystem has changed in India under Prime Minister Narendra Modi and now there is more focus on translational research and commercialization. He said there are more than 5,000 Startups working in India with nearly 50 of them headed by women entrepreneurs. "Even multinational companies have started pitching up with funds for Indian innovations and setting up R&D facilities in India, which he said is a welcome change," added Dr. Saraswat.

"TDB continues to play a key role and has shown that a new kind of innovation can be scaled in our ecosystem," said Prof K Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, The Government of India.

Dr Renu Swarup, Secretary, DST and DBT; emphasized the efforts of TDB for its crucial role in the innovation ecosystem; while Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and DG, CSIR, and Board Member, TDB, underlined the efforts and initiatives undertaken by the TDB and their importance for India's future. Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST, highlighted the role of TDB in harnessing the new and emerging areas of science, technology, and innovation for the benefit of society. (ISW)

BharatHerald

Innovations and startups must be discovered and supported: Dr. Jitendra Singh

Bharat Herald September 2, 2021

New Delhi: Union Minister of State (Independent Charge) Science & Technology; Minister of State (Independent Charge) Earth Sciences; MoS PMO, Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy and Space, Dr. Jitendra Singh has said that the Technology Development Board (TDB) must pro-actively reach out to young startups.

Addressing the 25th Foundation Day of the TDB, Dr.Jitendra Singh emphasized that the board must discover and nurture the startup ecosystem for successful product development.

"Though there is no dearth of talented HR pool in the Country, the main challenge is to channelize it for evolving new paradigms. The confidence of self-reliance will percolate down to the next generation and will help in attracting the best brains in the field of Science and Technology," Dr. Singh said.

Referring to Prime Minister's 75th Independence Day Speech, where he said, "We should not limit the occasion of 75 years of Indian independence to just one ceremony. We must lay the groundwork for new resolutions and move forward with new resolutions. Starting from here, the entire journey of the next 25 years, when we celebrate the centenary of Indian independence,

marks the Amrit period of creation of a new India", Dr. Jitendra Singh said, the roadmap for the next 25 years will be determined by scientific and technological innovations in all walks of life.

Dr V K Saraswat, Member, NITI Aayog; Dr Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and Director General, CSIR, and Board Member, TDB; Dr Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Department of Science & Technology (DST) ;Rajesh Kumar Pathak, Secretary, Technology Development Board(TDB); Rajesh Jain, Director, TDB and Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST.Prof. K. Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, Government of India, participated in the event through the virtual medium. Dr Krishna Ella, Chairman and Managing Director, Bharat Biotech and young entrepreneur Akshata Kari, Co-founder and COO, Coco lab also addressed the event in person.

Lauding the role of TDB for its successful journey of 25 years, Dr Jitendra Singh said, the roadmap for next 25 years should be to make India a World Leader in emerging fields like Artificial Intelligence, Astronomy, Data Science, Solar Energy, Green Hydrogen, Semiconductor, Quantum Computing Climate Change mitigation technologies and Cyber Physical System as desired by Prime Minister for his New India Vision. The Union Minister of State also released the TDB journal on the occasion.

Referring to Prime Minister's exhortation for use of Science and Technology for societal benefits, Dr Jitendra Singh said, our founding fathers have envisaged this when Dr Bhabha announced to the world that India's Nuclear Energy Programme will be for peaceful purposes. Irradiation is very effective in treating agricultural produce to enhance its shelf life. Moreover, during peak COVID crisis Department of Atomic Energy developed the reusable PPE kits, he added.

"India is emerging fast in every sphere of Science and Technology and remarked that Technology has entered every household in India. He said, the true success will be judged by helping majority of Indian citizens to enjoy ease of living," said Dr. Singh in his concluding remarks.

In his address, Dr V. K. Saraswat said, R&D ecosystem has changed in India under Prime Minister Narendra Modi and now there is more focus on translational research and commercialisation. He said there are more than 5,000 Start-ups working in India with nearly 50 of them headed by Women entrepreneurs. "Even multinational companies have started pitching up with funds for Indian innovations and setting up R&D facilities in India, which he said is a welcome change," added Dr. Saraswat.

"TDB continues to play a key role and has shown that new kind of innovation can be scaled in our ecosystem," said Prof K Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, The Government of India.

DrRenuSwarup, Secretary, DST and DBT; emphasised on the efforts of TDB for its crucial role in innovation ecosystem; while Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and DG, CSIR, and Board Member, TDB, underlined the efforts and initiatives undertaken by the TDB and their importance for India's future. Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST, highlighted the role of TDB in harnessing the new and emerging areas of science, technology and innovation for the benefit of society. (India Science Wire)

NEWS Streamline

Innovations and startups must be discovered and supported: Dr. Jitendra Singh

News Streamline 3 weeks ago

New Delhi: Union Minister of State (Independent Charge) Science & Technology; Minister of State (Independent Charge) Earth Sciences; MoS PMO, Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy and Space, Dr. Jitendra Singh has said that the Technology Development Board (TDB) must pro-actively reach out to young startups.

Addressing the 25th Foundation Day of the TDB, Dr.Jitendra Singh emphasized that the board must discover and nurture the startup ecosystem for successful product development.

"Though there is no dearth of talented HR pool in the Country, the main challenge is to channelize it for evolving new paradigms. The confidence of self-reliance will percolate down to the next generation and will help in attracting the best brains in the field of Science and Technology," Dr. Singh said.

Referring to Prime Minister's 75th Independence Day Speech, where he said, "We should not limit the occasion of 75 years of Indian independence to just one ceremony. We must lay the groundwork for new resolutions and move forward with new resolutions. Starting from here, the entire journey of the next 25 years, when we celebrate the centenary of Indian independence,

marks the Amrit period of creation of a new India", Dr. Jitendra Singh said, the roadmap for the next 25 years will be determined by scientific and technological innovations in all walks of life.

Dr V K Saraswat, Member, NITI Aayog; Dr Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and Director General, CSIR, and Board Member, TDB; Dr Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Department of Science & Technology (DST) ;Rajesh Kumar Pathak, Secretary, Technology Development Board(TDB); Rajesh Jain, Director, TDB and Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST.Prof. K. Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, Government of India, participated in the event through the virtual medium. Dr Krishna Ella, Chairman and Managing Director, Bharat Biotech and young entrepreneur Akshata Kari, Co-founder and COO, Coco lab also addressed the event in person.

Lauding the role of TDB for its successful journey of 25 years, Dr Jitendra Singh said, the roadmap for next 25 years should be to make India a World Leader in emerging fields like Artificial Intelligence, Astronomy, Data Science, Solar Energy, Green Hydrogen, Semiconductor, Quantum Computing Climate Change mitigation technologies and Cyber Physical System as desired by Prime Minister for his New India Vision. The Union Minister of State also released the TDB journal on the occasion.

Referring to Prime Minister's exhortation for use of Science and Technology for societal benefits, Dr Jitendra Singh said, our founding fathers have envisaged this when Dr Bhabha announced to the world that India's Nuclear Energy Programme will be for peaceful purposes. Irradiation is very effective in treating agricultural produce to enhance its shelf life. Moreover, during peak COVID crisis Department of Atomic Energy developed the reusable PPE kits, he added.

"India is emerging fast in every sphere of Science and Technology and remarked that Technology has entered every household in India. He said, the true success will be judged by helping majority of Indian citizens to enjoy ease of living," said Dr. Singh in his concluding remarks.

In his address, Dr V. K. Saraswat said, R&D ecosystem has changed in India under Prime Minister Narendra Modi and now there is more focus on translational research and commercialisation. He said there are more than 5,000 Start-ups working in India with nearly 50 of them headed by Women entrepreneurs. "Even multinational companies have started pitching up with funds for Indian innovations and setting up R&D facilities in India, which he said is a welcome change," added Dr. Saraswat.

"TDB continues to play a key role and has shown that new kind of innovation can be scaled in our ecosystem," said Prof K Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, The Government of India.

DrRenuSwarup, Secretary, DST and DBT; emphasised on the efforts of TDB for its crucial role in innovation ecosystem; while Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and DG, CSIR, and Board Member, TDB, underlined the efforts and initiatives undertaken by the TDB and their importance for India's future. Prof. Ashutosh Sharma, former Secretary, DST, highlighted the role of TDB in harnessing the new and emerging areas of science, technology and innovation for the benefit of society. (India Science Wire)

Innovations and startups must be discovered and supported: Dr. Jitendra Singh

Editor | Sep 3, 2021 - 09:11

Dr. Jitendra Singh, Union Minister of State (Independent Charge) for Science and Technology; Minister of State (Independent Charge) for Earth Sciences; Minister of State (Independent Charge) for Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy and Space, has stated that the Technology Development Board (TDB) must reach out to young startups in a proactive manner.

Dr. Jitendra Singh, speaking at the TDB's 25th Foundation Day, underlined the importance of the board discovering and nurturing the startup ecosystem for successful product development.

"Though the country has a talented HR pool, the primary difficulty is channelling it towards the development of new paradigms. The sense of self-sufficiency will trickle down to the next generation, helping to attract the brightest minds in science and technology," Dr. Singh stated.

"We should not limit the occasion of 75 years of Indian independence to just one ceremony," Prime Minister Narendra Modi stated in his 75th Independence Day Speech. We

need to lay the framework for new resolutions and then implement them. The entire journey of the next 25 years, when we celebrate the centenary of Indian independence, marks the Amrit period of creation of a new India," Dr. Jitendra Singh said. The roadmap for the next 25 years will be determined by scientific and technological innovations in all walks of life, according to Dr. Jitendra Singh.

Dr. VK Saraswat, Member, NITI Aayog; Dr. Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and Director General, CSIR, and TDB Board Member; Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Department of Science and Technology (DST); Rajesh Kumar Pathak, Secretary, Technology Development Board (TDB); Rajesh Jain, Director, TDB; Prof. Ashutosh Sharma, Through the virtual medium, Prof. K. VijayRaghavan, Principal Scientific Adviser, Government of India, took part in the event. Dr. Krishna Ella, Chairman and Managing Director of Bharat Biotech, as well as young entrepreneur Akshata Kari, Co-founder and COO of Coco Lab, spoke at the event.

Dr. Jitendra Singh praised TDB for its 25-year journey, saying the roadmap for the next 25 years should be to make India a world leader in emerging fields such as artificial intelligence, astronomy, data science, solar energy, green hydrogen, semiconductor, quantum computing, climate change mitigation technologies, and cyber physical systems, as desired by Prime Minister Modi for his New era. On the occasion, the TDB journal was also released by the Union Minister of State.

Dr. Jitendra Singh said that when Dr. Homi Bhabha proclaimed to the world that India's Nuclear Energy Program will be for peaceful reasons, our founding fathers anticipated this. Irradiation is a very effective way to extend the shelf life of agricultural commodities. He also mentioned that during the peak of the COVID issue, the Department of Atomic Energy developed reusable PPE kits.

"India is rapidly emerging in every domain of science and technology," he said, adding that technology has infiltrated every Indian family. In his closing remarks, Dr. Singh stated, "The genuine success would be assessed by assisting the majority of Indian residents enjoy ease of life."

Dr. V.K. Saraswat remarked in his speech that India's R&D environment has transformed under Prime Minister Narendra Modi, with a greater emphasis on translational research and commercialization. He claims that India has over 5,000 start-ups, with roughly 50 of them led by women entrepreneurs. Dr. Saraswat continued, "Even global firms have begun pitching in with cash for Indian ideas and building up R&D facilities in India, which he described as a positive move."

"TDB continues to play an important role in our ecosystem, demonstrating that new types of innovation may be scaled," said Prof K Vijay Raghavan, Principal Scientific Adviser, Government of India.

Dr. Renu Swarup, Secretary, DST and DBT, praised TDB's efforts in the innovation ecosystem, while Shekhar C. Mande, Secretary, DSIR and DG, CSIR, and Board Member, TDB, emphasised the TDB's activities and projects and their significance for India's future. Former DST Secretary Prof. Ashutosh Sharma emphasised TDB's importance in harnessing new and developing areas of science, technology, and innovation for the benefit of society. (Science Wire of India)

Voice of the Nation
ORGANISER

DCGI approves advanced trials for Biological E. Limited's COVID-19 vaccine

WEBDESK Sep 04, 2021, 02:11 PM IST

The Department of Biotechnology and Biotechnology Industry Research Assistance Council have supported Biological E.'s COVID-19 Vaccine candidate from the preclinical stage.

New Delhi: The Drugs Controller General of India (DCGI) has approved Hyderabad-based Biological E. Limited for conducting Phase III comparator safety and immunogenicity trial in adults of its CORBEVAX™ vaccine against COVID-19 after Subject Expert Committee's (SEC) review of Phase I and II clinical trials data.

This follows the approval given to the company on September 1 to initiate the Phase II/III Study to evaluate the safety, reactogenicity, tolerability, and immunogenicity of the vaccine in children and adolescents. The candidate vaccine is an RBD protein subunit vaccine.
Welcoming the approval, Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Chairman of its public sector undertaking, Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), said, "Department of Biotechnology through Mission COVID Suraksha launched

under Atma Nirbhar Bharat package 3.0 being implemented by BIRAC, is committed to the development of safe and efficacious COVID-19 vaccines. We look forward to the clinical development of candidate CORBEVAX™ for paediatric and adults.”

Ms Mahima Datla, Managing Director, Biological E. Limited, said-``We are delighted to receive these significant approvals from the DCGI. These approvals encourage our organisation to move forward and successfully produce our COVID-19 vaccine to meet the vaccination needs. We are grateful to BIRAC for their support, and we are enthused that these approvals would help support our subsequent filings with WHO as well. We appreciate and acknowledge the contribution of all our collaborators for their continued support in this endeavour.’’

The Department of Biotechnology has taken several initiatives to increase investments in research & development (R&D) and the manufacture of COVID-19 Vaccines. The establishment of the Mission COVID Suraksha Program is one such endeavour for COVID-19 vaccine development to reinforce and streamline available resources towards accelerated vaccine development, leading to bringing in a safe, efficacious, affordable, and accessible COVID-19 Vaccine for the citizens at the earliest with a target of Atmanirbhar Bharat.

The Department of Biotechnology and Biotechnology Industry Research Assistance Council have supported Biological E.’s COVID-19 Vaccine candidate from the preclinical stage. In addition to receiving financial assistance under Mission COVID Suraksha, this vaccine candidate has also obtained financial support under COVID-19 Research Consortia through the National Biopharma Mission of BIRAC.

Courtesy: India Science Wire

Republic NewsIndia

DCGI approves advanced trials for Biological E. Limited's COVID-19 vaccine

By **Rupesh Dharmik** - September 4, 2021

Photo : Pexels

New Delhi: The Drugs Controller General of India (DCGI) has approved Hyderabad-based Biological E. Limited for conducting Phase III comparator safety and immunogenicity trial in adults of its CORBEVAX™ vaccine against COVID-19 after Subject Expert Committee's (SEC) review of Phase I and II clinical trials data.

This follows the approval given to the company on September 1 to initiate the Phase II/III Study to evaluate the safety, reactogenicity, tolerability, and immunogenicity of the vaccine in children and adolescents. The candidate vaccine is an RBD protein subunit vaccine.

Welcoming the approval, Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Chairman of its public sector undertaking, Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), said "Department of Biotechnology through Mission COVID Suraksha launched under Atma Nirbhar Bharat package 3.0 being implemented by BIRAC, is committed to the development of safe and efficacious COVID-19 vaccines. We look forward to the clinical development of candidate CORBEVAX™ for paediatric and adults."

Ms Mahima Datla, Managing Director, Biological E. Limited, said-"We are delighted to receive these significant approvals from the DCGI. These approvals encourage our organisation to move forward and successfully produce our COVID-19 vaccine to meet the vaccination needs. We are grateful to BIRAC for their support and we are enthused that these approvals would help support our subsequent filings with WHO as well. We appreciate and acknowledge the contribution of all our collaborators for their continued support in this endeavour.''

The Department of Biotechnology has taken several initiatives to increase investments in research & development (R&D) and the manufacture of COVID-19 Vaccines. The establishment of the Mission COVID Suraksha Program is one such endeavour for COVID-19 vaccine development to reinforce and streamline available resources towards accelerated vaccine development, leading to bringing in a safe, efficacious, affordable, and accessible COVID-19 Vaccine for the citizens at the earliest with a target of Atmanirbhar Bharat.

The Department of Biotechnology and Biotechnology Industry Research Assistance Council have supported Biological E.'s COVID-19 Vaccine candidate from the preclinical stage. In addition to receiving financial assistance under Mission COVID Suraksha, this vaccine candidate has also obtained financial support under COVID-19 Research Consortia through the National Biopharma Mission of BIRAC. (India Science Wire)

IndianSentinel
www.indiansentinel.in

DCGI approves advanced trials for Biological E. Limited's COVID- 19 vaccine

2 weeks ago

Photo : Pexels

New Delhi: The Drugs Controller General of India (DCGI) has approved Hyderabad-based Biological E. Limited for conducting Phase III comparator safety and immunogenicity trial in adults of its CORBEVAX™ vaccine against COVID-19 after Subject Expert Committee's (SEC) review of Phase I and II clinical trials data.

This follows the approval given to the company on September 1 to initiate the Phase II/III Study to evaluate the safety, reactogenicity, tolerability, and immunogenicity of the

vaccine in children and adolescents. The candidate vaccine is an RBD protein subunit vaccine.

Welcoming the approval, Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Chairman of its public sector undertaking, Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), said "Department of Biotechnology through Mission COVID Suraksha launched under Atma Nirbhar Bharat package 3.0 being implemented by BIRAC, is committed to the development of safe and efficacious COVID-19 vaccines. We look forward to the clinical development of candidate CORBEVAX™ for paediatric and adults."

Ms Mahima Datla, Managing Director, Biological E. Limited, said-"We are delighted to receive these significant approvals from the DCGI. These approvals encourage our organisation to move forward and successfully produce our COVID-19 vaccine to meet the vaccination needs. We are grateful to BIRAC for their support and we are enthused that these approvals would help support our subsequent filings with WHO as well. We appreciate and acknowledge the contribution of all our collaborators for their continued support in this endeavour.''

The Department of Biotechnology has taken several initiatives to increase investments in research & development (R&D) and the manufacture of COVID-19 Vaccines. The establishment of the Mission COVID Suraksha Program is one such endeavour for COVID-19 vaccine development to reinforce and streamline available resources towards accelerated vaccine development, leading to bringing in a safe, efficacious, affordable, and accessible COVID-19 Vaccine for the citizens at the earliest with a target of Atmanirbhar Bharat.

The Department of Biotechnology and Biotechnology Industry Research Assistance Council have supported Biological E.'s COVID-19 Vaccine candidate from the preclinical stage. In addition to receiving financial assistance under Mission COVID Suraksha, this vaccine candidate has also obtained financial support under COVID-19 Research Consortia through the National Biopharma Mission of BIRAC. (India Science Wire)

Hindustan Saga

DCGI approves advanced trials for Biological E. Limited's COVID- 19 vaccine

Hindustan Saga | 2 weeks ago

Photo : Pexels

New Delhi: The Drugs Controller General of India (DCGI) has approved Hyderabad-based Biological E. Limited for conducting Phase III comparator safety and immunogenicity trial in adults of its CORBEVAX™ vaccine against COVID-19 after Subject Expert Committee's (SEC) review of Phase I and II clinical trials data.

This follows the approval given to the company on September 1 to initiate the Phase II/III Study to evaluate the safety, reactogenicity, tolerability, and immunogenicity of the

vaccine in children and adolescents. The candidate vaccine is an RBD protein subunit vaccine.

Welcoming the approval, Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Chairman of its public sector undertaking, Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), said "Department of Biotechnology through Mission COVID Suraksha launched under Atma Nirbhar Bharat package 3.0 being implemented by BIRAC, is committed to the development of safe and efficacious COVID-19 vaccines. We look forward to the clinical development of candidate CORBEVAX™ for paediatric and adults."

Ms Mahima Datla, Managing Director, Biological E. Limited, said-"We are delighted to receive these significant approvals from the DCGI. These approvals encourage our organisation to move forward and successfully produce our COVID-19 vaccine to meet the vaccination needs. We are grateful to BIRAC for their support and we are enthused that these approvals would help support our subsequent filings with WHO as well. We appreciate and acknowledge the contribution of all our collaborators for their continued support in this endeavour.''

The Department of Biotechnology has taken several initiatives to increase investments in research & development (R&D) and the manufacture of COVID-19 Vaccines. The establishment of the Mission COVID Suraksha Program is one such endeavour for COVID-19 vaccine development to reinforce and streamline available resources towards accelerated vaccine development, leading to bringing in a safe, efficacious, affordable, and accessible COVID-19 Vaccine for the citizens at the earliest with a target of Atmanirbhar Bharat.

The Department of Biotechnology and Biotechnology Industry Research Assistance Council have supported Biological E.'s COVID-19 Vaccine candidate from the preclinical stage. In addition to receiving financial assistance under Mission COVID Suraksha, this vaccine candidate has also obtained financial support under COVID-19 Research Consortia through the National Biopharma Mission of BIRAC. (India Science Wire)

airvibe

DCGI approves advanced trials for Biological E. Ltd's COVID- 19 vaccine

Editor | Sep 3, 2021 - 19:46

After reviewing Phase I and II clinical trial data, the Drugs Controller General of India (DCGI) has approved Hyderabad-based Biological E. Limited to conduct a Phase III comparative safety and immunogenicity trial in adults of its CORBEVAXTM vaccine against COVID-19.

This comes after the business received approval on September 1 to begin the Phase II/III Study to assess the vaccine's safety, reactogenicity, tolerability, and immunogenicity in children and adolescents. RBD protein subunit vaccine is the potential vaccine.

“The Department of Biotechnology, through Mission COVID Suraksha launched under Atma Nirbhar Bharat package 3.0 being implemented by BIRAC, is committed to the development of safe and efficacious COVID-19 vaccins,” said Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology (DBT) and Chairman of its public sector undertaking, Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC). We are excited to see candidate CORBEVAXTM enter clinical trials for both children and adults.”

Biological E. Limited's Managing Director, Ms Mahima Datla, stated, "We are thrilled to get these key clearances from the DCGI." These approvals provide our organisation the confidence to move forward and effectively manufacture our COVID-19 vaccine in order to meet the vaccination needs. We are appreciative to BIRAC for their assistance, and we are optimistic that these approvals will support our forthcoming WHO filings. All of our collaborators' contributions are valued and acknowledged, and we thank them for their continuous support in our endeavour.'

The Department of Biotechnology has taken many steps to expand funding in COVID-19 vaccine research and development (R&D) and manufacturing. The foundation of the Mission COVID Suraksha Program is one such effort for COVID-19 vaccine development, with the goal of bringing a safe, efficacious, inexpensive, and accessible COVID-19 vaccine to citizens as soon as possible, with the goal of Atmanirbhar Bharat.

From the preclinical stage, the Department of Biotechnology and the Biotechnology Industry Research Assistance Council have backed Biological E.'s COVID-19 vaccine candidate. In addition to receiving funding under Mission COVID Suraksha, this vaccine candidate has also received funding through the National Biopharma Mission of BIRAC through the COVID-19 Research Consortia.

Voice of the Nation
ORGANISER

MoU to build academic excellence and R&D capacity

WEBDESK Sep 04, 2021, 02:21 PM IST

New Delhi: Centre of Bio-medical Research (CBMR), Lucknow, today signed a memorandum of understanding with the Academy of Scientific and Innovative Research (AcSIR) for a partnership to establish academic connectivity and synergy of academic complementation and collaboration to build capacity in identified areas/faculties of research and development. This will lead to the award of the PhD degree in science and engineering.

The pact was signed by CBMR Director Dr Alok Dhawan and AcSIR Director Dr Rajender Singh Sangwan. Ms Arpita Sengupta, Senior Manager, AcSIR and Professor Neeraj Sinha, Dean, CBMR and Dr Biswanath Maity, Assistant Professor, CBMR witnessed the ceremony.

Centre of Bio-medical Research (CBMR) is an autonomous Centre established by the Government of Uttar Pradesh under the Department of Medical Education. It is solely dedicated to the identification of biomarkers and validating them both clinically and functionally. The

state-of-the-art equipment at CBMR, which includes NMR (400, 600, 800 MHz–Solution and Solid State), 3T-fMRI, and the sophisticated analytical facility, provides a platform for academia and industry to use ideate, collaborate and co-create.
The mandate of CBMR is to undertake aid, promote, develop, guide and coordinate basic, clinical and translational research.

Furthermore, the mission of CBMR is to establish an enabling ecosystem for cutting edge interdisciplinary research and entrepreneurship, leading to better patient care.

The Academy of Scientific & Innovative Research (AcSIR) is an Institution of national importance established by an Act of Parliament to maximize the number of qualified researchers and professionals of impeccable quality in science.

The Academy's mandate is to create and train some of the best of tomorrow's science and technology leaders through a combination of innovative and novel curricula, pedagogy, and evaluation.

At present, the Academy has 2,514 faculty members from CSIR Laboratories, 36 Adjunct faculty members, and around 5000 students enrolled in various programmes. CBMR is the first Institute in Uttar Pradesh to be recognized by AcSIR outside of the CSIR system.

Courtesy: India Science Wire

Republic NewsIndia

MoU to build academic excellence and R&D capacity

By **Rupesh Dharmik** - September 4, 2021

New Delhi: Centre of Bio-medical Research (CBMR), Lucknow, today signed a memorandum of understanding with the Academy of Scientific and Innovative Research (AcSIR) for a partnership to establish academic connectivity and synergy of academic complementation and collaboration to build capacity in identified areas/faculties of research and development. This will lead to the award of the PhD degree in science and engineering.

The pact was signed by CBMR Director, DrAlokDhawan, and AcSIR Director, DrRajender Singh Sangwan. The ceremony was witnessed by MsArpitaSengupta, Senior Manager, AcSIR and Professor Neeraj Sinha, Dean, CBMR and DrBiswanathMaity, Assistant Professor, CBMR.

Centre of Bio-medical Research (CBMR) is an autonomous Centre established by the Government of Uttar Pradesh under the Department of Medical Education. It is solely dedicated to the identification of biomarkers and validating them both clinically and functionally. The state-of-the-art equipment at CBMR which include NMR (400, 600, 800 MHz – Solution and Solid State), 3T-fMRI, as well as the sophisticated analytical facility provides a platform for academia, and industry to ideate, collaborate and co-create.

The mandate of CBMR is to undertake aid, promote, develop, guide and coordinate basic, clinical and translational research. Furthermore, the mission of CBMR is to establish an enabling ecosystem for cutting edge interdisciplinary research and entrepreneurship leading to better patient care.

The Academy of Scientific & Innovative Research (AcSIR) is an Institution of national importance established by an Act of Parliament, with a view to maximizing the number of qualified researchers and professionals of impeccable quality in science. The Academy’s mandate is to create and train some of the best of tomorrow’s science and technology leaders through a combination of innovative and novel curricula, pedagogy, and evaluation.

At present, the Academy has 2,514 faculty members from CSIR Laboratories, 36 Adjunct faculty members, and around 5000 students enrolled in various programmes. CBMR is the first Institute in Uttar Pradesh to be recognized by AcSIR outside of the CSIR system. (India Science Wire)

RDTIMES.in

MoU to build academic excellence and R&D capacity

By **RD Times Online** - September 4, 2021

New Delhi: Centre of Bio-medical Research (CBMR), Lucknow, today signed a memorandum of understanding with the Academy of Scientific and Innovative Research (AcSIR) for a partnership to establish academic connectivity and synergy of academic complementation and collaboration to build capacity in identified areas/faculties of research and development. This will lead to the award of the PhD degree in science and engineering.

The pact was signed by CBMR Director, DrAlokDhawan, and AcSIR Director, DrRajender Singh Sangwan. The ceremony was witnessed by MsArpitaSengupta, Senior Manager, AcSIR and Professor Neeraj Sinha, Dean, CBMR and DrBiswanathMaity, Assistant Professor, CBMR.

Centre of Bio-medical Research (CBMR) is an autonomous Centre established by the Government of Uttar Pradesh under the Department of Medical Education. It is solely dedicated to the identification of biomarkers and validating them both clinically and functionally. The state-of-the-art equipment at CBMR which include NMR (400, 600, 800 MHz – Solution and Solid State), 3T-fMRI, as well as the sophisticated analytical facility provides a platform for academia, and industry to ideate, collaborate and co-create.

The mandate of CBMR is to undertake aid, promote, develop, guide and coordinate basic, clinical and translational research. Furthermore, the mission of CBMR is to establish an enabling ecosystem for cutting edge interdisciplinary research and entrepreneurship leading to better patient care.

The Academy of Scientific & Innovative Research (AcSIR) is an Institution of national importance established by an Act of Parliament, with a view to maximizing the number of qualified researchers and professionals of impeccable quality in science. The Academy's mandate is to create and train some of the best of tomorrow's science and technology leaders through a combination of innovative and novel curricula, pedagogy, and evaluation.

At present, the Academy has 2,514 faculty members from CSIR Laboratories, 36 Adjunct faculty members, and around 5000 students enrolled in various programmes. CBMR is the first Institute in Uttar Pradesh to be recognized by AcSIR outside of the CSIR system. (India Science Wire)

NATIONAL AGE

MoU to build academic excellence and R&D capacity

National Age September 4, 2021

New Delhi: Centre of Bio-medical Research (CBMR), Lucknow, today signed a memorandum of understanding with the Academy of Scientific and Innovative Research (AcSIR) for a partnership to establish academic connectivity and synergy of academic complementation and collaboration to build capacity in identified areas/faculties of research and development. This will lead to the award of the PhD degree in science and engineering.

The pact was signed by CBMR Director, DrAlokDhawan, and AcSIR Director, DrRajender Singh Sangwan. The ceremony was witnessed by MsArpitaSengupta, Senior Manager, AcSIR and Professor Neeraj Sinha, Dean, CBMR and DrBiswanathMaity, Assistant Professor, CBMR.

Centre of Bio-medical Research (CBMR) is an autonomous Centre established by the Government of Uttar Pradesh under the Department of Medical Education. It is solely dedicated

to the identification of biomarkers and validating them both clinically and functionally. The state-of-the-art equipment at CBMR which include NMR (400, 600, 800 MHz – Solution and Solid State), 3T-fMRI, as well as the sophisticated analytical facility provides a platform for academia, and industry to ideate, collaborate and co-create.

The mandate of CBMR is to undertake aid, promote, develop, guide and coordinate basic, clinical and translational research. Furthermore, the mission of CBMR is to establish an enabling ecosystem for cutting edge interdisciplinary research and entrepreneurship leading to better patient care.

The Academy of Scientific & Innovative Research (AcSIR) is an Institution of national importance established by an Act of Parliament, with a view to maximizing the number of qualified researchers and professionals of impeccable quality in science. The Academy's mandate is to create and train some of the best of tomorrow's science and technology leaders through a combination of innovative and novel curricula, pedagogy, and evaluation.

At present, the Academy has 2,514 faculty members from CSIR Laboratories, 36 Adjunct faculty members, and around 5000 students enrolled in various programmes. CBMR is the first Institute in Uttar Pradesh to be recognized by AcSIR outside of the CSIR system. (India Science Wire)

indianScoops

MoU to build academic excellence and R&D capacity

September 4, 2021

New Delhi: Centre of Bio-medical Research (CBMR), Lucknow, today signed a memorandum of understanding with the Academy of Scientific and Innovative Research (AcSIR) for a partnership to establish academic connectivity and synergy of academic complementation and collaboration to build capacity in identified areas/faculties of research and development. This will lead to the award of the PhD degree in science and engineering.

The pact was signed by CBMR Director, DrAlokDhawan, and AcSIR Director, DrRajender Singh Sangwan. The ceremony was witnessed by MsArpitaSengupta, Senior Manager, AcSIR and Professor Neeraj Sinha, Dean, CBMR and DrBiswanathMaity, Assistant Professor, CBMR.

Centre of Bio-medical Research (CBMR) is an autonomous Centre established by the Government of Uttar Pradesh under the Department of Medical Education. It is solely dedicated to the identification of biomarkers and validating them both clinically and functionally. The state-of-the-art equipment at CBMR which include NMR (400, 600, 800 MHz – Solution and Solid State), 3T-fMRI, as well as the sophisticated analytical facility provides a platform for academia, and industry to ideate, collaborate and co-create.

The mandate of CBMR is to undertake aid, promote, develop, guide and coordinate basic, clinical and translational research. Furthermore, the mission of CBMR is to establish an enabling ecosystem for cutting edge interdisciplinary research and entrepreneurship leading to better patient care.

The Academy of Scientific & Innovative Research (AcSIR) is an Institution of national importance established by an Act of Parliament, with a view to maximizing the number of qualified researchers and professionals of impeccable quality in science. The Academy's mandate is to create and train some of the best of tomorrow's science and technology leaders through a combination of innovative and novel curricula, pedagogy, and evaluation.

At present, the Academy has 2,514 faculty members from CSIR Laboratories, 36 Adjunct faculty members, and around 5000 students enrolled in various programmes. CBMR is the first Institute in Uttar Pradesh to be recognized by AcSIR outside of the CSIR system. (India Science Wire)

RKDLive

MoU to build academic excellence and R&D capacity

RKD Live3 weeks ago

New Delhi: Centre of Bio-medical Research (CBMR), Lucknow, today signed a memorandum of understanding with the Academy of Scientific and Innovative Research (AcSIR) for a partnership to establish academic connectivity and synergy of academic complementation and collaboration to build capacity in identified areas/faculties of research and development. This will lead to the award of the PhD degree in science and engineering.

The pact was signed by CBMR Director, DrAlokDhawan, and AcSIR Director, DrRajender Singh Sangwan. The ceremony was witnessed by MsArpitaSengupta, Senior Manager, AcSIR and Professor Neeraj Sinha, Dean, CBMR and DrBiswanathMaity, Assistant Professor, CBMR.

Centre of Bio-medical Research (CBMR) is an autonomous Centre established by the Government of Uttar Pradesh under the Department of Medical Education. It is solely dedicated to the identification of biomarkers and validating them both clinically and functionally. The state-of-the-art equipment at CBMR which include NMR (400, 600, 800 MHz – Solution and Solid State), 3T-fMRI, as well as the sophisticated analytical facility provides a platform for academia, and industry to ideate, collaborate and co-create.

The mandate of CBMR is to undertake aid, promote, develop, guide and coordinate basic, clinical and translational research. Furthermore, the mission of CBMR is to establish an enabling ecosystem for cutting edge interdisciplinary research and entrepreneurship leading to better patient care.

The Academy of Scientific & Innovative Research (AcSIR) is an Institution of national importance established by an Act of Parliament, with a view to maximizing the number of qualified researchers and professionals of impeccable quality in science. The Academy's mandate is to create and train some of the best of tomorrow's science and technology leaders through a combination of innovative and novel curricula, pedagogy, and evaluation.

At present, the Academy has 2,514 faculty members from CSIR Laboratories, 36 Adjunct faculty members, and around 5000 students enrolled in various programmes. CBMR is the first Institute in Uttar Pradesh to be recognized by AcSIR outside of the CSIR system. (India Science Wire)

Republic NewsIndia

New mechanized scavenging system to tackle diverse sewerage chokages

By **Rupesh Dharmik** - September 4, 2021

Module-1 electric and diesel engine operated scavenging systems for narrow lanes and small dwellings (top Left to Right), Module-2 for residential complexes, townships and Gram panchayats (below Left), and vehicle mounted Integrated drain/sewer cleaning system for urban and local Bodies. (Photo: CSIR-CMERI)

New Delhi: Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Durgapur-based constituent laboratory CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI) has developed a mechanized scavenging system, which was initiated after intensive studies of the diverse nature of Indian sewerage systems and the manner of its chokages. The technology is modular in design to ensure customised deployment strategies as per situational requirements.

This System also focuses upon sustainable usage of resources as the system sucks in slurry water from the choked sewerage systems and after adequate filtration, redirects the same for clearing of chokages using a self-propelling nozzle. As per CSIR-CMERI, this technology provides in-situ option for mechanized scavenging as well as purification of water.

Technology design is such that the water filtration mechanism can be modified as per the customised requirements with the ability to change the filter media. The vehicle-mounted filtration units will be able to augment and use water from the surface drain and flooded areas, and purify it into water suitable for agricultural, household, and drinking water usage.

Drinking water scarcity prevalent in flood-affected regions can be solved to a certain extent by providing instantaneous and in-situ water purification solutions at ease. This technology provides a consolidated solution to clear drainage chokages in flood-affected regions, which will help in providing an outlet for flood stagnated water, as well as provide water purification solutions in flood disaster zones, say Dr. Harish Hirani, director, CSIR-CMERI.

There are three variants of this mechanized scavenging system developed which includes drain/sewer cleaning system for narrow-lanes and small dwellings (within 500 people), the scavenging system for residential complexes, townships and gram panchayats (within 1000-2000 people), and system for urban and local bodies (within 2000-5000 people). These three modules for different population densities with different features to make the machine more cost economic.

The utilisation of the slurry water for the jetting operation is one of the novelties, which reduces the wastage of freshwater. A self-propelled post-cleaning inspection system is also one of unique features of the machine. The Proto development cost of module-1 is estimated at around Rs. 05 lakhs, module-2 costs around Rs. 08 lakhs and the cost of the module-3 is Rs. 25 lakhs, excluding GST, CSIR-CMERI statement said.

Post Visual Inspection System

The technology has already undergone four field trials at the premises of the National Institute of Technology, Durgapur, National Power Training Institute of India, Durgapur, Durgapur Steel Plant (DSP), and Damodar Valley Corporation-Durgapur Thermal Power Station for the assessment of functionality and effectiveness. The feedback received from the user-end after the field trials have been encouraging as it has been able to effectively and efficiently remove complicated chokages from sewerage systems and was found to be suitable for most situations.

“The field trials have also brought in Constructive Suggestions for improving the Scope and Versatility of the Technology in further complicated situations for future usage. Once, the System achieves a certain degree of diversification in terms of versatility, it will be dedicated to the Nation to serve the society and give a final thrust to the Swachch Bharat Abhiyan of the Government of India as well as complete decimation of manual scavenging from India,” said Dr Hirani.

The newly developed scavenging system would help the manual scavengers to skill themselves on the latest technological advancements in sewerage maintenance systems as well as enhance their efficiency, performance and safeguard them against intrusive pathogens. This would remove the Indignity from the profession of scavenging and help convert their practice to be more safe and skilful. (India Science Wire)

Times-Bulletin

New mechanized scavenging system to tackle diverse sewerage chokages

By **Times Bulletin Team** - September 4, 2021

Module-1 electric and diesel engine operated scavenging systems for narrow lanes and small dwellings (top Left to Right), Module-2 for residential complexes, townships and Gram panchayats (below Left), and vehicle mounted Integrated drain/sewer cleaning system for urban and local Bodies. (Photo: CSIR-CMERI)

New Delhi: Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Durgapur-based constituent laboratory CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI) has developed a mechanized scavenging system, which was initiated after intensive studies of the diverse nature of Indian sewerage systems and the manner of its chokages. The technology is modular in design to ensure customised deployment strategies as per situational requirements.

This System also focuses upon sustainable usage of resources as the system sucks in slurry water from the choked sewerage systems and after adequate filtration, redirects the same for clearing of chokages using a self-propelling nozzle. As per CSIR-CMERI, this technology provides in-situ option for mechanized scavenging as well as purification of water.

Technology design is such that the water filtration mechanism can be modified as per the customised requirements with the ability to change the filter media. The vehicle-mounted filtration units will be able to augment and use water from the surface drain and flooded areas, and purify it into water suitable for agricultural, household, and drinking water usage.

Drinking water scarcity prevalent in flood-affected regions can be solved to a certain extent by providing instantaneous and in-situ water purification solutions at ease. This technology provides a consolidated solution to clear drainage chokages in flood-affected regions, which will help in providing an outlet for flood stagnated water, as well as provide water purification solutions in flood disaster zones, say Dr. Harish Hirani, director, CSIR-CMERI.

There are three variants of this mechanized scavenging system developed which includes drain/sewer cleaning system for narrow-lanes and small dwellings (within 500 people), the scavenging system for residential complexes, townships and gram panchayats (within 1000-2000 people), and system for urban and local bodies (within 2000-5000 people). These three modules for different population densities with different features to make the machine more cost economic.

The utilisation of the slurry water for the jetting operation is one of the novelties, which reduces the wastage of freshwater. A self-propelled post-cleaning inspection system is also one of unique features of the machine. The Proto development cost of module-1 is estimated at around Rs. 05 lakhs, module-2 costs around Rs. 08 lakhs and the cost of the module-3 is Rs. 25 lakhs, excluding GST, CSIR-CMERI statement said.

Post Visual Inspection System

The technology has already undergone four field trials at the premises of the National Institute of Technology, Durgapur, National Power Training Institute of India, Durgapur, Durgapur Steel Plant (DSP), and Damodar Valley Corporation-Durgapur Thermal Power Station for the assessment of functionality and effectiveness. The feedback received from the user-end after the field trials have been encouraging as it has been able to effectively and efficiently remove complicated chokages from sewerage systems and was found to be suitable for most situations.

“The field trials have also brought in Constructive Suggestions for improving the Scope and Versatility of the Technology in further complicated situations for future usage. Once, the System achieves a certain degree of diversification in terms of versatility, it will be dedicated to the Nation to serve the society and give a final thrust to the Swachch Bharat Abhiyan of the Government of India as well as complete decimation of manual scavenging from India,” said Dr Hirani.

The newly developed scavenging system would help the manual scavengers to skill themselves on the latest technological advancements in sewerage maintenance systems as well as enhance their efficiency, performance and safeguard them against intrusive pathogens. This would remove the Indignity from the profession of scavenging and help convert their practice to be more safe and skilful. (India Science Wire)

NEWS Outlook

New mechanized scavenging system to tackle diverse sewerage chokages

By **News Outlook** - September 4, 2021

New Delhi: Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Durgapur-based constituent laboratory CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI) has developed a mechanized scavenging system, which was initiated after intensive studies of the diverse nature of Indian sewerage systems and the manner of its chokages. The technology is modular in design to ensure customised deployment strategies as per situational requirements.

This System also focuses upon sustainable usage of resources as the system sucks in slurry water from the choked sewerage systems and after adequate filtration, redirects the same for clearing of chokages using a self-propelling nozzle. As per

CSIR-CMERI, this technology provides in-situ option for mechanized scavenging as well as purification of water.

Technology design is such that the water filtration mechanism can be modified as per the customised requirements with the ability to change the filter media. The vehicle-mounted filtration units will be able to augment and use water from the surface drain and flooded areas, and purify it into water suitable for agricultural, household, and drinking water usage.

Drinking water scarcity prevalent in flood-affected regions can be solved to a certain extent by providing instantaneous and in-situ water purification solutions at ease. This technology provides a consolidated solution to clear drainage chokages in flood-affected regions, which will help in providing an outlet for flood stagnated water, as well as provide water purification solutions in flood disaster zones, say Dr. Harish Hirani, director, CSIR-CMERI.

There are three variants of this mechanized scavenging system developed which includes drain/sewer cleaning system for narrow-lanes and small dwellings (within 500 people), the scavenging system for residential complexes, townships and gram panchayats (within 1000-2000 people), and system for urban and local bodies (within 2000-5000 people). These three modules for different population densities with different features to make the machine more cost economic.

The utilisation of the slurry water for the jetting operation is one of the novelties, which reduces the wastage of freshwater. A self-propelled post-cleaning inspection system is also one of unique features of the machine. The Proto development cost of module-1 is estimated at around Rs. 05 lakhs, module-2 costs around Rs. 08 lakhs and the cost of the module-3 is Rs. 25 lakhs, excluding GST, CSIR-CMERI statement said.

Post Visual Inspection System

The technology has already undergone four field trials at the premises of the National Institute of Technology, Durgapur, National Power Training Institute of India, Durgapur, Durgapur Steel Plant (DSP), and Damodar Valley Corporation-Durgapur Thermal Power Station for the assessment of functionality and effectiveness. The feedback received from the user-end after the field trials have been encouraging as it has been able to effectively and efficiently remove complicated chokages from sewerage systems and was found to be suitable for most situations.

“The field trials have also brought in Constructive Suggestions for improving the Scope and Versatility of the Technology in further complicated situations for future usage. Once, the System achieves a certain degree of diversification in terms of versatility, it will be dedicated to the Nation to serve the society and give a final thrust to the Swachch Bharat Abhiyan of the Government of India as well as complete decimation of manual scavenging from India,” said Dr Hirani.

The newly developed scavenging system would help the manual scavengers to skill themselves on the latest technological advancements in sewerage maintenance systems as well as enhance their efficiency, performance and safeguard them against intrusive pathogens. This would remove the Indignity from the profession of scavenging and help convert their practice to be more safe and skilful. (India Science Wire)

Voice of the Nation
ORGANISER

New mechanised scavenging system to tackle diverse sewerage chokages

WEBDESK Sep 04, 2021, 02:17 PM IST

The technology has already undergone four field trials, and the feedback received from the user-end after the field trials has been encouraging.

New Delhi: Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)’s Durgapur-based constituent laboratory CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI) has developed a mechanised scavenging system initiated after intensive care studies of the diverse nature of Indian sewerage systems and the manner of its chokages. The technology is modular in design to ensure customised deployment strategies as per situational requirements.

This System also focuses upon sustainable usage of resources as the system sucks in slurry water from the choked sewerage systems and, after adequate filtration, redirects the same for clearing of chokages using a self-propelling nozzle. As per CSIR-CMERI, this technology provides an in-situ option for mechanised scavenging as well as purification of water.

Technology design is such that the water filtration mechanism can be modified as per the customised requirements with the ability to change the filter media. The vehicle-mounted filtration units will be able to augment and use water from the surface drain and flooded areas and purify it into water suitable for agricultural, household, and drinking water usage.

Drinking water scarcity prevalent in flood-affected regions can be solved to a certain extent by providing instantaneous and in-situ water purification solutions at ease. This technology provides a consolidated solution to clear drainage chokages in flood-affected regions, which will help provide an outlet for flood stagnated water and provide water purification solutions in flood disaster zones, say Dr. Harish Hirani director, CSIR-CMERI.

There are three variants of this mechanised scavenging system developed, which includes drain/sewer cleaning system for narrow-lanes and small dwellings (within 500 people), the scavenging system for residential complexes, townships and gram panchayats (within 1000-2000 people), and a system for urban and local bodies (within 2000-5000 people)—these three modules for different population densities with different features to make the machine more cost economical.

The utilisation of the slurry water for the jetting operation is one of the novelties, which reduces the wastage of fresh water. A self-propelled post-cleaning inspection system is also one of the unique features of the machine. The Proto development cost of module-1 is estimated at around Rs. 05 lakhs, module-2 costs around Rs. 08 lakhs, and the cost of the module-3 is Rs. 25 lakhs, excluding GST, CSIR-CMERI statement said.

The technology has already undergone four field trials at the National Institute of Technology premises, Durgapur, National Power Training Institute of India, Durgapur, Durgapur Steel Plant (DSP), and Damodar Valley Corporation-Durgapur Thermal Power Station for the assessment of functionality and effectiveness. The feedback received from the user-end after the field trials has been encouraging as it has effectively and efficiently removed complicated chokages from sewerage systems and was found to be suitable for most situations.

“The field trials have also brought in Constructive Suggestions for improving the Scope and Versatility of the Technology in further complicated situations for future usage. Once, the System achieves a certain degree of diversification in terms of versatility, it will be dedicated to the Nation to serve the society and give a final thrust to the Swachch Bharat Abhiyan of the Government of India as well as complete decimation of manual scavenging from India,” said Dr Hirani.

The newly developed scavenging system would help the manual scavengers skill themselves on the latest technological advancements in sewerage maintenance systems. It would also enhance their efficiency and performance and safeguard them against intrusive pathogens. This would remove the Indignity from the scavenging profession and help convert their practice to be more safe and skilful.

Courtesy: India Science Wire

THE DAILY Kashmir Convener Voice of Courage

New mechanized scavenging system to tackle diverse sewerage chokages

NEWS

By Online Editor On Sep 4, 2021

New Delhi, Sep 03 Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Durgapur-based constituent laboratory CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI) has developed a mechanized scavenging system, which was initiated after intensive studies of the diverse nature of Indian sewerage systems and the manner of its chokages. The technology is modular in design to ensure customised deployment strategies as per situational requirements.

This System also focuses upon sustainable usage of resources as the system sucks in slurry water from the choked sewerage systems and after adequate filtration, redirects the same for clearing of chokages using a self-propelling nozzle. As per CSIR-CMERI, this technology provides in-situ option for mechanized scavenging as well as purification of water.

Technology design is such that the water filtration mechanism can be modified as per the customised requirements with the ability to change the filter media. The vehicle-mounted filtration units will be able to augment and use water from the surface drain

and flooded areas, and purify it into water suitable for agricultural, household, and drinking water usage.

Drinking water scarcity prevalent in flood-affected regions can be solved to a certain extent by providing instantaneous and in-situ water purification solutions at ease. This technology provides a consolidated solution to clear drainage chokages in flood-affected regions, which will help in providing an outlet for flood stagnated water, as well as provide water purification solutions in flood disaster zones, say Dr. Harish Hirani, director, CSIR-CMERI.

There are three variants of this mechanized scavenging system developed which includes drain/sewer cleaning system for narrow-lanes and small dwellings (within 500 people), the scavenging system for residential complexes, townships and gram panchayats (within 1000-2000 people), and system for urban and local bodies (within 2000-5000 people). These three modules for different population densities with different features to make the machine more cost economic.

The utilisation of the slurry water for the jetting operation is one of the novelties, which reduces the wastage of freshwater. A self-propelled post-cleaning inspection system is also one of unique features of the machine. The Proto development cost of module-1 is estimated at around Rs. 05 lakhs, module-2 costs around Rs. 08 lakhs and the cost of the module-3 is Rs. 25 lakhs, excluding GST, CSIR-CMERI statement said.

The technology has already undergone four field trials at the premises of the National Institute of Technology, Durgapur, National Power Training Institute of India, Durgapur, Durgapur Steel Plant (DSP), and Damodar Valley Corporation-Durgapur Thermal Power Station for the assessment of functionality and effectiveness. The feedback received from the user-end after the field trials have been encouraging as it has been able to effectively and efficiently remove complicated chokages from sewerage systems and was found to be suitable for most situations.

“The field trials have also brought in Constructive Suggestions for improving the Scope and Versatility of the Technology in further complicated situations for future usage. Once, the System achieves a certain degree of diversification in terms of versatility, it will be dedicated to the Nation to serve the society and give a final thrust to the Swachch Bharat Abhiyan of the Government of India as well as complete decimation of manual scavenging from India,” said Dr Hirani.

The newly developed scavenging system would help the manual scavengers to skill themselves on the latest technological advancements in sewerage maintenance systems as well as enhance their efficiency, performance and safeguard them against intrusive pathogens. This would remove the Indignity from the profession of scavenging and help convert their practice to be more safe and skilful.

Voice of the Nation
ORGANISER

Scientists develop a device to grow microorganisms in outer space

WEBDESK Sep 04, 2021, 02:05 PM IST

The device developed by the IISc and ISRO team uses an LED and photodiode sensor combination to track bacterial growth by measuring the optical density or scattering of light, similar to spectrophotometers used in the laboratory.

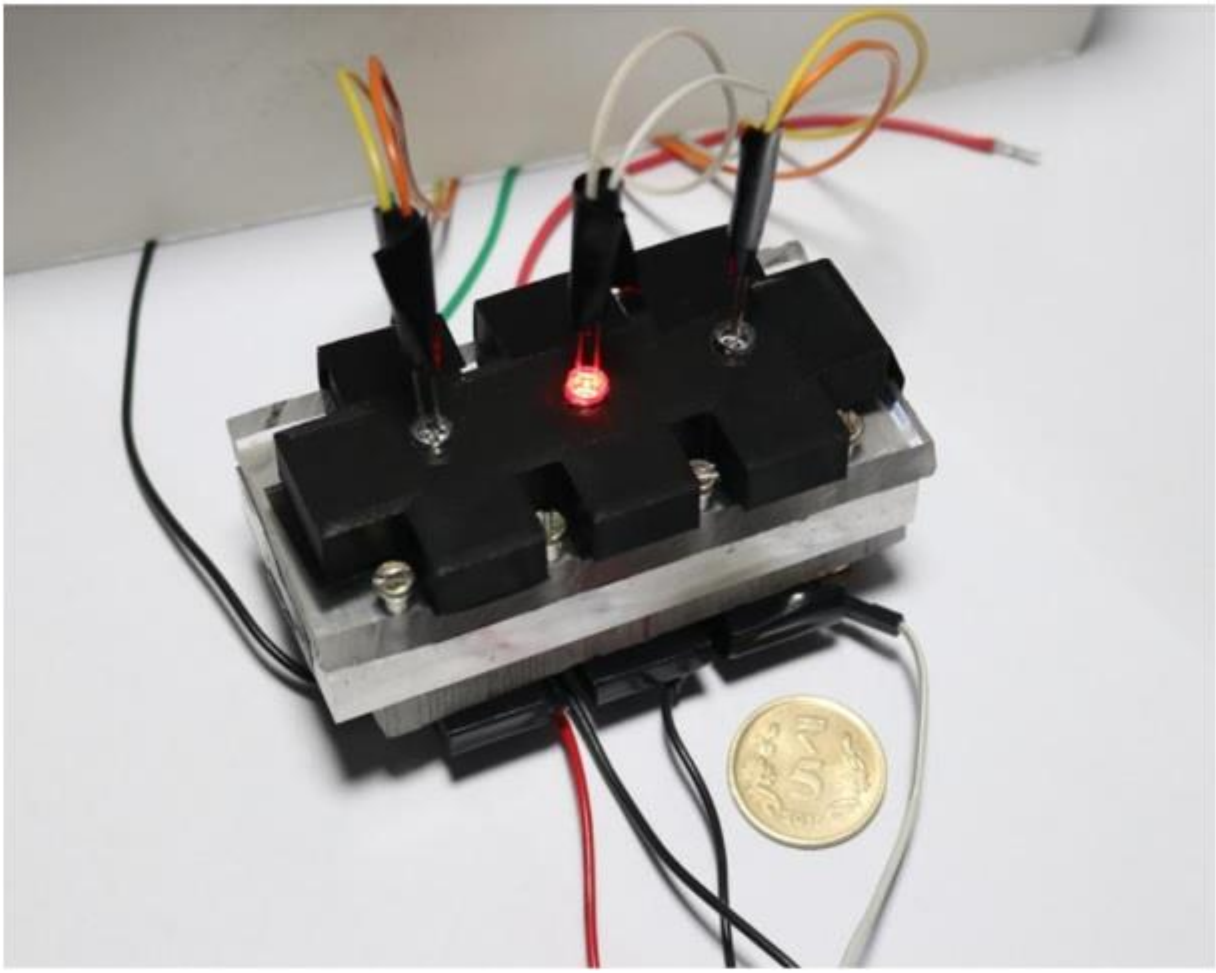

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Science (IISc) and the Indian Space Research Organisation (ISRO) have developed a special modular, self-contained device to conduct biological experiments using microorganisms in outer space.

In a study published in Acta Astronautica, the team showed how the device could be used to activate and track the growth of a bacterium called Sporosarcina pasteurii over several days, with minimal human involvement.

Understanding how microbes behave in extreme environments could provide valuable insights for human space missions such as ‘Gaganyaan’, India’s first crewed spacecraft. In recent years, scientists have been increasingly exploring the use of lab-on-chip platforms –which combine many analyses into a single integrated chip – for such experiments. But there are additional challenges to designing such platforms for outer space when compared to a laboratory on the ground.

“It has to be completely self-contained,” points out Koushik Viswanathan, Assistant Professor in the Department of Mechanical Engineering and a senior author of the study.

“Besides, you can’t simply expect the same operating conditions as you would in a normal laboratory setting. You can’t have something that guzzles 500W of power, for example,” Viswanathan explains.

The device developed by the IISc and ISRO team uses an LED and photodiode sensor combination to track bacterial growth by measuring the optical density or scattering of light, similar to spectrophotometers used in the laboratory. It has separate compartments for different experiments. Each compartment or ‘cassette’ consists of a chamber where bacteria – suspended as spores in a sucrose solution – and a nutrient medium can be mixed to kickstart growth by clicking on a switch remotely. Data from each cassette is collected and stored independently. Three cassettes are clubbed into a single cartridge, which consumes just under 1W of power. The researchers envision that a full payload that could go in a spacecraft will contain four such cartridges capable of carrying out 12 independent experiments.

The team also had to ensure that the device was leak-proof and unaffected by any change in orientation. “This is a non-traditional environment for the bacteria to grow. It is totally sealed and has a very small volume. We had to see whether we would get consistent [growth] results in this smaller volume,” says Aloke Kumar, Associate Professor in the Department of Mechanical Engineering and another senior author.

The researchers had to make sure that the LED going on and off will not generate much heat, which can change the bacterial growth characteristics. Using an electron microscope, the researchers were able to confirm that the spores grew and multiplied into rod-shaped bacteria inside the device, as they would have under normal conditions in the laboratory.

“Now that we know this proof-of-concept works, we have already embarked on the next step – getting a flight model [of the device] ready,” says Viswanathan. This would include optimising the physical space that the device can take up and its performance under stresses such as vibration and acceleration due to gravity.

The researchers say that the device can also be adapted for studying other organisms such as worms and for non-biological experiments. “The whole idea was to develop a model platform for Indian researchers,” explains Kumar. “Now that ISRO is embarking on an ambitious human space mission, it has to come up with its solutions, made at home,” Kumar concludes.

Courtesy: India Science Wire

SAMAYNEWS

Scientists develop device to grow microorganisms in outer space

September 4, 2021 | Samay News

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Science (IISc) and the Indian Space Research Organisation (ISRO) have developed a special modular, self-contained device to carry out biological experiments in outer space using microorganisms.

In a study published in *ActaAstronautica,* the team showed how the device can be used to activate and track the growth of a bacterium called *Sporosarcinapasteurii* over several days, with minimal human involvement.

Understanding how microbes behave in extreme environments could provide valuable insights for human space missions such as 'Gaganyaan', India's first crewed spacecraft. In recent years, scientists have been increasingly exploring the use of lab-on-chip platforms – which combine many analyses into a single integrated chip – for such experiments. But there are additional challenges to designing such platforms for outer space when compared to a laboratory on the ground.

"It has to be completely self-contained," points out Koushik Viswanathan, Assistant Professor in the Department of Mechanical Engineering and a senior author of the study. "Besides, you can't simply expect the same operating conditions as you would in a normal laboratory setting. You can't have something that guzzles 500W of power, for example," Viswanathan explains.

The device developed by the IISc and ISRO team uses an LED and photodiode sensor combination to track bacterial growth by measuring the optical density or scattering of light, similar to spectrophotometers used in the laboratory. It has separate compartments for different experiments. Each compartment or 'cassette' consists of a chamber where bacteria – suspended as spores in a sucrose solution – and a nutrient medium can be mixed to kickstart growth, by clicking on a switch remotely. Data from each cassette is collected and stored independently. Three cassettes are clubbed into a single cartridge, which consumes just under 1W of power. The researchers envision that

a full payload that could go in a spacecraft will contain four such cartridges capable of carrying out 12 independent experiments.

The team also had to ensure that the device was leak-proof and unaffected by any change in orientation. “This is a non-traditional environment for the bacteria to grow. It is totally sealed and has a very small volume. We had to see whether we would get consistent [growth] results in this smaller volume,” says Aloke Kumar, Associate Professor in the Department of Mechanical Engineering, and another senior author.

Among other things, the researchers had to make sure that the LED going on and off will not generate much heat, which can change the bacterial growth characteristics. Using an electron microscope, the researchers were able to confirm that the spores grew and multiplied into rod-shaped bacteria inside the device, as they would have under normal conditions in the laboratory.

“Now that we know this proof-of-concept works, we have already embarked on the next step – getting a flight model [of the device] ready,” says Viswanathan. This would include optimising the physical space that the device can take up and its performance under stresses such as vibration and acceleration due to gravity.

The device can also be adapted for studying other organisms such as worms, and for non-biological experiments, the researchers say. “The whole idea was to develop a model platform for Indian researchers,” explains Kumar. “Now that ISRO is embarking on an ambitious human space mission, it has to come up with its solutions, made at home,” Kumar concludes. (India Science News)

pioneer·news

Scientists develop device to grow microorganisms in outer space

Pioneer News | 3 weeks ago

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Science (IISc) and the Indian Space Research Organisation (ISRO) have developed a special modular, self-contained device to carry out biological experiments in outer space using microorganisms.

In a study published in *ActaAstronautica*, the team showed how the device can be used to activate and track the growth of a bacterium called *Sporosarcinapasteurii* over several days, with minimal human involvement.

Understanding how microbes behave in extreme environments could provide valuable insights for human space missions such as 'Gaganyaan', India's first crewed spacecraft. In recent years, scientists have been increasingly exploring the use of lab-on-chip platforms – which combine many analyses into a single integrated chip – for such experiments. But there are additional challenges to designing such platforms for outer space when compared to a laboratory on the ground.

"It has to be completely self-contained," points out Koushik Viswanathan, Assistant Professor in the Department of Mechanical Engineering and a senior author of the study. "Besides, you can't simply expect the same operating conditions as you would in a normal laboratory setting. You can't have something that guzzles 500W of power, for example," Viswanathan explains.

The device developed by the IISc and ISRO team uses an LED and photodiode sensor combination to track bacterial growth by measuring the optical density or scattering of light, similar to spectrophotometers used in the laboratory. It has separate compartments for different experiments. Each compartment or 'cassette' consists of a chamber where bacteria – suspended as spores in a sucrose solution – and a nutrient medium can be mixed to kickstart growth, by clicking on a switch remotely. Data from each cassette is collected and stored independently. Three cassettes are clubbed into a single cartridge, which consumes just under 1W of power. The researchers envision that a full payload that could go in a spacecraft will contain four such cartridges capable of carrying out 12 independent experiments.

The team also had to ensure that the device was leak-proof and unaffected by any change in orientation. “This is a non-traditional environment for the bacteria to grow. It is totally sealed and has a very small volume. We had to see whether we would get consistent [growth] results in this smaller volume,” says Aloke Kumar, Associate Professor in the Department of Mechanical Engineering, and another senior author.

Among other things, the researchers had to make sure that the LED going on and off will not generate much heat, which can change the bacterial growth characteristics. Using an electron microscope, the researchers were able to confirm that the spores grew and multiplied into rod-shaped bacteria inside the device, as they would have under normal conditions in the laboratory.

“Now that we know this proof-of-concept works, we have already embarked on the next step – getting a flight model [of the device] ready,” says Viswanathan. This would include optimising the physical space that the device can take up and its performance under stresses such as vibration and acceleration due to gravity.

The device can also be adapted for studying other organisms such as worms, and for non-biological experiments, the researchers say. “The whole idea was to develop a model platform for Indian researchers,” explains Kumar. “Now that ISRO is embarking on an ambitious human space mission, it has to come up with its solutions, made at home,” Kumar concludes. (India Science News)

Kashmir Convener
Voice of Courage

Scientists develop device to grow microorganisms in outer space

EDUCATION

By Online Editor On Sep 4, 2021

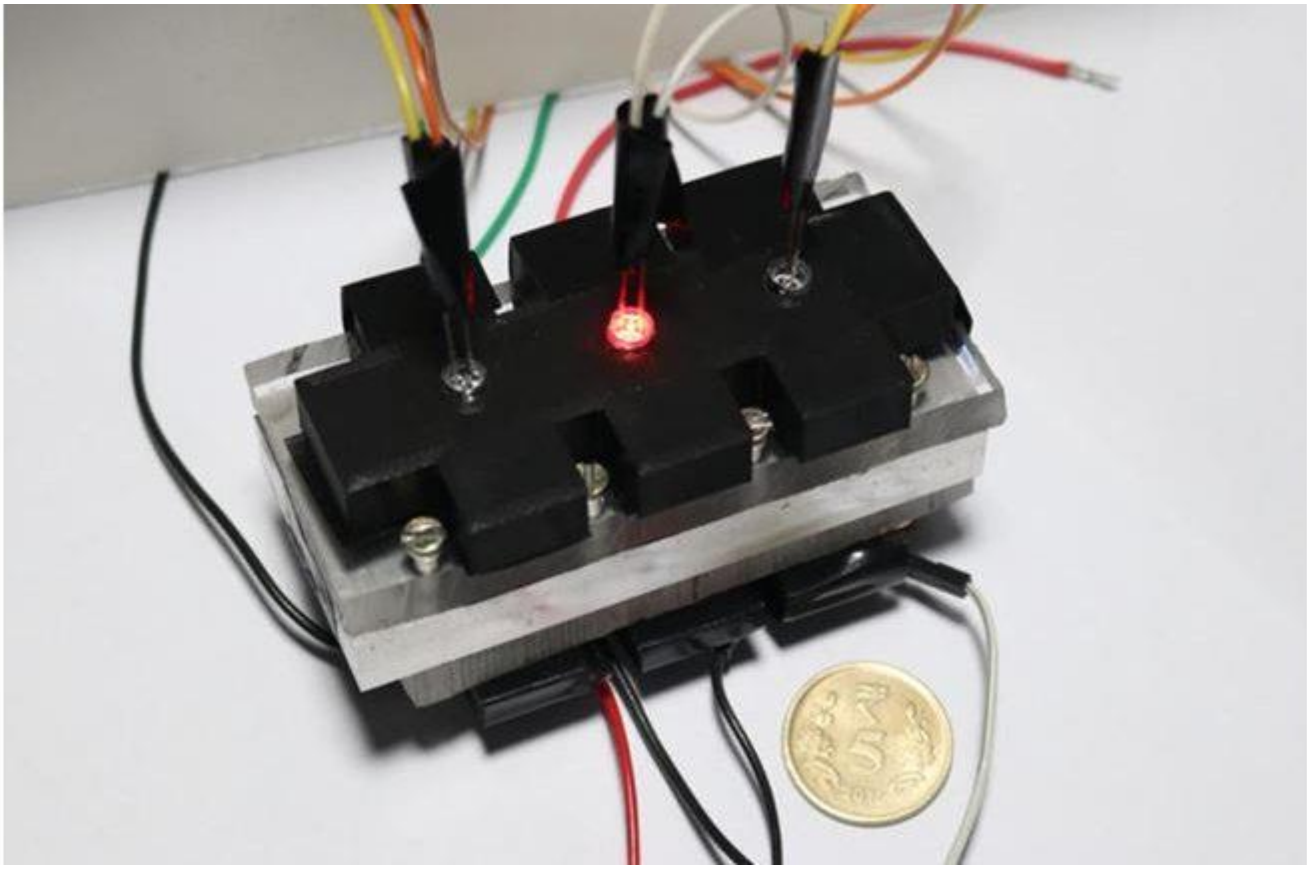

New Delhi, Sep 03 : Researchers at the Indian Institute of Science (IISc) and the Indian Space Research Organisation (ISRO) have developed a special modular, self-contained device to carry out biological experiments in outer space using microorganisms.

In a study published in *ActaAstronautica*, the team showed how the device can be used to activate and track the growth of a bacterium called *Sporosarcinapasteurii* over several days, with minimal human involvement.

Understanding how microbes behave in extreme environments could provide valuable insights for human space missions such as 'Gaganyaan', India's first crewed spacecraft.

In recent years, scientists have been increasingly exploring the use of lab-on-chip platforms – which combine many analyses into a single integrated chip – for such experiments. But there are additional challenges to designing such platforms for outer space when compared to a laboratory on the ground.

"It has to be completely self-contained," points out Koushik Viswanathan, Assistant Professor in the Department of Mechanical Engineering and a senior author of the study. "Besides, you can't simply expect the same operating conditions as you would in a normal laboratory setting. You can't have something that guzzles 500W of power, for example," Viswanathan explains.

The device developed by the IISc and ISRO team uses an LED and photodiode sensor combination to track bacterial growth by measuring the optical density or scattering of light, similar to spectrophotometers used in the laboratory. It has separate compartments for different experiments. Each compartment or 'cassette' consists of a chamber where bacteria – suspended as spores in a sucrose solution – and a nutrient medium can be mixed to kickstart growth, by clicking on a switch remotely. Data from each cassette is collected and stored independently. Three cassettes are clubbed into a single cartridge, which consumes just under 1W of power. The researchers envision that a full payload that could go in a spacecraft will contain four such cartridges capable of carrying out 12 independent experiments.

The team also had to ensure that the device was leak-proof and unaffected by any change in orientation. "This is a non-traditional environment for the bacteria to grow. It is totally sealed and has a very small volume. We had to see whether we would get consistent [growth] results in this smaller volume," says Aloke Kumar, Associate Professor in the Department of Mechanical Engineering, and another senior author.

Among other things, the researchers had to make sure that the LED going on and off will not generate much heat, which can change the bacterial growth characteristics. Using an electron microscope, the researchers were able to confirm that the spores grew and multiplied into rod-shaped bacteria inside the device, as they would have under normal conditions in the laboratory.

"Now that we know this proof-of-concept works, we have already embarked on the next step – getting a flight model [of the device] ready," says Viswanathan. This would include optimising the physical space that the device can take up and its performance under stresses such as vibration and acceleration due to gravity.

The device can also be adapted for studying other organisms such as worms, and for non-biological experiments, the researchers say. "The whole idea was to develop a model platform for Indian researchers," explains Kumar. "Now that ISRO is embarking on an ambitious human space mission, it has to come up with its solutions, made at home," Kumar concludes.

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

Indian Scientists develop devices to grow microorganisms in outer space

TOPICS: Gravity IISc Microorganisms

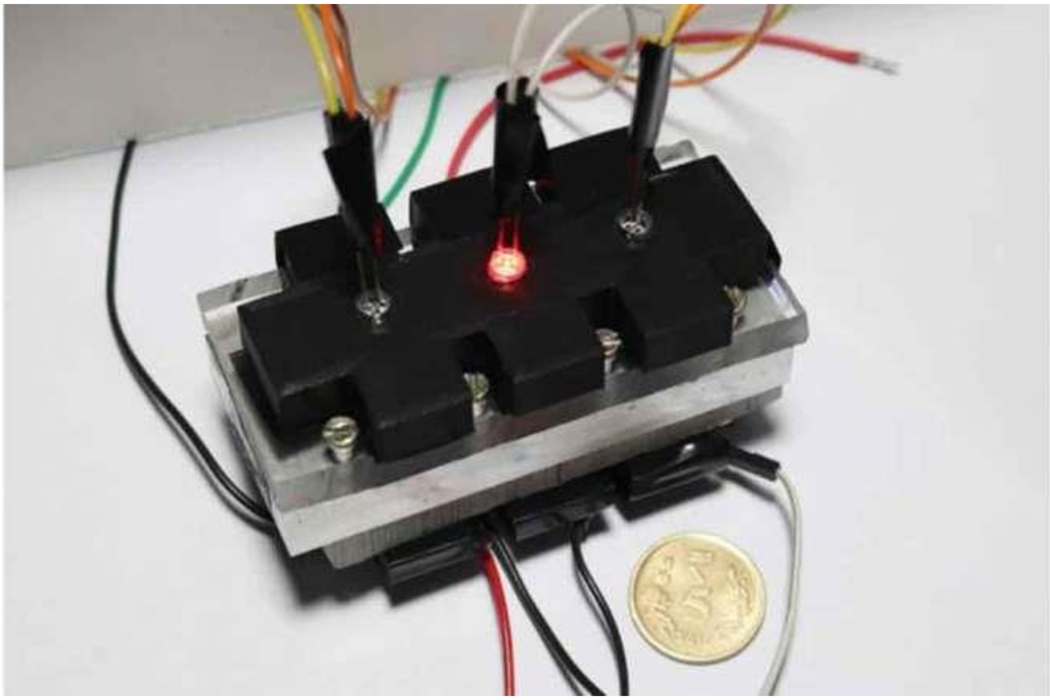

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 5TH SEPTEMBER 2021

New Delhi, Sep 05, 2021: Researchers at the **Indian Institute of Science** (IISc) and the **Indian Space Research Organisation** (ISRO) have developed a special modular, self-contained device to carry out biological experiments in outer space using microorganisms.

In a study published in ***Acta Astronautica***, the team showed how the device can be used to activate and track the growth of a bacterium called *Sporosarcina pasteurii* over several days, with minimal human involvement.

Understanding how microbes behave in extreme environments could provide valuable insights for human space missions such as 'Gaganyaan', India's first crewed spacecraft. In recent years, scientists have been increasingly exploring the use of lab-on-chip

platforms – which combine many analyses into a single integrated chip – for such experiments. But there are additional challenges to designing such platforms for outer space when compared to a laboratory on the ground.

"It has to be completely self-contained," points out Koushik Viswanathan, Assistant Professor in the Department of Mechanical Engineering and a senior author of the study. "Besides, you can't simply expect the same operating conditions as you would in a normal laboratory setting. You can't have something that guzzles 500W of power, for example," Viswanathan explains.

The device developed by the IISc and ISRO team uses an LED and photodiode sensor combination to track bacterial growth by measuring the optical density or scattering of light, similar to spectrophotometers used in the laboratory. It has separate compartments for different experiments. Each compartment or 'cassette' consists of a chamber where bacteria – suspended as spores in a sucrose solution – and a nutrient medium can be mixed to kickstart growth, by clicking on a switch remotely. Data from each cassette is collected and stored independently. Three cassettes are clubbed into a single cartridge, which consumes just under 1W of power. The researchers envision that a full payload that could go in a spacecraft will contain four such cartridges capable of carrying out 12 independent experiments.

The team also had to ensure that the device was leak-proof and unaffected by any change in orientation. "This is a non-traditional environment for the bacteria to grow. It is totally sealed and has a very small volume. We had to see whether we would get consistent [growth] results in this smaller volume," says Aloke Kumar, Associate Professor in the Department of Mechanical Engineering, and another senior author.

Among other things, the researchers had to make sure that the LED going on and off will not generate much heat, which can change the bacterial growth characteristics. Using an electron microscope, the researchers were able to confirm that the spores grew and multiplied into rod-shaped bacteria inside the device, as they would have under normal conditions in the laboratory.

"Now that we know this proof-of-concept works, we have already embarked on the next step – getting a flight model [of the device] ready," says Viswanathan. This would include optimising the physical space that the device can take up and its performance under stresses such as vibration and acceleration due to gravity.

The device can also be adapted for studying other organisms such as worms, and for non-biological experiments, the researchers say. "The whole idea was to develop a model platform for Indian researchers," explains Kumar. "Now that ISRO is embarking on an ambitious human space mission, it has to come up with its solutions, made at home," Kumar concludes.

(India Science News)

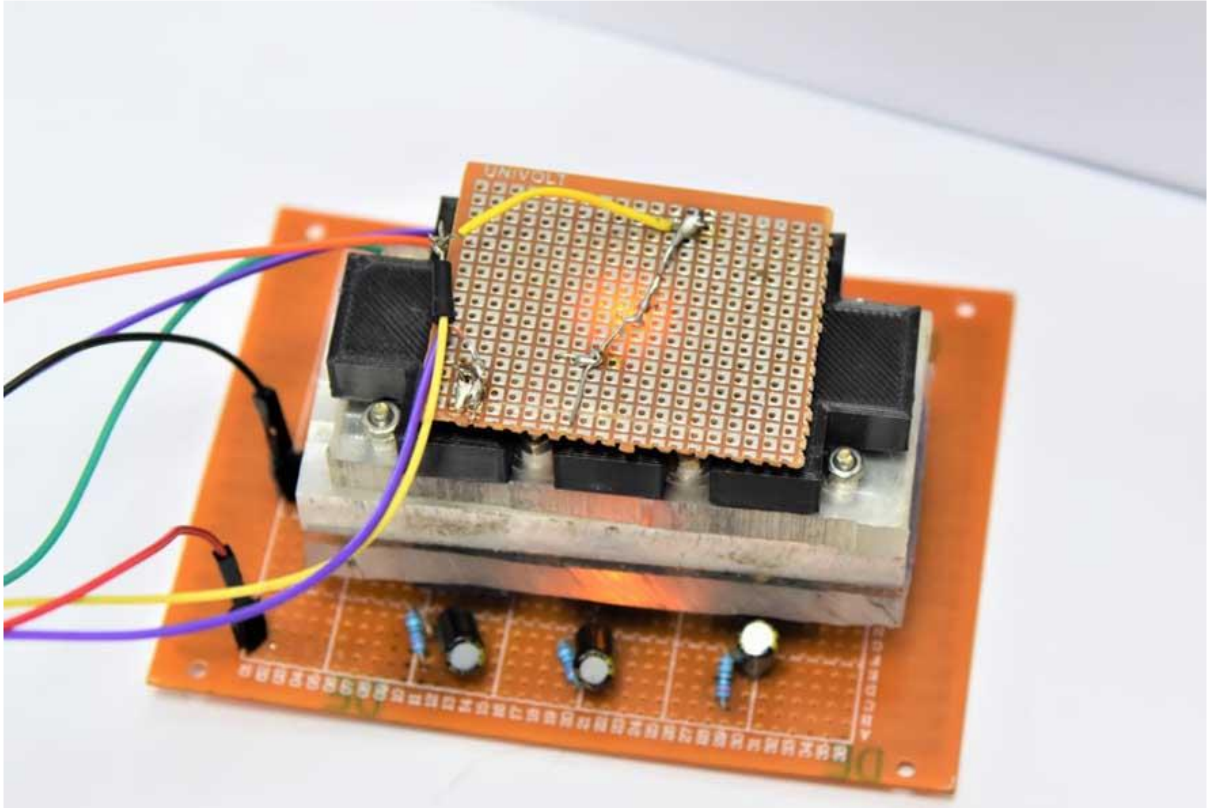

Scientists develop device to grow microorganisms in outer space

Posted on September 4, 2021 | By The Medium News

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Science (IISc) and the Indian Space Research Organisation (ISRO) have developed a special modular, self-contained device to carry out biological experiments in outer space using microorganisms.

In a study published in *ActaAstronautica*, the team showed how the device can be used to activate and track the growth of a bacterium called *Sporosarcinapasteurii* over several days, with minimal human involvement.

Understanding how microbes behave in extreme environments could provide valuable insights for human space missions such as ‘Gaganyaan’, India’s first crewed spacecraft. In recent years, scientists have been increasingly exploring the use of lab-on-chip platforms – which combine many analyses into a single integrated chip – for such experiments. But there are additional challenges to designing such platforms for outer space when compared to a laboratory on the ground.

“It has to be completely self-contained,” points out Koushik Viswanathan, Assistant Professor in the Department of Mechanical Engineering and a senior author of the study. “Besides, you can’t simply expect the same operating conditions as you would in a normal laboratory setting. You can’t have something that guzzles 500W of power, for example,” Viswanathan explains.

The device developed by the IISc and ISRO team uses an LED and photodiode sensor combination to track bacterial growth by measuring the optical density or scattering of light, similar to spectrophotometers used in the laboratory. It has separate compartments for different experiments. Each compartment or ‘cassette’ consists of a chamber where bacteria – suspended as spores in a sucrose solution – and a nutrient medium can be mixed to kickstart growth, by clicking on a switch remotely. Data from each cassette is collected and stored independently. Three cassettes are clubbed into a single cartridge, which consumes just under 1W of power. The researchers envision that a full payload that could go in a spacecraft will contain four such cartridges capable of carrying out 12 independent experiments.

The team also had to ensure that the device was leak-proof and unaffected by any change in orientation. “This is a non-traditional environment for the bacteria to grow. It is totally sealed and has a very small volume. We had to see whether we would get consistent [growth] results in this smaller volume,” says Aloke Kumar, Associate Professor in the Department of Mechanical Engineering, and another senior author.

Among other things, the researchers had to make sure that the LED going on and off will not generate much heat, which can change the bacterial growth characteristics. Using an electron microscope, the researchers were able to confirm that the spores grew and multiplied into rod-shaped bacteria inside the device, as they would have under normal conditions in the laboratory.

“Now that we know this proof-of-concept works, we have already embarked on the next step – getting a flight model [of the device] ready,” says Viswanathan. This would include optimising the physical space that the device can take up and its performance under stresses such as vibration and acceleration due to gravity.

The device can also be adapted for studying other organisms such as worms, and for non-biological experiments, the researchers say. “The whole idea was to develop a model platform for Indian researchers,” explains Kumar. “Now that ISRO is embarking on an ambitious human space mission, it has to come up with its solutions, made at home,” Kumar concludes. (India Science News)

Scientists develop device to grow microorganisms in outer space

By **Rupesh Dharmik** - September 4, 2021

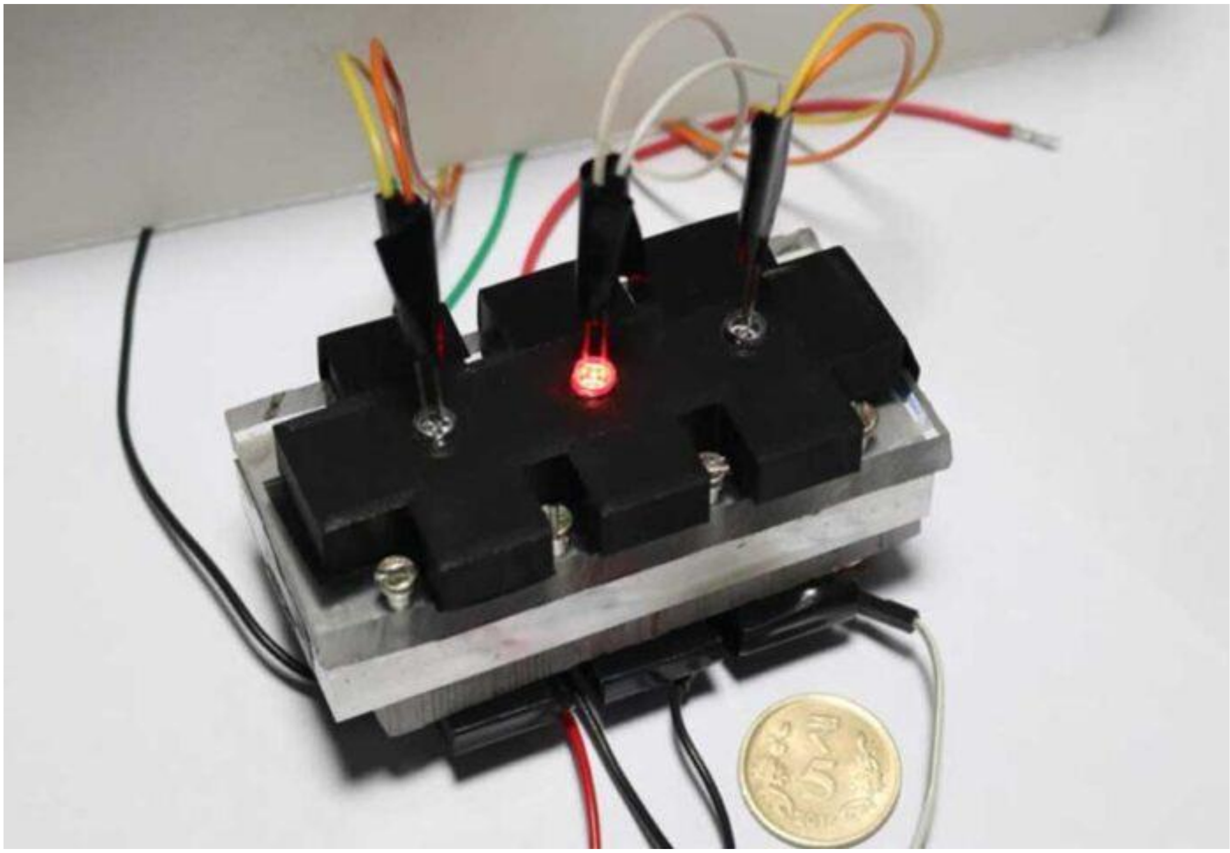

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Science (IISc) and the Indian Space Research Organisation (ISRO) have developed a special modular, self-contained device to carry out biological experiments in outer space using microorganisms.

In a study published in *ActaAstronautica,* the team showed how the device can be used to activate and track the growth of a bacterium called *Sporosarcinapasteurii* over several days, with minimal human involvement.

Understanding how microbes behave in extreme environments could provide valuable insights for human space missions such as 'Gaganyaan', India's first

crewed spacecraft. In recent years, scientists have been increasingly exploring the use of lab-on-chip platforms – which combine many analyses into a single integrated chip – for such experiments. But there are additional challenges to designing such platforms for outer space when compared to a laboratory on the ground.

"It has to be completely self-contained," points out Koushik Viswanathan, Assistant Professor in the Department of Mechanical Engineering and a senior author of the study. "Besides, you can't simply expect the same operating conditions as you would in a normal laboratory setting. You can't have something that guzzles 500W of power, for example," Viswanathan explains.

The device developed by the IISc and ISRO team uses an LED and photodiode sensor combination to track bacterial growth by measuring the optical density or scattering of light, similar to spectrophotometers used in the laboratory. It has separate compartments for different experiments. Each compartment or 'cassette' consists of a chamber where bacteria – suspended as spores in a sucrose solution – and a nutrient medium can be mixed to kickstart growth, by clicking on a switch remotely. Data from each cassette is collected and stored independently. Three cassettes are clubbed into a single cartridge, which consumes just under 1W of power. The researchers envision that a full payload that could go in a spacecraft will contain four such cartridges capable of carrying out 12 independent experiments.

The team also had to ensure that the device was leak-proof and unaffected by any change in orientation. "This is a non-traditional environment for the bacteria to grow. It is totally sealed and has a very small volume. We had to see whether we would get consistent [growth] results in this smaller volume," says Aloke Kumar, Associate Professor in the Department of Mechanical Engineering, and another senior author.

Among other things, the researchers had to make sure that the LED going on and off will not generate much heat, which can change the bacterial growth characteristics. Using an electron microscope, the researchers were able to confirm that the spores grew and multiplied into rod-shaped bacteria inside the device, as they would have under normal conditions in the laboratory.

"Now that we know this proof-of-concept works, we have already embarked on the next step – getting a flight model [of the device] ready," says Viswanathan. This would include optimising the physical space that the device can take up and its performance under stresses such as vibration and acceleration due to gravity.

The device can also be adapted for studying other organisms such as worms, and for non-biological experiments, the researchers say. "The whole idea was to develop a model platform for Indian researchers," explains Kumar. "Now that ISRO is embarking on an ambitious human space mission, it has to come up with its solutions, made at home," Kumar concludes. (India Science News)

प्रभासाक्षी

अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण

इंडिया साइंस वायर Sep 06, 2021 18:27

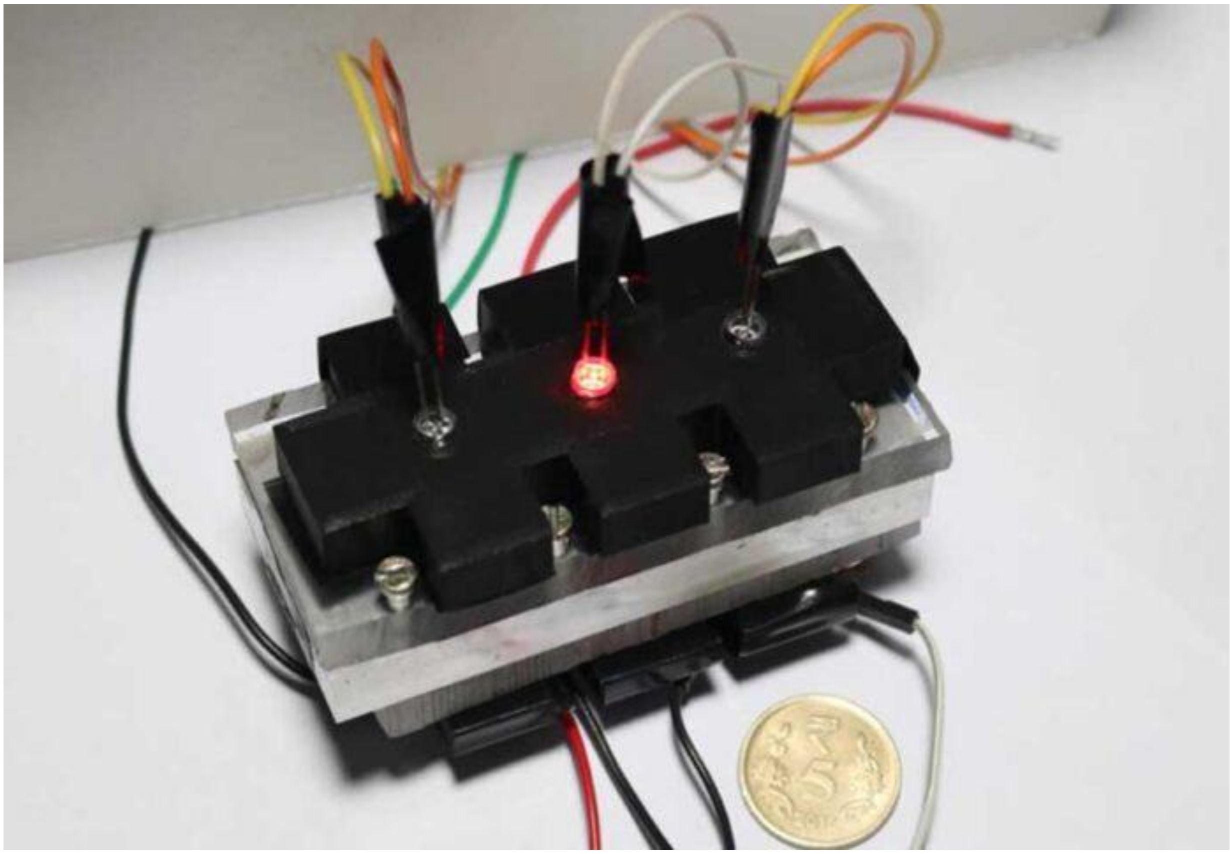

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है।

भारतीय विज्ञान संस्थान शो के (इसरो) और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (आईआईएससी)धकर्ताओं ने अंतरिक्ष में सूक्ष्मजीवों के संवर्द्धन के लिए एक मॉड्युलर उपकरण विकसित किया है। यह नया मॉड्युलर उपकरण बाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग कार्यों में उपयोगी हो सकता है।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ स्पोरोसारसीना पेस्टुरी नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। यह अध्ययन शोध पत्रिका एक्टा एस्ट्रोनॉटिका में प्रकाशित किया गया है।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह के रोगाणु अंतरिक्ष के चरम वातावरण में कैसे व्यवहार करते हैं। इससे वर्ष 2022 में लॉन्च होने वाले भारत के पहले चालक दल वाले अंतरिक्ष यान 'गगनयान' जैसे मानव अंतरिक्ष मिशन के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिल सकती है। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक तेजी से लैबख चिप के उपयोग की-ऑन-ेज कर रहे हैं, जो ऐसे प्रयोगों के लिए विभिन्न विश्लेषणों का समावेश किसी एक एकीकृत चिप में करने की राह आसान कर सके। हालांकि, वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रयोगशाला की तुलना में बाहरी अंतरिक्ष के लिए ऐसे प्लेटफार्मों को डिजाइन करने में अतिरिक्त चुनौतियां होती हैं।

आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में सहायक प्रोफेसर और इस अध्ययन से जुड़े वरिष्ठ शोधकर्ता कौशिक विश्वनाथन बताते हैं, "इसे पूरी तरह आत्मनिर्भर होना चाहिए।इसके अलावा" ", आप अंतरिक्ष में उन परिचालन परिस्थितियों की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं, जैसी किसी सामान्य प्रयोगशाला में होती हैं। उदाहरण के लिए वहाँ ऐसी व्यवस्था संभव नहीं होगी, जिसमें 500 वॉट बिजली की आवश्यकता हो।”

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है। इसमें विभिन्न प्रयोगों के लिए अलग अलग खंड होते हैं। प्रत्येक खंड या-'कैसेट' में एक कक्ष होता है, जहाँ बैक्टीरिया एक सुक्रोज सॉल्यूशन में बीजाणु के रूप में निलंबित होता है। इस तरह, बैक्टीरिया की विकास प्रक्रिया को चलायमान करने के लिए दूर से ही एक स्विच दबाकर उसमें पोषक माध्यम को मिश्रित किया जा सकता है। प्रत्येक कैसेट से डेटा स्वतंत्र रूप से एकत्र और संग्रहीत किया जाता है। तीन कैसेट को एक ही कार्ट्रिज में जोड़ा गया है, जो सिर्फ 1W से कम बिजली की खपत करता है। शोधकर्ताओं की कल्पना है कि एक पूर्ण पेलोड, जो एक अंतरिक्ष यान में जा सकता है, उसमें चार ऐसे कार्ट्रिज हो सकते हैं, जो 12 स्वतंत्र प्रयोग करने में सक्षम होंगे।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं को यह भी सुनिश्चित करना था कि उपकरण लीकप्रूफ हो और लक्ष्य भी प्रभावित न हो। आईआईएससी -बैक्टीरिया के बढ़ने " -के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर और एक अन्य वरिष्ठ शोधकर्ता आलोक कुमार कहते हैं होत पारंपरिक वातावरण-के लिए यह एक गैर ा है। यह पूरी तरह से सील है और इसका आयाम बेहद कम है। हमें यह देखना था कि क्या हम इसमें लगातार बैक्टीरिया को विकसित करने में सक्षम हो सकते हैं।” उन्होंने कहा कि हमें यह भी सुनिश्चित करना था कि " एलईडी चालू और बंद होने से अधिक गर्मी उत्पन्न न हो, जो बैक्टीरिया की वृद्धि से जुड़ी विशेषताओं को बदल सकती है।एक " इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके, शोधकर्ताओं ने यह पुष्टि की है कि उपकरण के भीतर बीजाणु; रॉड के आकार के बैक्टीरिया में रूपांतरित हो सकते हैं, जैसा कि वे प्रयोगशाला में सामान्य परिस्थितियों में होते हैं।

विश्वनाथन कहते हैं, "अब जब हम यह जान गए हैं कि यह यह उपकरण कारगर है, तो हमने पहले ही अगले चरण की शुरुआत कर दी है, और उपकरण का एक फ़्लाइट मॉडल तैयार कर रहे हैं।भौतिक स्थान ", जिसकी आवश्कता उपकरण को हो सकती है, और गुरुत्वाकर्षण के कारण कंपन एवं त्वरण जैसे तनावों का अनुकूलन इसमें शामिल है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि उपकरण को अन्य जीवों जैविक प्रयोगों के अध्ययन के लिए भी अनुकूलित किया -जैसे कि कीड़ो और गैर -जा सकता है। कुमार बताते हैं, "पूरा विचार भारतीय शोधकर्ताओं के लिए एक मॉडल मंच विकसित करने का था। अब" "जब इसरो एक महत्वाकांक्षी मानव अंतरिक्ष मिशन की शुरुआत कर रहा है, तो उसका अपने घरेलू समाधानों के साथ आगे बढ़ना बेहतर होगा।"

(इंडिया साइंस वायर(

हस्तक्षेप.com

उनकी खबरें जो खबर नहीं बनतीं

अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए भारतीय वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ स्पोरोसारसीना पेस्तुरी नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है।

By Guest Writer | Mon, 6 Sep 2021

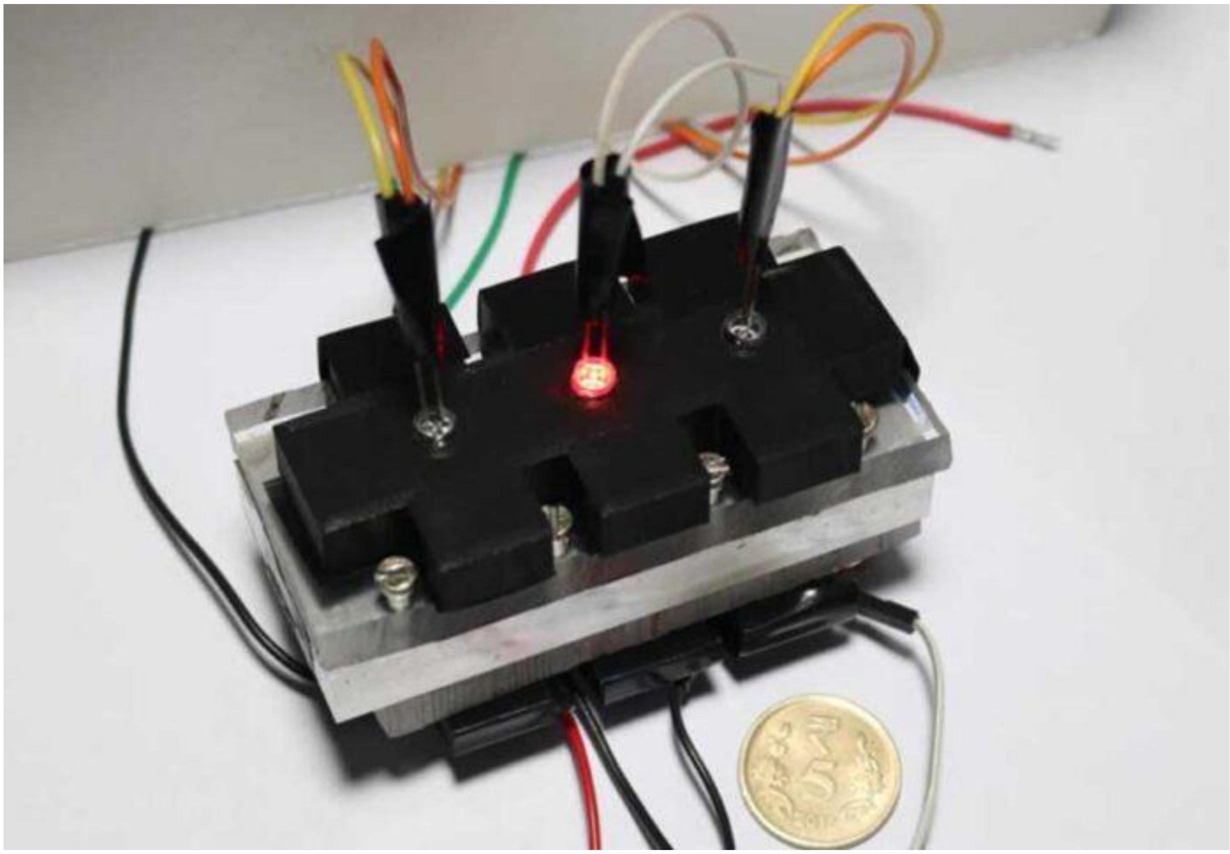

Indian Scientists develop devices to grow microorganisms in outer space

बाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग कार्यों में उपयोगी हो सकता है नया मॉड्युलर उपकरण

नई दिल्ली, 06 सितंबर, 2021: **भारतीय विज्ञान संस्थान)**[**Indian Institute of Science**](#) **आईआईएससी)** और **भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन)Indian Space Research Organisation इसरो)** के शोधकर्ताओं ने अंतरिक्ष **में** सूक्ष्मजीवों के संवर्द्धन के लिए एक मॉड्युलर उपकरण विकसित किया है।

यह नया मॉड्युलर उपकरण बाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग कार्यों में उपयोगी हो सकता है।

शोध पत्रिका एक्टा एस्ट्रोनॉटिका में प्रकाशित हुआ है अध्ययन

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ *स्पोरोसारसीना पेस्टुरी* नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। यह अध्ययन शोध पत्रिका [एक्टा एस्ट्रोनॉटिका](#) में प्रकाशित किया गया है।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह के रोगाणु अंतरिक्ष के चरम वातावरण में कैसे व्यवहार करते हैं। इससे वर्ष 2022 में लॉन्च होने वाले भारत के पहले चालक दल वाले अंतरिक्ष यान '**गगनयान**' जैसे **मानव अंतरिक्ष मिशन** के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिल सकती है। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक तेजी से लैबचिप के उपयोग -ऑन-की खोज कर रहे हैं, जो ऐसे प्रयोगों के लिए विभिन्न विश्लेषणों का समावेश किसी एक एकीकृत चिप में करने की राह आसान कर सके। हालांकि, वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रयोगशाला की तुलना में बाहरी अंतरिक्ष के लिए ऐसे प्लेटफार्मों को डिजाइन करने में अतिरिक्त चुनौतियां होती हैं।

आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में सहायक प्रोफेसर और इस अध्ययन से जुड़े वरिष्ठ शोधकर्ता कौशिक विश्वनाथन बताते हैं,

"इसे पूरी तरह [आत्मनिर्भर](#) होना चाहिए।इसके अलावा" ", आप अंतरिक्ष में उन परिचालन परिस्थितियों की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं, जैसी किसी सामान्य प्रयोगशाला में होती हैं। उदाहरण के लिए वहाँ ऐसी व्यवस्था संभव नहीं होगी, जिसमें 500 वॉट बिजली की आवश्यकता हो।”

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है। इसमें विभिन्न प्रयोगों के लिए अलगअलग खंड होते हैं। प्रत्येक खंड या- 'कैसेट' में एक कक्ष होता है, जहाँ बैक्टीरिया एक सुक्रोज सॉल्यूशन में बीजाणु के रूप में निलंबित होता है। इस तरह, बैक्टीरिया की विकास प्रक्रिया को चलायमान करने के लिए दूर से ही एक स्विच दबाकर उसमें पोषक माध्यम को मिश्रित किया जा सकता है। प्रत्येक कैसेट से डेटा स्वतंत्र रूप से एकत्र और संग्रहीत किया जाता है। तीन कैसेट को एक ही कार्ट्रिज में जोड़ा गया है, जो सिर्फ 1W से कम बिजली की खपत करता है। शोधकर्ताओं की कल्पना है कि एक पूर्ण पेलोड, जो एक अंतरिक्ष यान में जा सकता है, उसमें चार ऐसे कार्ट्रिज हो सकते हैं, जो 12 स्वतंत्र प्रयोग करने में सक्षम होंगे।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं को यह भी सुनिश्चित करना था कि उपकरण लीकप्रूफ हो और लक्ष्य भी प्रभावित - शोधकर्ता न हो। आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर और एक अन्य वरिष्ठ " - आलोक कुमार कहते हैं**बैक्टीरिया** के बढ़ने के लिए यह एक गैरपारंपरिक वातावरण होता है। यह पूरी त-रह से सील है और इसका आयाम बेहद कम है। हमें यह देखना था कि क्या हम इसमें लगातार बैक्टीरिया को

विकसित करने में सक्षम हो सकते हैं।" उन्होंने कहा कि "हमें यह भी सुनिश्चित करना था कि एलईडी चालू और बंद होने से अधिक गर्मी उत्पन्न न हो, जो बैक्टीरिया की वृद्धि से जुड़ी विशेषताओं को बदल सकती है।"

एक इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके, शोधकर्ताओं ने यह पुष्टि की है कि उपकरण के भीतर बीजाणु; रॉड के आकार के बैक्टीरिया में रूपांतरित हो सकते हैं, जैसा कि वे प्रयोगशाला में सामान्य परिस्थितियों में होते हैं।

विश्वनाथन कहते हैं,

"अब जब हम यह जान गए हैं कि यह यह उपकरण कारगर है, तो हमने पहले ही अगले चरण की शुरुआत कर दी है, और उपकरण का एक फ़्लाइट मॉडल तैयार कर रहे हैं।भौतिक स्थान ", जिसकी आवश्कता उपकरण को हो सकती है, और गुरुत्वाकर्षण के कारण कंपन एवं त्वरण जैसे तनावों का अनुकूलन इसमें शामिल है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि उपकरण को अन्य जीवों जैविक प्रयोगों के अध्ययन के -जैसे कि कीड़ो और गैर - लिए भी अनुकूलित किया जा सकता है।

कुमार बताते हैं,

"पूरा विचार भारतीय शोधकर्ताओं के लिए एक मॉडल मंच विकसित करने का था।अब जब इसरो एक " " महत्वाकांक्षी मानव अंतरिक्ष मिशन की शुरुआत कर रहा है, तो उसका अपने घरेलू समाधानों के साथ आगे बढ़ना बेहतर होगा।"

(इंडिया साइंस वायर(

अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण

By RD Times Hindi | September 4, 2021

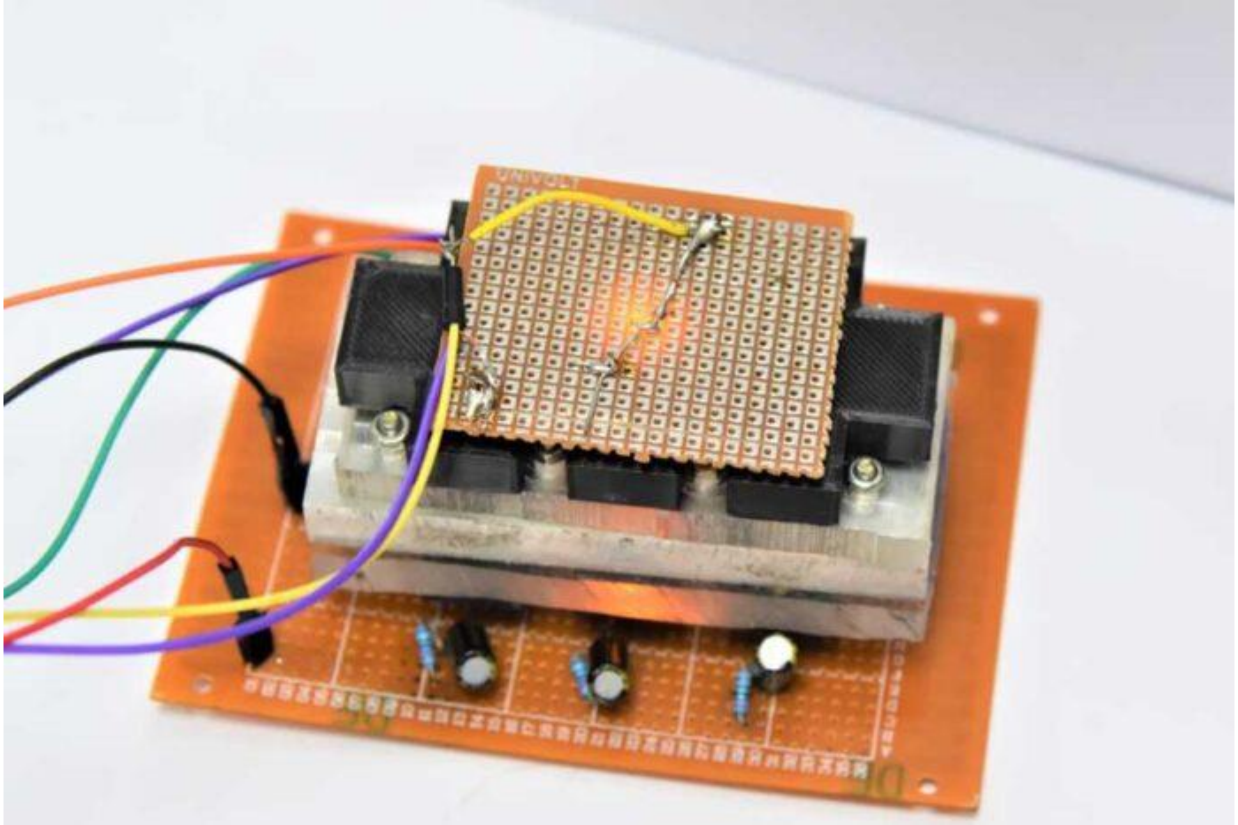

नई दिल्ली: भारतीय विज्ञान संस्थान के (इसरो) और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (आईआईएससी) शोधकर्ताओं ने अंतरिक्ष में सूक्ष्मजीवों के संवर्द्धन के लिए एकमॉड्युलर उपकरण विकसित किया है। यह नया मॉड्युलर उपकरणबाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोगकार्यों में उपयोगी हो सकता है।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ *स्पोरोसारसीना पेस्टुरी* नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। यह अध्ययन शोध पत्रिका एक्टा एस्ट्रोनॉटिका में प्रकाशित किया गया है।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह के रोगाणु अंतरिक्ष के चरम वातावरण में कैसे व्यवहार करते हैं। इससे वर्ष 2022 में लॉन्च होने वाले भारत के पहले चालक दल वाले अंतरिक्ष यान 'गगनयान' जैसे मानव अंतरिक्ष

मिशन के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिल सकती है। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक तेजी से लैबचिप के उपयोग -ऑन-की खोज कर रहे हैं, जो ऐसे प्रयोगों के लिए विभिन्न विश्लेषणों का समावेश किसी एक एकीकृत चिप में करने की राह आसान कर सके। हालांकि, वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रयोगशाला की तुलना में बाहरी अंतरिक्ष के लिए ऐसे प्लेटफार्मों को डिजाइन करने में अतिरिक्त चुनौतियां होती हैं।

आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में सहायक प्रोफेसर और इस अध्ययन से जुड़े वरिष्ठ शोधकर्ता कौशिक विश्वनाथन बताते हैं, "इसे पूरी तरह आत्मनिर्भर होना चाहिए।" "इसके अलावा, आप अंतरिक्ष में उन परिचालन परिस्थितियों की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं, जैसी किसी सामान्य प्रयोगशाला में होती हैं। उदाहरण के लिए वहाँ ऐसी व्यवस्था संभव नहीं होगी, जिसमें 500 वॉट बिजली की आवश्यकता हो।"

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है।इसमें विभिन्न प्रयोगों के लिए अलगअलग खंड होते ह-ैं। प्रत्येक खंड या 'कैसेट' में एक कक्ष होता है, जहाँ बैक्टीरिया एक सुक्रोज सॉल्यूशन में बीजाणु के रूप में निलंबित होता है। इस तरह, बैक्टीरिया की विकास प्रक्रिया को चलायमान करने के लिए दूर से ही एक स्विच दबाकर उसमें पोषक माध्यम को मिश्रित किया जा सकता है।प्रत्येक कैसेट से डेटा स्वतंत्र रूप से एकत्र और संग्रहीत किया जाता है। तीन कैसेट को एक ही कार्ट्रिज में जोड़ा गया है, जो सिर्फ 1W से कम बिजली की खपत करता है। शोधकर्ताओं की कल्पना है कि एक पूर्ण पेलोड, जो एक अंतरिक्ष यान में जा सकता है, उसमें चार ऐसे कार्ट्रिज हो सकते हैं, जो 12 स्वतंत्र प्रयोग करने में सक्षम होंगे।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं को यह भी सुनिश्चित करना था कि उपकरण लीकप्रूफ हो और लक्ष्य भी प्रभावित -ष्ठ शोधकर्ता न हो। आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर और एक अन्य वरि आलोक कुमार कहते हैं – "बैक्टीरिया के बढ़ने के लिए यह एक गैरपारंपरिक वातावरण होता है। यह पूरी -तरह से सील है और इसका आयाम बेहद कम है। हमें यह देखना था कि क्या हम इसमें लगातार बैक्टीरिया को विकसित करने में सक्षम हो सकते हैं।" उन्होंने कहा कि "हमें यह भी सुनिश्चित करना था कि एलईडी चालू और बंद होने से अधिक गर्मी उत्पन्न न हो, जो बैक्टीरिया की वृद्धि से जुड़ी विशेषताओं को बदल सकती है।" एक इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके, शोधकर्ताओं ने यह पुष्टिकी है कि उपकरण के भीतर बीजाणु; रॉड के आकार के बैक्टीरिया में रूपांतरित हो सकते हैं, जैसा कि वे प्रयोगशाला में सामान्य परिस्थितियों में होते हैं।

विश्वनाथन कहते हैं, "अब जब हम यह जान गए हैं कि यह यह उपकरण कारगर है, तो हमने पहले ही अगले चरण की शुरुआत कर दी है, और उपकरण का एक फ़्लाइट मॉडल तैयार कर रहे हैं।" भौतिक स्थान, जिसकी आवश्कता उपकरण को हो सकती है, और गुरुत्वाकर्षण के कारण कंपन एवं त्वरण जैसे तनावों का अनुकूलन इसमें शामिल है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि उपकरण को अन्य जीवों – जैसे कि कीड़ो और गैरजैविक प्रयोगों के अध्ययन के -। कुमार बताते हैंलिए भी अनुकूलित किया जा सकता है, "पूरा विचार भारतीय शोधकर्ताओं के लिए एक मॉडल मंच विकसित करने का था।" "अब जब इसरो एक महत्वाकांक्षी मानव अंतरिक्ष मिशन की शुरुआत कर रहा है, तो उसका अपने घरेलू समाधानों के साथ आगे बढ़ना बेहतर होगा।" (इंडिया साइंस वायर(

फाड़ डालो डॉट कॉम

धाँसू ख़बरें और ख़बरों की चीर-फाड़

अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए भारतीय वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण

हस्तक्षेप.com उनकी खबरें जो खबर नहीं बनते

By Ram Bharose

सितम्बर 6, 2021

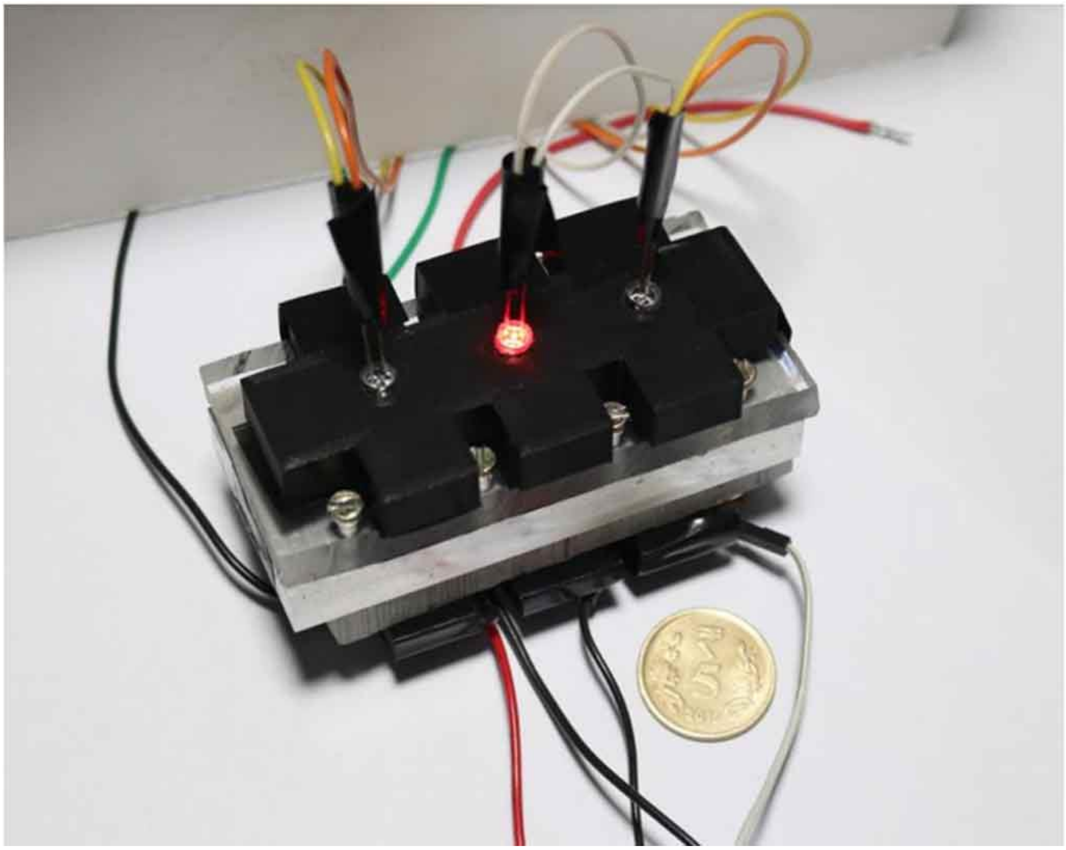

नई दिल्ली, 06 सितंबर, 2021: भारतीय विज्ञान संस्थान)Indian Institute of Science आईआईएससीअंतरिक्ष और भारतीय (के शोधकर्ताओं ने अंतरिक्ष (इसरो) अनुसंधान संगठन **में** सूक्ष्मजीवों के संवर्द्धन के लिए एक मॉड्युलर उपकरण विकसित किया है।

यह नया मॉड्युलर उपकरण बाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग कार्यों में उपयोगी हो सकता है।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ *स्पोरोसारसीना पेस्टुरी* नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। यह अध्ययन शोध पत्रिका एक्टा एस्ट्रोनॉटिका में प्रकाशित किया गया है।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह के रोगाणु अंतरिक्ष के चरम वातावरण में कैसे व्यवहार करते हैं। इससे वर्ष 2022 में लॉन्च होने वाले भारत के पहले चालक दल वाले अंतरिक्ष यान 'गगनयान' जैसे मानव अंतरिक्ष मिशन के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिल सकती है। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक तेजी से लैबचिप के उपयो-ऑन-ग की खोज कर रहे हैं, जो ऐसे प्रयोगों के लिए विभिन्न विश्लेषणों का समावेश किसी एक एकीकृत चिप में करने की राह आसान कर सके। हालांकि, वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रयोगशाला की तुलना में बाहरी अंतरिक्ष के लिए ऐसे प्लेटफार्मों को डिजाइन करने में अतिरिक्त चुनौतियां होती हैं।

आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में सहायक प्रोफेसर और इस अध्ययन से जुड़े वरिष्ठ शोधकर्ता कौशिक विश्वनाथन बताते हैं, "इसे पूरी तरह आत्मनिर्भर होना चाहिए।" "इसके अलावा, आप अंतरिक्ष में उन परिचालन परिस्थितियों की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं, जैसी किसी सामान्य प्रयोगशाला में होती हैं। उदाहरण के लिए वहाँ ऐसी व्यवस्था संभव नहीं होगी, जिसमें 500 वॉट बिजली की आवश्यकता हो।"

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है। इसमें विभिन्न प्रयोगों के लिए अलग अलग खंड होते हैं। प्रत्येक खंड या-'कैसेट' में एक कक्ष होता है, जहाँ बैक्टीरिया एक सुक्रोज सॉल्यूशन में बीजाणु के रूप में निलंबित होता है। इस तरह, बैक्टीरिया की विकास प्रक्रिया को चलायमान करने के लिए दूर से ही एक स्विच दबाकर उसमें पोषक माध्यम को मिश्रित किया जा सकता है। प्रत्येक कैसेट से डेटा स्वतंत्र रूप से एकत्र और संग्रहीत किया जाता है। तीन कैसेट को एक ही कार्ट्रिज में जोड़ा गया है, जो सिर्फ 1W से कम बिजली की खपत करता है। शोधकर्ताओं की कल्पना है कि एक पूर्ण पेलोड, जो एक अंतरिक्ष यान में जा सकता है, उसमें चार ऐसे कार्ट्रिज हो सकते हैं, जो 12 स्वतंत्र प्रयोग करने में सक्षम होंगे।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं को यह भी सुनिश्चित करना था कि उपकरण लीकप्रूफ हो और लक्ष्य भी प्रभावित न हो। आईआईएससी - के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर और एक अन्य वरिष्ठ शोधकर्ता आलोक कुमार कहते हैं– "बैक्टीरिया के बढ़ने के लिए यह एक गैर पारंपरिक-वातावरण होता है। यह पूरी तरह से सील है और इसका आयाम बेहद कम है। हमें यह देखना था कि क्या हम इसमें लगातार बैक्टीरिया को विकसित करने में सक्षम हो सकते हैं।" उन्होंने कहा कि "हमें यह भी सुनिश्चित करना था कि एलईडी चालू और बंद होने से अधिक गर्मी उत्पन्न न हो, जो बैक्टीरिया की वृद्धि से जुड़ी विशेषताओं को बदल सकती है।" एक इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके, शोधकर्ताओं ने यह पुष्टि की है कि उपकरण के भीतर बीजाणु; रॉड के आकार के बैक्टीरिया में रूपांतरित हो सकते हैं, जैसा कि वे प्रयोगशाला में सामान्य परिस्थितियों में होते हैं।

विश्वनाथन कहते हैं, "अब जब हम यह जान गए हैं कि यह यह उपकरण कारगर है, तो हमने पहले ही अगले चरण की शुरुआत कर दी है, और उपकरण का एक फ़्लाइट मॉडल तैयार कर रहे हैं।" भौतिक स्थान, जिसकी आवश्कता उपकरण को हो सकती है, और गुरुत्वाकर्षण के कारण कंपन एवं त्वरण जैसे तनावों का अनुकूलन इसमें शामिल है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि उपकरण को अन्य जीवों – जैसे कि कीड़ो और गैरजैविक प्रयोगों के अध्ययन के लिए भी अनुकूलित - किया जा सकता है। कुमार बताते हैं,

"पूरा विचार भारतीय शोधकर्ताओं के लिए एक मॉडल मंच विकसित करने का था।" "अब जब इसरो एक महत्वाकांक्षी मानव अंतरिक्ष मिशन की शुरुआत कर रहा है, तो उसका अपने घरेलू समाधानों के साथ आगे बढ़ना बेहतर होगा।"

(इंडिया साइंस वायर(

अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण

03/09/2021 V3news India

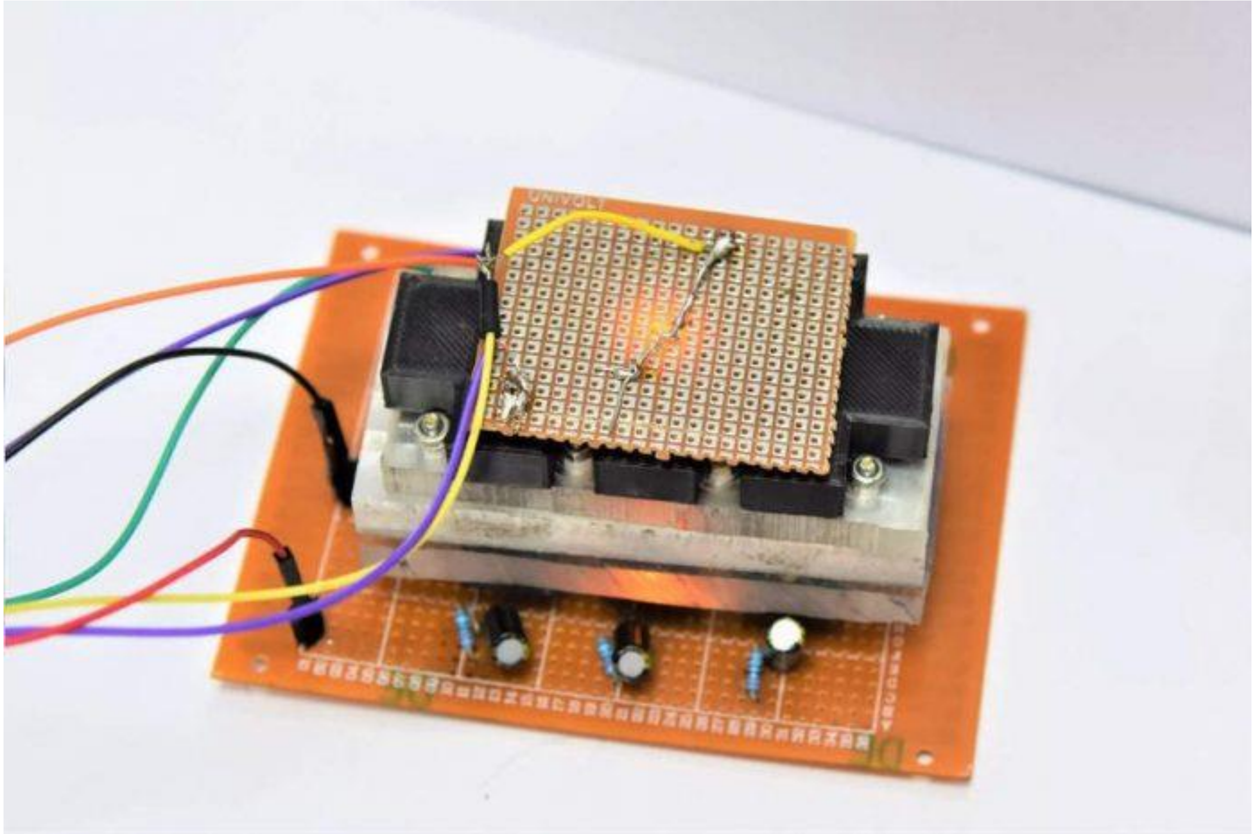

नई दिल्ली, 03 सितंबर और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान (आईआईएससी) भारतीय विज्ञान संस्थान :(इंडिया साइंस वायर) के शोधकर्ताओं ने अंतरिक्ष में सूक्ष्मजीवों के संवर्द्धन के लिए एक (इसरो) संगठनमॉड्युलर उपकरण विकसित किया है। यह नया मॉड्युलर उपकरण बाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग कार्यों में उपयोगी हो सकता है।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ स्पोरोसारसीना पेस्टुरी नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। यह अध्ययन शोध पत्रिका एक्टा एस्ट्रोनॉटिका में प्रकाशित किया गया है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह के रोगाणु अंतरिक्ष के चरम वातावरण में कैसे व्यवहार करते हैं।

इससे वर्ष 2022 में लॉन्च होने वाले भारत के पहले चालक दल वाले अंतरिक्ष यान 'गगनयान' जैसे मानव अंतरिक्ष मिशन के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिल सकती है। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक तेजी से लैबकी खोज कर रहे हैं चिप के उपयोग-ऑन-, जो ऐसे प्रयोगों के लिए विभिन्न विश्लेषणों का समावेश किसी एक एकीकृत चिप में करने की राह आसान कर सके। हालांकि, वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रयोगशाला की तुलना में बाहरी अंतरिक्ष के लिए ऐसे प्लेटफार्मों को डिजाइन करने में अतिरिक्त चुनौतियां होती हैं।

आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में सहायक प्रोफेसर और इस अध्ययन से जुड़े वरिष्ठ शोधकर्ता कौशिक विश्वनाथन बताते हैं, "इसे पूरी तरह आत्मनिर्भर होना चाहिए।" "इसके अलावा, आप अंतरिक्ष में उन परिचालन परिस्थितियों की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं, जैसी किसी सामान्य प्रयोगशाला में होती हैं। उदाहरण के लिए वहाँ ऐसी व्यवस्था संभव नहीं होगी, जिसमें 500 वॉट बिजली की आवश्यकता हो।"

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है। इसमें विभिन्न प्रयोगों के लिए अलगअलग खंड होते हैं। - प्रत्येक खंड या'कैसेट' में एक कक्ष होता है, जहाँ बैक्टीरिया एक सुक्रोज सॉल्यूशन में बीजाणु के रूप में निलंबित होता है।

इस तरह, बैक्टीरिया की विकास प्रक्रिया को चलायमान करने के लिए दूर से ही एक स्विच दबाकर उसमें पोषक माध्यम को मिश्रित किया जा सकता है। प्रत्येक कैसेट से डेटा स्वतंत्र रूप से एकत्र और संग्रहीत किया जाता है। तीन कैसेट को एक ही कार्ट्रिज में जोड़ा गया है, जो सिर्फ 1W से कम बिजली की खपत करता है। शोधकर्ताओं की कल्पना है कि एक पूर्ण पेलोड, जो एक अंतरिक्ष यान में जा सकता है, उसमें चार ऐसे कार्ट्रिज हो सकते हैं, जो 12 स्वतंत्र प्रयोग करने में सक्षम होंगे।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं को यह भी सुनिश्चित करना था कि उपकरण लीकप्रूफ- हो और लक्ष्य भी प्रभावित न हो। आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर और एक अन्य वरिष्ठ शोधकर्ता आलोक कुमार कहते हैं – "बैक्टीरिया के बढ़ने के लिए यह एक गैरवरण होता है। यह पूरी तरह से सील है और इसका आयाम बेहद पारंपरिक वाता-कम है।

हमें यह देखना था कि क्या हम इसमें लगातार बैक्टीरिया को विकसित करने में सक्षम हो सकते हैं।" उन्होंने कहा कि "हमें यह भी सुनिश्चित करना था कि एलईडी चालू और बंद होने से अधिक गर्मी उत्पन्न न हो, जो बैक्टीरिया की वृद्धि से जुड़ी विशेषताओं को बदल सकती है।" एक इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके, शोधकर्ताओं ने यह पुष्टि की है कि उपकरण के भीतर बीजाणु; रॉड के आकार के बैक्टीरिया में रूपांतरित हो सकते हैं, जैसा कि वे प्रयोगशाला में सामान्य परिस्थितियों में होते हैं।

विश्वनाथन कहते हैं, "अब जब हम यह जान गए हैं कि यह यह उपकरण कारगर है, तो हमने पहले ही अगले चरण की शुरुआत कर दी है, और उपकरण का एक फ़्लाइट मॉडल तैयार कर रहे हैं।" भौतिक स्थान, जिसकी आवश्कता उपकरण को हो सकती है, और गुरुत्वाकर्षण के कारण कंपन एवं त्वरण जैसे तनावों का अनुकूलन इसमें शामिल है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि उपकरण को अन्य जीवों – जैसे कि कीड़ो और गैरजैविक प्रयोगों के अध्ययन के लिए भी - अनुकूलित किया जा सकता है। कुमार बताते हैं, "पूरा विचार भारतीय शोधकर्ताओं के लिए एक मॉडल मंच विकसित करने का था।" "अब जब इसरो एक महत्वाकांक्षी मानव अंतरिक्ष मिशन की शुरुआत कर रहा है, तो उसका अपने घरेलू समाधानों के साथ आगे बढ़ना बेहतर होगा।"

senani.in

अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण

September 5, 2021 Senani.in

भारतीय विज्ञान संस्थान और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन द्वारा विकसित यह उपकरण बाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग में उपयोगी

senani.in
इंडिया साइंस वायर || नई दिल्ली

भारतीय विज्ञान संस्थान के (इसरो) और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (आईआईएससी) शोधकर्ताओं ने अंतरिक्ष में सूक्ष्मजीवों के संवर्द्धन के लिए एक मॉड्युलर उपकरण विकसित किया है। यह नया मॉड्युलर उपकरण बाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग कार्यों में उपयोगी हो सकता है।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ स्पोरोसारसीना पेस्टुरी नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। यह अध्ययन शोध पत्रिका एक्टा एस्ट्रोनॉटिका में प्रकाशित किया गया है।

गगनयान में मिलेगी मदद

यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह के रोगाणु अंतरिक्ष के चरम वातावरण में कैसे व्यवहार करते हैं। इससे वर्ष 2022 में लॉन्च होने वाले भारत के पहले चालक दल वाले अंतरिक्ष यान 'गगनयान' जैसे मानव अंतरिक्ष मिशन के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिल सकती है। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक तेजी से लैबखोज कर रहे हैं चिप के उपयोग की-ऑन-, जो ऐसे प्रयोगों के लिए विभिन्न विश्लेषणों का समावेश किसी एक एकीकृत चिप में करने की राह आसान कर सके। हालांकि, वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रयोगशाला की तुलना में बाहरी अंतरिक्ष के लिए ऐसे प्लेटफार्मों को डिजाइन करने में अतिरिक्त चुनौतियां होती हैं।

अंतरिक्ष में परिस्थितियां अलग

आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में सहायक प्रोफेसर और इस अध्ययन से जुड़े वरिष्ठ शोधकर्ता कौशिक विश्वनाथन बताते हैं, 'इसे पूरी तरह आत्मनिर्भर होना चाहिए।' 'इसके अलावा, आप अंतरिक्ष में उन परिचालन परिस्थितियों की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं, जैसी किसी सामान्य प्रयोगशाला में होती हैं। उदाहरण के लिए वहां ऐसी व्यवस्था संभव नहीं होगी, जिसमें 500 वॉट बिजली की आवश्यकता हो।'

ऐसे काम करेगा उपकरण

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है। इसमें विभिन्न प्रयोगों के लिए अलग अलग खंड होते हैं। प्रत्येक खंड या-'कैसेट' में एक कक्ष होता है, जहां बैक्टीरिया एक सुक्रोज सॉल्यूशन में बीजाणु के रूप में निलंबित होता है। इस तरह, बैक्टीरिया की विकास प्रक्रिया को चलायमान करने के लिए दूर से ही एक स्विच दबाकर उसमें पोषक माध्यम को मिश्रित किया जा सकता है। प्रत्येक कैसेट से डेटा स्वतंत्र रूप से एकत्र और संग्रहित किया जाता है। तीन कैसेट को एक ही कार्ट्रिज में जोड़ा गया है, जो सिर्फ एक वॉट से कम बिजली की खपत

करता है। शोधकर्ताओं की कल्पना है कि एक पूर्ण पेलोड, जो एक अंतरिक्ष यान में जा सकता है, उसमें चार ऐसे कार्ट्रिज हो सकते हैं, जो 12 स्वतंत्र प्रयोग करने में सक्षम होंगे।

तैयार कर रहे हैं उपकरण का फ्लाइट मॉडल

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं को यह भी सुनिश्चित करना था कि उपकरण लीकप्रूफ हो और लक्ष्य भी - प्रभावित न हो। आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर और एक अन्य वरिष्ठ शोधकर्ता आलोक कुमार कहते हैं, बैक्टीरिया के बढ़ने के लिए यह एक गैरपारंपरिक - वातावरण होता है। यह पूरी तरह सील है और इसका आयाम बेहद कम है। हमें यह देखना था कि क्या हम इसमें लगातार बैक्टीरिया को विकसित करने मेें सक्षम हो सकते हैं।' उन्होंने कहा कि 'हमें यह भी सुनिश्चित करना था कि एलईडी चालू और बंद होने से अधिक गर्मी उत्पन्न न हो, जो बैक्टीरिया की वृद्धि से जुड़ी विशेषताओं को बदल सकती है।' एक इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके, शोधकर्ताओं ने यह पुष्टि की है कि उपकरण के भीतर बीजाणु; रॉड के आकार के बैक्टीरिया में रूपांतरित हो सकते हैं, जैसा कि वे प्रयोगशाला में सामान्य परिस्थितियों में होते हैं।
विश्वनाथन कहते हैं, 'अब जब हम यह जान गए हैं कि यह उपकरण कारगर है, तो हमने पहले ही अगले चरण की शुरुआत कर दी है और उपकरण का एक फ्लाइट मॉडल तैयार कर रहे हैं।' भौतिक स्थान, जिसकी आवश्कता उपकरण को हो सकती है और गुरुत्वाकर्षण के कारण कंपन एवं त्वरण जैसे तनावों का अनुकूलन इसमें शामिल है।

घरेलू समाधान के साथ आगे बढ़ना जरूरी

शोधकर्ताओं का कहना है कि उपकरण को अन्य जीवोंजैसे कि की-ड़ों और गैरजैविक प्रयोगों के - भी अनुकूलित किया जा सकता है। कुमार बताते हैं अध्ययन के लिए, 'पूरा विचार भारतीय शोधकर्ताओं के लिए एक मॉडल मंच विकसित करने का था।' 'अब जब इसरो एक महत्वाकांक्षी मानव अंतरिक्ष मिशन की शुरुआत कर रहा है, तो उसका अपने घरेलू समाधानों के साथ आगे बढ़ना बेहतर होगा।'

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण

By **Rupesh Dharmik** - September 4, 2021

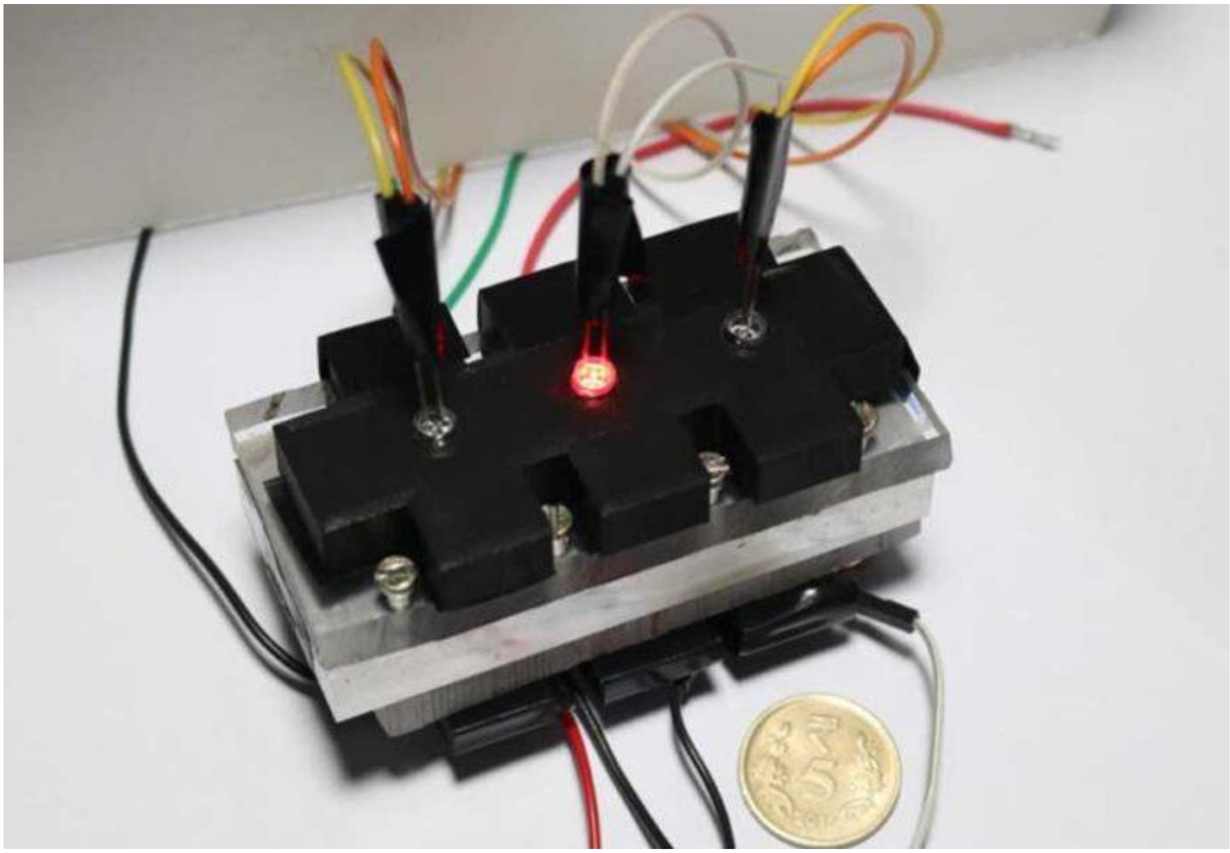

नई दिल्ली: भारतीय विज्ञान संस्थान के (इसरो) और भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन (आईआईएससी) शोधकर्ताओं ने अंतरिक्ष में सूक्ष्मजीवों के संवर्द्धन के लिए एक मॉड्युलर उपकरण विकसित किया है। यह नया मॉड्युलर उपकरणबाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोगकार्यों में उपयोगी हो सकता है।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ *स्पोरोसारसीना पेस्टुरी* नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। यह अध्ययन शोध पत्रिका एक्टा एस्ट्रोनॉटिका में प्रकाशित किया गया है।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह के रोगाणु अंतरिक्ष के चरम वातावरण में कैसे व्यवहार करते हैं। इससे वर्ष 2022 में लॉन्च होने वाले भारत के पहले चालक दल वाले अंतरिक्ष यान ‘गगनयान’ जैसे मानव अंतरिक्ष मिशन के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिल सकती है। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक तेजी से लैबचिप के उपयोग -ऑन- की खोज कर रहे हैं, जो ऐसे प्रयोगों के लिए विभिन्न विश्लेषणों का समावेश किसी एक एकीकृत चिप में करने की राह आसान कर सके। हालांकि, वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रयोगशाला की तुलना में बाहरी अंतरिक्ष के लिए ऐसे प्लेटफार्मों को डिजाइन करने में अतिरिक्त चुनौतियां होती हैं।

आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में सहायक प्रोफेसर और इस अध्ययन से जुड़े वरिष्ठ शोधकर्ता कौशिक विश्वनाथन बताते हैं, “इसे पूरी तरह आत्मनिर्भर होना चाहिए।” “इसके अलावा, आप अंतरिक्ष में उन परिचालन परिस्थितियों की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं, जैसी किसी सामान्य प्रयोगशाला में होती हैं। उदाहरण के लिए वहाँ ऐसी व्यवस्था संभव नहीं होगी, जिसमें 500 वॉट बिजली की आवश्यकता हो।”

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है।इसमें विभिन्न प्रयोगों के लिए अलग अलग खंड होते हैं। प्रत्येक खंड या-‘कैसेट’ में एक कक्ष होता है, जहाँ बैक्टीरिया एक सुक्रोज सॉल्यूशन में बीजाणु के रूप में निलंबित होता है। इस तरह, बैक्टीरिया की विकास प्रक्रिया को चलायमान करने के लिए दूर से ही एक स्विच दबाकर उसमें पोषक माध्यम को मिश्रित किया जा सकता है।प्रत्येक कैसेट से डेटा स्वतंत्र रूप से एकत्र और संग्रहीत किया जाता है। तीन कैसेट को एक ही कार्ट्रिज में जोड़ा गया है, जो सिर्फ 1W से कम बिजली की खपत करता है। शोधकर्ताओं की कल्पना है कि एक पूर्ण पेलोड, जो एक अंतरिक्ष यान में जा सकता है, उसमें चार ऐसे कार्ट्रिज हो सकते हैं, जो 12 स्वतंत्र प्रयोग करने में सक्षम होंगे।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं को यह भी सुनिश्चित करना था कि उपकरण लीकप्रूफ हो और- लक्ष्य भी प्रभावित न हो। आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर और एक अन्य वरिष्ठ शोधकर्ता आलोक कुमार कहते हैं – “बैक्टीरिया के बढ़ने के लिए यह एक गैरपारंपरिक वातावरण होता है। यह पूरी तरह - से सील है और इसका आयाम बेहद कम है। हमें यह देखना था कि क्या हम इसमें लगातार बैक्टीरिया को विकसित करने में सक्षम हो सकते हैं।” उन्होंने कहा कि “हमें यह भी सुनिश्चित करना था कि एलईडी चालू और बंद होने से अधिक गर्मी उत्पन्न न हो, जो बैक्टीरिया की वृद्धि से जुड़ी विशेषताओं को बदल सकती है।” एक इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके, शोधकर्ताओं ने यह पुष्टिकी है कि उपकरण के भीतर बीजाणु; रॉड के आकार के बैक्टीरिया में रूपांतरित हो सकते हैं, जैसा कि वे प्रयोगशाला में सामान्य परिस्थितियों में होते हैं।

विश्वनाथन कहते हैं, “अब जब हम यह जान गए हैं कि यह यह उपकरण कारगर है, तो हमने पहले ही अगले चरण की शुरुआत कर दी है, और उपकरण का एक फ़्लाइट मॉडल तैयार कर रहे हैं।” भौतिक स्थान, जिसकी आवश्कता उपकरण को हो सकती है, और गुरुत्वाकर्षण के कारण कंपन एवं त्वरण जैसे तनावों का अनुकूलन इसमें शामिल है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि उपकरण को अन्य जीवों – जैसे कि कीड़ो और गैरजैविक प्रयोगों के अध्ययन के - है। कुमार बताते हैं लिए भी अनुकूलित किया जा सकता, “पूरा विचार भारतीय शोधकर्ताओं के लिए एक मॉडल मंच विकसित करने का था।” “अब जब इसरो एक महत्वाकांक्षी मानव अंतरिक्ष मिशन की शुरुआत कर रहा है, तो उसका अपने घरेलू समाधानों के साथ आगे बढ़ना बेहतर होगा।” (इंडिया साइंस वायर(

दी इंडियन बुलेटिन

अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण

3 weeks ago

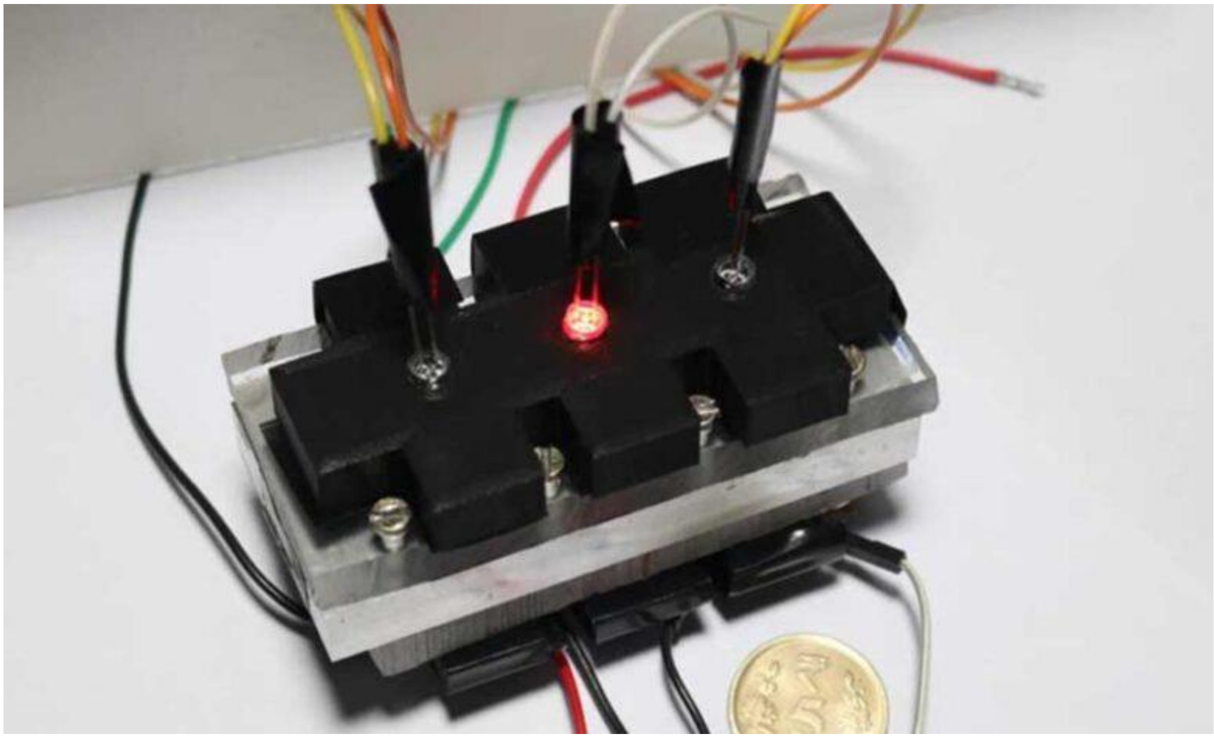

नई दिल्ली: भारतीय विज्ञान संस्थान अंतरिक्ष भारतीय और (आईआईएससी)अनुसंधान संगठन के (इसरो) नया यह है। किया विकसित उपकरण मॉड्युलर एक लिए के संवर्द्धन के सूक्ष्मजीवों में अंतरिक्ष ने शोधकर्ताओं है। सकता हो उपयोगी में प्रयोगकार्यों जैविक में अंतरिक्ष उपकरणबाहरी मॉड्युलर

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ *स्पोरोसारसीना पेस्टुरी* नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। यह अध्ययन शोध पत्रिका एक्टा एस्ट्रोनॉटिका में प्रकाशित किया गया है।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह के रोगाणु अंतरिक्ष के चरम वातावरण में कैसे व्यवहार करते हैं। इससे वर्ष 2022 में लॉन्च होने वाले भारत के पहले चालक दल वाले अंतरिक्ष यान 'गगनयान' जैसे मानव अंतरिक्ष मिशन के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिल सकती है। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक तेजी से लैब उपयोग के चिप-ऑन-

हैं रहे कर खोज की, जो ऐसे प्रयोगों के लिए विभिन्न विश्लेषणों का समावेश किसी एक एकीकृत चिप में करने की राह आसान कर सके। हालांकि, वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रयोगशाला की तुलना में बाहरी अंतरिक्ष के लिए ऐसे प्लेटफार्मों को डिजाइन करने में अतिरिक्त चुनौतियां होती हैं।

आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में सहायक प्रोफेसर और इस अध्ययन से जुड़े वरिष्ठ शोधकर्ता कौशिक विश्वनाथन बताते हैं, "इसे पूरी तरह आत्मनिर्भर होना चाहिए।" "इसके अलावा, आप अंतरिक्ष में उन परिचालन परिस्थितियों की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं, जैसी किसी सामान्य प्रयोगशाला में होती हैं। उदाहरण के लिए वहाँ ऐसी व्यवस्था संभव नहीं होगी, जिसमें 500 वॉट बिजली की आवश्यकता हो।"

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है।इसमें विभिन्न प्रयोगों के लिए अलगह होते खंड अलग-ंं। प्रत्येक खंड या 'कैसेट' में एक कक्ष होता है, जहाँ बैक्टीरिया एक सुक्रोज सॉल्यूशन में बीजाणु के रूप में निलंबित होता है। इस तरह, बैक्टीरिया की विकास प्रक्रिया को चलायमान करने के लिए दूर से ही एक स्विच दबाकर उसमें पोषक माध्यम को मिश्रित किया जा सकता है।प्रत्येक कैसेट से डेटा स्वतंत्र रूप से एकत्र और संग्रहीत किया जाता है। तीन कैसेट को एक ही कार्ट्रिज में जोड़ा गया है, जो सिर्फ 1W से कम बिजली की खपत करता है। शोधकर्ताओं की कल्पना है कि एक पूर्ण पेलोड, जो एक अंतरिक्ष यान में जा सकता है, उसमें चार ऐसे कार्ट्रिज हो सकते हैं, जो 12 स्वतंत्र प्रयोग करने में सक्षम होंगे।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं को यह भी सुनिश्चित करना था कि उपकरण लीक प्रभावित भी लक्ष्य और हो प्रूफ-शोधकर्ता वरिष्ठ अन्य एक और प्रोफेसर एसोसिएट में विभाग इंजीनियरिंग मैकेनिकल के आईआईएससी हो। न क आलोकुमार कहते हैं – "बैक्टीरिया के बढ़ने के लिए यह एक गैर पूरी यह ।है होता वातावरण पारंपरिक-को बैक्टीरिया लगातार इसमें हम क्या कि था देखना यह हमें है। कम बेहद आयाम इसका और है सील से तरह हैं। सकते हो सक्षम में करने विकसित" उन्होंने कहा कि "हमें यह भी सुनिश्चित करना था कि एलईडी चालू और बंद होने से अधिक गर्मी उत्पन्न न हो, जो बैक्टीरिया की वृद्धि से जुड़ी विशेषताओं को बदल सकती है।" एक इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके, शोधकर्ताओं ने यह पुष्टिकी है कि उपकरण के भीतर बीजाणु; रॉड के आकार के बैक्टीरिया में रूपांतरित हो सकते हैं, जैसा कि वे प्रयोगशाला में सामान्य परिस्थितियों में होते हैं।

विश्वनाथन कहते हैं, "अब जब हम यह जान गए हैं कि यह यह उपकरण कारगर है, तो हमने पहले ही अगले चरण की शुरुआत कर दी है, और उपकरण का एक फ़्लाइट मॉडल तैयार कर रहे हैं।" भौतिक स्थान, जिसकी आवश्कता उपकरण को हो सकती है, और गुरुत्वाकर्षण के कारण कंपन एवं त्वरण जैसे तनावों का अनुकूलन इसमें शामिल है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि उपकरण को अन्य जीवों – जैसे कि कीड़ो और गैर के अध्ययन के प्रयोगों जैविक-हैं बताते कुमार है। सकता जा किया अनुकूलित भी लिए, "पूरा विचार भारतीय शोधकर्ताओं के लिए एक मॉडल मंच विकसित करने का था।" "अब जब इसरो एक महत्वाकांक्षी मानव अंतरिक्ष मिशन की शुरुआत कर रहा है, तो उसका अपने घरेलू समाधानों के साथ आगे बढ़ना बेहतर होगा।" (इंडिया साइंस वायर(

अंतरिक्ष में जैविक प्रयोग के लिए वैज्ञानिकों ने बनाया मॉड्यूलर उपकरण

3 weeks ago

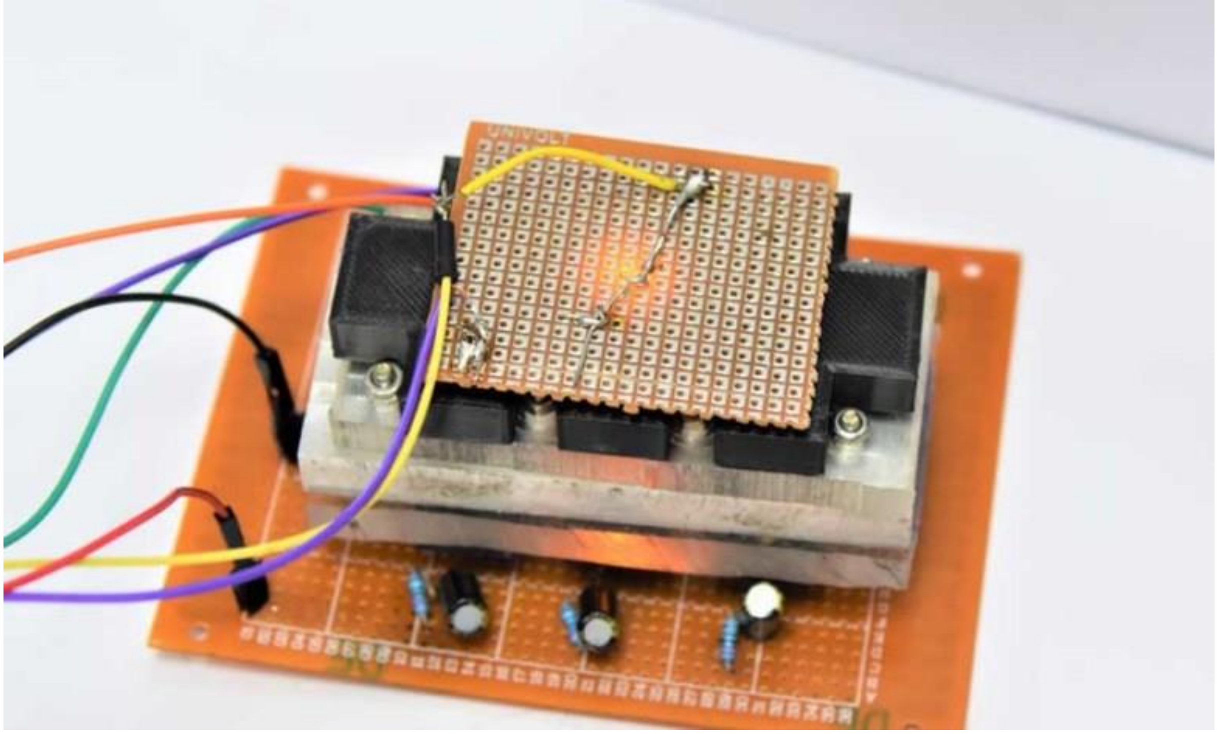

नई दिल्ली: भारतीय विज्ञान संस्थान के (इसरो) संगठन अनुसंधान अंतरिक्ष भारतीय और (आईआईएससी) नया यह है। किया विकसित उपकरण मॉड्युलर एक लिए के संवर्द्धन के सूक्ष्मजीवों में अंतरिक्ष ने शोधकर्ताओं मॉड्युलरउपकरणबाहरी अंतरिक्ष में जैविक प्रयोगकार्यों में उपयोगी हो सकता है।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि कैसे इस मॉड्युलर उपकरण का उपयोग कम से कम मानवीय हस्तक्षेप के साथ *स्पोरोसारसीना पेस्टुरी* नामक जीवाणु के विकास को सक्रिय करने और उसे कई दिनों तक ट्रैक करने के लिए किया जा सकता है। यह अध्ययन शोध पत्रिका एक्टा एस्ट्रोनॉटिका में प्रकाशित किया गया है।

यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस तरह के रोगाणु अंतरिक्ष के चरम वातावरण में कैसे व्यवहार करते हैं। इससे वर्ष 2022 में लॉन्च होने वाले भारत के पहले चालक दल वाले अंतरिक्ष यान 'गगनयान' जैसे मानव अंतरिक्ष मिशन के लिए मूल्यवान अंतर्दृष्टि मिल सकती है। हाल के वर्षों में, वैज्ञानिक तेजी से लैब उपयोग के चिप-ऑन-

हैं रहे कर खोज की, जो ऐसे प्रयोगों के लिए विभिन्न विश्लेषणों का समावेश किसी एक एकीकृत चिप में करने की राह आसान कर सके। हालांकि, वैज्ञानिकों का मानना है कि प्रयोगशाला की तुलना में बाहरी अंतरिक्ष के लिए ऐसे प्लेटफार्मों को डिजाइन करने में अतिरिक्त चुनौतियां होती हैं।

आईआईएससी के मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग में सहायक प्रोफेसर और इस अध्ययन से जुड़े वरिष्ठ शोधकर्ता कौशिक विश्वनाथन बताते हैं, "इसे पूरी तरह आत्मनिर्भर होना चाहिए।" "इसके अलावा, आप अंतरिक्ष में उन परिचालन परिस्थितियों की अपेक्षा नहीं कर सकते हैं, जैसी किसी सामान्य प्रयोगशाला में होती हैं। उदाहरण के लिए वहाँ ऐसी व्यवस्था संभव नहीं होगी, जिसमें 500 वॉट बिजली की आवश्यकता हो।"

आईआईएससी और इसरो के शोधकर्ताओं द्वारा विकसित इस उपकरण में, प्रयोगशाला में उपयोग किए जाने वाले स्पेक्ट्रोफोटोमीटर के समान ऑप्टिकल घनत्व या प्रकाश के प्रकीर्णन को मापकर बैक्टीरिया के विकास को ट्रैक करने के लिए एक एलईडी और फोटोडायोड सेंसर के संयोजन का उपयोग किया गया है।इसमें विभिन्न प्रयोगों के लिए अलग या खंड प्रत्येक हैं। होते खंड अलग-'कैसेट' में एक कक्ष होता है, जहाँ बैक्टीरिया एक सुक्रोज सॉल्यूशन में बीजाणु के रूप में निलंबित होता है। इस तरह, बैक्टीरिया की विकास प्रक्रिया को चलायमान करने के लिए दूर से ही एक स्विच दबाकर उसमें पोषक माध्यम को मिश्रित किया जा सकता है।प्रत्येक कैसेट से डेटा स्वतंत्र रूप से एकत्र और संग्रहीत किया जाता है। तीन कैसेट को एक ही कार्ट्रिज में जोड़ा गया है, जो सिर्फ 1W से कम बिजली की खपत करता है। शोधकर्ताओं की कल्पना है कि एक पूर्ण पेलोड, जो एक अंतरिक्ष यान में जा सकता है, उसमें चार ऐसे कार्ट्रिज हो सकते हैं, जो 12 स्वतंत्र प्रयोग करने में सक्षम होंगे।

इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं को यह भी सुनिश्चित करना था कि उपकरण लीक प्रभावित भी लक्ष्य और हो प्रूफ-शोधकर्ता वरिष्ठ अन्य एक और प्रोफेसर एसोसिएट में विभाग इंजीनियरिंग मैकेनिकल के आईएससीआई हो। न हैं कहते कुमार आलोक– "बैक्टीरिया के बढ़ने के लिए यह एक गैरहोता वातावरण पारंपरिक- है। यह पूरी तरह से सील है और इसका आयाम बेहद कम है। हमें यह देखना था कि क्या हम इसमें लगातार बैक्टीरिया को विकसित करने में सक्षम हो सकते हैं।" उन्होंने कहा कि "हमें यह भी सुनिश्चित करना था कि एलईडी चालू और बंद होने से अधिक गर्मी उत्पन्न न हो, जो बैक्टीरिया की वृद्धि से जुड़ी विशेषताओं को बदल सकती है।" एक इलेक्ट्रॉन माइक्रोस्कोप का उपयोग करके, शोधकर्ताओं ने यह पुष्टिकी है कि उपकरण के भीतर बीजाणु; रॉड के आकार के बैक्टीरिया में रूपांतरित हो सकते हैं, जैसा कि वे प्रयोगशाला में सामान्य परिस्थितियों में होते हैं।

विश्वनाथन कहते हैं, "अब जब हम यह जान गए हैं कि यह यह उपकरण कारगर है, तो हमने पहले ही अगले चरण की शुरुआत कर दी है, और उपकरण का एक फ़्लाइट मॉडल तैयार कर रहे हैं।" भौतिक स्थान, जिसकी आवश्कता उपकरण को हो सकती है, और गुरुत्वाकर्षण के कारण कंपन एवं त्वरण जैसे तनावों का अनुकूलन इसमें शामिल है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि उपकरण को अन्य जीवों – जैसे कि कीड़ो और गैर के अध्ययन के प्रयोगों जैविक-हैं बताते कुमार है। सकता जा किया अनुकूलित भी लिए, "पूरा विचार भारतीय शोधकर्ताओं के लिए एक मॉडल मंच विकसित करने का था।" "अब जब इसरो एक महत्वाकांक्षी मानव अंतरिक्ष मिशन की शुरुआत कर रहा है, तो उसका अपने घरेलू समाधानों के साथ आगे बढ़ना बेहतर होगा।" (इंडिया साइंस वायर(

गाँव कनेक्शन

विज्ञान और इंजीनियरिंग क्षेत्र में शैक्षणिक उत्कृष्टता और शोध विकास क्षमता बढ़ाने के लिए नई साझेदारी

इस साझेदारी का का लक्ष्य विभिन्न चिन्हित विषयोंसंकायों में परस्पर तालमेल और आपसी सहयोग बढ़ाकर / विकास की क्षमता बढ़ाना है। शोध व

India Science Wire 3 Sep 2021

सहमति पत्र पर सीबीएमआर के निदेशक डॉ आलोक धवन और एसीएसआईआर के निदेशक डॉ राजेंद्र सिंह सांगवान ने हस्ताक्षर किए।

देश में शोध और विकास गतिविधियों की क्षमता बढ़ाने के उद्देश्य से देश को दो बड़े अनुसंधान संस्थान साथ आए हैं। इस पहल से विज्ञान और इंजीनियरिंग में पीएचडी डिग्रियां प्रदान करने की राह खुलेगी।

लखनऊ स्थित सेंटर ऑफ बायोमेडिकल रिसर्च क एंड इनोवेटिव ने एकेडमी ऑफ साइंटिफि (सीबीएमआर) पर हस्ताक्षर किए हैं। इस साझेदारी का का लक्ष्य (एमओयू) के साथ सहमति पत्र (एसीएसआईआर) रिसर्च

संकायों में परस्पर तालमेल और आपसी सहयोग बढ़ाकर शोध व विक/विभिन्न चिन्हित विषयों◌ास की क्षमता बढ़ाना है। इससे विज्ञान एवं इंजीनियरिंग में पीएचडी डिग्रियां प्रदान करने की राह खुलेगी।

सीबीएमआर स्वास्थ्य शिक्षा विभाग के अंतर्गत उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गठित एक स्वायत्त केंद्र है। यह केंद्र किसी रोग विशेष के द्योतक बायोमार्कर्स की पहचान और उसके नैदानिक और व्यावहारिक सत्यापन का काम करता है। सीबीएमआर में कई उत्कृष्ट उपकरण है, जिनमें एलएमआर)400 600-800 मेगाहट्र्जसलूशन एंड - के अलावा (सॉलिड स्टेट3डीएफएमआरआई जैसे विकल्प उपलब्ध हैं, जो अन्य विश्लेषणात्मक सुविधाओं के अलावा अकादमिक और उद्योग जगत को शोध एवं सहयोग आधारित साझा सृजन-के लिए एक मंच उपलब्ध कराते हैं।

सीबीएमआर को आधारभूत, क्लीनिकल और ट्रांजिशनल शोध के प्रोत्साहन, विकास, मार्गदर्शन और समन्वय का दायित्व मिला हुआ है। साथ ही अंतर विषयक शोध एवं उद्यमिता को प्रोत्साहित करने और बेहतर उपचार के लिए उत्कृष्ट तकनीक तंत्र के लिए परिवेश उपलब्ध कराना भी इस केंद्र की जिम्मेदारी है।

एसीएसआईआर एक राष्ट्रीय महत्व का संस्थान है। इसकी स्थापना संसद के एक अधिनियम द्वारा हुई है। इसका उद्देश्य विज्ञान के क्षेत्र में क्वालिफाइड यानी योग्य शोधार्थी एवं पेशेवरों की संख्या में वृद्धि करना है। यह संस्थान एक अनुकूल परिवेश के माध्यम से देश की भावी वैज्ञानिक प्रतिभाओं को निखारने एवं उन्हें आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराने के मिशन में जुटा है।

वर्तमान में सीएसआईआर की विभिन्न प्रयोगशालाओं से जुड़े 2514 संकाय सदस्य और 36 एक्जंक्ट फैकल्टी सदस्य इस अकादमी का हिस्सा हैं। साथ ही 5000 छात्र विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत पंजीकृत हैं। वहीं सीबीएमआर उत्तर प्रदेश का पहला ऐसा संस्थान है जिसे एसीएसआईआर ने मान्यता प्रदान करने की पहल की है।

शैक्षणिक उत्कृष्टता और शोध विकास क्षमता बढाने के लिए नई साझेदारी

By RD Times Hindi | September 4, 2021

नई दिल्ली: देश में शोध एवं विकास गतिविधियों की क्षमता बढ़ाने के उद्देश्य से लखनऊ स्थित सेंटर ऑफ बायोमेडिकल रिसर्च के (एसीएसआईआर) व रिसर्चने एकेडमी ऑफ साइंटिफिक एंड इनोवेटि (सीबीएमआर) संकायों /पर हस्ताक्षर किए हैं। इस साझेदारी का का लक्ष्य विभिन्न चिन्हित विषयों (एमओयू) साथ सहमति पत्र में परस्पर तालमेल एवं आपसी सहयोग बढ़ाकर शोध एवं विकासकी क्षमता बढ़ाना है। इससे विज्ञान एवं इंजीनियरिंग में पीएचडी डिग्रियां प्रदान करने की राह खुलेगी।

सहमति पत्र पर सीबीएमआर के निदेशक डॉ आलोक धवन और एसीएसआईआरके निदेशक डॉ राजेंद्र सिंह सांगवान ने हस्ताक्षर किए। इस अवसर पर एसीएसआईआरमें वरिष्ठ प्रबंधक अर्पिता सेनगुप्ता के अलावा सीबीएमआर के डीन नीरज सिन्हा और असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ विश्वनाथ मेथी भी उपस्थित रहे।

सीबीएमआर स्वास्थ्य शिक्षा विभाग के अंतर्गत उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गठित एक स्वायत्त केंद्र है। यह केंद्र किसी रोग विशेष के द्योतक बायोमार्कर्स की पहचान और उसके नैदानिक और व्यावहारिक सत्यापन का काम करता है। सीबीएमआर में कई उत्कृष्ट उपकरण है, जिनमें एलएमआर)400 600-800 मेगाहर्ट्जसलूशन एंड - के अलावा (सॉलिड स्टेट3डीएफएमआरआई जैसे विकल्प उपलब्ध हैं,जो अन्य विश्लेषणात्मक सुविधाओं के अलावा अकादमिक और उद्योग जगत को शोध एवं सहयोग आधारित साझा-सृजन के लिए एक मंच उपलब्ध कराते हैं।

सीबीएमआर को आधारभूत, क्लीनिकल और ट्रांजिशनल शोध के प्रोत्साहन, विकास, मार्गदर्शन और समन्वय का दायित्व मिला हुआ है। साथ ही अंतर विषयक शोध एवं उद्यमिता को प्रोत्साहित करने और बेहतर उपचार के लिए उत्कृष्ट तकनीक तंत्र के लिए परिवेश उपलब्ध कराना भी इस केंद्र की जिम्मेदारी है।

एसीएसआईआर एक राष्ट्रीय महत्व का संस्थान है। इसकी स्थापना संसद के एक अधिनियम द्वारा हुई है। इसका उद्देश्य विज्ञान के क्षेत्र में क्वालिफाइड यानी योग्य शोधार्थी एवं पेशेवरों की संख्या में वृद्धि करना है। यह संस्थान एक अनुकूल परिवेश के माध्यम से देश की भावी वैज्ञानिक प्रतिभाओं को निखारने एवं उन्हें आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराने के मिशन में जुटा है।

वर्तमान में सीएसआईआर की विभिन्न प्रयोगशालाओं से जुड़े 2514 संकाय सदस्य और 36 एक्जंक्ट फैकल्टी सदस्य इस अकादमी का हिस्सा हैं। साथ ही 5000 छात्र विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत पंजीकृत हैं। वहीं सीबीएमआर उत्तर प्रदेश का पहला ऐसा संस्थान है जिसे एसीएसआईआर ने मान्यता प्रदान करने की पहल की है। (इंडिया साइंस वायर)

विज्ञान : शैक्षणिक उत्कृष्टता और शोध विकास क्षमता बढ़ाने के लिए नई साझेदारी

देश में शोध एवं विकास गतिविधियों की क्षमता बढ़ाने के उद्देश्य से Lucknow based Center of Biomedical Research (CBMR) ने एकेडमी ऑफ साइंटिफिक एंड इनोवेटिव रिसर्च पर (एमओयू) के साथ सहमति पत्र (एसीएसआईआर) हस्ताक्षर किए हैं।

By amalendu upadhyay | Sun, 5 Sep 2021

New partnerships to enhance academic excellence and research development capability

नई दिल्ली, **5** सितंबर, **2021:** देश में शोध एवं विकास गतिविधियों की क्षमता बढ़ाने के उद्देश्य से **लखनऊ स्थित सेंटर ऑफ बायोमेडिकल रिसर्च (सीबीएमआर)- Lucknow based Center of Biomedical Research (CBMR)** ने एकेडमी ऑफ साइंटिफिक एंड इनोवेटिव रिसर्च (एमओयू) के साथ सहमति पत्र (एसीएसआईआर)

पर हस्ताक्षर किएहैं। इस साझेदारी का का लक्ष्य विभिन्न चिन्हित विषयोंसंकायों में परस्पर तालमेल एवं / आपसी सहयोग बढ़ाकर शोध एवं विकास की क्षमता बढ़ाना है। इससे विज्ञान एवं इंजीनियरिंग में पीएचडी डिग्रियां प्रदान करने की राह खुलेगी।

सहमति पत्र पर सीबीएमआर के निदेशक डॉ आलोक धवन और एसीएसआईआर के निदेशक डॉ राजेंद्र सिंह सांगवान ने हस्ताक्षर किए।

इस अवसर पर एसीएसआईआर में वरिष्ठ प्रबंधक अर्पिता सेनगुप्ता के अलावा सीबीएमआर के डीन नीरज सिन्हा और असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ विश्वनाथ मेथी भी उपस्थित रहे।

सीबीएमआर के बारे में

सीबीएमआर स्वास्थ्य शिक्षा विभाग के अंतर्गत उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गठित एक स्वायत्त केंद्र है। यह केंद्र किसी रोग विशेष के द्योतक बायोमार्कर्स की पहचान और उसके नैदानिक और व्यावहारिक सत्यापन का काम करता है। सीबीएमआर में कई उत्कृष्ट उपकरण है, जिनमें एलएमआर)400 600-800 मेगाहर्ट्जसलूशन एंड - के अलावा (सॉलिड स्टेट3डीएफएमआरआई जैसे विकल्प उपलब्ध हैं,जो अन्य विश्लेषणात्मक सुविधाओं के अलावा अकादमिक और उद्योग जगत को शोध एवं सहयोग आधारित साझासृजन के लिए एक मंच उपलब्ध - कराते हैं।

सीबीएमआर को आधारभूत, क्लीनिकल और ट्रांजिशनल शोध के प्रोत्साहन, विकास, मार्गदर्शन और समन्वय का दायित्व मिला हुआ है। साथ ही अंतर विषयक शोध एवं उद्यमिता को प्रोत्साहित करने और बेहतर उपचार के लिए उत्कृष्ट तकनीक तंत्र के लिए परिवेश उपलब्ध कराना भी इस केंद्र की जिम्मेदारी है।

एसीएसआईआर के बारे में

एसीएसआईआर एक राष्ट्रीय महत्व का संस्थान है। इसकी स्थापना संसद के एक अधिनियम द्वारा हुई है। इसका उद्देश्य विज्ञान के क्षेत्र में क्वालिफाइड यानी योग्य शोधार्थी एवं पेशेवरों की संख्या में वृद्धि करना है। यह संस्थान एक अनुकूल परिवेश के माध्यम से देश की भावी वैज्ञानिक प्रतिभाओं को निखारने एवं उन्हें आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराने के मिशन में जुटा है।

वर्तमान में सीएसआईआर की विभिन्न प्रयोगशालाओं से जुड़े 2514 संकाय सदस्य और 36 एक्जंक्ट फैकल्टी सदस्य इस अकादमी का हिस्सा हैं। साथ ही 5000 छात्र विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत पंजीकृत हैं। वहीं सीबीएमआर उत्तर प्रदेश का पहला ऐसा संस्थान है जिसे एसीएसआईआर ने मान्यता प्रदान करने की पहल की है।

(इंडिया साइंस वायर)

दी इंडियन बुलेटिन

शैक्षणिक उत्कृष्टता और शोध विकास क्षमता बढाने के लिए नई साझेदारी

3 weeks ago

नई दिल्ली: देश में शोध एवं विकास गतिविधियों की क्षमता बढ़ाने के उद्देश्य से लखनऊ स्थित सेंटर ऑफ बायोमेडिकल रिसर्च के (एसीएसआईआर) रिसर्च इनोवेटिव एंड साइंटिफिक ऑफ एकेडमी ने (सीबीएमआर) संकायों/विषयों चिन्हित विभिन्न लक्ष्य का का साझेदारी इस हैं। किए हस्ताक्षर पर (एमओयू) पत्र सहमति साथ में परस्पर तालमेल एवं आपसी सहयोग बढ़ाकर शोध एवं विकासकी क्षमता बढ़ाना है। इससे विज्ञान एवं इंजीनियरिंग में पीएचडी डिग्रियां प्रदान करने की राह खुलेगी।

सहमति पत्र पर सीबीएमआर के निदेशक डॉ आलोक धवन और एसीएसआईआरके निदेशक डॉ राजेंद्र सिंह सांगवान ने हस्ताक्षर किए। इस अवसर पर एसीएसआईआरमें वरिष्ठ प्रबंधक अर्पिता सेनगुप्ता के अलावा सीबीएमआर के डीन नीरज सिन्हा और असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ विश्वनाथ मेथी भी उपस्थित रहे।

सीबीएमआर स्वास्थ्य शिक्षा विभाग के अंतर्गत उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गठित एक स्वायत्त केंद्र है। यह केंद्र किसी रोग विशेष के द्योतक बायोमार्कर्स की पहचान और उसके नैदानिक और व्यावहारिक सत्यापन का काम करता है। सीबीएमआर में कई उत्कृष्ट उपकरण है, जिनमें एलएमआर)400 600-800 मेगाहर्ट्ज एंड सलूशन- अलावा के (स्टेट सॉलिड3डीएफएमआरआई जैसे विकल्प उपलब्ध हैं,जो अन्य विश्लेषणात्मक सुविधाओं के अलावा अकादमिक और उद्योग जगत को शोध एवं सहयोग आधारित साझा उपलब्ध मंच एक लिए के सृजन- हैं। कराते

सीबीएमआर को आधारभूत, क्लीनिकल और ट्रांजिशनल शोध के प्रोत्साहन, विकास, मार्गदर्शन और समन्वय का दायित्व मिला हुआ है। साथ ही अंतर विषयक शोध एवं उद्यमिता को प्रोत्साहित करने और बेहतर उपचार के लिए उत्कृष्ट तकनीक तंत्र के लिए परिवेश उपलब्ध कराना भी इस केंद्र की जिम्मेदारी है।

एसीएसआईआर एक राष्ट्रीय महत्व का संस्थान है। इसकी स्थापना संसद के एक अधिनियम द्वारा हुई है। इसका उद्देश्य विज्ञान के क्षेत्र में क्वालिफाइड यानी योग्य शोधार्थी एवं पेशेवरों की संख्या में वृद्धि करना है। यह संस्थान एक अनुकूल परिवेश के माध्यम से देश की भावी वैज्ञानिक प्रतिभाओं को निखारने एवं उन्हें आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराने के मिशन में जुटा है।

वर्तमान में सीएसआईआर की विभिन्न प्रयोगशालाओं से जुड़े 2514 संकाय सदस्य और 36 एक्जंक्ट फैकल्टी सदस्य इस अकादमी का हिस्सा हैं। साथ ही 5000 छात्र विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत पंजीकृत हैं। वहीं सीबीएमआर उत्तर प्रदेश का पहला ऐसा संस्थान है जिसे एसीएसआईआर ने मान्यता प्रदान करने की पहल की है। (वायर साइंस इंडिया)

भारत हेराल्ड

शैक्षणिक उत्कृष्टता और शोध विकास क्षमता बढाने के लिए नई साझेदारी

2 weeks ago

नई दिल्ली: देश में शोध एवं विकास गतिविधियों की क्षमता बढ़ाने के उद्देश्य से लखनऊ स्थित सेंटर ऑफ बायोमेडिकल रिसर्च ने (सीबीएमआर) एकेडमी ऑफ साइंटिफिक एंड इनोवेटिव रिसर्च के (एसीएसआईआर) संकायों/विषयों चिन्हित विभिन्न लक्ष्य का का साझेदारी इस हैं। किए हस्ताक्षर पर (एमओयू) पत्र सहमति साथ एवं विज्ञान इससे है। बढ़ाना क्षमता विकासकी एवं शोध बढ़ाकर सहयोग आपसी एवं तालमेल परस्पर में पीए में इंजीनियरिंगचडी डिग्रियां प्रदान करने की राह खुलेगी।

सहमति पत्र पर सीबीएमआर के निदेशक डॉ आलोक धवन और एसीएसआईआरके निदेशक डॉ राजेंद्र सिंह सांगवान ने हस्ताक्षर किए। इस अवसर पर एसीएसआईआरमें वरिष्ठ प्रबंधक अर्पिता सेनगुप्ता के अलावा सीबीएमआर के डीन नीरज सिन्हा और असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ विश्वनाथ मेथी भी उपस्थित रहे।

सीबीएमआर स्वास्थ्य शिक्षा विभाग के अंतर्गत उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गठित एक स्वायत्त केंद्र है। यह केंद्र किसी रोग विशेष के द्योतक बायोमार्कर्स की पहचान और उसके नैदानिक और व्यावहारिक सत्यापन का काम करता है। सीबीएमआर में कई उत्कृष्ट उपकरण है, जिनमें एलएमआर)400 600-800 मेगाहर्ट्ज एंड सलूशन- अलावा के (स्टेट सॉलिड3डीएफएमआरआई जैसे विकल्प उपलब्ध हैं,जो अन्य विश्लेषणात्मक सुविधाओं के अलावा अकादमिक और उद्योग जगत को शोध एवं सहयोग आधारित साझाउपलब् मंच एक लिए के जनसृ-ध कराते हैं।

सीबीएमआर को आधारभूत, क्लीनिकल और ट्रांजिशनल शोध के प्रोत्साहन, विकास, मार्गदर्शन और समन्वय का दायित्व मिला हुआ है। साथ ही अंतर विषयक शोध एवं उद्यमिता को प्रोत्साहित करने और बेहतर उपचार के लिए उत्कृष्ट तकनीक तंत्र के लिए परिवेश उपलब्ध कराना भी इस केंद्र की जिम्मेदारी है।

एसीएसआईआर एक राष्ट्रीय महत्व का संस्थान है। इसकी स्थापना संसद के एक अधिनियम द्वारा हुई है। इसका उद्देश्य विज्ञान के क्षेत्र में क्वालिफाइड यानी योग्य शोधार्थी एवं पेशेवरों की संख्या में वृद्धि करना है। यह संस्थान एक अनुकूल परिवेश के माध्यम से देश की भावी वैज्ञानिक प्रतिभाओं को निखारने एवं उन्हें आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराने के मिशन में जुटा है।

वर्तमान में सीएसआईआर की विभिन्न प्रयोगशालाओं से जुड़े 2514 संकाय सदस्य और 36 एक्जंक्ट फैकल्टी सदस्य इस अकादमी का हिस्सा हैं। साथ ही 5000 छात्र विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत पंजीकृत हैं। वहीं सीबीएमआर उत्तर प्रदेश का पहला ऐसा संस्थान है जिसे एसीएसआईआर ने मान्यता प्रदान करने की पहल की है। (वायर साइंस इंडिया)

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

शैक्षणिक उत्कृष्टता और शोध विकास क्षमता बढाने के लिए नई साझेदारी

By **Rupesh Dharmik** - September 4, 2021

नई दिल्ली: देश में शोध एवं विकास गतिविधियों की क्षमता बढ़ाने के उद्देश्य से लखनऊ स्थित सेंटर ऑफ बायोमेडिकल रिसर्च एकेडमी ऑफ साइंटिफिक ने (सीबीएमआर) एंड इनोवेटिव रिसर्च के (एसीएसआईआर) संकायों /पर हस्ताक्षर किए हैं। इस साझेदारी का का लक्ष्य विभिन्न चिन्हित विषयों (एमओयू) साथ सहमति पत्र में परस्पर तालमेल एवं आपसी सहयोग बढ़ाकर शोध एवं विकासकी क्षमता बढ़ाना है। इससे विज्ञान एवं ग में पीएचडी डिग्रइंजीनियरिंियां प्रदान करने की राह खुलेगी।

सहमति पत्र पर सीबीएमआर के निदेशक डॉ आलोक धवन और एसीएसआईआरके निदेशक डॉ राजेंद्र सिंह सांगवान ने हस्ताक्षर किए। इस अवसर पर एसीएसआईआरमें वरिष्ठ प्रबंधक अर्पिता सेनगुप्ता के अलावा सीबीएमआर के डीन नीरज सिन्हा और असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ विश्वनाथ मेथी भी उपस्थित रहे।

सीबीएमआर स्वास्थ्य शिक्षा विभाग के अंतर्गत उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा गठित एक स्वायत्त केंद्र है। यह केंद्र किसी रोग विशेष के द्योतक बायोमार्कर्स की पहचान और उसके नैदानिक और व्यावहारिक सत्यापन का काम करता है। सीबीएमआर में कई उत्कृष्ट उपकरण है, जिनमें एलएमआर)400 600-800 मेगाहर्ट्ज़सलूशन एंड - के अलावा (सॉलिड स्टेट3डीएफएमआरआई जैसे विकल्प उपलब्ध हैं,जो अन्य विश्लेषणात्मक सुविधाओं के अलावा अकादमिक और उद्योग जगत को शोध एवं सहयोग आधारित साझामंच उपलब्ध सृजन के लिए एक-कराते हैं।

सीबीएमआर को आधारभूत, क्लीनिकल और ट्रांजिशनल शोध के प्रोत्साहन, विकास, मार्गदर्शन और समन्वय का दायित्व मिला हुआ है। साथ ही अंतर विषयक शोध एवं उद्यमिता को प्रोत्साहित करने और बेहतर उपचार के लिए उत्कृष्ट तकनीक तंत्र के लिए परिवेश उपलब्ध कराना भी इस केंद्र की जिम्मेदारी है।

एसीएसआईआर एक राष्ट्रीय महत्व का संस्थान है। इसकी स्थापना संसद के एक अधिनियम द्वारा हुई है। इसका उद्देश्य विज्ञान के क्षेत्र में क्वालिफाइड यानी योग्य शोधार्थी एवं पेशेवरों की संख्या में वृद्धि करना है। यह संस्थान एक अनुकूल परिवेश के माध्यम से देश की भावी वैज्ञानिक प्रतिभाओं को निखारने एवं उन्हें आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराने के मिशन में जुटा है।

वर्तमान में सीएसआईआर की विभिन्न प्रयोगशालाओं से जुड़े 2514 संकाय सदस्य और 36 एक्जंक्ट फैकल्टी सदस्य इस अकादमी का हिस्सा हैं। साथ ही 5000 छात्र विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत पंजीकृत हैं। वहीं सीबीएमआर उत्तर प्रदेश का पहला ऐसा संस्थान है जिसे एसीएसआईआर ने मान्यता प्रदान करने की पहल की है। (इंडिया साइंस वायर)

Voice of the Nation
ORGANISER

Researchers sequence genome of herb, Giloy

WEBDESK Sep 07, 2021, 07:31 AM IST

Giloy has come into the limelight recently because of its immunomodulatory and antiviral activity after the emergence of the COVID-19 pandemic.

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Science Education and Research (IISER)-Bhopal have sequenced the genome of Giloy, a medicinal herb that is extensively used in allopathic pharmaceuticals and Ayurvedic formulations to treat various health conditions.

Giloy is an important multipurpose medicinal plant in Ayurvedic science. It has been used in various health conditions due to its immune-modulatory, antipyretic, anti-inflammatory, anti-diabetic, anti-microbial, anti-viral, and anti-cancer properties, among others.
It is extensively used in skin diseases, urinary tract infections, and the treatment of dental plaque. It is also found to reduce the clinical symptoms in HIV-positive patients, and its antioxidant activity has anti-cancer and chemo-protective properties. Giloy extracts are found to be potential candidates in treating various cancers like brain tumours, breast cancer, and oral cancer, as well. The plant has come into the limelight recently because of its immunomodulatory and antiviral activity after the emergence of the COVID-19 pandemic.

A key aspect of the study is that this is the first species ever sequenced from the Menispermaceae plant family, which comprises more than 400 species having therapeutic values. It will help in various comparative genomic studies and will act as a reference for the future species sequenced from its genus and family.

This research was undertaken by MetaBioSys Group in the Institute, which focuses on the Indian microbiome, including gut, scalp, and skin microbiomes in healthy and diseased individuals. They also work on sequencing and functional analysis of novel eukaryotic and prokaryotic genomes by developing and employing new machine learning-based software for big data biological analysis.
The research team was led by Dr. Vineet K. Sharma, Associate Professor, Department of Biological Sciences, and comprised Ms. Shruti Mahajan and Mr. Abhisek Chakraborty, PhD Students, and Ms. Titas Sil, BS-MS Student. A report on the work has been published in the international preprint server for biology bioRxiv.

The scientists noted that previous studies have shown that a compound from Giloy targeted two proteases of the SARS-CoV-2 virus, namely Mpro and Spike proteases, and another compound was predicted to inhibit SARS-CoV-2 Mpro and also disrupts viral spike protein and host ACE-2 interaction.

The multiple medicinal properties of the herb are because of the presence of its secondary metabolites. Despite these medicinal properties, the unavailability of its genome sequence was a constraint in studying the genomic basis of the medicinal properties. Thus, the genome sequence of Giloy could be a breakthrough as the potential therapeutic agent for diseases like COVID in the future.

Courtesy: India Science Wire

Researchers sequence genome of herb, Giloy

by Indus Scrolls Bureau - September 6, 2021 in Indian Sciences

Researchers at the Indian Institute of Science Education and Research (IISER)-Bhopal have sequenced the genome of Giloy, a medicinal herb that is extensively used in allopathic pharmaceuticals and ayurvedic formulations to treat various health conditions.

Giloy is an important multipurpose medicinal plant in Ayurvedic science. It has been used in various health conditions due to its immune-modulatory, antipyretic, anti-inflammatory, anti-diabetic, anti-microbial, anti-viral, and anti-cancer properties, among others.

It is extensively used in skin diseases, urinary tract infections, and the treatment of dental plaque. It is also found to reduce the clinical symptoms in HIV-positive patients and its antioxidant activity has anti-cancer and chemo-protective

properties. Giloy extracts are found to be potential candidates in treating various cancers like brain tumours, breast cancer, and oral cancer, as well. The plant has come into the limelight recently due to its immunomodulatory and antiviral activity after the emergence of the COVID-19 pandemic.

A key aspect of the study is that this is the first species ever sequenced from the *Menispermaceae* plant family, which comprises more than 400 species having therapeutic values. It will help in various comparative genomic studies and will act as a reference for the future species sequenced from its genus and family. This research was undertaken by MetaBioSys Group in the Institute, which focuses on the Indian microbiome including gut, scalp, and skin microbiomes in healthy and diseased individuals. They also work on sequencing and functional analysis of novel eukaryotic and prokaryotic genomes by developing and employing new machine learning-based software for big data biological analysis.

The research team was led by Dr. Vineet K. Sharma, Associate Professor, Department of Biological Sciences, and comprised Ms. Shruti Mahajan and Mr. Abhisek Chakraborty, PhD Students, and Ms. Titas Sil, BS-MS Student. A report on the work has been published in the international preprint server for biology bioRxiv.

The scientists noted that previous studies have shown that a compound from Giloy targetted two proteases of the SARS-CoV-2 virus namely Mpro and Spike proteases, and another compound was predicted to inhibit SARS-CoV-2 Mpro and also disrupts viral spike protein and host ACE-2 interaction.

The multiple medicinal properties of the herb are because of the presence of its secondary metabolites. Despite these medicinal properties, the unavailability of its genome sequence was a constraint in studying the genomic basis of the medicinal properties. Thus, the genome sequence of Giloy could be a breakthrough as the potential therapeutic agent for diseases like COVID in the future.

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

Researchers sequence the genome of herb, Giloy

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 6TH SEPTEMBER 2021

New Delhi, Sep 06: Researchers at the Indian Institute of Science Education and Research (IISER)-Bhopal have sequenced the genome of Giloy, a medicinal herb that is extensively used in allopathic pharmaceuticals and ayurvedic formulations to treat various health conditions.

What is Giloy?

Giloy is an important multipurpose medicinal plant in Ayurvedic science. It has been used in various health conditions due to its immune-modulatory, antipyretic, anti-inflammatory, anti-diabetic, anti-microbial, anti-viral, and anti-cancer properties, among others.

Giloy : Benefits, Precautions and Dosage

It is extensively used in skin diseases, urinary tract infections, and the treatment of dental plaque. It is also found to reduce the clinical symptoms in HIV-positive patients and its antioxidant activity has anti-cancer and chemo-protective properties.

Giloy extracts are found to be potential candidates in treating various cancers like brain tumours, breast cancer, and oral cancer, as well. The plant has come into the limelight recently due to its immunomodulatory and antiviral activity after the emergence of the COVID-19 pandemic.

A key aspect of the study is that this is the first species ever sequenced from the *Menispermaceae* plant family, which comprises more than 400 species having therapeutic values. It will help in various comparative genomic studies and will act as a reference for the future species sequenced from its genus and family.

This research was undertaken by MetaBioSys Group in the Institute, which focuses on the Indian microbiome including gut, scalp, and skin microbiomes in healthy and diseased individuals. They also work on sequencing and functional analysis of novel eukaryotic and prokaryotic genomes by developing and employing new machine learning-based software for big data biological analysis.

The research team was led by Dr. Vineet K. Sharma, Associate Professor, Department of Biological Sciences, and comprised Ms. Shruti Mahajan and Mr. Abhisek Chakraborty, PhD Students, and Ms. Titas Sil, BS-MS Student. A report on the work has been published in the international preprint server for biology bioRxiv.

The scientists noted that previous studies have shown that a compound from Giloy targetted two proteases of the SARS-CoV-2 virus namely Mpro and Spike proteases, and another compound was predicted to inhibit SARS-CoV-2 Mpro and also disrupts viral spike protein and host ACE-2 interaction.

The multiple medicinal properties of the herb are because of the presence of its secondary metabolites. Despite these medicinal properties, the unavailability of its genome sequence was a constraint in studying the genomic basis of the medicinal properties. Thus, the genome sequence of Giloy could be a breakthrough as the potential therapeutic agent for diseases like COVID in the future.

(India Science Wire)

Researchers sequence genome of herb, Giloy

EDUCATION

By Online Editor On Sep 6, 2021

New Delhi, Sep 06 (India Science Wire): Researchers at the Indian Institute of Science Education and Research (IISER)-Bhopal have sequenced the genome of Giloy, a medicinal herb that is extensively used in allopathic pharmaceuticals and ayurvedic formulations to treat various health conditions.

Giloy is an important multipurpose medicinal plant in Ayurvedic science. It has been used in various health conditions due to its immune-modulatory, antipyretic, anti-inflammatory, anti-diabetic, anti-microbial, anti-viral, and anti-cancer properties, among others.

It is extensively used in skin diseases, urinary tract infections, and the treatment of dental plaque. It is also found to reduce the clinical symptoms in HIV-positive patients

and its antioxidant activity has anti-cancer and chemo-protective properties. Giloy extracts are found to be potential candidates in treating various cancers like brain tumours, breast cancer, and oral cancer, as well. The plant has come into the limelight recently due to its immunomodulatory and antiviral activity after the emergence of the COVID-19 pandemic.

A key aspect of the study is that this is the first species ever sequenced fromthe *Menispermaceae* plant family, which comprises more than 400 species having therapeutic values. It will help in various comparative genomic studies and will act as a reference for the future species sequenced from its genus and family.

This research was undertaken by MetaBioSys Group in the Institute, which focuses on the Indian microbiome including gut, scalp, and skin microbiomes in healthy and diseased individuals. They also work on sequencing and functional analysis of novel eukaryotic and prokaryotic genomes by developing and employing new machine learning-based software for big data biological analysis.

The research team was led by Dr.Vineet K. Sharma, Associate Professor, Department of Biological Sciences, and comprised Ms. Shruti Mahajan and Mr. Abhisek Chakraborty, PhD Students, and Ms. TitasSil, BS-MS Student. A report on the work has been published in the international preprint server for biology bioRxiv.

The scientists noted that previous studies have shown that a compound from Giloy targetted two proteases of the SARS-CoV-2 virus namely Mpro and Spike proteases, and another compound was predicted to inhibit SARS-CoV-2 Mpro and also disrupts viral spike protein and host ACE-2 interaction.

The multiple medicinal properties of the herb are because of the presence of its secondary metabolites. Despite these medicinal properties, the unavailability of its genome sequence was a constraint in studying the genomic basis of the medicinal properties. Thus, the genome sequence of Giloy could be a breakthrough as the potential therapeutic agent for diseases like COVID in the future.

जनसत्ता

चींटी के फौलादी दाँतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा

इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है।

Written By जनसत्ता ऑनलाइन
Updated: September 7, 2021 7:22:19 am

सांकेतिक फोटो।

इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है। गैजेट्स में उपयोग करने के लिए बेहद छोटे और जबरदस्त मजबूती वाले उपकरणों का निर्माण आवश्यक है। इसके लिए वैज्ञानिकों का एक समूह प्रकृति से प्रेरणा लेकर काम कर रहा है। उन्होंने चींटी के दांतों को अध्ययन किया है, जो आकार में बेहद सूक्ष्म होने के बावजूद बेहद मजबूत और धारदार होते हैं।

मनुष्य के बालों से भी पतले, कीड़ों के बेहद सूक्ष्म चॉपर या दाँत मजबूत पत्तियों को पूरी ताकत से काट सकते हैं। आणविक स्तर पर इमेजिंग से पता चलता है कि छोटे जीव अपने सूक्ष्म उपकरणों को तेज करने के लिए जस्ता का उपयोग करते हैं। अपने अध्ययन में, वैज्ञानिकों ने पाया है कि जिंक अणुओं की परत चींटी के दांतों को सख्त एवं धारदार औजार में बदल देती है। उनका कहना है कि

समान रूप से व्यवस्थित दाँतों के जिंक अणुओं से यह संभव हो पाता है, जिससे किसी चीज़ को काटते समय जीवों के बल का समान वितरण होता है।

यदि आपका कभी चींटियों से पाला पड़ा हो, तो आपने अनुभव किया होगा कि वे आपको कितनी तेज़ काट सकती हैं। अपने घर में भी आपने देखा होगा कि चींटी, दीमक और अन्य छोटे संधिपाद प्राणियों में लकड़ी एवं अन्य सामग्रियों की आश्चर्यजनक विविधता को चबाने की उल्लेखनीय क्षमता होती है। इन्सान की जरूरतों के अनुसार टिकाऊ एवं उपयोगी पॉकेटसाइज़ इलेक्ट्रॉनिक्स के - निर्माण को सुनिश्चित करने के लिए वैज्ञानिक प्रकृति के रहस्यों की तह तक जाने की ऐसी कोशिशें करते रहते हैं।

यह अजीब लगना स्वाभाविक है कि बेहद छोटे जीवों के जबड़े और दांत अत्यधिक सख्त होते हैं। वास्तव में, ऐसे कीटों के जबड़े विशिष्ट प्रोटीन और पॉलीसेकेराइड पॉलीमर काइटिन के संयोजन से बने होते हैं, जो कि काइटिन माइक्रोफाइब्रिल्स उत्पादन के लिए हाइड्रोजन बॉन्ड द्वारा जुड़े होते हैं। काइटिन सख्त होता है, और जब इसे कैल्शियम कार्बोनेट जैसी अन्य सामग्रियों के साथ मिलाया जाता है, तो झींगा और केकड़ों के खोल में पाए जाने वाले सख्त पदार्थ बन जाते हैं। इसका एक उदाहरण है कि जब आठ प्रतिशत जिंक मिलता है, तो काइटिन काफी सख्त हो जाता है, जिससे चींटी के दाँत जैसी तेज़ एवं टिकाऊ संरचनाएं बनती हैं।

ओरेगॉन विश्वविद्यालय के रॉबर्ट स्कोफिल्ड के नेतृत्व में जैवभौतिकविदों की एक टीम चींटी के - साथ अन्य सूक्ष्म जीव उपकरणों के प्रभावी प्रतिरोध को मापने का प्रयास कर रही है-दाँतों के साथ, ताकि यह पता लगाया जा सके कि वे कैसे काम करते हैं, और कैसे उनकी नकल करके बड़े पैमाने पर उसकी प्रतिकृतियाँ तैयार की जा सकती हैं। इसके लिए, वैज्ञानिक चींटी के दाँत एवं इसके जैसे अन्य जीव उपकरणों की कठोरता, लचीलेपन, घर्षण प्रतिरोध, और प्रतिरोधी प्रभाव का आकलन करते हैं।

(इंडिया साइंस वायर(

चींटी के फौलादी दांतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा

नई दिल्ली, इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है। गैजेट्स में उपयोग करने के लिए बेहद छोटे और जबरदस्त मजबूती वाले उपकरणों का निर्माण आवश्यक है। इसके लिए वैज्ञानिकों का एक समूह प्रकृति से प्रेरणा लेकर काम कर रहा है।

उन्होंने चींटी के दांतों को अध्ययन किया है, जो आकार में बेहद सूक्ष्म होने के बावजूद बेहद मजबूत और धारदार होते हैं।

मनुष्य के बालों से भी पतले, कीड़ों के बेहद सूक्ष्म चॉपर या दांत मजबूत पत्तियों को पूरी ताकत से काट सकते

हैं। आणविक स्तर पर इमेजिंग से पता चलता है कि छोटे जीव अपने सूक्ष्म उपकरणों को तेज करने के लिए जस्ता का उपयोग करते हैं।

अपने अध्ययन में, वैज्ञानिकों ने पाया है कि जिंक अणुओं की परत चींटी के दांतों को सख्त एवं धारदार औजार में बदल देती है। उनका कहना है कि समान रूप से व्यवस्थित दाँतों के जिंक अणुओं से यह संभव हो पाता है, जिससे किसी चीज़ को काटते समय जीवों के बल का समान वितरण होता है।

चींटी के दांतों की संरचना पर किए गए इस अध्ययन से जुड़े अमेरिकी ऊर्जा विभाग के पैसिफिक नॉर्थवेस्ट नेशनल लेबोरेटरी के वरिष्ठ शोधकर्ता अरुण देवराज ने कहा, "समान वितरण होना, अनिवार्य रूप से, इसका एक रहस्य है।मानव त्वचा को भी आसानी से काट सकते हैं" चींटियों के चॉपर्स ", जबकि यह कर पाना हमारे अपने दांतों से भी मुश्किल होगा।यह अध्ययन ", हाल में शोध पत्रिका साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किया गया है।

यदि आपका कभी चींटियों से पाला पड़ा हो, तो आपने अनुभव किया होगा कि वे आपको कितनी तेज़ काट सकती हैं। अपने घर में भी आपने देखा होगा कि चींटी, दीमक और अन्य छोटे संधिपाद प्राणियों में लकड़ी एवं अन्य सामग्रियों की आश्चर्यजनक विविधता को चबाने की उल्लेखनीय क्षमता होती है।

इन्सान की जरूरतों के अनुसार टिकाऊ एवं उपयोगी पॉकेटसाइज़ इलेक्ट्रॉनिक्स के निर्माण को सुनिश्चित करने - के लिए वैज्ञानिक प्रकृति के रहस्यों की तह तक जाने की ऐसी कोशिशें करते रहते हैं।

यह अजीब लगना स्वाभाविक है कि बेहद छोटे जीवों के जबड़े और दांत अत्यधिक सख्त होते हैं। वास्तव में, ऐसे कीटों के जबड़े विशिष्ट प्रोटीन और पॉलीसेकेराइड पॉलीमर काइटिन के संयोजन से बने होते हैं, जो कि काइटिन माइक्रोफाइब्रिल्स उत्पादन के लिए हाइड्रोजन बॉन्ड द्वारा जुड़े होते हैं।

काइटिन सख्त होता है, और जब इसे कैल्शियम कार्बोनेट जैसी अन्य सामग्रियों के साथ मिलाया जाता है, तो झींगा और केकड़ों के खोल में पाए जाने वाले सख्त पदार्थ बन जाते हैं। इसका एक उदाहरण है कि जब आठ प्रतिशत जिंक मिलता है, तो काइटिन काफी सख्त हो जाता है, जिससे चींटी के दांत जैसी तेज़ एवं टिकाऊ संरचनाएं बनती हैं।

ओरेगॉन विश्वविद्यालय के रॉबर्ट स्कोफिल्ड के नेतृत्व में जैव-भौतिकविदों की एक टीम चींटी के दांतों के साथ-साथ अन्य सूक्ष्म जीव उपकरणों के प्रभावी प्रतिरोध को मापने का प्रयास कर रही है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि वे कैसे काम करते हैं, और कैसे उनकी नकल करके बड़े पैमाने पर उसकी प्रतिकृतियां तैयार की जा सकती हैं। इसके लिए, वैज्ञानिक चींटी के दाँत एवं इसके जैसे अन्य जीव उपकरणों की कठोरता, लचीलेपन, घर्षण प्रतिरोध, और प्रतिरोधी प्रभाव का आकलन करते हैं। ***(इंडिया साइंस वायर(***

चींटी के फौलादी दाँतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा

06/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 06 सितंबर इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है। गैजेट्स में उपयोग :(इंडिया साइंस वायर) करने के लिए बेहद छोटे और जबरदस्त मजबूती वालेउपकरणों का निर्माण आवश्यक है। इसके लिए वैज्ञानिकों का एक समूह प्रकृति से प्रेरणा लेकर काम कर रहा है। उन्होंने चींटी के दांतों को अध्ययन किया है, जो आकार में बेहद सूक्ष्म होने के बावजूद बेहद मजबूत और धारदार होते हैं।

मनुष्य के बालों से भी पतले, कीड़ों के बेहद सूक्ष्म चॉपर या दाँत मजबूत पत्तियों को पूरी ताकत से काट सकते हैं। आणविक स्तर पर इमेजिंग से पता चलता है कि छोटे जीव अपने सूक्ष्म उपकरणों को तेज करने के लिए जस्ता का उपयोग करते हैं। अपने अध्ययन में, वैज्ञानिकों ने पाया है कि जिंक अणुओं की परत चींटी के दांतों को सख्त एवं धारदार औजार में बदल देती है।

उनका कहना है कि समान रूप से व्यवस्थित दाँतों के जिंक अणुओं से यह संभव हो पाता है, जिससे किसी चीज़ को काटते समय जीवों के बल का समान वितरण होता है। चींटी के दांतों की संरचना पर किए गए इस अध्ययन से जुड़े अमेरिकी ऊर्जा विभाग के पैसिफिक नॉर्थवेस्ट नेशनल लेबोरेटरी के वरिष्ठ शोधकर्ता अरुण देवराज ने कहा, "समान

वितरण होना, अनिवार्य रूप से, इसका एक रहस्य है।” चींटियों के चॉपर्स “मानव त्वचा को भी आसानी से काट सकते हैं, जबकि यह कर पाना हमारे अपने दाँतों से भी मुश्किल होगा।”

यह अध्ययन, हाल में शोध पत्रिका साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किया गया है। यदि आपका कभी चींटियों से पाला पड़ा हो, तो आपने अनुभव किया होगा कि वे आपको कितनी तेज़ काट सकती हैं। अपने घर में भी आपने देखा होगा कि चींटी, दीमक और अन्य छोटे संधिपाद प्राणियों में लकड़ी एवं अन्य सामग्रियों की आश्चर्यजनक विविधता को चबाने की उल्लेखनीय क्षमता होती है। इन्सान की जरूरतों के अनुसार टिकाऊ एवं उपयोगी पॉकेटसाइज़ इलेक्ट्रॉनिक्स के निर्माण को सुनिश्चित करने - के लिए वैज्ञानिक प्रकृति के रहस्यों की तह तक जाने की ऐसी कोशिशें करते रहते हैं।

यह अजीब लगना स्वाभाविक है कि बेहद छोटे जीवों के जबड़े और दांत अत्यधिक सख्त होते हैं। वास्तव में, ऐसे कीटों के जबड़े विशिष्ट प्रोटीन और पॉलीसेकेराइड पॉलीमर काइटिन के संयोजन से बने होते हैं, जो कि काइटिन माइक्रोफाइब्रिल्स उत्पादन के लिए हाइड्रोजन बॉन्ड द्वारा जुड़े होते हैं। काइटिन सख्त होता है, और जब इसे कैल्शियम कार्बोनेट जैसी अन्य सामग्रियों के साथ मिलाया जाता है, तो झींगा और केकड़ों के खोल में पाए जाने वाले सख्त पदार्थ बन जाते हैं।

इसका एक उदाहरण है कि जब आठ प्रतिशत जिंक मिलता है, तो काइटिन काफी सख्त हो जाता है, जिससे चींटी के दाँत जैसी तेज़ एवं टिकाऊ संरचनाएं बनती हैं। ओरेगॉन विश्वविद्यालय के रॉबर्ट स्कोफिल्ड के नेतृत्व में जैवभौतिकविदों की एक टीम - साथ अन्य सूक्ष्म जीव उपकरणों के प्रभावी प्रतिरोध को मापने का प्रयास कर रही-चींटी के दाँतों के साथ है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि वे कैसे काम करते हैं, और कैसे उनकी नकल करके बड़े पैमाने पर उसकी प्रतिकृतियाँ तैयार की जा सकती हैं। इसके लिए, वैज्ञानिक चींटी के दाँत एवं इसके जैसे अन्य जीव उपकरणों की कठोरता, लचीलेपन, घर्षण प्रतिरोध, और प्रतिरोधी प्रभाव का आकलन करते हैं।

हस्तक्षेप.com

चींटी के फौलादी दाँतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा

चींटी के दांत कितने होते हैं? चींटी के दांत इतने नुकीले क्यों होते हैं? Studies on the structure of ant teeth.जैवसाथ अन्य सूक्ष्म -भौतिकविदों की एक टीम चींटी के दाँतों के साथ- जीवउपकरणों के प्रभावी प्रतिरोध को मापने का प्रयास कर रही

By Guest Writer | Mon, 6 Sep 2021

जानिए चींटी के दांत इतने नुकीले क्यों होते हैं? Know why ant teeth are so sharp?

नई दिल्ली, 06 सितंबर : इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है। गैजेट्स में उपयोग करने के लिए बेहद छोटे और जबरदस्त मजबूती वाले उपकरणों का निर्माण आवश्यक है। इसके लिए वैज्ञानिकों का एक समूह प्रकृति से प्रेरणा लेकर काम कर रहा है। उन्होंने ***चींटी के दांतों को अध्ययन)study ant teeth)*** किया है, जो आकार में बेहद सूक्ष्म होने के बावजूद बेहद मजबूत और धारदार होते हैं।

Tiny creatures use zinc to sharpen their microscopic tools.

मनुष्य के बालों से भी पतले, कीड़ों के बेहद सूक्ष्म चॉपर या दाँत मजबूत पत्तियों को पूरी ताकत से काट सकते हैं। आणविक स्तर पर इमेजिंग से पता चलता है कि **छोटे जीव अपने सूक्ष्म उपकरणों को तेज करने के लिए जस्ता का उपयोग करते हैं।**

अपने अध्ययन में, वैज्ञानिकों ने पाया है कि जिंक अणुओं की परत चींटी के दांतों को सख्त एवं धारदार औजार में बदल देती है। उनका कहना है कि समान रूप से व्यवस्थित दाँतों के जिंक अणुओं से यह संभव हो पाता है, जिससे किसी चीज़ को काटते समय जीवों के बल का समान वितरण होता है।

Studies on the structure of ant teeth

चींटी के दांतों की संरचना पर किए गए इस अध्ययन से जुड़े अमेरिकी ऊर्जा विभाग के पैसिफिक नॉर्थवेस्ट नेशनल लेबोरेटरी के वरिष्ठ शोधकर्ता अरुण देवराज ने कहा, "समान वितरण होना, अनिवार्य रूप से, इसका एक रहस्य है। " मानव त्वचा को भी आसानी से काट सकते हैं" चींटियों के चॉपर्स, जबकि यह कर पाना हमारे अपने दाँतों से भी मुश्किल होगा।यह अध्ययन ", हाल में शोध पत्रिका साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किया गया है।

यदि आपका कभी चींटियों से पाला पड़ा हो, तो आपने अनुभव किया होगा कि वे आपको कितनी तेज़ काट सकती हैं। अपने घर में भी आपने देखा होगा कि चींटी, दीमक और अन्य छोटे संधिपाद प्राणियों में लकड़ी एवं अन्य सामग्रियों की आश्चर्यजनक विविधता को चबाने की उल्लेखनीय क्षमता होती है। इन्सान की जरूरतों के अनुसार टिकाऊ एवं उपयोगी पॉकेटसाइज़ इलेक्ट्रॉनिक्स के निर्माण को सुनिश्चित करने के लिए वैज्ञानिक प-्रकृति के रहस्यों की तह तक जाने की ऐसी कोशिशें करते रहते हैं।

यह अजीब लगना स्वाभाविक है कि बेहद छोटे जीवों के जबड़े और दांत अत्यधिक सख्त होते हैं। वास्तव में, ऐसे कीटों के जबड़े विशिष्ट प्रोटीन और पॉलीसेकेराइड पॉलीमर काइटिन के संयोजन से बने होते हैं, जो कि काइटिन माइक्रोफाइब्रिल्स उत्पादन के लिए हाइड्रोजन बॉन्ड द्वारा जुड़े होते हैं। काइटिन सख्त होता है, और जब इसे कैल्शियम कार्बोनेट जैसी अन्य सामग्रियों के साथ मिलाया जाता है, तो झींगा और केकड़ों के खोल में पाए जाने वाले सख्त पदार्थ बन जाते हैं। इसका एक उदाहरण है कि जब आठ प्रतिशत जिंक मिलता है, तो काइटिन काफी सख्त हो जाता है, जिससे चींटी के दाँत जैसी तेज़ एवं टिकाऊ संरचनाएं बनती हैं।

ओरेगॉन विश्वविद्यालय के रॉबर्ट स्कोफिल्ड के नेतृत्व में जैवसाथ अन्य -भौतिकविदों की एक टीम चींटी के दाँतों के साथ-सूक्ष्म जीव उपकरणों के प्रभावी प्रतिरोध को मापने का प्रयास कर रही है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि वे कैसे काम करते हैं, और कैसे उनकी नकल करके बड़े पैमाने पर उसकी प्रतिकृतियाँ तैयार की जा सकती हैं। इसके लिए, वैज्ञानिक चींटी के दाँत एवं इसके जैसे अन्य जीव उपकरणों की कठोरता, लचीलेपन, घर्षण प्रतिरोध, और प्रतिरोधी प्रभाव का आकलन करते हैं। (इंडिया साइंस वायर)

HEAD TOPICS इंडिया

चींटी के फौलादी दाँतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा

इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है।

07-09-2021 00:47:00

स्रोत

Jansatta

चींटी के फौलादी दाँतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा

इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है।

मनुष्य के बालों से भी पतले, कीड़ों के बेहद सूक्ष्म चॉपर या दाँत मजबूत पत्तियों को पूरी ताकत से काट सकते हैं। आणविक स्तर पर इमेजिंग से पता चलता है कि छोटे जीव अपने सूक्ष्म उपकरणों को तेज करने के लिए जस्ता का उपयोग करते हैं। अपने अध्ययन में, वैज्ञानिकों ने पाया है कि जिंक अणुओं की

परत चींटी के दांतों को सख्त एवं धारदार औजार में बदल देती है। उनका कहना है कि समान रूप से व्यवस्थित दाँतों के जिंक अणुओं से यह संभव हो पाता है, जिससे किसी चीज़ को काटते समय जीवों के बल का समान वितरण होता है।

चींटी के दांतों की संरचना पर किए गए इस अध्ययन से जुड़े अमेरिकी ऊर्जा विभाग के पैसिफिक नॉर्थवेस्ट नेशनल लेबोरेटरी के वरिष्ठ शोधकर्ता अरुण देवराज ने कहा, “समान वितरण होना, अनिवार्य रूप से, इसका एक रहस्य है।” चींटियों के चॉपर्स “मानव त्वचा को भी आसानी से काट सकते हैं, जबकि यह कर पाना हमारे अपने दाँतों से भी मुश्किल होगा।” यह अध्ययन, हाल में शोध पत्रिका

साइंटिफिक रिपोर्ट्सर्में प्रकाशित किया गया है।यदि आपका कभी चींटियों से पाला पड़ा हो, तो आपने अनुभव किया होगा कि वे आपको कितनी तेज़ काट सकती हैं। अपने घर में भी आपने देखा होगा कि चींटी, दीमक और अन्य छोटे संधिपाद प्राणियों में लकड़ी एवं अन्य सामग्रियों की आश्चर्यजनक विविधता को चबाने की उल्लेखनीय क्षमता होती है। इन्सान की जरूरतों के अनुसार टिकाऊ एवं उपयोगी पॉकेटसाइज़ इलेक्ट्रॉनिक्स के निर्माण को सुनिश्चित करने के लिए वैज्ञानिक प्रकृति के रहस्यों - की तह तक जाने की ऐसी कोशिशें करते रहते हैं।headtopics.com

यह अजीब लगना स्वाभाविक है कि बेहद छोटे जीवों के जबड़े और दांत अत्यधिक सख्त होते हैं। वास्तव में, ऐसे कीटों के जबड़े विशिष्ट प्रोटीन और पॉलीसेकेराइड पॉलीमर काइटिन के संयोजन से बने होते हैं, जो कि काइटिन माइक्रोफाइब्रिल्स उत्पादन के लिए हाइड्रोजन बॉन्ड द्वारा जुड़े होते हैं। काइटिन सख्त होता है, और जब इसे कैल्शियम कार्बोनेट जैसी अन्य सामग्रियों के साथ मिलाया जाता है, तो झींगा और केकड़ों के खोल में पाए जाने वाले सख्त पदार्थ बन जाते हैं। इसका एक उदाहरण है कि जब आठ प्रतिशत जिंक मिलता है, तो काइटिन काफी सख्त हो जाता है, जिससे चींटी के दाँत जैसी तेज़ एवं टिकाऊ संरचनाएं बनती हैं।

ओरेगॉन विश्वविद्यालय के रॉबर्ट स्कोफिल्ड के नेतृत्व में जैवभौतिकविदों की एक टीम चींटी के दाँतों - साथ अन्य सूक्ष्म जीव उपकरणों के प्रभावी प्रतिरोध को मापने का प्रयास कर रही है-के साथ, ताकि यह पता लगाया जा सके कि वे कैसे काम करते हैं, और कैसे उनकी नकल करके बड़े पैमाने पर उसकी प्रतिकृतियाँ तैयार की जा सकती हैं। इसके लिए, वैज्ञानिक चींटी के दाँत एवं इसके जैसे अन्य जीव उपकरणों की कठोरता, लचीलेपन, घर्षण प्रतिरोध, और प्रतिरोधी प्रभाव का आकलन करते हैं।

(इंडिया साइंस वायर(और पढो :Jansatta »

गाँव कनेक्शन

वैज्ञानिकों ने किया चींटी के फौलादी दांतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा

गैजेट्स में उपयोग करने के लिए बेहद छोटे और जबरदस्त मजबूती वाले उपकरणों का निर्माण जरूरी है। इसके लिए वैज्ञानिकों प्रकृति से प्रेरणा लेकर काम कर रहे हैं। उन्होंने चींटी के दांतों को अध्ययन किया है, जो आकार में बेहद सूक्ष्म होने के बावजूद बेहद मजबूत और धारदार होते हैं।

India Science Wire 7 Sep 2021

यह अजीब लगना स्वाभाविक है कि बेहद छोटे जीवों के जबड़े और दांत अत्यधिक सख्त होते हैं। वास्तव में, ऐसे कीटों के जबड़े विशिष्ट प्रोटीन और पॉलीसेकेराइड पॉलीमर काइटिन के संयोजन से बने होते हैं। सभी फोटोपिक्साबे :

यदि आपका कभी चींटियों से पाला पड़ा हो, तो आपने अनुभव किया होगा कि वे आपको कितनी तेज़ काट सकती हैं। अपने घर में भी आपने देखा होगा कि चींटी, दीमक में लकड़ी और दूसरे चीजों को काटने की क्षमता होती है। ऐसे में वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि क्या है चींटियों के फौलादी दांतो का रहस्य?

इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है। गैजेट्स में उपयोग करने के लिए बेहद छोटे और जबरदस्त मजबूती वाले उपकरणों का निर्माण आवश्यक है। इसके लिए वैज्ञानिकों का एक समूह

प्रकृति से प्रेरणा लेकर काम कर रहा है। उन्होंने चींटी के दांतों को अध्ययन किया है, जो आकार में बेहद सूक्ष्म होने के बावजूद बेहद मजबूत और धारदार होते हैं।

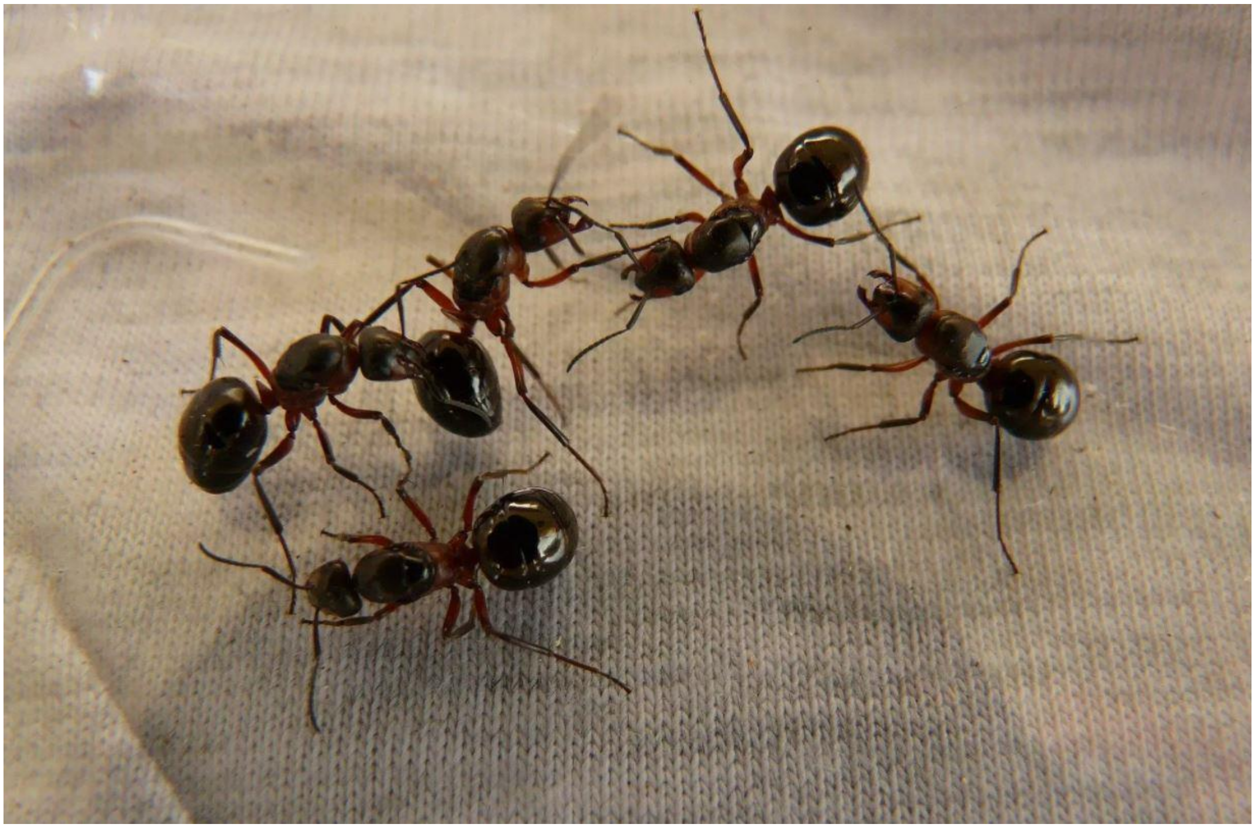

मनुष्य के बालों से भी पतले, कीड़ों के बेहद सूक्ष्म चॉपर या दांत मजबूत पत्तियों को पूरी ताकत से काट सकते हैं। आणविक स्तर पर इमेजिंग से पता चलता है कि छोटे जीव अपने सूक्ष्म उपकरणों को तेज करने के लिए जस्ता का उपयोग करते हैं। अपने अध्ययन में, वैज्ञानिकों ने पाया है कि जिंक अणुओं की परत चींटी के दांतों को सख्त एवं धारदार औजार में बदल देती है। उनका कहना है कि समान रूप से व्यवस्थित दाँतों के जिंक अणुओं से यह संभव हो पाता है, जिससे किसी चीज़ को काटते समय जीवों के बल का समान वितरण होता है।

चींटी के दांतों की संरचना पर किए गए इस अध्ययन से जुड़े अमेरिकी ऊर्जा विभाग के पैसिफिक नॉर्थवेस्ट नेशनल लेबोरेटरी के वरिष्ठ शोधकर्ता अरुण देवराज ने कहा, "समान वितरण होना, अनिवार्य रूप से, इसका एक रहस्य है।मानव त्वचा को भी आसानी से काट सकते हैं" चींटियों के चॉपर्स ", जबकि यह कर पाना हमारे अपने दाँतों से भी मुश्किल होगा।यह अध्ययन ", हाल में शोध पत्रिका साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किया गया है।

इन्सान की जरूरतों के अनुसार टिकाऊ एवं उपयोगी पॉकेटसाइज़ इलेक्ट्रॉनिक्स के निर्माण को - की सुनिश्चित करने के लिए वैज्ञानिक प्रकृति के रहस्यों की तह तक जानेऐसी कोशिशें करते रहते हैं।

यह अजीब लगना स्वाभाविक है कि बेहद छोटे जीवों के जबड़े और दांत अत्यधिक सख्त होते हैं। वास्तव में, ऐसे कीटों के जबड़े विशिष्ट प्रोटीन और पॉलीसेकेराइड पॉलीमर काइटिन के संयोजन से बने होते हैं, जो कि काइटिन माइक्रोफाइब्रिल्स उत्पादन के लिए हाइड्रोजन बॉन्ड द्वारा जुड़े होते हैं। काइटिन सख्त होता है, और जब इसे कैल्शियम कार्बोनेट जैसी अन्य सामग्रियों के साथ मिलाया जाता है, तो झींगा और केकड़ों के खोल में पाए जाने वाले सख्त पदार्थ बन जाते हैं। इसका एक उदाहरण है कि जब आठ प्रतिशत जिंक मिलता है, तो काइटिन काफी सख्त हो जाता है, जिससे चींटी के दाँत जैसी तेज़ एवं टिकाऊ संरचनाएं बनती हैं।

ओरेगॉन विश्वविद्यालय के रॉबर्ट स्कोफिल्ड के नेतृत्व में जैवभौतिकविदों की एक टीम चींटी के दाँतों - को साथ अन्य सूक्ष्म जीव उपकरणों के प्रभावी प्रतिरोध-के साथमापने का प्रयास कर रही है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि वे कैसे काम करते हैं, और कैसे उनकी नकल करके बड़े पैमाने पर उसकी प्रतिकृतियाँ तैयार की जा सकती हैं। इसके लिए, वैज्ञानिक चींटी के दाँत एवं इसके जैसे अन्य जीव उपकरणों की कठोरता, लचीलेपन, घर्षण प्रतिरोध, और प्रतिरोधी प्रभाव का आकलन करते हैं।

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

चींटी के फौलादी दाँतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा

By **Rupesh Dharmik** - September 6, 2021

Photo : Pexels.com

नई दिल्ली, 06 सितंबर: इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है। गैजेट्स में उपयोग करने के लिए बेहद छोटे और जबरदस्त मजबूती वाले उपकरणों का निर्माण आवश्यक है। इसके लिए वैज्ञानिकों का एक समूह प्रकृति से प्रेरणा लेकर काम कर रहा है। उन्होंने चींटी के दांतों को अध्ययन किया है, जो आकार में बेहद सूक्ष्म होने के बावजूद बेहद मजबूत और धारदार होते हैं।

मनुष्य के बालों से भी पतले, कीड़ों के बेहद सूक्ष्म चॉपर या दाँतमजबूत पत्तियों को पूरी ताकत से काट सकते हैं। आणविक स्तर पर इमेजिंग से पता चलता है कि छोटे जीव अपने सूक्ष्म उपकरणों को तेज करने के लिए जस्ता का उपयोग करते हैं। अपने अध्ययन में,वैज्ञानिकों ने पाया है किजिंक अणुओं कीपरत चींटी के दांतों को सख्त

एवंधारदार औजार में बदल देती है। उनका कहना है कि समान रूप से व्यवस्थित दाँतों के जिंक अणुओं से यह संभव हो पाता है, जिससे किसी चीज़ को काटते समय जीवों के बल का समान वितरण होता है।

चींटी के दांतों की संरचना पर किए गए इस अध्ययन से जुड़े अमेरिकी ऊर्जा विभाग के पैसिफिक नॉर्थवेस्ट नेशनल लेबोरेटरी के वरिष्ठ शोधकर्ता अरुण देवराज ने कहा, "समान वितरण होना, अनिवार्य रूप से, इसका एक रहस्य है।" चींटियों के चॉपर्स "मानव त्वचा को भी आसानी से काट सकते हैं, जबकि यह कर पाना हमारे अपने दाँतों से भी मुश्किल होगा।" यह अध्ययन, हाल में शोध पत्रिका साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किया गया है।

यदि आपका कभी चींटियों से पाला पड़ा हो, तो आपने अनुभव किया होगा कि वे आपको कितनी तेज़ काट सकती हैं। अपने घर में भी आपने देखा होगा कि चींटी, दीमक और अन्य छोटे संधिपाद प्राणियों में लकड़ी एवं अन्य सामग्रियों की आश्चर्यजनक विविधता को चबाने की उल्लेखनीय क्षमता होती है।इन्सान की जरूरतों के अनुसार टिकाऊ एवं उपयोगी पॉकेटसाइज़ इलेक्ट्रॉनिक्स के निर्माण को सुनिश्चित करने के लिए वैज्ञानिक - प्रकृति के रहस्यों की तह तक जाने की ऐसी कोशिशें करते रहते हैं।

यह अजीब लगना स्वाभाविक है कि बेहद छोटे जीवों के जबड़े और दांत अत्यधिक सख्त होते हैं। वास्तव में, ऐसे कीटों के जबड़े विशिष्ट प्रोटीन और पॉलीसेकेराइड पॉलीमर काइटिन के संयोजन से बने होते हैं, जो कि काइटिनमाइक्रोफाइब्रिल्स उत्पादन के लिए हाइड्रोजन बॉन्ड द्वारा जुड़े होते हैं। काइटिनसख्त होता है, और जब इसे कैल्शियम कार्बोनेट जैसी अन्य सामग्रियों के साथ मिलाया जाता है, तो झींगा और केकड़ों के खोल में पाए जाने वाले सख्त पदार्थ बन जाते हैं।इसका एक उदाहरण है कि जब आठ प्रतिशत जिंक मिलता है, तो काइटिन काफी सख्त हो जाता है, जिससे चींटी के दाँत जैसी तेज़ एवं टिकाऊ संरचनाएं बनती हैं।

ओरेगॉन विश्वविद्यालय के रॉबर्ट स्कोफिल्ड के नेतृत्व में जैव-भौतिकविदों की एक टीम चींटी के दाँतों के साथ-साथ अन्य सूक्ष्म जीव उपकरणों के प्रभावी प्रतिरोध को मापने का प्रयास कर रही है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि वे कैसे काम करते हैं, और कैसे उनकी नकल करके बड़े पैमाने पर उसकी प्रतिकृतियाँ तैयार की जा सकती हैं। इसके लिए, वैज्ञानिक चींटी के दाँत एवं इसके जैसे अन्य जीव उपकरणों की कठोरता, लचीलेपन, घर्षण प्रतिरोध, और प्रतिरोधी प्रभाव का आकलन करते हैं। (इंडिया साइंस वायर)

दी इंडियनबुलेटिन

चींटी के फौलादी दाँतों के पीछे छिपे रहस्य का खुलासा

2 weeks ago

Photo : Pexels.com

नई दिल्ली, 06 सितंबर: इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों का आकार लगातार सिकुड़ रहा है। गैजेट्स में उपयोग करने के लिए बेहद छोटे और जबरदस्त मजबूती वाले उपकरणों का निर्माण आवश्यक है। इसके लिए वैज्ञानिकों का एक समूह प्रकृति से प्रेरणा लेकर काम कर रहा है। उन्होंने चींटी के दांतों को अध्ययन किया है, जो आकार में बेहद सूक्ष्म होने के बावजूद बेहद मजबूत और धारदार होते हैं।

मनुष्य के बालों से भी पतले, कीड़ों के बेहद सूक्ष्म चॉपर या दाँतमजबूत पत्तियों को पूरी ताकत से काट सकते हैं। आणविक स्तर पर इमेजिंग से पता चलता है कि छोटे जीव अपने सूक्ष्म उपकरणों को तेज करने के लिए जस्ता का उपयोग करते हैं। अपने अध्ययन में,वैज्ञानिकों ने पाया है किजिंक अणुओं कीपरत चींटी के दांतों को सख्त एवंधारदार औजार में बदल देती है। उनका कहना है कि समान रूप से व्यवस्थित दाँतों के जिंक अणुओं से यह संभव हो पाता है, जिससे किसी चीज़ को काटते समय जीवों के बल का समान वितरण होता है।

चींटी के दांतों की संरचना पर किए गए इस अध्ययन से जुड़े अमेरिकी ऊर्जा विभाग के पैसिफिक नॉर्थवेस्ट नेशनल लेबोरेटरी के वरिष्ठ शोधकर्ता अरुण देवराज ने कहा, "समान वितरण होना, अनिवार्य रूप से, इसका एक रहस्य है।" चींटियों के चॉपर्स "मानव त्वचा को भी आसानी से काट सकते हैं, जबकि यह कर पाना हमारे अपने दाँतों से भी मुश्किल होगा।" यह अध्ययन, हाल में शोध पत्रिका साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किया गया है।

यदि आपका कभी चींटियों से पाला पड़ा हो, तो आपने अनुभव किया होगा कि वे आपको कितनी तेज़ काट सकती हैं। अपने घर में भी आपने देखा होगा कि चींटी, दीमक और अन्य छोटे संधिपाद प्राणियों में लकड़ी एवं अन्य सामग्रियों की आश्चर्यजनक विविधता को चबाने की उल्लेखनीय क्षमता होती है।इन्सान की जरूरतों के अनुसार टिकाऊ एवं उपयोगी पॉकेट वैज्ञानिक लिए के करने सुनिश्चित को निर्माण के इलेक्ट्रॉनिक्स साइज़- रहस्यों के प्रकृतिकी तह तक जाने की ऐसी कोशिशें करते रहते हैं।

यह अजीब लगना स्वाभाविक है कि बेहद छोटे जीवों के जबड़े और दांत अत्यधिक सख्त होते हैं। वास्तव में, ऐसे कीटों के जबड़े विशिष्ट प्रोटीन और पॉलीसेकेराइड पॉलीमर काइटिन के संयोजन से बने होते हैं, जो कि काइटिनमाइक्रोफाइब्रिल्स उत्पादन के लिए हाइड्रोजन बॉन्ड द्वारा जुड़े होते हैं। काइटिनसख्त होता है, और जब इसे कैल्शियम कार्बोनेट जैसी अन्य सामग्रियों के साथ मिलाया जाता है, तो झींगा और केकड़ों के खोल में पाए जाने वाले सख्त पदार्थ बन जाते हैं।इसका एक उदाहरण है कि जब आठ प्रतिशत जिंक मिलता है, तो काइटिन काफी सख्त हो जाता है, जिससे चींटी के दाँत जैसी तेज़ एवं टिकाऊ संरचनाएं बनती हैं।

ओरेगॉन विश्वविद्यालय के रॉबर्ट स्कोफिल्ड के नेतृत्व में जैव-साथ के दाँतों के चींटी टीम एक की भौतिकविदों- प्रभावी के उपकरणों जीव सूक्ष्म अन्य साथप्रतिरोध को मापने का प्रयास कर रही है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि वे कैसे काम करते हैं, और कैसे उनकी नकल करके बड़े पैमाने पर उसकी प्रतिकृतियाँ तैयार की जा सकती हैं। इसके लिए, वैज्ञानिक चींटी के दाँत एवं इसके जैसे अन्य जीव उपकरणों की कठोरता, लचीलेपन, घर्षण प्रतिरोध, और प्रतिरोधी प्रभाव का आकलन करते हैं। (वायर साइंस इंडिया)

![जनसत्ता]

शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना ‘वायु-शोधक’

मानव स्वास्थ्य के लिए बढ़ते प्रदूषण की चुनौती निरंतर कठिन होती जा रही है।

Written By जनसत्ता ऑनलाइन
Updated: September 7, 2021 4:00:24 am

शोधकर्ताओं ने पौधों से बनाया वायुशोधक। फाइल फोटो।-

मानव स्वास्थ्य के लिए बढ़ते प्रदूषण की चुनौती निरंतर कठिन होती जा रही है। प्रदूषण जन्य-बीमारियों से बचने के लिए नित नए शोध किये जा रहे हैं, जिनमें पानी, खाद्य और हवा को शुद्ध करने के जतन शामिल हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रोपड़ और कानपुर तथा (आईआईटी) पौधे पर आधारित वायु शोधक -दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रबंधन अध्ययन संकाय ने एक जीवित यानीएयर प्यूरीफायर‘यूब्रीद लाइफ’ विकसित किया है। यह प्यूरीफायर अस्पताल, स्कूल, कार्यालय और घर जैसे कम हवदार स्थानों में वायुशोधन की प्रक्रिया को विस्तारित करने में सक्षम -है।

आईआईटी रोपड़ की स्टार्टअप कंपनी'अर्बन एयर लेबोरेटरी' ने इस एयर प्यूरीफायर को विकसित किया है। यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा नामित एग्रीकल्चर एंड वाटर टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट हब है। स्टार्टअप के अनुसार यह दुनिया का पहला (एडब्लूएडीएच- आईहब), अत्याधुनिक 'स्मार्ट बायोफ़िल्टर-' है जो सांसलेने वाली वायु को शुद्ध और ताज़ा कर सकता है। यह तकनीक,पत्तेदार प्राकृतिक पौधे के माध्यम से हवा को शुद्ध करने का काम करती है।

कमरे की हवा पत्तियों के साथ संपर्क करती है और मिट्टीजड़ क्षेत्र में जाती है जहां अधिकतम - प्रदूषक शुद्ध होते हैं। इस प्यूरीफायर में'अर्बन मुन्नार इफेक्ट' और आईआईटी रोपड़ की एक अन्य नई तकनीक 'ब्रीदिंग रूट्स' का उपयोग किया गया है। इन तकनीकों से फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रिया में तेजी लाई जा सकती है। फाइटोरेमेडिएशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा पौधे हवा से प्रदूषकों को प्रभावी ढंग से हटाते हैं। इस एयर प्यूरीफायर के परीक्षण में पीस लिली, स्नेक प्लांट, स्पाइडर प्लांट आदि शामिल किये गए हैं।

'यूब्रीद लाइफ' एक विशेष रूप से डिजाइन लकड़ी के बक्से में संयोजित किया गया फिल्टर है। विशिष्ट पौधों और यूवी कीटाणुशोधन और प्रीशोधक चारकोल फिल्टर -फिल्टर से लैस यह वायु- और उच्च दक्षता वाले वायु कणों यानी एचईपीए के माध्यम से गैसीय और जैविक प्रदूषकों को बाहर कर आंतरिक वायु गुणवत्ता में गुणात्मक रूप से सुधार करता है। इससे आंतरिक कक्ष में आक्सीजन का स्तर भी बढ़ता है। इस ढांचे के केंद्र में स्थित पंखा दबाव बनाकर शुद्ध हवा का चारों ओर)360 डिग्री प्रसार (करता है। इस अध्ययन में वायुशोधन के लिए कई विशिष्ट पौधों का - गया। उनमें पीस लिली परीक्षण किया, स्नेक प्लांट और स्पाइडर प्लांट आदि मुख्य रूप से शामिल हैं। उत्साहित करने वाला बिंदु यही है कि इन सभी ने आंतरिक वायु को शुद्ध करने में अच्छे परिणाम दिए हैं।

माना जाता है कि किसी भवन के भीतर यानी आंतरिक परिवेश की वायु अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित होती है। उचित वेंटिलेशन यानी हवा की सुगम आवाजाही न होना भी इसका एक प्रमुख कारण माना जाता है। इस मामले में विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट यह कहती है कि (डब्ल्यूएचओ) घर के अंदर की वायु (इनडोर), बाहरी वायु की तुलना में पांच गुना अधिक प्रदूषित हो सकती है।

कोरोना महामारी के दौर में यह पहलू और चिंताजनक बन जाता है, क्योंकि लोगों से अधिक से अधिक अपेक्षा यही की जा रही है कि अपने घरों में ही रहें और जरूरत पड़ने पर ही बाहर निकलें। यही कारण है कि 'द जर्नल ऑफ द अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन' (जेएएमएमें हाल में (काशित एक शोध ने सरकारों से प्रति घंटे वायु परिवर्तन यानी वेंटिलेशन को बेहतर करने के लिए प्र भवनों के डिजाइन को बदलने का परामर्श दिया है। संस्थान के अनुसार, 'यूब्रीद लाइफ' इस चिंता का समाधान हो सकता है। यह परीक्षित उत्पाद 'यूब्रीथ लाइफ' घर के अंदर स्वच्छ हवा बनाए रखनेमें प्रभावी सिद्ध हो सकता है।

इस शोध से यह भी पता चलता है कि कोविड-19 टीकाकरण कार्यस्थलों, स्कूलों और यहां तक कि पूरी तरह से वातानुकूलित घर भी सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकते जब तक कि वायु निस्पंदन, वायु शोधन और इनडोर वेंटिलेशन भवन के डिजाइन का हिस्सा नहीं बन जाते। परीक्षण के परिणाम,परीक्षण और रूपांकन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड और आईआईटी, रोपड़ की प्रयोगशाला द्वारा आयोजित किया गया है कि एक्यूआई वायु गुणवत्ता) सूचकांक (150 वर्ग फुट के कमरे के आकार के लिए है।

आईआईटी, रोपड़ के निदेशक प्रोफेसर राजीव आहूजा का कहना है कि 'यूब्रीद लाइफ' का उपयोग करने के बाद 15 मिनट में एक्यूआई का स्तर 311 से 39 तक गिर जाता है। प्रोफेसर आहूजा ने विश्वास जताया है कि यह दुनिया का पहला जीवित संयंत्र आधारित वायु शोधक गेम चेंजर साबित हो सकता है।

'यूब्रीद लाइफ' के सीईओ संजय मौर्य का कहना है कि इस उत्पाद के कुछ बायोफिलिक लाभ भी हैं, जैसे कि यह संज्ञानात्मक कार्य, शारीरिक स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक कल्याण का समर्थन करता है। इस प्रकार, यह कमरे में छोटे से वन का आभास कराता है। उपभोक्ता को संयंत्र को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि 150 मिलीलीटर की क्षमता वाला ये एक अंतर्निर्मित जलाशय है जो पौधों की आवश्यकताओं के लिए एक बफर के रूप में कार्य करता है।

(इंडिया साइंस वायर(

WEBDUNIA
हिंदी

शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना ‘वायु-शोधक’

Last Updated: मंगलवार, 7 सितम्बर 2021 (14:07 IST)

नई दिल्ली, मानव स्वास्थ्य के लिए बढ़ते प्रदूषण की चुनौती निरंतर कठिन होती जा रही है। है। प्रदूषणजन्य बीमारियों से बचने के लिए नित नए शोध किये जा रहे हैं-, जिनमें पानी, खाद्य और हवा को शुद्ध करने के जतन शामिल हैं।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रोपड़ और कानपुर तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के (आईआईटी) पौधे पर आधारित वायु शोधक यानी एयर -प्रबंधन अध्ययन संकाय ने एक जीवित प्यूरीफायर‘यूब्रीद लाइफ’ विकसित किया है। यह प्यूरीफायर अस्पताल, स्कूल, कार्यालय और घर जैसे कम हवदार स्थानों में वायुशोधन की प्रक्रिया को विस्तारित करने में सक्षम है।-

आईआईटी रोपड़ की स्टार्टअप कंपनी‘अर्बन एयर लेबोरेटरी’ ने इस एयर प्यूरीफायर को विकसित किया है। यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा नामित एग्रीकल्चर एंड वाटर टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट हब है। स्टार्टअप के अनुसार यह दुनिया का पहला (एडीएचएडब्लू- आईहब), अत्याधुनिक 'स्मार्ट बायोफ़िल्टर-' है जो सांसलेने वाली वायु को शुद्ध और ताज़ा कर सकता है।

यह तकनीक,पत्तेदार प्राकृतिकपौधे के माध्यम सेहवा को शुद्ध करने का काम करती है। कमरे की हवा पत्तियों के साथ संपर्क करती है और मिट्टीजड़ क्षेत्र में जाती है जहां अधिकतम प्रदूषक शुद्ध - होते हैं। इस प्यूरीफायर में'अर्बन मुन्नार इफेक्ट' और आईआईटी रोपड़ की एक अन्य नई तकनीक ‘ब्रीदिंग रूट्स’ का उपयोग किया गया है। इन तकनीकों से फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रिया में तेजी लाई जा सकती है।

फाइटोरेमेडिएशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा पौधे हवा से प्रदूषकों को प्रभावी ढंग से हटाते हैं। इस एयर प्यूरीफायर के परीक्षण में पीस लिली, स्नेक प्लांट, स्पाइडर प्लांट आदि शामिल किये गए हैं।

'यूब्रीद लाइफ' एक विशेष रूप से डिजाइन लकड़ी के बक्से में संयोजित किया गया फिल्टर है। विशिष्ट पौधों और यूवी कीटाणुशोधन और प्रीशोधक चारकोल फिल्टर -फिल्टर से लैस यह वायु- और उच्च दक्षता वाले वायु कणों यानी एचईपीए के माध्यम से गैसीय और जैविक प्रदूषक ों को बाहर कर आंतरिक वायु गुणवत्ता में गुणात्मक रूप से सुधार करता है। इससे आंतरिक कक्ष में आक्सीजन का स्तर भी बढ़ता है।

इस ढांचे के केंद्र में स्थित पंखा दबाव बनाकर शुद्ध हवा का चारों ओर)360 डिग्रीप्रसार करता (शोधन के लिए कई विशिष-है। इस अध्ययन में वायु ्ट पौधों का परीक्षण किया गया। उनमें पीस लिली, स्नेक प्लांट और स्पाइडर प्लांट आदि मुख्य रूप से शामिल हैं। उत्साहित करने वाला बिंदु यही है कि इन सभी ने आंतरिक वायु को शुद्ध करने में अच्छे परिणाम दिए हैं।

माना जाता है कि किसी भवन के भीतर यानी आंतरिक परिवेश की वायु अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित होती है। उचित वेंटिलेशन यानी हवा की सुगम आवाजाही न होना भी इसका एक प्रमुख कारण माना जाता है। इस मामले में विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट यह कहती है कि (डब्ल्यूएचओ) वायु (इनडोर) घर के अंदर की, बाहरी वायु की तुलना में पांच गुना अधिक प्रदूषित हो सकती है।

कोरोना महामारी के दौर में यह पहलू और चिंताजनक बन जाता है, क्योंकि लोगों से अधिक से अधिक अपेक्षा यही की जा रही है कि अपने घरों में ही रहें और जरूरत पड़ने पर ही बाहर निकलें।

यही कारण है कि ‘द जर्नल ऑफ द अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन’ (जेएएमएमें हाल में (परिवर्तन यानी वेंटिलेशन को बेहतर करने के लिए प्रकाशित एक शोध ने सरकारों से प्रति घंटे वायु भवनों के डिजाइन को बदलने का परामर्श दिया है।

संस्थान के अनुसार, ‘यूब्रीद लाइफ' इस चिंता का समाधान हो सकता है। यह परीक्षित उत्पाद 'यूब्रीथ लाइफ' घर के अंदर स्वच्छ हवा बनाए रखनेमें प्रभावी सिद्ध हो सकता है।

इस शोध से यह भी पता चलता है कि कोविड-19 टीकाकरण कार्यस्थलों, स्कूलों और यहां तक कि पूरी तरह से वातानुकूलित घर भी सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकते जब तक कि वायु निस्पंदन, वायु शोधन और इनडोर वेंटिलेशन भवन के डिजाइन का हिस्सा नहीं बन जाते। परीक्षण के परिणाम,परीक्षण और रूपांकन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड और आईआईटी, रोपड़ की प्रयोगशाला द्वारा आयोजित किया गया है कि एक्यूआई (वायु गुणवत्ता सूचकांक)150 वर्ग फुट के कमरे के आकार के लिए है।

आईआईटी, रोपड़ के निदेशक प्रोफेसर राजीव आहूजा का कहना है कि 'यूब्रीद लाइफ' का उपयोग करने के बाद 15 मिनट में एक्यूआई का स्तर 311 से 39 तक गिर जाता है। प्रोफेसर आहूजा ने विश्वास जताया है कि यह दुनिया का पहला जीवित संयंत्र आधारित वायु शोधक गेम चेंजर साबित हो सकता है।

‘यूब्रीद लाइफ' के सीईओ संजय मौर्य का कहना है कि इस उत्पाद के कुछ बायोफिलिक लाभ भी हैं, जैसे कि यह संज्ञानात्मक कार्य, शारीरिक स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक कल्याण का समर्थन करता है। इस प्रकार, यह कमरे में छोटे से वन का आभास कराता है। उपभोक्ता को संयंत्र को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि 150 मिलीलीटर की क्षमता वाला ये एक अंतर्निर्मित जलाशय है जो पौधों की आवश्यकताओं के लिए एक बफर के रूप में कार्य करता है। **(इंडिया साइंस वायर(**

RD TIMES.in हिंदी

शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना 'वायु-शोधक'

By RD Times Hindi | September 6, 2021

नई दिल्ली,06 सितंबर: मानव स्वास्थ्य के लिएबढ़ते प्रदूषण की चुनौती निरंतर कठिन होती जा रही है। है। प्रदूषण जन्य बीमारियों से बचने के लिए नित नए-शोध किये जा रहे हैं, जिनमें पानी, खाद्य और हवा को शुद्ध करने के जतन शामिल हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रोपड़ और कानपुर तथा दिल्ली (आईआईटी) पौधे पर आधारित वायु शोधक यानी एयर -विश्वविद्यालय के प्रबंधन अध्ययन संकाय ने एक जीवित प्यूरीफायर'यूब्रीद लाइफ' विकसित कियाहै। यह प्यूरीफायर अस्पताल, स्कूल, कार्यालय और घर जैसे कम हवदार स्थानों में वायुशोधन की प्रक्रिया को विस्तारित करने में सक्षमहै।-

आईआईटी रोपड़ की स्टार्टअप कंपनी'अर्बन एयर लेबोरेटरी' ने इस एयर प्यूरीफायर को विकसित किया है। यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा नामित एग्रीकल्चर एंड वाटर टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट हब है। स्टार्टअप के अनुसार यह दुनिया का पहला (एडब्लूएडीएच- आईहब), अत्याधुनिक 'स्मार्ट बायोफ़िल्टर-' है जो सांसलेने वाली वायु को शुद्ध और ताज़ा कर सकता है। यह तकनीक,पत्तेदार प्राकृतिकपौधे के माध्यम सेहवा को शुद्ध करने का काम करती है। कमरे की हवा पत्तियों के साथ संपर्क करती है और मिट्टीजड़ क्षेत्र में जाती है - जहां अधिकतम प्रदूषक शुद्ध होते हैं। इस प्यूरीफायर में'अर्बन मुन्नार इफेक्ट' और आईआईटी रोपड़ की एक

अन्य नई तकनीक 'ब्रीदिंग रूट्स' का उपयोग किया गया है। इन तकनीकों से फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रियामें तेजी लाई जा सकती है। फाइटोरेमेडिएशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा पौधे हवा से प्रदूषकों को प्रभावी ढंग से हटाते हैं। इस एयर प्यूरीफायर के परीक्षण में पीस लिली, स्नेक प्लांट, स्पाइडर प्लांट आदि शामिल किये गए हैं।

'यूब्रीद लाइफ' एक विशेष रूप से डिजाइन लकड़ी के बक्से में संयोजित किया गया फिल्टर है। विशिष्ट पौधों औरयूवी कीटाणुशोधन और प्रीशोधक चारकोल फिल्टर और उच्च दक्षता वाले वायु -फिल्टर से लैस यह वायु- कणों यानी एचईपीए के माध्यम से गैसीय और जैविक प्रदूषकों को बाहर कर आंतरिक वायु गुणवत्ता में गुणात्मक रूप से सुधार करता है। इससे आंतरिक कक्ष में आक्सीजन का स्तर भी बढ़ता है। इस ढांचे के केंद्र में स्थित पंखा दबाव बनाकर शुद्ध हवा का चारों ओर)360 डिग्री शोधन के-प्रसार करता है। इस अध्ययनमें वायु (लिए कई विशिष्ट पौधों का परीक्षण किया गया। उनमें पीस लिली, स्नेक प्लांट और स्पाइडर प्लांट आदि मुख्य रूप से शामिल हैं। उत्साहित करने वाला बिंदु यही है कि इन सभी ने आंतरिक वायु को शुद्ध करने में अच्छे परिणाम दिए हैं।

माना जाता है कि किसी भवन के भीतर यानी आंतरिक परिवेश की वायु अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित होती है। उचित वेंटिलेशन यानी हवा की सुगम आवाजाही न होना भी इसका एक प्रमुख कारण माना जाता है। इस मामले में विश्व स्वास्थ्य संगठन वायु (इनडोर) की एक रिपोर्ट यह कहती है कि घर के अंदर की (डब्ल्यूएचओ), बाहरी वायु की तुलना में पांच गुना अधिक प्रदूषित हो सकती है।

कोरोना महामारी के दौर में यह पहलू और चिंताजनक बन जाता है, क्योंकि लोगों से अधिक से अधिक अपेक्षा यही की जा रही है कि अपने घरों में ही रहें और जरूरत पड़ने पर ही बाहर निकलें। यही कारण है कि 'द जर्नल ऑफ द अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन' (जेएएमएमें हाल में प्रकाशित एक शोध ने सरकारों से प्रति घंटे वायु (परिवर्तन यानी वेंटिलेशन को बेहतर करने के लिए भवनों के डिजाइन को बदलने का परामर्श दिया है। संस्थान के अनुसार, 'यूब्रीद लाइफ' इस चिंता का समाधान हो सकता है। यह परीक्षित उत्पाद 'यूब्रीथ लाइफ' घर के अंदर स्वच्छ हवा बनाए रखनेमें प्रभावी सिद्ध हो सकता है।

इस शोध से यह भी पता चलता है कि कोविड-19 टीकाकरण कार्यस्थलों, स्कूलों और यहां तक कि पूरी तरह से वातानुकूलित घर भी सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकते जब तक कि वायु निस्पंदन, वायु शोधन और इनडोर वेंटिलेशन भवन के डिजाइन का हिस्सा नहीं बन जाते। परीक्षण के परिणाम,परीक्षण और रूपांकन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड और आईआईटी, रोपड़ की प्रयोगशाला द्वारा आयोजित किया गया है कि एक्यूआई (वायु गुणवत्ता सूचकांक)150 वर्ग फुट के कमरे के आकार के लिए है।

आईआईटी, रोपड़ के निदेशक प्रोफेसर राजीव आहूजा का कहना है कि 'यूब्रीद लाइफ' का उपयोग करने के बाद 15 मिनट में एक्यूआई का स्तर 311 से 39 तक गिर जाता है। प्रोफेसरआहूजा ने विश्वास जताया है कि यह दुनिया का पहला जीवित संयंत्र आधारित वायु शोधक गेम चेंजर साबित हो सकता है।

'यूब्रीद लाइफ' के सीईओ संजय मौर्य का कहना है कि इस उत्पाद के कुछ बायोफिलिक लाभ भी हैं, जैसे कि यह संज्ञानात्मक कार्य, शारीरिक स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक कल्याण का समर्थन करता है। इस प्रकार, यह कमरे में छोटे से वन का आभास कराता है। उपभोक्ता को संयंत्र को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि 150 मिलीलीटर की क्षमता वाला ये एक अंतर्निर्मित जलाशय है जो पौधों की आवश्यकताओं के लिए एक बफर के रूप में कार्य करता है।(इंडिया साइंस वायर)

शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना ‘वायु-शोधक’

2 weeks ago

kiran

‘यूब्रीद लाइफ’ एक विशेष रूप से डिजाइन लकड़ी के बक्से में संयोजित किया गया फिल्टर है। विशिष्ट पौधों और यूवी कीटाणुशोधन और प्रीशोधक चारकोल फिल्टर और उच्च दक्षता वाले वायु -फिल्टर से लैस यह वायु-यानी एचईपीए के माध्यम से गैसीय और जैविक प्रदूषकों को कणों...

Source link

Khabar जागरण 24

शोधकर्ताओं ने पौधों से बना एक ‘वायु शोधक’ विकसित किया है

September 7, 2021

बढ़ते प्रदूषण की चुनौती मानव स्वास्थ्य के लिए कठिन होती जा रही है। जल, भोजन और वायु को शुद्ध करने के प्रयासों सहित प्रदूषण से होने वाली बीमारियों को रोकने के लिए नए शोध किए जा रहे हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रोपड़ और कानपुर और दिल्ली विश्वविद्यालयों के प्रबंधन अध्ययन संकाय ने (आईआईटी) ‘यूब्रिड लाइफ’ नामक एक जीवित संयंत्रअस्पताल आधारित वायु शोधक विकसित किया है। यह शोधक-, स्कूल, कार्यालय और घर जैसे कम हवादार स्थानों में वायु शोधन की प्रक्रिया का विस्तार करने में सक्षम है।

इस एयर प्यूरीफायर को IIT Roper की स्टार्टअप कंपनी ‘अर्बन एयर लेबोरेटरी’ ने विकसित किया है। यह भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा नामित कृषि और जल प्रौद्योगिकी विकास केंद्र)IHUB-AWADH) है। स्टार्टअप के अनुसार, यह दुनिया का पहला, परिष्कृत ‘स्मार्ट बायोफिल्टर-’ है जो आपके द्वारा सांस लेने वाली हवा को शुद्ध और ताज़ा कर सकता है। यह तकनीक प्राकृतिक पत्तेदार पौधों के माध्यम से हवा को शुद्ध करने का काम करती है।

कमरे की हवा पत्तियों के साथ संपर्क करती है और मिट्टीजड़ क्षेत्र में जाती है जहां अधिकतम संदूषक शुद्ध होते - हैं। इस शोधन में आईआईटी रोपर के‘अर्बन मुन्नार इफेक्ट’ और अन्य नई तकनीक ‘ब्रीदिंग रूट्स’ का इस्तेमाल किया गया है। ये तकनीक फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रिया को तेज कर सकती हैं। Phytoremediation एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा पौधे हवा से प्रदूषकों को प्रभावी ढंग से हटाते हैं। इस वायु शोधन परीक्षण में पीस ग्रीन, स्नेक प्लांट, स्पाइडर प्लांट आदि को शामिल किया गया है।

‘यूब्रिड लाइफ’ एक फिल्टर है जिसे विशेष रूप से डिजाइन किए गए लकड़ी के बक्से में इकट्ठा किया गया है। विशिष्ट संयंत्र और यूवी कीटाणुशोधन और प्रीफिल्टर से लैस-, यह एयरप्यूरिफाइंग चारकोल फिल्टर और उच्च - दक्षता वाले वायु कण यानीHEPA के माध्यम से वातित और कार्बनिक प्रदूषकों को हटाकर इनडोर वायु गुणवत्ता में गुणात्मक रूप से सुधार करता है। इस आंतरिक कक्ष में ऑक्सीजन का स्तर भी अधिक होता है। इस संरचना के केंद्र में स्थित पंखा दबाव)360 डिग्रीलगाकर चारों ओर शुद्ध हवा फैलाता है। इस अध्ययन में (वायु शोधन के लिए कुछ विशिष्ट पौधों का परीक्षण किया गया। इनमें मुख्य रूप से पीस ग्रीन, स्नेक प्लांट और स्पाइडर प्लांट शामिल हैं। उत्साहजनक बात यह है कि इन सभी ने इनडोर वायु को शुद्ध करने में अच्छे परिणाम दिए हैं।

ऐसा माना जाता है कि इमारत के अंदर की हवा, यानी घर के अंदर का वातावरण अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित होता है। उचित वेंटीलेशन की कमी यानि हवा की आसान आवाजाही भी इसका मुख्य कारण माना जाता है। ऐसे में विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि घर के अंदर की हवा बाहरी हवा (डब्ल्यूएचओ) ज्याद से पांच गुना ा प्रदूषित हो सकती है।

कोरोना महामारी के दौरान यह पहलू और भी चिंताजनक हो जाता है, क्योंकि ज्यादा से ज्यादा लोग अपने घरों में रहने की उम्मीद करते हैं और जरूरत पड़ने पर ही बाहर निकलते हैं। इसीलिए द जर्नल ऑफ द अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन)JAMA) में प्रकाशित एक हालिया अध्ययन में सरकारों को जलवायु परिवर्तन में सुधार के लिए हर घंटे इमारतों के डिजाइन को बदलने की सलाह दी गई है। संगठन के अनुसार, ‘उब्रीड लाइफ’ इस चिंता का समाधान हो सकता है। यह परीक्षण किया गया उत्पाद ‘उब्रथ लाइफ’ स्वच्छ इनडोर हवा को बनाए रखने में कारगर हो सकता है।

इस शोध से यह भी पता चलता है कि कोविड -19 टीकाकरण कार्यस्थलों, स्कूलों और यहां तक कि पूरी तरह से वातानुकूलित घरों में सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकता जब तक कि वायु शोधन, वायु शोधन और इनडोर वेंटिलेशन भवन के डिजाइन का हिस्सा नहीं बन जाते। परीक्षण और डिजाइन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड और IIT, रोपर की प्रयोगशाला द्वारा किए गए परीक्षण के परिणाम बताते हैं कि AQI (वायु गुणवत्ता सूचकांक (150 वर्ग फुट कमरे के लिए है।

IIT रोपर के निदेशक प्रोफेसर राजीव आहूजा का कहना है कि ‘Ubrid Life’ का इस्तेमाल करने के बाद 15 मिनट में AQI का स्तर 311 से घटकर 39 हो जाता हैप्रोफेसर आहूजा को भरोसा है कि यह दुनिया का . बेस्ड एयर प्यूरीफिकेशन गेम चेंजर साबित हो सकता है।-पहला लाइव प्लांट

Advertisements

उब्रिफ लाइफ के सीईओ संजय मौर्य का कहना है कि उत्पाद के कुछ बायोफिलिक लाभ भी हैं, जैसे संज्ञानात्मक कार्य, शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक कल्याण का समर्थन करना। इस प्रकार, यह कमरे में एक छोटे से जंगल का आभास देता है। उपभोक्ता को संयंत्र को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता नहीं होती है, क्योंकि इसमें 150 मिलीलीटर की क्षमता वाला एक अंतर्निर्मित जलाशय होता है जो संयंत्र की जरूरतों के लिए बफर के रूप में कार्य करता है।

(इंडिया साइंस वायर(

शोधकर्ताओं द्वारा विकसित ‘पौधों के लिए बने वायु शोधक’ पद सबसे पहले जनसत्ता पर दिखाई दिया।

दी इंडियन बुलेटिन

शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना 'वायुशोधक-'

2 weeks ago

नई दिल्ली,06 सितंबर: मानव स्वास्थ्य के लिएबढ़ते प्रदूषण की चुनौती निरंतर कठिन होती जा रही है। है। प्रदूषणहैं रहे जा किये शोध नए नित लिए के बचने से बीमारियों जन्य-, जिनमें पानी, खाद्य और हवा को शुद्ध करने के जतन शामिल हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान दिल्ली तथा कानपुर और रोपड़(आईआईटी) एयर यानी शोधक वायु आधारित पर पौधे-जीवित एक ने संकाय अध्ययन प्रबंधन के विश्वविद्यालय प्यूरीफायर'यूब्रीद लाइफ' विकसित कियाहै। यह प्यूरीफायर अस्पताल, स्कूल, कार्यालय और घर जैसे कम हवदार स्थानों में वायु-शोधन की प्रक्रिया को विस्तारित करने में सक्षमहै।

आईआईटी रोपड़ की स्टार्टअप कंपनी'अर्बन एयर लेबोरेटरी' ने इस एयर प्यूरीफायर को विकसित किया है। यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा नामित एग्रीकल्चर एंड वाटर टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट हब एडब्ल- आईहब)ूएडीएचपहला का दुनिया यह अनुसार के स्टार्टअप है। (, अत्याधुनिक 'स्मार्ट बायोफ़िल्टर-' है जो सांसलेने वाली वायु को शुद्ध और ताज़ा कर सकता है। यह तकनीक,पत्तेदार प्राकृतिकपौधे के माध्यम सेहवा को शुद्ध करने का काम करती है। कमरे की हवा पत्तियों के साथ संपर्क करती है और मिट्टी है जाती में क्षेत्र जड़- में प्यूरीफायर इस हैं। होते शुद्ध प्रदूषक अधिकतम जहां'अर्बन मुन्नार इफेक्ट' और आईआईटी रोपड़ की एक

अन्य नई तकनीक 'ब्रीदिंग रूट्स' का उपयोग किया गया है। इन तकनीकों से फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रियामें तेजी लाई जा सकती है। फाइटोरेमेडिएशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा पौधे हवा से प्रदूषकों को प्रभावी ढंग से हटाते हैं। इस एयर प्यूरीफायर के परीक्षण में पीस लिली, स्नेक प्लांट, स्पाइडर प्लांट आदि शामिल किये गए हैं।

'यूब्रीद लाइफ' एक विशेष रूप से डिजाइन लकड़ी के बक्से में संयोजित किया गया फिल्टर है। विशिष्ट पौधों औरयूवी कीटाणुशोधन और प्री वायु वाले दक्षता उच्च और फिल्टर चारकोल शोधक-वायु यह लैस से फिल्टर-में गुणवत्ता वायु आंतरिक कर बाहर को प्रदूषकों जैविक और गैसीय से माध्यम के एचईपीए यानी कणों आं इससे है। करता रसुधा से रूप गुणात्मकतरिक कक्ष में आक्सीजन का स्तर भी बढ़ता है। इस ढांचे के केंद्र में स्थित पंखा दबाव बनाकर शुद्ध हवा का चारों ओर)360 डिग्री के शोधन-वायु अध्ययनमें इस है। करता प्रसार (लिली पीस उनमें गया। किया परीक्षण का पौधों विशिष्ट कई लिए, स्नेक प्लांट और स्पाइडर प्लांट आदि मुख्य रूप से शामिल हैं। उत्साहित करने वाला बिंदु यही है कि इन सभी ने आंतरिक वायु को शुद्ध करने में अच्छे परिणाम दिए हैं।

माना जाता है कि किसी भवन के भीतर यानी आंतरिक परिवेश की वायु अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित होती है। उचित वेंटिलेशन यानी हवा की सुगम आवाजाही न होना भी इसका एक प्रमुख कारण माना जाता है। इस मामले में विश्व स्वास्थ्य संगठन वायु (इनडोर) की अंदर के घर कि है कहती यह रिपोर्ट एक की (डब्ल्यूएचओ), बाहरी वायु की तुलना में पांच गुना अधिक प्रदूषित हो सकती है।

कोरोना महामारी के दौर में यह पहलू और चिंताजनक बन जाता है, क्योंकि लोगों से अधिक से अधिक अपेक्षा यही की जा रही है कि अपने घरों में ही रहें और जरूरत पड़ने पर ही बाहर निकलें। यही कारण है कि 'द जर्नल ऑफ द अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन' (जेएएमए वायु टेघं प्रति से सरकारों ने शोध एक प्रकाशित में हाल में (य परिवर्तनानी वेंटिलेशन को बेहतर करने के लिए भवनों के डिजाइन को बदलने का परामर्श दिया है। संस्थान के अनुसार, 'यूब्रीद लाइफ' इस चिंता का समाधान हो सकता है। यह परीक्षित उत्पाद 'यूब्रीथ लाइफ' घर के अंदर स्वच्छ हवा बनाए रखनेमें प्रभावी सिद्ध हो सकता है।

इस शोध से यह भी पता चलता है कि कोविड-19 टीकाकरण कार्यस्थलों, स्कूलों और यहां तक कि पूरी तरह से वातानुकूलित घर भी सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकते जब तक कि वायु निस्पंदन, वायु शोधन और इनडोर वेंटिलेशन भवन के डिजाइन का हिस्सा नहीं बन जाते। परीक्षण के परिणाम,परीक्षण और रूपांकन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड और आईआईटी, रोपड़ की प्रयोगशाला द्वारा आयोजित किया गया है कि एक्यूआई (सूचकांक गुणवत्ता वायु)150 वर्ग फुट के कमरे के आकार के लिए है।

आईआईटी, रोपड़ के निदेशक प्रोफेसर राजीव आहूजा का कहना है कि 'यूब्रीद लाइफ' का उपयोग करने के बाद 15 मिनट में एक्यूआई का स्तर 311 से 39 तक गिर जाता है। प्रोफेसरआहूजा ने विश्वास जताया है कि यह दुनिया का पहला जीवित संयंत्र आधारित वायु शोधक गेम चेंजर साबित हो सकता है।

'यूब्रीद लाइफ' के सीईओ संजय मौर्य का कहना है कि इस उत्पाद के कुछ बायोफिलिक लाभ भी हैं, जैसे कि यह संज्ञानात्मक कार्य, शारीरिक स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक कल्याण का समर्थन करता है। इस प्रकार, यह कमरे में छोटे से वन का आभास कराता है। उपभोक्ता को संयंत्र को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि 150 मिलीलीटर की क्षमता वाला ये एक अंतर्निर्मित जलाशय है जो पौधों की आवश्यकताओं के लिए एक बफर के रूप में कार्य करता है।(वायर साइंस इंडिया)

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना 'वायुशोधक-'

By **Rupesh Dharmik** - September 6, 2021

नई दिल्ली,06 सितंबर: मानव स्वास्थ्य के लिएबढ़ते प्रदूषण की चुनौती निरंतर कठिन होती जा रही है। है। प्रदूषणकिये जा रहे हैं जन्य बीमारियों से बचने के लिए नित नए शोध-, जिनमें पानी, खाद्य और हवा को शुद्ध करने के जतन शामिल हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रोपड़ और कानपुर तथा दिल्ली (आईआईटी) पौधे पर आधारित वायु शोधक यानी एयर -विश्वविद्यालय के प्रबंधन अध्ययन संकाय ने एक जीवित प्यूरीफायर'यूब्रीद लाइफ' विकसित कियाहै। यह प्यूरीफायर अस्पताल, स्कूल, कार्यालय और घर जैसे कम हवदार स्थानों में वायुशोधन की प्रक्रिया को विस्तारित करने में सक्षमहै।-

आईआईटी रोपड़ की स्टार्टअप कंपनी'अर्बन एयर लेबोरेटरी' ने इस एयर प्यूरीफायर को विकसित किया है। यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा नामित एग्रीकल्चर एंड वाटर टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट हब है। स्टार्टअप के अनुसार यह दुनिया का पहला (एडब्लूएडीएच- आईहब), अत्याधुनिक 'स्मार्ट बायोफ़िल्टर-' है जो सांसलेने वाली वायु को शुद्ध और ताज़ा कर सकता है। यह तकनीक,पत्तेदार प्राकृतिकपौधे के माध्यम सेहवा को शुद्ध करने का काम करती है। कमरे की हवा पत्तियों के साथ संपर्क करती है और मिट्टीजड़ क्षेत्र में जाती है -

जहां अधिकतम प्रदूषक शुद्ध होते हैं। इस प्यूरीफायर में'अर्बन मुन्नार इफेक्ट' और आईआईटी रोपड़ की एक अन्य नई तकनीक 'ब्रीदिंग रूट्स' का उपयोग किया गया है। इन तकनीकों से फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रियामें तेजी लाई जा सकती है। फाइटोरेमेडिएशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा पौधे हवा से प्रदूषकों को प्रभावी ढंग से हटाते हैं। इस एयर प्यूरीफायर के परीक्षण में पीस लिली, स्नेक प्लांट, स्पाइडर प्लांट आदि शामिल किये गए हैं।

'यूब्रीद लाइफ' एक विशेष रूप से डिजाइन लकड़ी के बक्से में संयोजित किया गया फिल्टर है। विशिष्ट पौधों औरयूवी कीटाणुशोधन और प्रीशोधक चारकोल फिल्टर और उच्च दक्षता वाले वायु -फिल्टर से लैस यह वायु-दूषकों को बाहर कर आंतरिक वायु गुणवत्ता में कणों यानी एचईपीए के माध्यम से गैसीय और जैविक प्र गुणात्मक रूप से सुधार करता है।इससे आंतरिक कक्ष में आक्सीजन का स्तर भी बढ़ता है। इस ढांचे के केंद्र में स्थित पंखा दबाव बनाकर शुद्ध हवा का चारों ओर)360 डिग्रीशोधन के -प्रसार करता है। इस अध्ययनमें वायु (शिष्ट पौधों का परीक्षण किया गया। उनमें पीस लिलीलिए कई वि, स्नेक प्लांट और स्पाइडर प्लांट आदि मुख्य रूप से शामिल हैं। उत्साहित करने वाला बिंदु यही है कि इन सभी ने आंतरिक वायु को शुद्ध करने में अच्छे परिणाम दिए हैं।

माना जाता है कि किसी भवन के भीतर यानी आंतरिक परिवेश की वायु अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित होती है। उचित वेंटिलेशन यानी हवा की सुगम आवाजाही न होना भी इसका एक प्रमुख कारण माना जाता है। इस मामले में विश्व स्वास्थ्य संगठन वायु (इनडोर) की एक रिपोर्ट यह कहती है कि घर के अंदर की (डब्ल्यूएचओ), बाहरी वायु की तुलना में पांच गुना अधिक प्रदूषित हो सकती है।

कोरोना महामारी के दौर में यह पहलू और चिंताजनक बन जाता है, क्योंकि लोगों से अधिक से अधिक अपेक्षा यही की जा रही है कि अपने घरों में ही रहें और जरूरत पड़ने पर ही बाहर निकलें। यही कारण है कि 'द जर्नल ऑफ द अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन' (जेएएमएमें हाल में प्रकाशित एक शोध ने सरकारों से प्रति घंटे वायु (परिवर्तन यानी वेंटिलेशन को बेहतर करने के लिए भवनों के डिजाइन को बदलने का परामर्श दिया है। संस्थान के अनुसार, 'यूब्रीद लाइफ' इस चिंता का समाधान हो सकता है। यह परीक्षित उत्पाद 'यूब्रीथ लाइफ' घर के अंदर स्वच्छ हवा बनाए रखनेमें प्रभावी सिद्ध हो सकता है।

इस शोध से यह भी पता चलता है कि कोविड-19 टीकाकरण कार्यस्थलों, स्कूलों और यहां तक कि पूरी तरह से वातानुकूलित घर भी सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकते जब तक कि वायु निस्पंदन, वायु शोधन और इनडोर वेंटिलेशन भवन के डिजाइन का हिस्सा नहीं बन जाते। परीक्षण के परिणाम,परीक्षण और रूपांकन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड और आईआईटी, रोपड़ की प्रयोगशाला द्वारा आयोजित किया गया है कि एक्यूआई (वायु गुणवत्ता सूचकांक)150 वर्ग फुट के कमरे के आकार के लिए है।

आईआईटी, रोपड़ के निदेशक प्रोफेसर राजीव आहूजा का कहना है कि 'यूब्रीद लाइफ' का उपयोग करने के बाद 15 मिनट में एक्यूआई का स्तर 311 से 39 तक गिर जाता है। प्रोफेसरआहूजा ने विश्वास जताया है कि यह दुनिया का पहला जीवित संयंत्र आधारित वायु शोधक गेम चेंजर साबित हो सकता है।

'यूब्रीद लाइफ' के सीईओ संजय मौर्य का कहना है कि इस उत्पाद के कुछ बायोफिलिक लाभ भी हैं, जैसे कि यह संज्ञानात्मक कार्य, शारीरिक स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक कल्याण का समर्थन करता है। इस प्रकार, यह कमरे में छोटे से वन का आभास कराता है। उपभोक्ता को संयंत्र को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि 150 मिलीलीटर की क्षमता वाला ये एक अंतर्निर्मित जलाशय है जो पौधों की आवश्यकताओं के लिए एक बफर के रूप में कार्य करता है।(इंडिया साइंस वायर)

शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना 'वायु-शोधक'

06/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 06 सितंबर मानव स्वास्थ्य के लिए बढ़ते प्रदूषण की चुनौती निरंतर कठिन होती जा रही :(इंडिया साइंस वायर) जन्य बीमारियों से बचने के लिए नित नए शोध किये जा रहे-है। है। प्रदूषणहैं, जिनमें पानी, खाद्य और हवा को शुद्ध करने के जतन शामिल हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रोपड़ और कानपुर तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रबंधन अध्ययन (आईआईटी) नी एयर प्यूरीफायरपौधे पर आधारित वायु शोधक या-संकाय ने एक जीवित'यूब्रीद लाइफ' विकसित किया है।

यह प्यूरीफायर अस्पताल, स्कूल, कार्यालय और घर जैसे कम हवदार स्थानों में वायुशोधन की प्रक्रिया को विस्तारित करने में -सक्षम है। आईआईटी रोपड़ की स्टार्टअप कंपनी'अर्बन एयर लेबोरेटरी' ने इस एयर प्यूरीफायर को विकसित किया है। यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा नामित एग्रीकल्चर एंड वाटर टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट हब - आईहब) है। स्टार्टअप के अनुसार यह दुनिया का पहला (एडब्लूएडीएच, अत्याधुनिक 'स्मार्ट बायोफ़िल्टर-' है जो सांसलेने वाली वायु को शुद्ध और ताज़ा कर सकता है।

यह तकनीक,पत्तेदार प्राकृतिकपौधे के माध्यम सेहवा को शुद्ध करने का काम करती है। कमरे की हवा पत्तियों के साथ संपर्क करती है और मिट्टी जड़ क्षेत्र में जाती है जहां अधिकतम प्रदूषक शुद्ध होते हैं। इस प्यूरीफायर में-'अर्बन मुन्नार इफेक्ट' और आईआईटी रोपड़ की एक अन्य नई तकनीक 'ब्रीदिंग रूट्स' का उपयोग किया गया है। इन तकनीकों से फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रिया में तेजी लाई जा सकती है।

फाइटोरेमेडिएशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा पौधे हवा से प्रदूषकों को प्रभावी ढंग से हटाते हैं। इस एयर प्यूरीफायर के परीक्षण में पीस लिली, स्नेक प्लांट, स्पाइडर प्लांट आदि शामिल किये गए हैं। 'यूब्रीद लाइफ' एक विशेष रूप से डिजाइन लकड़ी के बक्से में संयोजित किया गया फिल्टर है। विशिष्ट पौधों और यूवी कीटाणुशोधन और प्री-फिल्टर से लैस यह वायु-यु कणों यानी एचईपीए के माध्यम से गैसीय और जैविक प्रदूषकोंशोधक चारकोल फिल्टर और उच्च दक्षता वाले वा को बाहर कर आंतरिक वायु गुणवत्ता में गुणात्मक रूप से सुधार करता है।

इससे आंतरिक कक्ष में आक्सीजन का स्तर भी बढ़ता है। इस ढांचे के केंद्र में स्थित पंखा दबाव बनाकर शुद्ध हवा का चारों ओर)360 डिग्री शोधन के लिए कई विशिष्ट-सार करता है। इस अध्ययन में वायुप्र (पौधों का परीक्षण किया गया। उनमें पीस लिली, स्नेक प्लांट और स्पाइडर प्लांट आदि मुख्य रूप से शामिल हैं। उत्साहित करने वाला बिंदु यही है कि इन सभी ने आंतरिक वायु को शुद्ध करने में अच्छे परिणाम दिए हैं।

माना जाता है कि किसी भवन के भीतर यानी आंतरिक परिवेश की वायु अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित होती है। उचित वेंटिलेशन यानी हवा की सुगम आवाजाही न होना भी इसका एक प्रमुख कारण माना जाता है। इस मामले में विश्व स्वास्थ्य संगठन वायु (इनडोर) के अंदर की की एक रिपोर्ट यह कहती है कि घर (डब्ल्यूएचओ), बाहरी वायु की तुलना में पांच गुना अधिक प्रदूषित हो सकती है।

कोरोना महामारी के दौर में यह पहलू और चिंताजनक बन जाता है, क्योंकि लोगों से अधिक से अधिक अपेक्षा यही की जा रही है कि अपने घरों में ही रहें और जरूरत पड़ने पर ही बाहर निकलें। यही कारण है कि 'द जर्नल ऑफ द अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन' (जेएएमएमें हाल में प्रकाशित एक शोध ने सरकारों से प्रति घंटे वायु परिवर्तन यानी वेंटिलेशन को बेहतर करने (के लिए भवनों के डिजाइन को बदलने का परामर्श दिया है। संस्थान के अनुसार, 'यूब्रीद लाइफ' इस चिंता का समाधान हो सकता है।

यह परीक्षित उत्पाद 'यूब्रीथ लाइफ' घर के अंदर स्वच्छ हवा बनाए रखनेमें प्रभावी सिद्ध हो सकता है। इस शोध से यह भी पता चलता है कि कोविड-19 टीकाकरण कार्यस्थलों, स्कूलों और यहां तक कि पूरी तरह से वातानुकूलित घर भी सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकते जब तक कि वायु निस्पंदन, वायु शोधन और इनडोर वेंटिलेशन भवन के डिजाइन का हिस्सा नहीं बन जाते।

परीक्षण के परिणाम,परीक्षण और रूपांकन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड और आईआईटी, रोपड़ की प्रयोगशाला द्वारा आयोजित किया गया है कि एक्यूआई (वत्ता सूचकांकवायु गुण)150 वर्ग फुट के कमरे के आकार के लिए है। आईआईटी, रोपड़ के निदेशक प्रोफेसर राजीव आहूजा का कहना है कि 'यूब्रीद लाइफ' का उपयोग करने के बाद 15 मिनट में एक्यूआई का स्तर 311 से 39 तक गिर जाता है। प्रोफेसर आहूजा ने विश्वास जताया है कि यह दुनिया का पहला जीवित संयंत्र आधारित वायु शोधक गेम चेंजर साबित हो सकता है।

'यूब्रीद लाइफ' के सीईओ संजय मौर्य का कहना है कि इस उत्पाद के कुछ बायोफिलिक लाभ भी हैं, जैसे कि यह संज्ञानात्मक कार्य, शारीरिक स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक कल्याण का समर्थन करता है। इस प्रकार, यह कमरे में छोटे से वन का आभास कराता है। उपभोक्ता को संयंत्र को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि 150 मिलीलीटर की क्षमता वाला ये एक अंतर्निर्मित जलाशय है जो पौधों की आवश्यकताओं के लिए एक बफर के रूप में कार्य करता है।

प्रभा साक्षी | गुरुकुल

Tuesday, 14 Sep, 5.13 pm

शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना 'वायुशोधक-'

भारत की पश्चिमोत्तर सीमा पर स्थित थार रेगिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप की भौगोलिक विशिष्टताओं का एक प्रमुख बिंदु है। अधिकतम तापमान, तापीय विभिन्नता, छिटपुट और छितराई हुई वर्षा और पराबैंगनी किरणों का व्यापक विकिरण इस रेगिस्तान की प्रमुख विशेषताएं मानी जाती हैं। ऐसे में यह डिजाइंस और उसके इर्दगिर्द नवाचारों के प्रवर्तन के लिए एक सहज एवं प्राकृतिक प्रयोगशाला बन जाता है। इससे यहां की जैविकप्रजातियों-, उनकी परस्पर निर्भरता, अनुकूलन स्तर और उनसे जुड़े समूचे परितंत्र के संरक्षण के लिए कार्ययोजना बनाने का अवसर उपलब्ध होगा।

पिछले कुछ समय से पर्यावरणीय अपकर्षण के कारण विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक पर्यावासों को क्षति पहुंची और रेगिस्तान भी उससे अछूते नहीं रहे हैं। प्राकृतिक रेगिस्तानों के पतन के बहुत गहरे दुष्प्रभाव देखे जा रहे हैं, क्योंकि यहां अपनी किस्म की अनूठी और महत्वपूर्ण वनस्पतियां विद्यमान होती हैं। साथ ही ये विभिन्न प्रकार के खनिजों और दवाओं के भंडार भी होते हैं। इतना ही नहीं पृथ्वी पर जीवन अनुकूल परिस्थितियों को कायम रखने के लिए भी ये अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। इसे इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि प्रायः रेगिस्तान को जमीन का बेकार टुकड़ा समझा जाता है, लेकिन जलवायु को स्थिर रखने में ये निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। ऐसे में इनकी प्रकृति में आया मामूली परिवर्तन भी जलवायु को व्यापक स्तर पर प्रभावित कर सकता है, जिससे समूचा पारितंत्र प्रभावित हो सकता है। इसका कुप्रभाव मानव जीवन से लेकर उसकी आजीविका पर भी पड़ सकता है। इन सभी आशंकाओं के संदर्भ में 'डिजाइंस' जैसी पहल उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

(इंडिया साइंस वायर)

NEWSMOBILE समाचार
आप की भाषा आप की आवाज

शोधकर्ताओं ने विकसित किया पौधों से बना ‘वायुशोधक-’

By न्यूज़ मोबाइल ब्यूरो Last updated **Sep 6, 2021**

मानव स्वास्थ्य के लिए बढ़ते प्रदूषण की चुनौती निरंतर कठिन होती जा रही है। है। प्रदूषणजन्य बीमारियों से बचने -के लिए नित नए शोध किये जा रहे हैं, जिनमें पानी, खाद्य और हवा को शुद्ध करने के जतन शामिल हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रोपड़ और कानपुर तथा दिल्ली विश्वविद्यालय के प्रबंधन अध्ययन संकाय ने एक (आईआईटी) पौधे पर आधारित वायु शोधक यानी एयर प्यूरीफायर-जीवित‘यूब्रीद लाइफ’ विकसित किया है। यह प्यूरीफायर अस्पताल, स्कूल, कार्यालय और घर जैसे कम हवदार स्थानों में वायुशोधन की प्र-क्रिया को विस्तारित करने में सक्षम है।

आईआईटी रोपड़ की स्टार्टअप कंपनी‘अर्बन एयर लेबोरेटरी’ ने इस एयर प्यूरीफायर को विकसित किया है। यह विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा नामित एग्रीकल्चर एंड वाटर टेक्नोलॉजी डेवलपमेंट हब है (एडब्लूएडीएच- आईहब)। स्टार्टअप के अनुसार यह दुनिया का पहला, अत्याधुनिक ‘स्मार्ट बायोफ़िल्टर-’ है जो सांसलेने वाली वायु को शुद्ध और ताज़ा कर सकता है। यह तकनीक,पत्तेदार प्राकृतिकपौधे के माध्यम सेहवा को शुद्ध करने का काम करती है। कमरे की हवा पत्तियों के साथ संपर्क करती है और मिट्टीक्षेत्र में जाती है जहां जड़- अधिकतम प्रदूषक शुद्ध होते हैं। इस प्यूरीफायर में‘अर्बन मुन्नार इफेक्ट’ और आईआईटी रोपड़ की एक अन्य नई तकनीक ‘ब्रीदिंग रूट्स’ का उपयोग किया गया है। इन तकनीकों से फाइटोरेमेडिएशन प्रक्रिया में तेजी लाई जा सकती है। फाइटोरेमेडिएशन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा पौधे हवा से प्रदूषकों को प्रभावी ढंग से हटाते हैं। इस एयर प्यूरीफायर के परीक्षण में पीस लिली, स्नेक प्लांट, स्पाइडर प्लांट आदि शामिल किये गए हैं।

‘यूब्रीद लाइफ’ एक विशेष रूप से डिजाइन लकड़ी के बक्से में संयोजित किया गया फिल्टर है। विशिष्ट पौधों और यूवी कीटाणुशोधन और प्रीशोधक चारकोल फिल्टर और उच्च दक्षता वाले वायु कणों यानी -फिल्टर से लैस यह वायु- एचईपीए के माध्यम से गैसीय और जैविक प्रदूषकों को बाहर कर आंतरिक वायु गुणवत्ता में गुणात्मक रूप से सुधार करता है। इससे आंतरिक कक्ष में आक्सीजन का स्तर भी बढ़ता है। इस ढांचे के केंद्र में स्थित पंखा दबाव बनाकर शुद्ध हवा का चारों ओर)360 डिग्रीशोधन के लिए कई विशिष्ट पौधों का -प्रसार करता है। इस अध्ययन में वायु (परीक्षण किया गया। उनमें पीस लिली, स्नेक प्लांट और स्पाइडर प्लांट आदि मुख्य रूप से शामिल हैं। उत्साहित करने वाला बिंदु यही है कि इन सभी ने आंतरिक वायु को शुद्ध करने में अच्छे परिणाम दिए हैं।

माना जाता है कि किसी भवन के भीतर यानी आंतरिक परिवेश की वायु अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित होती है। उचित वेंटिलेशन यानी हवा की सुगम आवाजाही न होना भी इसका एक प्रमुख कारण माना जाता है। इस मामले में विश्व स्वास्थ्य संगठन वायु (इनडोर) की एक रिपोर्ट यह कहती है कि घर के अंदर की (डब्ल्यूएचओ), बाहरी वायु की तुलना में पांच गुना अधिक प्रदूषित हो सकती है।

कोरोना महामारी के दौर में यह पहलू और चिंताजनक बन जाता है, क्योंकि लोगों से अधिक से अधिक अपेक्षा यही की जा रही है कि अपने घरों में ही रहें और जरूरत पड़ने पर ही बाहर निकलें। यही कारण है कि ‘द जर्नल ऑफ द अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन’ (जेएएमएएमें हाल में प्रकाशित एक शोध ने सरकारों से प्रति घंटे वायु परिवर्तन (यानी वें‌टिलेशन को बेहतर करने के लिए भवनों के डिजाइन को बदलने का परामर्श दिया है। संस्थान के अनुसार, ‘यूब्रीद लाइफ’ इस चिंता का समाधान हो सकता है। यह परीक्षित उत्पाद ‘यूब्रीथ लाइफ’ घर के अंदर स्वच्छ हवा बनाए रखनेमें प्रभावी सिद्ध हो सकता है।

इस शोध से यह भी पता चलता है कि कोविड-19 टीकाकरण कार्यस्थलों, स्कूलों और यहां तक कि पूरी तरह से वातानुकूलित घर भी सुरक्षा की गारंटी नहीं दे सकते जब तक कि वायु निस्पंदन, वायु शोधन और इनडोर वेंटिलेशन भवन के डिजाइन का हिस्सा नहीं बन जाते। परीक्षण के परिणाम,परीक्षण और रूपांकन प्रयोगशालाओं के लिए राष्ट्रीय प्रत्यायन बोर्ड और आईआईटी, रोपड़ की प्रयोगशाला द्वारा आयोजित किया गया है कि एक्यूआई वायु) (गुणवत्ता सूचकांक150 वर्ग फुट के कमरे के आकार के लिए है।

आईआईटी, रोपड़ के निदेशक प्रोफेसर राजीव आहूजा का कहना है कि ‘यूब्रीद लाइफ’ का उपयोग करने के बाद 15 मिनट में एक्यूआई का स्तर 311 से 39 तक गिर जाता है। प्रोफेसर आहूजा ने विश्वास जताया है कि यह दुनिया का पहला जीवित संयंत्र आधारित वायु शोधक गेम चेंजर साबित हो सकता है।

‘यूब्रीद लाइफ’ के सीईओ संजय मौर्य का कहना है कि इस उत्पाद के कुछ बायोफिलिक लाभ भी हैं, जैसे कि यह संज्ञानात्मक कार्य, शारीरिक स्वास्थ्य और मनोवैज्ञानिक कल्याण का समर्थन करता है। इस प्रकार, यह कमरे में छोटे से वन का आभास कराता है। उपभोक्ता को संयंत्र को नियमित रूप से पानी देने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि 150 मिलीलीटर की क्षमता वाला ये एक अंतर्निर्मित जलाशय है जो पौधों की आवश्यकताओं के लिए एक बफर के रूप में कार्य करता है।

(इंडिया साइंस वायर(

जनसत्ता

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है।

Written By **जनसत्ता ऑनलाइन**

नई दिल्ली | Updated: September 8, 2021 1:13:36 am

वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव। फाइल फोटो।

दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकते हैं। सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह के उपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में, दिल्ली में वायुगुणवत्ता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से स्मॉग टॉवर स्थापित - किया जा रहा है।

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर / प्यूरीफायर के रूप में डिज़ाइन किया गया है। आनंद विहार, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशील स्मॉग

टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में (पार्टिकुलेट मैटर) स्थानीय तौर पर कमी लाना है। टावर में उपयोग की जाने वाली निस्पंदन प्रणाली को मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमें बड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी लिमिटेड के साथ मिलकर किया गया है। (इंडिया)

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है। इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम एके तहत वायु प्रदूषण के नियमन के लि (एनसीएपी)"PRANA" (पोर्टल फॉर रेगुलेशन ऑफ एयरनामक पोर्टल भी लॉन्च किया गया है। (पॉल्यूशन इन नॉन अटेनमेंट सिटीज-पोर्टल www.prana.cpcb.gov.in शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

ऐसे शहरों को 'नॉनअटेनम-ेंट' श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता हैया नाइट्रोजन डाइऑक्साइड के लिए राष्ट्रीय परिवेशी वायु ( ) गुणवत्ता मानकोंNAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं। शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों मि)ट्टी एवं सड़कों पर उड़ने वाली धूल, वाहन, घरेलू ईंधन, म्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योगत को लक्षि (करने वाले132 नॉनके लिए वायु गुणवत्ता में (एमपीसी) मिलियन प्लस शहरों/(एनएसी) अटेनमेंट शहरों-विशिष्ट कार्य योजनाएं तैयार-सुधार हेतु शहर की गई हैं, और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनलस्काईज को चिह्नित करने के डे ऑफ क्लीन एयर फॉर ब्लू-लिए एक कार्यक्रम में बोल रहे थे, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुँच गई।"

(इंडिया साइंस वायर(

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

पुनः संशोधित गुरुवार, 9 सितम्बर 2021 (11:58 IST)

नई दिल्ली, दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों शुमार किया जाता है, जहां अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुंचा सकते हैं।

सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह के उपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में, दिल्ली में वायुसुनिश्चित करने के उद्देश्य से स्मॉग टॉवर स्थापित किया जा गुणवत्ता- रहा है।

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर प्यूरीफायर / के रूप में डिज़ाइन किया गया है।

आनंद विहार, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशील स्मॉग टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में स्थानीय तौर पर (कुलेट मैटरपार्टि) कमी लाना है। टावर में उपयोग की जाने वाली निस्पंदन प्रणाली को मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा 90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है।

1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमें बड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी लिमिटेड के साथ मिलकर किया गय (इंडिया)ा है।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है।

इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम " के तहत वायु प्रदूषण के नियमन के लिए (एनसीएपी)PRANA" (पोर्टल फॉर रेगुलेशन ऑफ एयर नामक पोर्टल भी लॉन्च किया गया है। पोर्टल (पॉल्यूशन इन नॉन अटेनमेंट सिटीज- www.prana.cpcb.gov.in

शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

ऐसे शहरों को ‘नॉनअटेनमेंट-’ श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता है या नाइट्रोजन डाइऑक्साइड के लिए राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता मानकों ( )NAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं।

शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों मिट्टी एवं सड़कों पर उड़ने वाली धूल), वाहन, घरेलू ईंधन, म्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योग को लक्षित करने वाले (132 नॉन मिलियन प्लस शहरों/(एनएसी) अटेनमेंट शहरों-विशिष्ट कार्य योजनाएं तैयार की गई हैं-सुधार हेतु शहर के लिए वायु गुणवत्ता में (एमपीसी), और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनलडे ऑफ क्लीन एयर फॉर ब्लू स्काईज को चिह्नित करने के लिए एक - कार्यक्रम में बोल रहे थे, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुंच गई।" ***(इंडिया साइंस वायर(***

HEAD TOPICS इंडिया

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर in a new tab)

07-09-2021 22:41:00

स्रोत

Jansatta

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर in a new tab)

दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है।

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर प्यूरीफायर के रूप में डिज़ाइन किया गया है। आनंद विहार/, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशील स्मॉग टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में स्थानीय तौर पर कमी लाना है। टावर में उपयोग (लेट मैटरपार्टिकु) की जाने वाली निस्पंदन प्रणाली को मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमें बड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी लिमिटेड के साथ मिलकर किया गया है। (इंडिया)

और पढो :Jansatta »

Tricity365
CHANDIGARH|MOHALI|PANCHKULA

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

2 weeks ago

kiran

सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह के उपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में, दिल्ली में वायुस्मॉग गुणवत्ता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से- टॉवर स्थापित किया जा रहा है।

Source link

भारत हेराल्ड

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

2 weeks ago

नई दिल्ली: दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकते हैं। सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह केउपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में,दिल्ली में वायु टॉवर स्मॉग से उद्देश्य के करने सुनिश्चित गुणवत्ता-है। रहा जा किया स्थापित

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़े एयर के पैमाने मध्यम/ प्यूरीफायर के रूप में डिज़ाइन किया गया है। आनंद विहार, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशीलस्मॉग टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालयद्वाराजारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में (मैटर पार्टिकुलेट) विश्वविद्यालय मिनेसोटा को प्रणाली निस्पंदन वाली जाने की उपयोग में टावर है। लाना कमी पर तौर स्थानीय द्वारा90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमेंबड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी है। गया किया मिलकर साथ के लिमिटेड (इंडिया)

वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है।इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम लिए के नियमन के प्रदूषण वायु तहत के (एनसीएपी)"PRANA" (पोर्टल फॉर रेगुलेशन ऑफ एयर है। गया किया लॉन्च भी पोर्टल नामक (सिटीज अटेनमेंट नॉन इन पॉल्यूशन-
पोर्टल www.prana.cpcb.gov.in शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

ऐसे शहरों को 'नॉनअटेनमेंट-'श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता है वायु परिवेशी राष्ट्रीय लिए के डाइऑक्साइड नाइट्रोजन या ( ) मानकों गुणवत्ताNAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं।शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों उड़ने पर सड़कों एवं मिट्टी) धूल वाली, वाहन, घरेलू ईंधन, म्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योग लक्षित को (

वाले करने132 नॉन में गुणवत्ता वायु लिए के (एमपीसी) शहरों प्लस मिलियन/(एनएसी) शहरों अटेनमेंट- हैं गई की तैयार योजनाएं कार्य विशिष्ट-शहर हेतु सुधार, और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनल के करने चिह्नित को स्काईज ब्लू फॉर एयर क्लीन ऑफ डे- थे रहे बोल में कार्यक्रम एक लिए, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुँच गई।"(इंडिया साइंस वायर(

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

September 07, 2021

दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकते हैं। सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह के उपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में, दिल्ली में वायुगुणवत्ता सुनिश्चित करने के - उद्देश्य से स्मॉग टॉवर स्थापित किया जा रहा है।

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर प्यूरीफायर के रूप में डिज़ाइन किया गया है। आनंद विहार/, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशील स्मॉग टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में स्थानीय तौर पर कमी लाना है। टावर में (पार्टिकुलेट मैटर) उपयोग की जाने वाली निस्पंदन प्रणाली को मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमें बड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी लिमिटेड के साथ मिलकर किया गया है। (इंडिया)

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है। इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम के तहत वायु प्रदूषण के नियमन के लिए (एनसीएपी)"PRANA" (पोर्टल फॉर रेगुलेशन ऑफ एयरनामक पोर्टल भी लॉन्च किया (पॉल्यूशन इन नॉन अटेनमेंट सिटीज-गया है। पोर्टल www.prana.cpcb.gov.in शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

ऐसे शहरों को 'नॉनअटेनमेंट-' श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता हैया नाइट्रोजन ( ) डाइऑक्साइड के लिए राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता मानकोंNAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं। शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों एवं सड़कों मिट्टी)पर उड़ने वाली धूल, वाहन, घरेलू ईंधन, म्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योगको लक्षित (करने वाले132 नॉनके लिए (एमपीसी) मिलियन प्लस शहरों/(एनएसी) अटेनमेंट शहरों-गई हैं विशिष्ट कार्य योजनाएं तैयार की-वायु गुणवत्ता में सुधार हेतु शहर, और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनलडे ऑफ क्लीन एयर फॉर ब्लू स्काईज को - चिह्नित करने के लिए एक कार्यक्रम में बोल रहे थे, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुँच गई।"

(इंडिया साइंस वायर(

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

By **Rupesh Dharmik** - September 8, 2021

नई दिल्ली: दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकते हैं। सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह केउपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में,दिल्ली में वायुगुणवत्ता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से स्मॉग टॉवर - स्थापित किया जा रहा है।

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर / प्यूरीफायर के रूप में डिज़ाइन किया गया है। आनंद विहार, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशीलस्मॉग

टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालयद्वाराजारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में (पार्टिकुलेट मैटर) को स्थानीय तौर पर कमी लाना है। टावर में उपयोग की जाने वाली निस्पंदन प्रणाली मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा 90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमेंबड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी मिल लिमिटेड के साथ (इंडिया)कर किया गया है।

वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है।इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम के तहत वायु प्रदूषण के नियमन के लिए (एनसीएपी)"PRANA" (पोर्टल फॉर रेगुलेशन

ऑफ एयरनामक पो (सिटीज पॉल्यूशन इन नॉन अटेनमेंट-र्टल भी लॉन्च किया गया है।
पोर्टल www.prana.cpcb.gov.in शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

ऐसे शहरों को 'नॉनअटेनमेंट-'श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता हैया नाइट्रोजन डाइऑक्साइड के लिए राष्ट्रीय परिवेशी वायु ( ) गुणवत्ता मानकोंNAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं।शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों मिट्टी एवं सड़कों पर उड़ने) वाली धूल, वाहन, घरेलू ईंधन, म्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योगको लक्षित (करने वाले132 नॉनयु गुणवत्ता में के लिए वा (एमपीसी) मिलियन प्लस शहरों/(एनएसी) अटेनमेंट शहरों-विशिष्ट कार्य योजनाएं तैयार की गई हैं-सुधार हेतु शहर, और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनलडे ऑफ क्लीन एयर फॉर ब्लू स्काईज को चिह्नित करने के -लिए एक कार्यक्रम में बोल रहे थे, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुँच गई।"(इंडिया साइंस वायर(

दी इंडियन बुलेटिन

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

2 weeks ago

नई दिल्ली: दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकते हैं। सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह केउपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में,दिल्ली में वायु टॉवर स्मॉग से उद्देश्य के करने सुनिश्चित गुणवत्ता- है। रहा जा किया स्थापित

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़े एयर के पैमाने मध्यम/ विहार आनंद है। गया किया डिज़ाइन में रूप के प्यूरीफायर, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशीलस्मॉग टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने

आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालयद्वाराजारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में (मैटर पार्टिकुलेट) वाल जाने की उपयोग में टावर है। लाना कमी पर तौर स्थानीय ी निस्पंदन प्रणाली को मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा 90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमेंबड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी इंडिय) ाहै। गया किया करमिल साथ के लिमिटेड (

वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है।इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम लिए के नियमन के प्रदूषण वायु तहत के (एनसीएपी)"PRANA" (पोर्टल फॉर रेगुलेशन ऑफ एयरअटे नॉन इन पॉल्यूशन-नमेंट सिटीज है। गया किया लॉन्च भी पोर्टल नामक (

पोर्टल www.prana.cpcb.gov.in शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

ऐसे शहरों को 'नॉनअटेनमेंट-'श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता है वायु परिवेशी राष्ट्रीय लिए के डाइऑक्साइड नाइट्रोजन या ( ) मानकों गुणवत्ताNAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं।शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों उड़ने पर सड़कों एवं मिट्टी) धूल वाली, वाहन, घरेलू ईंधन, म्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योग लक्षित को (वाले करने132 नॉनगुणवत युवा लिए के (एमपीसी) शहरों प्लस मिलियन/(एनएसी) शहरों अटेनमेंट-्ता में सुधार हेतु शहरहैं गई की तैयार योजनाएं कार्य विशिष्ट-, और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनल के करने चिह्नित को स्काईज ब्लू फॉर एयर क्लीन ऑफ डे-थे रहे बोल में कार्यक्रम एक लिए, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुँच गई।"(इंडिया साइंस वायर(

HUNT DAILY NEWS
HINDI & ENGLISH NEWS UPDATE IN ONE PLACE

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

By **huntdailynews** | September 8, 2021

दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकते हैं। सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह के उपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में, दिल्ली में वायुटॉवर स्था गुणवत्ता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से स्मॉग-पित किया जा रहा है।

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर / प्यूरीफायर के रूप में डिज़ाइन किया गया है। आनंद विहार, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशील स्मॉग टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने आशा

व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में स्थानीय (पार्टिकुलेट मैटर) है। टावर तौर पर कमी लाना में उपयोग की जाने वाली निस्पंदन प्रणाली को मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा 90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमें बड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी (इंडिया) लिमिटेड के साथ मिलकर किया गया है।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है। इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम के तहत वायु प्रदूषण के नियमन के लिए (एनसीएपी)"PRANA" (पोर्टल फॉर रेगुलेशन ऑफ एयरनामक पोर्टल भी लॉन्च किया गया है। (पॉल्यूशन इन नॉन अटेनमेंट सिटीज-पोर्टल www.prana.cpcb.gov.in शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

ऐसे शहरों को 'नॉनअटेनमेंट-' श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता हैया नाइट्रोजन डाइऑक्साइड के लिए राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता ( ) मानकोंNAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं। शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों मिट्टी एवं सड़कों पर उड़ने वाली धूल), वाहन, घरेलू ईंधन, स्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योग को लक्षित करने वाले (132 नॉनविशिष्ट -के लिए वायु गुणवत्ता में सुधार हेतु शहर (एमपीसी) मिलियन प्लस शहरों/(एनएसी) अटेनमेंट शहरों-कार्य योजनाएं तैयार की गई हैं, और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनलडे ऑफ क्लीन एयर फॉर ब्लू स्काईज को चिह्नित करने के लिए - एक कार्यक्रम में बोल रहे थे, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुँच गई।"

(इंडिया साइंस वायर(

Source link

<u>राष्ट्रीय रक्षक</u>

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

लेखक: Snigdha Verma - सितंबर 07, 2021

वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव

नई दिल्ली दिल्ली को दुनिया :(इंडिया साइंस वायर) के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकते हैं। सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह के उपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में, दिल्ली में वायुत करने के उद्देश्य से स्मॉग गुणवत्ता सुनिश्चि-टॉवर स्थापित किया ज ा रहा है।

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर / प्यूरीफायर के रूप में डिज़ाइन किया गया है। आनंद विहार, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशील स्मॉग टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में स्थानीय (रपार्टिकुलेट मैट) तौर पर कमी लाना है। टावर में उपयोग की जाने वाली निस्पंदन प्रणाली को मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा 90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमें बड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी (इंडिया) लिमिटेड के साथ मिलकर किया गया है।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है। इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम " के तहत वायु प्रदूषण के नियमन के लिए (एनसीएपी)PRANA" (पोर्टल फॉर रेगुलेशन ऑफ एयरनामक पोर्टल भी लॉन (ल्यूशन इन नॉन अटेनमेंट सिटीजपॉ-्च किया गया है। पोर्टल www.prana.cpcb.gov.in शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

ऐसे शहरों को ‘नॉनअटेनमेंट-’ श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता हैया नाइट्रोजन डाइऑक्साइड के लिए राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता ( ) मानकोंNAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं। शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों मिट्टी एवं सड़कों पर उड़ने व)ाली धूल, वाहन, घरेलू ईंधन, म्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योग को लक्षित करने वाले (132 नॉनविशिष्ट -के लिए वायु गुणवत्ता में सुधार हेतु शहर (एमपीसी) मिलियन प्लस शहरों/(एनएसी) अटेनमेंट शहरों-कार्य योजनाएं तैयार की गई हैं, और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनलडे ऑफ क्लीन एयर फॉर ब्लू स्काईज को चिह्नित करने के लिए - एक कार्यक्रम में बोल रहे थे, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुँच गई।(इंडिया साइंस वायर) "

हिंदनामा

वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर

September 8, 2021 / Chief Editor

दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है।

दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में शुमार किया जाता है, जहाँ अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकते हैं। सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह के उपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में, दिल्ली में वायुसे गुणवत्ता सुनिश्चित करने के उद्देश्य- स्मॉग टॉवर स्थापित किया जा रहा है।

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर / प्यूरीफायर के रूप में डिज़ाइन किया गया है। आनंद विहार, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशील स्मॉग टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री श्री भूपेंद्र यादव ने आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में स्थानीय (पार्टिकुलेट मैटर) र कतौर पमी लाना है। टावर में उपयोग की जाने वाली निस्पंदन प्रणाली को मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा 90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमें बड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी (इंडिया) लिमिटेड के साथ मिलकर किया गया है।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है। इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम के तहत वायु प्रदूषण के नियमन के लिए (एनसीएपी)“PRANA” (पोर्टल फॉर रेगुलेशन ऑफ एयरनामक पोर्टल भी लॉन्च किया गया है। (पॉल्यूशन इन नॉन अटेनमेंट सिटीज-
पोर्टल www.prana.cpcb.gov.in शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

ऐसे शहरों को ‘नॉनअटेनमेंट-’ श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता हैया नाइट्रोजन डाइऑक्साइड के लिए राष्ट्रीय परिवेशी वायु गुणवत्ता ( ) मानकोंNAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं। शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों मिट्टी एवं सड़कों पर उड़ने वाली धूल), वाहन, घरेलू ईंधन, म्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योग को लक्षित करने वाले (132 नॉनविशिष्ट -के लिए वायु गुणवत्ता में सुधार हेतु शहर (एमपीसी) मिलियन प्लस शहरों/(एनएसी) अटेनमेंट शहरों-कार्य योजनाएं तैयार की गई हैं, और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनलडे ऑफ क्लीन एयर फॉर ब्लू स्काईज को चिह्नित करने के लिए - एक कार्यक्रम में बोल रहे थे, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, “वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुँच गई।”

(इंडिया साइंस वायर(

दिल्ली में प्रदूषण का सामना करने के लिए तैयार स्मॉग टावर स्मॉग टॉवर

एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर प्यूरीफायर के / रूप में डिज़ाइन किया गया है।

India Science Wire   7 Sep 2021

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है।

दिल्ली को दुनिया के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों शुमार किया जाता है, जहां अत्यधिक प्रदूषण के कारण हवा में पाए जाने वाले पीएम 2.5 और पीएम 10 जैसे सूक्ष्म कणों से वायु गुणवत्ता प्रभावित होती है। हवा में तैरते ये सूक्ष्म कण श्वसन तंत्र के माध्यम से शरीर में प्रवेश कर स्वास्थ्य को गंभीर नुकसान पहुँचा सकते हैं। सर्दियों के दौरान स्मॉग की धुंधली चादर इस ख़तरे को कई गुना बढ़ा देती है। इस चुनौती से निपटने के लिए कई तरह के

उपाय किए जा रहे हैं। इसी क्रम में, दिल्ली में वायुगुणवत्ता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से स्म-ॉग टॉवर स्थापित किया जा रहा है।

स्मॉग टॉवर एक ऐसी विशिष्ट संरचना है, जिसे वायु प्रदूषण को कम करने के लिए बड़ेमध्यम पैमाने के एयर / प्यूरीफायरके रूप में डिज़ाइन किया गया है। आनंद विहार, दिल्ली में भारत के इस पहले क्रियाशील स्मॉग टॉवर का वर्चुअल रूप से उद्घाटन करते हुए केंद्रीय पर्यावरण, वन एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव ने आशा व्यक्त की है कि पायलट स्मॉग टॉवर परियोजना प्रभावी परिणाम देगी और वायु गुणवत्ता में सुधार के प्रयासों का पूरक बनेगी। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

आनंद विहार में 20 मीटर से अधिक की ऊंचाई वाला यह एक डॉउनड्राफ्ट स्मॉग टॉवर है। इसमें प्रदूषित हवा टॉवर के ऊपर से आती है और साफ हवा नीचे से निकलती है। इसका उद्देश्य वायु प्रदूषण में (पार्टिकुलेट मैटर) स्थानीय तौर पर कमी लाना है। टावर में उपयोग की जाने वाली निस्पंदन प्रणाली को मिनेसोटा विश्वविद्यालय द्वारा 90% की अपेक्षित दक्षता के साथ डिजाइन किया गया है। 1000 घनमीटर प्रति सेकंड की दर से एयरफ्लो दर प्रदान करने के लिए इसमें बड़े पंखे लगाए गए हैं। टावर का निर्माण टाटा प्रोजेक्ट्स लिमिटेड द्वारा एनबीसीसी लि (इंडिया)मिटेड के साथ मिलकर किया गया है।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय और केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड (सीपीसीबी)2019 से देश में राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम)NCAP) को लागू कर रहे हैं, जिसमें वर्ष 2024 तक देश भर में पार्टिकुलेट मैटर पीएम)10 और पीएम 2.5) सांद्रता में 20 से 30% की कमी हासिल करने का लक्ष्य है। इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वच्छ वायु कार्यक्रम " के तहत वायु प्रदूषण के नियमन के लिए (एनसीएपी)PRANA" (पोर्टल फॉर रेगुलेशन ऑफ एयर नामक पोर्टल भी लॉन्च किया गया है। पोर्टल (पॉल्यूशन इन नॉन अटेनमेंट सिटीज-www.prana.cpcb.gov.in शहरों की वायु संबंधी कार्ययोजना के कार्यान्वयन की भौतिक और वित्तीय स्थिति की ट्रैकिंग करने में मदद करेगा और जनता को वायु गुणवत्ता से जुड़ी जानकारी प्रदान करेगा।

दिल्ली के मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल ने 23 अगस्त को कनॉट प्लेस में पहले स्मॉग टॉवर का उद्घाटन किया था जो 24 मीटर लंबा स्मॉग टॉवर है। एक किलोमीटर प्रति सेकेंड के दायरे में ये टावर 1,000 क्यूबिक मीटर हवा को साफ करने में सक्षम है। टावर प्रदूषित हवा को सोख लेता है और फिल्टर्ड हवा छोड़ता है, जो 40 पंखे और 5,000 एयर फिल्टर से लैस है।

ऐसे शहरों को 'नॉनअटेनमेंट-' श्रेणी में रखा जाता है, जो लगातार 5 साल तक पीएम 10 (पार्टिकुलेट मैटर, जो 10 माइक्रोन या उससे कम व्यास का होता हैया नाइट्रोजन डाइऑक्साइड के लिए राष्ट्रीय परिवेशी वायु ( ) गुणवत्ता मानकोंNAAQS) को पूरा नहीं कर पाते हैं। शहरों के वायु प्रदूषण स्रोतों मिट्टी एवं सड़कों पर उड़ने) वाली धूल, वाहन, घरेलू ईंधन, म्युनिसिपल कचरे का जलाया जाना, निर्माण सामग्री और उद्योगको लक्षित (करने वाले132 नॉनवायु गुणवत्ता में के लिए (एमपीसी) मिलियन प्लस शहरों/(एनएसी) अटेनमेंट शहरों- -सुधार हेतु शहरविशिष्ट कार्य योजनाएं तैयार की गई हैं, और इन पर अमल किया जा रहा है।

केंद्रीय मंत्री, जो नई दिल्ली में दूसरे इंटरनेशनलडे ऑफ क्लीन एयर फॉर ब्लू स्काईज को चिह्नित करने के - लिए एक कार्यक्रम में बोल रहे थे, ने कहा कि केंद्र सरकार ने पूरे देश में वायु गुणवत्ता में सुधार के लिए कई पहल की हैं, जिसमें प्रधानमंत्री स्वयं 100 से अधिक शहरों में वायु गुणवत्ता में समग्र सुधार का लक्ष्य निर्धारित कर रहे हैं। पर्यावरण मंत्री ने कहा, "वर्ष 2018 की तुलना में 2019 में 86 शहरों में बेहतर वायु गुणवत्ता दर्ज की गई है, जो 2020 में बढ़कर 104 शहरों तक पहुँच गई।"

जनसत्ता

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेडएसिड बैटरियों का - अध्ययन :व्यवस्थित पुनर्चक्रण

बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही है। सीसापर्यावरण प्रदूषण का एक प्रमुख कारक है। (लेड)

Written By **जनसत्ता ऑनलाइन**

Updated: September 8, 2021 2:46:26 am

(बाएं से दाएंआईआईटी कानपुर के शोधकर्ता ब्रह्मेश विनायक जोशी (, प्रोफेसर जनकराजन रामकुमार, डॉ बी . विपिन, और आईआईटी मद्रास के प्रोफेसर आर.के. अमित। फाइल फोटो।

बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही है। सीसापर्यावरण प्रदूषण का एक प्रमुख कारक है। लेड के (लेड) रीसाइकिल यानी पुनर्चक्रण की जो प्रक्रिया अपनाई जाती है, वह भी सुरक्षित नहीं है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास और आईआईटी (आईआईटी)कानपुर ने लेडजनित प्रदूषण पर अंकुश लगाने की दिशा में एक - बड़ी पहल की है।शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन किया है, जिसमें ऐसे उपयुक्त नीतिगत उपाय सुझाए गए हैं, जो देश में लेड प्रदूषण को कम करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। अध्ययन में भारत में लेड रीसाइक्लिंग की चुनौती का गहन विश्लेषण किया गया है, क्योंकि लेड से होने वाले विभिन्न प्रकार के प्रदूषण लोगों की शारीरिक एवं मानसिक सेहत पर आघात कर रहे हैं।

वर्तमान में लेड के पुनर्चक्रण की प्रक्रिया कई तरह के खतरों और चुनौतियों से भरी है। असंगठित क्षेत्र में लेड-एसिड बैटरियों का पुनर्चक्रण करने वाले कामगार यह काम कुछ इस प्रकार अंजाम देते हैं, जिसमें बैटरी से निकलने वाला तेजाब और लेड के कण मृदा और आसपास के परिवेश में घुल जाते हैं। इतना ही नहीं लेड को खुली भट्टी में गलाया जाता है, जिसके कारण विषाक्त तत्व हवा के माध्यम से वायुमंडल में पहुंच जाते हैं। इस प्रकार लेड के पुनर्चक्रण की यह प्रविधि न केवल पर्यावरण, अपितु इसमें सक्रिय कामगारों के स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत हानिकारक है। दरअसल यह प्रक्रिया बहुत सस्ती होने के कारण व्यापक स्तर पर प्रचलित है और इस काम से जुड़े लोगों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनी हुई है। साथ ही यह विकासशील देशों में बहुत सामान्य रूप से संचालित होती है, क्योंकि यह असंगठित क्षेत्र के लिए बहुत किफायती पड़ती है।

इस अध्ययन में कई उल्लेखनीय पहलू सामने आए हैं, जिसके आधार पर शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि नियमन के दायरे में आने वाले पुनर्चक्रण क्षेत्र के लिए करों में कुछ कटौती की जाए और लेडएसिड बैटरी - पुनर्चक्रण के कारण होने वाले प्रदूषण को घटाने के लिए संगठित पुनर्चक्रण एवं विनिर्माण क्षेत्रों को कुछ सब्सिडी है कि संगठित पुनर् दी जाए। शोध का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भीविनिर्माण क्षेत्र के लिए (रीमैन्यूफैक्चरिंग) पर्याप्त सब्सिडी की व्यवस्था से संगठित एवं असंगठित पुनर्चक्रण क्षेत्रों की गतिविधियां सीमित होंगी, जिससे लेड प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि लेड का प्रयोग पेंट, सौंदर्यसाधनप्र-, ज्वेलरी, बालों के लिए रंग और गोला बारूद जैसे अन्य उद्योगों में भी बड़े पैमाने पर होता है। फिर भी कुल उत्पादित लेड का लगभग 85 प्रतिशत उपभोग अकेला बैटरी उद्योग करता है।

आईआईटी मद्रास में प्रबंधन शिक्षा विभाग के प्रोफेसर आरके अमित ने कहा, 'चूंकि लेड के लिए उपलब्ध प्राथमिक स्रोत मांग की पूर्ति के लिए अपर्याप्त हैं, ऐसे में इस्तेमाल की हुई बैटरियों पर निर्भरता आवश्यक हो जाती है। हालांकि उनकी रीसाइक्लिंग के लिए अपनाए जाने वाले अवैज्ञानिक तौरतरीकों के कारण यह प्रक्रिया - बन गई है। ऐसे में स्वास्थ्य के लिए तमाम खतरों का कारण भीहमने इस उपक्रम को असंगठित से संगठित बनाने की दिशा में बढ़ने संबंधी विभिन्न पहलुओं का बहुत व्यापक अध्ययन किया है।'

शोधकर्ताओं की टीम में आईआईटी मद्रास के डिपार्टमेंट ऑफ़ मैनेजमेंट स्टडीज के प्रोफेसर डॉ आर के अमित, आईआईटी कानपुर के डिपार्टमेंट ऑफ़ इंडस्ट्रियल एंड मैनेजमेंट इंजीनियरिंग के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ बी विपिन, डिपार्टमेंट ऑफ़ मैकेनिकल इंजीनियरिंग के प्रोफेसर डॉ जनकराजन रामकुमार और ब्रह्मेश विनायक जोशी शामिल हैं। शोध के निष्कर्ष प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका 'रिसोर्सेस, कंजर्वेशन एंड रिसाइकलिंग' में प्रकाशित किये गए हैं।

(इंडिया साइंस वायर(

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेडएसिड - अध्ययन :बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रण

Last Updated: गुरुवार, 9 सितम्बर 2021 (12:09 IST)

नई दिल्ली, बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही जा रही है। सीसा पर्यावरण प्रदूषण का एक (लेड) प्रमुख कारक है। लेड के रीसाइकल यानी पुनर्चक्रण की जो प्रक्रिया अपनाई जाती है, वह भी सुरक्षित नहीं है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान नित प्रदूषण पर अंकुश ज-मद्रास और आईआईटी कानपुर ने लेड (आईआईटी) लगाने की दिशा में एक बड़ी पहल कीहै।

शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन किया है, जिसमें ऐसे उपयुक्त नीतिगत उपाय सुझाए गए हैं, जो देश में लेड प्रदूषण को कम करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

अध्ययन में भारत में लेड रीसाइक्लिंग की चुनौती का गहन विश्लेषण किया गया है, क्योंकि लेड से होने वाले विभिन्न प्रकार के प्रदूषण लोगों की शारीरिक एवं मानसिक सेहत पर आघात कर रहे हैं।

वर्तमान में लेड के पुनर्चक्रण की प्रक्रिया कई तरह के खतरों और चुनौतियों से भरी है। असंगठित क्षेत्र में लेड-क्रण करने वाले कामगार यह काम कुछ इस प्रकार अंजाम देते हएसिड बैटरियों का पुनर्चैं, जिसमें बैटरी से निकलने वाला तेजाब और लेड के कण मृदा और आसपास के परिवेश में घुल जाते हैं।

इतना ही नहीं लेड को खुली भट्टी में गलाया जाता है, जिसके कारण विषाक्त तत्व हवा के माध्यम से वायुमंडल में पहुंच जाते हैं। इस प्रकार लेड के पुनर्चक्रण की यह प्रविधि न केवल पर्यावरण, अपितु इसमें सक्रिय कामगारों के स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत हानिकारक है।

दरअसल यह प्रक्रिया बहुत सस्ती होने के कारण व्यापक स्तर पर प्रचलित है और इस काम से जुड़े लोगों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनी हुई है। साथ ही यह विकासशील देशों में बहुत सामान्य रूप से संचालित होती है, क्योंकि यह असंगठित क्षेत्र के लिए बहुत किफायती पड़ती है।

इस अध्ययन में कई उल्लेखनीय पहलू सामने आए हैं, जिसके आधार पर शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि नियमन के दायरे में आने वाले पुनर्चक्रण क्षेत्र के लिए करों में कुछ कटौती की जाए और लेडएसिड बैटरी - पुनर्चक्रण के कारण होने वाले प्रदूषण को घटाने के लिए संगठित पुनर्चक्रण एवं विनिर्माण क्षेत्रों को कुछ सब्सिडी दी जाए।

शोध का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी है कि संगठित पुनर्विनिर्माण क्षेत्र के लिए पर्याप्त (रीमैन्यूफैक्चरिंग) सब्सिडी की व्यवस्था से संगठित एवं असंगठित पुनर्चक्रण क्षेत्रों की गतिविधियां सीमित होंगी, जिससे लेड प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि लेड का प्रयोग पेंट, सौंदर्यप्रसाधन-, ज्वेलरी, बालों के लिए रंग और गोला बारूद जैसे अन्य उद्योगों में भी बड़े पैमाने पर होता है। फिर भी कुल उत्पादित लेड का लगभग 85 प्रतिशत उपभोग अकेला बैटरी उद्योग करता है।

आईआईटी मद्रास में प्रबंधन शिक्षा विभाग के प्रोफेसर आरके अमित ने कहा, 'चूंकि लेड के लिए उपलब्ध प्राथमिक स्रोत मांग की पूर्ति के लिए अपर्याप्त हैं, ऐसे में इस्तेमाल की हुई बैटरियों पर निर्भरता आवश्यक हो जाती है।
हालांकि उनकी रीसाइक्लिंग के लिए अपनाए जाने वाले अवैज्ञानिक तौरतरीकों के कारण यह प्रक्रिया स्वास्थ्य - उपक्रम को असंगठित से संगठित बनाने की के लिए तमाम खतरों का कारण भी बन गई है। ऐसे में हमने इस दिशा में बढ़ने संबंधी विभिन्न पहलुओं का बहुत व्यापक अध्ययन किया है।'

शोधकर्ताओं की टीम में आईआईटी मद्रास के डिपार्टमेंट ऑफ़ मैनेजमेंट स्टडीज के प्रोफेसर डॉ आर के अमित, आईआईटी कानपुर के डिपार्टमेंट ऑफ़ इंडस्ट्रियल एंड मैनेजमेंट इंजीनियरिंग के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ बी विपिन, डिपार्टमेंट ऑफ़ मैकेनिकल इंजीनियरिंग के प्रोफेसर डॉ जनकराजन रामकुमार और ब्रह्मेश विनायक जोशी शामिल हैं। शोध के निष्कर्ष प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका 'रिसोर्सेस, कंजर्वेशन एंड रिसाइकलिंग' में प्रकाशित किये गए हैं। ***(इंडिया साइंस वायर(***

HEAD TOPICS इंडिया

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेडएसिड बैटरियों का - अध्ययन :व्यवस्थित पुनर्चक्रण

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेडअध्ययन :एसिड बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रण-

08-09-2021 00:18:00

स्रोत
Jansatta

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेडअध्ययन :एसिड बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रण-

बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही है। सीसापर्यावरण प्रदूषण का एक (लेड) प्रमुख कारक है।

वर्तमान में लेड के पुनर्चक्रण की प्रक्रिया कई तरह के खतरों और चुनौतियों से भरी है। असंगठित क्षेत्र में लेडएसिड बैटरियों का पुनर्चक्रण करने वाले कामगार यह काम कुछ इस - प्रकार अंजाम देते हैं, जिसमें बैटरी से निकलने वाला तेजाब और लेड के कण मृदा और आसपास के परिवेश में घुल जाते हैं। इतना ही नहीं लेड को खुली भट्टी में गलाया जाता है, जिसके कारण विषाक्त तत्व हवा के माध्यम से वायुमंडल में पहुंच जाते हैं। इस प्रकार लेड के पुनर्चक्रण की यह प्रविधि न केवल पर्यावरण, अपितु इसमें सक्रिय कामगारों के स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत हानिकारक है। दरअसल यह प्रक्रिया बहुत सस्ती होने के कारण व्यापक स्तर पर प्रचलित है और इस काम से जुड़े लोगों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनी हुई है। साथ ही यह विकासशील देशों में बहुत सामान्य रूप से संचालित होती है, क्योंकि यह असंगठित क्षेत्र के लिए बहुत किफायती पड़ती है।

इस अध्ययन में कई उल्लेखनीय पहलू सामने आए हैं, जिसके आधार पर शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि नियमन के दायरे में आने वाले पुनर्चक्रण क्षेत्र के लिए करों में कुछ कटौती की जाए और लेडएसिड बैटरी पुनर्चक्रण के कारण होने वाले प्रदूषण को घटाने के - एवं विनिर्माण क्षेत्रों को कुछ सब्सिडी दी जाए। शोध का एक लिए संगठित पुनर्चक्रण महत्वपूर्णनिष्कर्ष यह भी है कि संगठित पुनर्विनिर्माण क्षेत्र के लिए (रीमैन्यूफैक्चरिंग)

पर्याप्त सब्सिडी की व्यवस्था से संगठित एवं असंगठित पुनर्चक्रण क्षेत्रों की गतिविधियां सीमित होंगी, जिससे लेड प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि लेड का प्रयोग पेंट, सौंदर्यप्रसाधन-, ज्वेलरी, बालों के लिए रंग और गोला बारूद जैसे अन्य उद्योगों में भी बड़े पैमाने पर होता है। फिर भी कुल उत्पादित लेड का लगभग 85 प्रतिशत उपभोग अकेला बैटरी उद्योग करता है।आईआईटी मद्रास में प्रबंधन शिक्षा विभाग के प्रोफेसर आरके अमित ने कहा, 'चूंकि लेड के लिए उपलब्ध प्राथमिक स्रोत मांग की पूर्ति के लिए अपर्याप्त हैं, ऐसे में इस्तेमाल की हुई बैटरियों पर निर्भरता आवश्यक हो जाती है। हालांकि उनकी रीसाइक्लिंग के लिए अपनाए जाने वाले अवैज्ञानिक तौर-तरीकों के कारण यह प्रक्रिया स्वास्थ्य के लिए तमाम खतर ो ं का कारण भी बन गई है। ऐसे में हमने इस उपक्रम को असंगठित से संगठित बनाने की दिशा में बढ़ने संबंधी विभिन्न पहलुओं का बहुत व्यापक अध्ययन किया है।' headtopics.com

शोधकर्ताओं की टीम में आईआईटी मद्रास के डिपार्टमेंट ऑफ़ मैनेजमेंट स्टडीज के प्रोफेसर डॉ आर के अमित, आईआईटी कानपुर के डिपार्टमेंट ऑफ़ इंडस्ट्रियल एंड मैनेजमेंट इंजीनियरिंग के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ बी विपिन, डिपार्टमेंट ऑफ़ मैकेनिकल इंजीनियरिंग के प्रोफेसर डॉ जनकराजन रामकुमार और ब्रह्मेश विनायक जोशी शामिल हैं। शोध के निष्कर्ष प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका 'रिसोर्सेस, कंजर्वेशन एंड रिसाइकलिंग' में प्रकाशित किये गए हैं।

(इंडिया साइंस वायर(और पढो :Jansatta »

Mnews24.in
खबर दिन भर..

टेकन्यूज़

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेडएसिड - अध्ययन :बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रण

September 7, 2021 mnews24

बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही है। सीसा पर्यावरण प्रदूषण का एक प्रमुख कारक है।

बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही है। सीसा पर्यावरण प्रदूषण का एक प्रमुख कारक है। सीसा के पुनर्चक्रण की जो प्रक्रिया अपनाई जाती है वह भी सुरक्षित नहीं है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान)IIT) मद्रास और IIT कानपुर ने सीसादिशा में एक बड़ी पहल की है। शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन किया है जनित प्रदूषण पर अंकुश लगाने की-,

जिसमें उपयुक्त नीतिगत उपायों का सुझाव दिया गया है, जिससे देश में सीसा प्रदूषण को कम किया जा सकता है। मददगार साबित हो सकता है। अध्ययन भारत में सीसा पुनर्चक्रण की चुनौती का गहन विश्लेषण प्रदान करता है, क्योंकि विभिन्न प्रकार के सीसा प्रदूषण लोगों के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित कर रहे हैं।

वर्तमान में, सीसा के पुनर्चक्रण की प्रक्रिया कई खतरों और चुनौतियों से भरी हुई है। असंगठित क्षेत्र में लेडएसिड - तरह से करते हैं जिससे बैटरी से एसिड और लेड के कण मिट्टी और बैटरी को रीसायकल करने वाले श्रमिक इसे इस आसपास के वातावरण में घुल जातेहैं। इतना ही नहीं खुली भट्टी में लेड को गलाया जाता है, जिससे जहरीले तत्व हवा के जरिए वातावरण में पहुंच जाते हैं। इस प्रकार, सीसा को पुनर्चक्रित करने का यह तरीका न केवल पर्यावरण के लिए, बल्कि इसमें शामिल श्रमिकों के स्वास्थ्य के लिए भी बेहद हानिकारक है। वास्तव में, इस प्रक्रिया का व्यापक रूप से अभ्यास किया जाता है क्योंकि यह बहुत सस्ता है और इस काम में शामिल लोगों के लिए एक आकर्षक विकल्प बना हुआ है। साथ ही यह विकासशील देशों में बहुत सामान्य रूप से संचालित होता है, क्योंकि यह असंगठित क्षेत्र के लिए बहुत ही किफायती है।

इस अध्ययन से कई उल्लेखनीय पहलू सामने आए हैं, जिसके आधार पर शोधकर्ताओं ने विनियमित रीसाइक्लिंग क्षेत्र के लिए करों में कुछ कमी और लेडके कारण होने वाले प्रदूषण को कम करने का सुझाव एसिड बैटरी रीसाइक्लिंग- दिया है। संगठित पुनर्चक्रण और विनिर्माण क्षेत्रों को कुछ सब्सिडी दी जानी चाहिए। शोध का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि संगठित पुनर्विनिर्माण क्षेत्र के लिए पर्याप्त सब्सिडी का प्रावधान संगठित और असंगठित पुनर्चक्रण क्षेत्रों की गतिविधियों को सीमित कर देगा, जिससे सीसा प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि पेंट, सौंदर्य प्रसाधन, आभूषण, हेयर डाई और गोलाबारूद जैसे अन्य उद्योगों में भी सीसा का - व्यापक रूप से उपयोग किया जाता है। फिर भी अकेले बैटरी उद्योग उत्पादित कुल लेड का लगभग85 प्रतिशत खपत करता है।

आईआईटी मद्रास के प्रबंधन शिक्षा विभाग के प्रोफेसर आरके अमित ने कहा, "चूंकि सीसा के लिए उपलब्ध प्राथमिक स्रोत मांग को पूरा करने के लिए अपर्याप्त हैं, इसलिए इस्तेमाल की गई बैटरी पर निर्भरता आवश्यक हो जाती है। हालाँकि, उनके पुनर्चक्रण के लिए अपनाए गए अवैज्ञानिक तरीकों के कारण, यह प्रक्रिया कई स्वास्थ्य खतरों का कारण भी बन गई है। ऐसे में हमने इस उद्यम को असंगठित से संगठित करने के विभिन्न पहलुओं का बहुत व्यापक अध्ययन किया है।

शोधकर्ताओं की टीम में डॉआरके अमित ., प्रोफेसर, प्रबंधन अध्ययन विभाग, आईआईटी मद्रास, डॉ बी विपिन, सहायक प्रोफेसर, औद्योगिक और प्रबंधन इंजीनियरिंग विभाग, आईआईटीकानपुर-, डॉ जनकराजन रामकुमार और ब्रह्मेश विनायक जोशी, प्रोफेसर शामिल हैं। मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग से। शोध के निष्कर्ष प्रतिष्ठित अंतरराष्ट्रीय शोध पत्रिका 'संसाधन, संरक्षण और पुनर्चक्रण' में प्रकाशित किए गए हैं।

(इंडिया साइंस वायर(

.

Source link

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेड-एसिड बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रण: अध्ययन

Author: इंडिया साइंस वायर
Source: इंडिया साइंस वायर

Submitted by Shivendra on Wed, 09/08/2021 - 12:41

आईआईटी कानपुर के शोधकर्ता ब्रह्मेश विनायक जोशी, प्रोफेसर जनकराजन रामकुमार और डॉ बी. विपिन, और आईआईटी मद्रास के प्रोफेसर आर.के. अमित (दाएं से बाएं) ,फोटो:इंडिया साइंस वायर

नई दिल्ली, 07 सितंबर, इंडिया साइंस वायरः बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही जा रही है। सीसा(लेड) पर्यावरण प्रदूषण का एक प्रमुख कारक है। लेड के रीसाइकिल यानी पुनर्चक्रण की जो प्रक्रिया अपनाई जाती है, वह भी सुरक्षित नहीं है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) मद्रास और आईआईटी कानपुर ने लेड-जनित प्रदूषण पर अंकुश लगाने की दिशा में एक बड़ी पहल की है।

शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन किया है, जिसमें ऐसे उपयुक्त नीतिगत उपाय सुझाए गए हैं, जो देश में लेड प्रदूषण को कम करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। अध्ययन में भारत में लेड रीसाइक्लिंग की चुनौती का गहन विश्लेषण किया गया है, क्योंकि लेड से होने वाले विभिन्न प्रकार के प्रदूषण लोगों की शारीरिक एवं मानसिक सेहत पर आघात कर रहे हैं।

वर्तमान में लेड के पुनर्चक्रण की प्रक्रिया कई तरह के खतरों और चुनौतियों से भरी है। असंगठित क्षेत्र में लेड-एसिड बैटरियों का पुनर्चक्रण करने वाले कामगार यह काम कुछ इस प्रकार अंजाम देते हैं, जिसमें बैटरी से निकलने वाला तेजाब और लेड के कण मृदा और आसपास के परिवेश में घुल जाते हैं। इतना ही नहीं लेड को खुली भट्टी में गलाया जाता है, जिसके कारण विषाक्त तत्व हवा के माध्यम से वायुमंडल में पहुंच जाते हैं। इस प्रकार लेड के पुनर्चक्रण की यह प्रविधि न केवल पर्यावरण, अपितु इसमें सक्रिय कामगारों के स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत हानिकारक है। दरअसल यह प्रक्रिया बहुत सस्ती होने के कारण व्यापक स्तर पर प्रचलित है और इस काम से जुड़े लोगों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनी हुई है। साथ ही यह विकासशील देशों में बहुत सामान्य रूप से संचालित होती है, क्योंकि यह असंगठित क्षेत्र के लिए बहुत किफायती पड़ती है।

इस अध्ययन में कई उल्लेखनीय पहलू सामने आए हैं, जिसके आधार पर शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि नियमन के दायरे में आने वाले पुनर्चक्रण क्षेत्र के लिए करों में कुछ कटौती की जाए और लेड-एसिड बैटरी पुनर्चक्रण के कारण होने वाले प्रदूषण को घटाने के लिए संगठित पुनर्चक्रण एवं विनिर्माण क्षेत्रों को कुछ सब्सिडी दी जाए। शोध का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी है कि संगठित पुनर्विनिर्माण (रीमैन्यूफैक्चरिंग) क्षेत्र के लिए पर्याप्त सब्सिडी की व्यवस्था से संगठित एवं असंगठित पुनर्चक्रण क्षेत्रों की गतिविधियां सीमित होंगी, जिससे लेड प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि लेड का प्रयोग पेंट, सौंदर्य-प्रसाधन, ज्वेलरी, बालों के लिए रंग और गोला बारूद जैसे अन्य उद्योगों में भी बड़े पैमाने पर होता है। फिर भी कुल उत्पादित लेड का लगभग 85 प्रतिशत उपभोग अकेला बैटरी उद्योग करता है।

आईआईटी मद्रास में प्रबंधन शिक्षा विभाग के प्रोफेसर आरके अमित ने कहा, 'चूंकि लेड के लिए उपलब्ध प्राथमिक स्रोत मांग की पूर्ति के लिए अपर्याप्त हैं, ऐसे में इस्तेमाल की हुई बैटरियों पर निर्भरता आवश्यक हो जाती है। हालांकि उनकी रीसाइक्लिंग के लिए अपनाए जाने वाले अवैज्ञानिक तौर-तरीकों के कारण यह प्रक्रिया स्वास्थ्य के लिए तमाम खतरों का कारण भी बन गई है। ऐसे में हमने इस उपक्रम को असंगठित से संगठित बनाने की दिशा में बढ़ने संबंधी विभिन्न पहलुओं का बहुत व्यापक अध्ययन किया है।'

शोधकर्ताओं की टीम में आईआईटी मद्रास के डिपार्टमेंट ऑफ़ मैनेजमेंट स्टडीज के प्रोफेसर डॉ आर के अमित, आईआईटी कानपुर के डिपार्टमेंट ऑफ़ इंडस्ट्रियल एंड मैनेजमेंट इंजीनियरिंग के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ बी विपिन, डिपार्टमेंट ऑफ़ मैकेनिकल इंजीनियरिंग के प्रोफेसर डॉ जनकराजन रामकुमार और ब्रह्मेश विनायक जोशी शामिल हैं। शोध के निष्कर्ष प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका 'रिसोर्सेस, कंजर्वेशन एंड रिसाइकलिंग' में प्रकाशित किये गए हैं।)

दी इंडियन बुलेटिन

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेड-:एसिड बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रण अध्ययन

2 weeks ago

आईआईटी कानपुर के शोधकर्ता ब्रह्मेश विनायक जोशी, प्रोफेसर जनकराजन रामकुमार और डॉ बीविपिन ., और आईआईटी मद्रास के प्रोफेसर आर(बाएं से दाएं) अमित .के.

नई दिल्ली: बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही जा रही है। सीसा एक का प्रदूषण पर्यावरण (लेड) रीसाइकिल के लेड है। कारक प्रमुख यानी पुनर्चक्रण की जो प्रक्रिया अपनाई जाती है, वह भी सुरक्षित नहीं है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान अंकुश पर प्रदूषण जनित-लेड ने कानपुर आईआईटी और मद्रास (आईआईटी) है। की पहल बड़ी एक में दिशा की लगाने

शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन किया है, जिसमें ऐसे उपयुक्त नीतिगत उपाय सुझाए गए हैं, जो देश में लेड प्रदूषण को कम करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। अध्ययन में भारत में लेड रीसाइक्लिंग की चुनौती का गहन विश्लेषण किया गया है, क्योंकि लेड से होने वाले विभिन्न प्रकार के प्रदूषण लोगों की शारीरिक एवं मानसिक सेहत पर आघात कर रहे हैं।

वर्तमान में लेड के पुनर्चक्रण की प्रक्रिया कई तरह के खतरों और चुनौतियों से भरी है। असंगठित क्षेत्र में लेड-हैं देते अंजाम प्रकार इस कुछ काम यह कामगार वाले करने पुनर्चक्रण का बैटरियों एसिड, जिसमें बैटरी से निकलने वाला तेजाब और लेड के कण मृदा और आसपास के परिवेश में घुल जाते हैं। इतना ही नहीं लेड को खुली भट्टी में गलाया जाता है, जिसके कारण विषाक्त तत्व हवा के माध्यम से वायुमंडल में पहुंच जाते हैं। इस प्रकार लेड के पुनर्चक्रण की यह प्रविधि न केवल पर्यावरण, अपितु इसमें सक्रिय कामगारों के स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत हानिकारक है। दरअसल यह प्रक्रिया बहुत सस्ती होने के कारण व्यापक स्तर पर प्रचलित है और इस काम से जुड़े लोगों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनी हुई है। साथ ही यह विकासशील देशों में बहुत सामान्य रूप से संचालित होती है, क्योंकि यह असंगठित क्षेत्र के लिए बहुत किफायती पड़ती है।

इस अध्ययन में कई उल्लेखनीय पहलू सामने आए हैं, जिसके आधार पर शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि नियमन के दायरे में आने वाले पुनर्चक्रण क्षेत्र के लिए करों में कुछ कटौती की जाए और लेड बैटरी एसिड-क घटाने को प्रदूषण वाले होने कारण के पुनर्चक्रणे लिए संगठित पुनर्चक्रण एवं विनिर्माण क्षेत्रों को कुछ सब्सिडी दी जाए। शोध का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी है कि संगठित पुनर्विनिर्माण क्षेत्र (रीमैन्यूफैक्चरिंग) गतिविधियां की क्षेत्रों पुनर्चक्रण असंगठित एवं संगठित से व्यवस्था की सब्सिडी पर्याप्त लिए केसीमित होंगी, जिससे लेड प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि लेड का प्रयोग पेंट, सौंदर्यप्रसाधन-, ज्वेलरी, बालों के लिए रंग और गोला बारूद जैसे अन्य उद्योगों में भी बड़े पैमाने पर होता है। फिर भी कुल उत्पादित लेड का लगभग 85 प्रतिशत उपभोग अकेला बैटरी उद्योग करता है।

आईआईटी मद्रास में प्रबंधन शिक्षा विभाग के प्रोफेसर आरके अमित ने कहा, ‘चूंकि लेड के लिए उपलब्ध प्राथमिक स्रोत मांग की पूर्ति के लिए अपर्याप्त हैं, ऐसे में इस्तेमाल की हुई बैटरियों पर निर्भरता आवश्यक हो जाती है। हालांकि उनकी रीसाइक्लिंग के लिए अपनाए जाने वाले अवैज्ञानिक तौर प्रक्रिया यह कारण के तरीकों-संगठित से असंगठित को उपक्रम इस हमने में ऐसे है। गई बन भी कारण का खतरों तमाम लिए के स्वास्थ्य है। किया अध्ययन व्यापक बहुत का पहलुओं विभिन्न संबंधी बढ़ने में दिशा की बनाने’

शोधकर्ताओं की टीम में आईआईटी मद्रास के डिपार्टमेंट ऑफ़ मैनेजमेंट स्टडीज के प्रोफेसर डॉ आर के अमित, आईआईटी कानपुर के डिपार्टमेंट ऑफ़ इंडस्ट्रियल एंड मैनेजमेंट इंजीनियरिंग के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ बी विपिन, डिपार्टमेंट ऑफ़ मैकेनिकल इंजीनियरिंग के प्रोफेसर डॉ जनकराजन रामकुमार और ब्रह्मेश विनायक जोशी शामिल हैं। शोध के निष्कर्ष प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका ‘रिसोर्सेस, कंजर्वेशन एंड रिसाइकलिंग’ में प्रकाशित किये गए हैं। (वायर साइंस इंडिया)

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेडएसिड - अध्यय :बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रणन

07/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 07 सितंबर, इंडिया साइंस वायरः बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही जा रही है। सीसापर्यावरण (लेड) प्रदूषण का एक प्रमुख कारक है। लेड के रीसाइकिलियानी पुनर्चक्रण की जो प्रक्रिया अपनाई जाती है, वह भी सुरक्षित नहीं है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान जनित प्रदूषण पर अंकुश लगाने की दिशा में -मद्रास और आईआईटी कानपुर ने लेड (आईआईटी) एक बड़ी पहल की है। शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन किया है, जिसमें ऐसे उपयुक्त नीतिगत उपाय सुझाए गए हैं, जो देश में लेड प्रदूषण को कम करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।

अध्ययन में भारत में लेड रीसाइक्लिंग की चुनौती का गहन विश्लेषण किया गया है, क्योंकि लेड से होने वाले विभिन्न प्रकार के प्रदूषण लोगों की शारीरिक एवं मानसिक सेहत पर आघात कर रहे हैं। वर्तमान में लेड के पुनर्चक्रण की प्रक्रिया कई तरह के खतरों और चुनौतियों से भरी है। असंगठित क्षेत्र में लेडएसिड बैटरियों का पुनर्चक्रण करने वाले कामगार यह काम कुछ इस - प्रकार अंजाम देते हैं, जिसमें बैटरी से निकलने वाला तेजाब और लेड के कण मृदा और आसपास के परिवेश में घुल जाते हैं।

इतना ही नहीं लेड को खुली भट्टी में गलाया जाता है, जिसके कारण विषाक्त तत्व हवा के माध्यम से वायुमंडल में पहुंच जाते हैं। इस प्रकार लेड के पुनर्चक्रण की यह प्रविधि न केवल पर्यावरण, अपितु इसमें सक्रिय कामगारों के स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत हानिकारक है। दरअसल यह प्रक्रिया बहुत सस्ती होने के कारण व्यापक स्तर पर प्रचलित है और इस काम से जुड़े लोगों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनी हुई है। साथ ही यह विकासशील देशों में बहुत सामान्य रूप से संचालित होती है, क्योंकि यह असंगठित क्षेत्र के लिए बहुत किफायती पड़ती है।

इस अध्ययन में कई उल्लेखनीय पहलू सामने आए हैं, जिसके आधार पर शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि नियमन के दायरे में आने वाले पुनर्चक्रण क्षेत्र के लिए करों में कुछ कटौती की जाए और लेडएसिड बैटरी पुनर्चक्रण के कारण होने वाले प्रदूषण को - घटाने के लिए संगठित पुनर्चक्रण एवं विनिर्माण क्षेत्रों को कुछ सब्सिडी दी जाए। शोध का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी है कि संगठित पुनर्विनिर्माण क्षेत्र के लिए पर्याप्त सब्सिडी की व्यवस्था से संगठित एवं असंगठित पुनर्चक्रण क्षेत्रों की (रीमैन्यूफैक्चरिंग) गतिविधियां सीमित होंगी, जिससे लेड प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि लेड का प्रयोग पेंट, सौंदर्यप्रसाधन-, ज्वेलरी, बालों के लिए रंग और गोला बारूद जैसे अन्य उद्योगों में भी बड़े पैमाने पर होता है। फिर भी कुल उत्पादित लेड का लगभग 85 प्रतिशत उपभोग अकेला बैटरी उद्योग करता है। आईआईटी मद्रास में प्रबंधन शिक्षा विभाग के प्रोफेसर आरके अमित ने कहा, 'चूंकि लेड के लिए उपलब्ध प्राथमिक स्रोत मांग की पूर्ति के लिए अपर्याप्त हैं, ऐसे में इस्तेमाल की हुई बैटरियों पर निर्भरता आवश्यक हो जाती है।

हालांकि उनकी रीसाइक्लिंग के लिए अपनाए जाने वाले अवैज्ञानिक तौरतरीकों के कारण यह प्रक्रिया स्वास्थ्य के लिए तमाम - खतरों का कारण भी बन गई है। ऐसे में हमने इस उपक्रम को असंगठित से संगठित बनाने की दिशा में बढ़ने संबंधी विभिन्न पहलुओं का बहुत व्यापक अध्ययन किया है।'

शोधकर्ताओं की टीम में आईआईटी मद्रास के डिपार्टमेंट ऑफ़ मैनेजमेंट स्टडीज के प्रोफेसर डॉ आर के अमित, आईआईटी कानपुर के डिपार्टमेंट ऑफ़ इंडस्ट्रियल एंड मैनेजमेंट इंजीनियरिंग के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ बी विपिन, डिपार्टमेंट ऑफ़ मैकेनिकल इंजीनियरिंग के प्रोफेसर डॉ जनकराजन रामकुमार और ब्रह्मेश विनायक जोशी शामिल हैं। शोध के निष्कर्ष प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका 'रिसोर्सेस, कंजर्वेशन एंड रिसाइकलिंग' में प्रकाशित किये गए हैं।

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेड-:एसिड बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रण अध्ययन

By **Rupesh Dharmik** - September 8, 2021

आईआईटी कानपुर के शोधकर्ता ब्रह्मेश विनायक जोशी, प्रोफेसर जनकराजन रामकुमार और डॉ बी . विपिन, और आईआईटी मद्रास के प्रोफेसर आर(बाएं से दाएं) अमित .के.

नई दिल्ली: बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही जा रही है। सीसापर्यावरण प्रदूषण का एक (लेड) प्रमुख कारक है। लेड के रीसाइकिल यानी पुनर्चक्रण की जो प्रक्रिया अपनाई जाती है, वह भी सुरक्षित नहीं है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान ज-र ने लेडमद्रास और आईआईटी कानपु (आईआईटी)नित प्रदूषण पर अंकुश लगाने की दिशा में एक बड़ी पहल की है।

शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन किया है, जिसमें ऐसे उपयुक्त नीतिगत उपाय सुझाए गए हैं, जो देश में लेड प्रदूषण को कम करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। अध्ययन में भारत में लेड रीसाइक्लिंग की चुनौती का गहन विश्लेषण किया गया है, क्योंकि लेड से होने वाले विभिन्न प्रकार के प्रदूषण लोगों की शारीरिक एवं मानसिक सेहत पर आघात कर रहे हैं।

वर्तमान में लेड के पुनर्चक्रण की प्रक्रिया कई तरह के खतरों और चुनौतियों से भरी है। असंगठित क्षेत्र में लेड-पुनर्चक्रण एसिड बैटरियों का करने वाले कामगार यह काम कुछ इस प्रकार अंजाम देते हैं, जिसमें बैटरी से निकलने वाला तेजाब और लेड के कण मृदा और आसपास के परिवेश में घुल जाते हैं। इतना ही नहीं लेड को खुली भट्टी में गलाया जाता है, जिसके कारण विषाक्त तत्व हवा के माध्यम से वायुमंडल में पहुंच जाते हैं। इस

प्रकार लेड के पुनर्चक्रण की यह प्रविधि न केवल पर्यावरण, अपितु इसमें सक्रिय कामगारों के स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत हानिकारक है। दरअसल यह प्रक्रिया बहुत सस्ती होने के कारण व्यापक स्तर पर प्रचलित है और इस काम से जुड़े लोगों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनी हुई है। साथ ही यह विकासशील देशों में बहुत सामान्य रूप से संचालित होती है, क्योंकि यह असंगठित क्षेत्र के लिए बहुत किफायती पड़ती है।

इस अध्ययन में कई उल्लेखनीय पहलू सामने आए हैं, जिसके आधार पर शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि नियमन के दायरे में आने वाले पुनर्चक्रण क्षेत्र के लिए करों में कुछ कटौती की जाए और लेडएसिड बैटरी - पुनर्चक्रण के कारण होने वाले प्रदूषण को घटाने के लिए संगठित पुनर्चक्रण एवं विनिर्माण क्षेत्रों को कुछ सब्सिडी रीम) णदी जाए। शोध का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी है कि संगठित पुनर्विनिर्माैन्यूफैक्चरिंगक्षेत्र के लिए (पर्याप्त सब्सिडी की व्यवस्था से संगठित एवं असंगठित पुनर्चक्रण क्षेत्रों की गतिविधियां सीमित होंगी, जिससे लेड प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि लेड का प्रयोग पेंट, सौंदर्यप्रसाधन-, ज्वेलरी, बालों के लिए रंग और गोला बारूद जैसे अन्य उद्योगों में भी बड़े पैमाने पर होता है। फिर भी कुल उत्पादित लेड का लगभग 85 प्रतिशत उपभोग अकेला बैटरी उद्योग करता है।

आईआईटी मद्रास में प्रबंधन शिक्षा विभाग के प्रोफेसर आरके अमित ने कहा, ‘चूंकि लेड के लिए उपलब्ध प्राथमिक स्रोत मांग की पूर्ति के लिए अपर्याप्त हैं, ऐसे में इस्तेमाल की हुई बैटरियों पर निर्भरता आवश्यक हो जाती है। हालांकि उनकी रीसाइक्लिंग के लिए अपनाए जाने वाले अवैज्ञानिक तौरतरीकों के कारण यह प्रक्रिया - उपक्रम क स्वास्थ्य के लिए तमाम खतरों का कारण भी बन गई है। ऐसे में हमने इसो असंगठित से संगठित बनाने की दिशा में बढ़ने संबंधी विभिन्न पहलुओं का बहुत व्यापक अध्ययन किया है।’

शोधकर्ताओं की टीम में आईआईटी मद्रास के डिपार्टमेंट ऑफ़ मैनेजमेंट स्टडीज के प्रोफेसर डॉ आर के अमित, आईआईटी कानपुर के डिपार्टमेंट ऑफ़ इंडस्ट्रियल एंड मैनेजमेंट इंजीनियरिंग के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ बी विपिन, डिपार्टमेंट ऑफ़ मैकेनिकल इंजीनियरिंग के प्रोफेसर डॉ जनकराजन रामकुमार और ब्रह्मेश विनायक जोशी शामिल हैं। शोध के निष्कर्ष प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका ‘रिसोर्सेस, कंजर्वेशन एंड रिसाइकलिंग’ में प्रकाशित किये गए हैं। (इंडिया साइंस वायर)

भारत हेराल्ड

प्रदूषण नियंत्रण के लिए आवश्यक है लेड-:एसिड बैटरियों का व्यवस्थित पुनर्चक्रण अध्ययन

2 weeks ago

आईआईटी कानपुर के शोधकर्ता ब्रह्मेश विनायक जोशी, प्रोफेसर जनकराजन रामकुमार और डॉ बीविपिन ., और आईआईटी मद्रास के प्रोफेसर आर(बाएं से दाएं) अमित .के.

नई दिल्ली: बढ़ते प्रदूषण की चुनौती कठिन होती जा रही जा रही है। सीसा एक का प्रदूषण पर्यावरण (लेड) है जाती अपनाई प्रक्रिया जो की पुनर्चक्रण यानी रीसाइकिल के लेड है। कारक प्रमुख, वह भी सुरक्षित नहीं है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान आई)आईटी अंकुश पर प्रदूषण जनित-लेड ने कानपुर आईआईटी और मद्रास (है। की पहल बड़ी एक में दिशा की लगाने

शोधकर्ताओं ने एक अध्ययन किया है, जिसमें ऐसे उपयुक्त नीतिगत उपाय सुझाए गए हैं, जो देश में लेड प्रदूषण को कम करने में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। अध्ययन में भारत में लेड रीसाइक्लिंग की चुनौती का गहन विश्लेषण किया गया है, क्योंकि लेड से होने वाले विभिन्न प्रकार के प्रदूषण लोगों की शारीरिक एवं मानसिक सेहत पर आघात कर रहे हैं।

वर्तमान में लेड के पुनर्चक्रण की प्रक्रिया कई तरह के खतरों और चुनौतियों से भरी है। असंगठित क्षेत्र में लेड-हैं देते अंजाम प्रकार इस कुछ काम यह कामगार वाले करने पुनर्चक्रण का बैटरियों एसिड, जिसमें बैटरी से निकलने वाला तेजाब और लेड के कण मृदा और आसपास के परिवेश में घुल जाते हैं। इतना ही नहीं लेड को खुली भट्टी में गलाया जाता है, जिसके कारण विषाक्त तत्व हवा के माध्यम से वायुमंडल में पहुंच जाते हैं। इस प्रकार लेड के पुनर्चक्रण की यह प्रविधि न केवल पर्यावरण, अपितु इसमें सक्रिय कामगारों के स्वास्थ्य के लिए भी अत्यंत हानिकारक है। दरअसल यह प्रक्रिया बहुत सस्ती होने के कारण व्यापक स्तर पर प्रचलित है और इस काम से जुड़े लोगों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनी हुई है। साथ ही यह विकासशील देशों में बहुत सामान्य रूप से संचालित होती है, क्योंकि यह असंगठित क्षेत्र के लिए बहुत किफायती पड़ती है।

इस अध्ययन में कई उल्लेखनीय पहलू सामने आए हैं, जिसके आधार पर शोधकर्ताओं ने सुझाव दिया है कि नियमन के दायरे में आने वाले पुनर्चक्रण क्षेत्र के लिए करों में कुछ कटौती की जाए और लेड बैटरी एसिड-सब्सिडी कुछ को क्षेत्रों विनिर्माण एवं पुनर्चक्रण संगठित लिए के घटाने को प्रदूषण वाले होने कारण के पुनर्चक्रण निष्कर ‍महत्वपूर्ण एक का शोध जाए। दी्ष यह भी है कि संगठित पुनर्विनिर्माण के क्षेत्र (रीमैन्यूफैक्चरिंग) होंगी सीमित गतिविधियां की क्षेत्रों पुनर्चक्रण असंगठित एवं संगठित से व्यवस्था की सब्सिडी पर्याप्त लिए, जिससे लेड प्रदूषण को कम करने में मदद मिलेगी।

उल्लेखनीय है कि लेड का प्रयोग पेंट, सौंदर्यप्रसाधन-, ज्वेलरी, बालों के लिए रंग और गोला बारूद जैसे अन्य उद्योगों में भी बड़े पैमाने पर होता है। फिर भी कुल उत्पादित लेड का लगभग 85 प्रतिशत उपभोग अकेला बैटरी उद्योग करता है।

आईआईटी मद्रास में प्रबंधन शिक्षा विभाग के प्रोफेसर आरके अमित ने कहा, ‘चूंकि लेड के लिए उपलब्ध प्राथमिक स्रोत मांग की पूर्ति के लिए अपर्याप्त हैं, ऐसे में इस्तेमाल की हुई बैटरियों पर निर्भरता आवश्यक हो जाती है। हालांकि उनकी रीसाइक्लिंग के लिए अपनाए जाने वाले अवैज्ञानिक तौर प्रक्रिया यह कारण के तरीकों-क का खतरों तमाम लिए के स्वास्थ्यारण भी बन गई है। ऐसे में हमने इस उपक्रम को असंगठित से संगठित बनाने की दिशा में बढ़ने संबंधी विभिन्न पहलुओं का बहुत व्यापक अध्ययन किया है।’

शोधकर्ताओं की टीम में आईआईटी मद्रास के डिपार्टमेंट ऑफ़ मैनेजमेंट स्टडीज के प्रोफेसर डॉ आर के अमित, आईआईटी कानपुर के डिपार्टमेंट ऑफ़ इंडस्ट्रियल एंड मैनेजमेंट इंजीनियरिंग के असिस्टेंट प्रोफेसर डॉ बी विपिन, डिपार्टमेंट ऑफ़ मैकेनिकल इंजीनियरिंग के प्रोफेसर डॉ जनकराजन रामकुमार और ब्रह्मेश विनायक जोशी शामिल हैं। शोध के निष्कर्ष प्रतिष्ठित अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका ‘रिसोर्सेस, कंजर्वेशन एंड रिसाइकलिंग’ में प्रकाशित किये गए हैं। (वायर साइंस इंडिया)

Voice of the Nation
ORGANISER

Study establishes the relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability

WEBDESK Sep 09, 2021, 12:55 PM IST

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and 'Jivamrit S', a fermented concoction consisting of cow urine and cow dung jaggery, gram flour, and soil.

New Delhi: Crop nutrients determine the nutritional content and vigour of crops. The deficiency or occurrence below the minimum level of any of the nutrients is often seen as a cause of poor growth or complete crop failure.

A study has found that farm practice based on traditional knowledge was better than chemical-intensive systems in altering and modifying the nutrient dynamics of the soil with respect to Nitrogen (N), Phosphorus (P), Potassium (K), Sulphur (S), Calcium (Ca), and Magnesium (Mg) levels on a long term basis.

It was conducted in Kachchh in Western India, a typical representative of allied arid and semi-arid tropics prone to various natural threats and stressors like drought, salinity, and erratic rainfall pattern.

Seasonal amendment data showed that the traditional knowledge-based systems were efficient in the accrual of soil organic carbon (SOC) over seasons, while their impacts with regards to the major primary (N, P, K) and secondary (S, Ca, Mg) nutrients were at par with or higher than integrated chemical-intensive systems. The traditional knowledge-based amendments were found to ensure proper and timely management of nutrients in the soil.

The comparative study was conducted by analysing soils on ten fields for the crop's pre, mid, and post-harvest phases in six cropping seasons spread across four years. For avoiding site variability, the ten fields that were based on the traditional knowledge system were located on one farm and the ten fields that were based on chemical-intensive systems were located on another farm.

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and ‘Jivamrit S’, a fermented concoction consisting of cow urine and cow dung jaggery, gram flour, and soil. The concoction was prepared onsite in composting pits and was applied with watering twice, at a seven and fourteen-day interval from sowing.

The study was conducted by researchers from the Department of Earth and Environmental Science, KSKV Kachchh University, and Blue Bay Coastal Research Foundation, Chennai, India. The team consisted of Seema B. Sharma, G.A.Thivakaran, and Mahesh G.Thakkar. They have published a report on their work in the journal, `Scientific Reports’.

Speaking to India Science Wire, Dr. Sharma, who was the team leader, noted, “The world population is expected to be 9.7 billion by 2050. This increased population pressure would demand an increased food production. However, the most important entity in agricultural production-the arable land is limited and its expansion beyond a certain threshold is not possible. Meeting the demands of the growing population would require an increased yield from present arable land. However, this increase in yield has to ensure that it was based on sound soil nutrient management, in a way that a self-reliant system is developed that maintains soil fertility in the long run.”

Courtesy: India Science Wire

Republic NewsIndia

Study establishes relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability

By **Rupesh Dharmik** - September 8, 2021

Photo Credit: Pixabay

New Delhi: Crop nutrients determine the nutritional content and vigour of crops. The deficiency or occurrence below the minimum level of any of the nutrients is often seen as a cause of poor growth or complete crop failure.

A study has found that farm practice based on traditional knowledge was better than chemical-intensive systems in altering and modifying the nutrient dynamics of the soil with respect to Nitrogen (N), Phosphorus (P),

Potassium (K), Sulphur (S), Calcium (Ca), and Magnesium (Mg) levels on a long term basis.

It was conducted in Kachchh in Western India, which is a typical representative of allied arid and semi-arid tropics that are prone to various natural threats and stressors like drought, salinity, and erratic rainfall pattern.

Seasonal amendment data showed that the traditional knowledge-based systems were efficient in the accrual of soil organic carbon (SOC) over seasons, while their impacts with regards to the major primary (N, P, K) and secondary (S, Ca, Mg) nutrients were at par with or higher than integrated chemical-intensive systems. The traditional knowledge-based amendments were found to ensure proper and timely management of nutrients in the soil.

The comparative study was conducted by analysing soils on 10 fields for the pre, mid and post-harvest phases of the crop in six cropping seasons spread across four years. For avoiding site variability, the 10 fields that were based on the traditional knowledge system were located on one farm and the 10 fields that were based on chemical-intensive systems were located on another farm.

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and 'Jivamrit S' which is a fermented concoction consisting of cow urine, cow dung, jaggery, gram flour, and soil. The concoction was prepared onsite in composting pits and was applied with watering twice, at a seven and fourteen-day interval from sowing.

The study was conducted by researchers from the Department of Earth and Environmental Science, KSKV Kachchh University, and Blue Bay Coastal Research Foundation, Chennai, India. The team consisted of Seema B. Sharma, G.A.Thivakaran, and Mahesh G.Thakkar. They have published a report on their work in the journal, `Scientific Reports'.

Speaking to India Science Wire, Dr. Sharma, who was the team leader, noted, "The world population is expected to be 9.7 billion by 2050. This increased population pressure would demand an increased food production. However, the most important entity in agricultural production-the arable land is limited and its expansion beyond a certain threshold is not possible. Meeting the demands of the growing population would require an increased yield from present arable land. However, this increase in yield has to ensure that it was based on sound soil nutrient management, in a way that a self-reliant system is developed that maintains soil fertility in the long run". (India Science Wire)

Study establishes relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability

September 8, 2021 | *By* INDIA UPTURN

New Delhi: Crop nutrients determine the nutritional content and vigour of crops. The deficiency or occurrence below the minimum level of any of the nutrients is often seen as a cause of poor growth or complete crop failure.

A study has found that farm practice based on traditional knowledge was better than chemical-intensive systems in altering and modifying the nutrient dynamics of the soil with respect to Nitrogen (N), Phosphorus (P), Potassium (K), Sulphur (S), Calcium (Ca), and Magnesium (Mg) levels on a long term basis.

It was conducted in Kachchh in Western India, which is a typical representative of allied arid and semi-arid tropics that are prone to various natural threats and stressors like drought, salinity, and erratic rainfall pattern.

Seasonal amendment data showed that the traditional knowledge-based systems were efficient in the accrual of soil organic carbon (SOC) over seasons, while their impacts with regards to the major primary (N, P, K) and secondary (S, Ca, Mg) nutrients were at par with or higher than integrated chemical-intensive systems. The traditional knowledge-based amendments were found to ensure proper and timely management of nutrients in the soil.

The comparative study was conducted by analysing soils on 10 fields for the pre, mid and post-harvest phases of the crop in six cropping seasons spread across four years. For avoiding site variability, the 10 fields that were based on the traditional knowledge system were located on one farm and the 10 fields that were based on chemical-intensive systems were located on another farm.

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and 'Jivamrit S' which is a fermented concoction consisting of cow urine, cow dung, jaggery, gram flour, and soil. The concoction was prepared onsite in composting pits and was applied with watering twice, at a seven and fourteen-day interval from sowing.

The study was conducted by researchers from the Department of Earth and Environmental Science, KSKV Kachchh University, and Blue Bay Coastal Research Foundation, Chennai, India. The team consisted of Seema B. Sharma, G.A.Thivakaran, and Mahesh G.Thakkar. They have published a report on their work in the journal, `Scientific Reports'.

Speaking to India Science Wire, Dr. Sharma, who was the team leader, noted, "The world population is expected to be 9.7 billion by 2050. This increased population pressure would demand an increased food production. However, the most important entity in agricultural production-the arable land is limited and its expansion beyond a certain threshold is not possible. Meeting the demands of the growing population would require an increased yield from present arable land. However, this increase in yield has to ensure that it was based on sound soil nutrient management, in a way that a self-reliant system is developed that maintains soil fertility in the long run". (India Science Wire)

The Telegraph NEWS

Photo Credit: Pixabay

Study establishes relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability

The Telegraph News 2 weeks ago

New Delhi: Crop nutrients determine the nutritional content and vigour of crops. The deficiency or occurrence below the minimum level of any of the nutrients is often seen as a cause of poor growth or complete crop failure.

A study has found that farm practice based on traditional knowledge was better than chemical-intensive systems in altering and modifying the nutrient dynamics of the soil with respect to Nitrogen (N), Phosphorus (P), Potassium (K), Sulphur (S), Calcium (Ca), and Magnesium (Mg) levels on a long term basis.

It was conducted in Kachchh in Western India, which is a typical representative of allied arid and semi-arid tropics that are prone to various natural threats and stressors like drought, salinity, and erratic rainfall pattern.

Seasonal amendment data showed that the traditional knowledge-based systems were efficient in the accrual of soil organic carbon (SOC) over seasons, while their impacts with regards to the major primary (N, P, K) and secondary (S, Ca, Mg) nutrients were at par with or higher than integrated chemical-intensive systems. The traditional knowledge-based amendments were found to ensure proper and timely management of nutrients in the soil.

The comparative study was conducted by analysing soils on 10 fields for the pre, mid and post-harvest phases of the crop in six cropping seasons spread across four years. For avoiding site variability, the 10 fields that were based on the traditional knowledge system were located on one farm and the 10 fields that were based on chemical-intensive systems were located on another farm.

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and 'Jivamrit S' which is a fermented concoction consisting of cow urine, cow dung, jaggery, gram flour, and soil. The concoction was prepared onsite in composting pits and was applied with watering twice, at a seven and fourteen-day interval from sowing.

The study was conducted by researchers from the Department of Earth and Environmental Science, KSKV Kachchh University, and Blue Bay Coastal Research Foundation, Chennai, India. The team consisted of Seema B. Sharma, G.A.Thivakaran, and Mahesh G.Thakkar. They have published a report on their work in the journal, `Scientific Reports'.

Speaking to India Science Wire, Dr. Sharma, who was the team leader, noted, "The world population is expected to be 9.7 billion by 2050. This increased population pressure would demand an increased food production. However, the most important entity in agricultural production-the arable land is limited and its expansion beyond a certain threshold is not possible. Meeting the demands of the growing population would require an increased yield from present arable land. However, this increase in yield has to ensure that it was based on sound soil nutrient management, in a way that a self-reliant system is developed that maintains soil fertility in the long run". (India Science Wire)

RD TIMES.in

Study establishes relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability

By **RD Times Online** - September 8, 2021

Photo Credit: Pixabay

New Delhi: Crop nutrients determine the nutritional content and vigour of crops. The deficiency or occurrence below the minimum level of any of the nutrients is often seen as a cause of poor growth or complete crop failure.

A study has found that farm practice based on traditional knowledge was better than chemical-intensive systems in altering and modifying the nutrient dynamics of the soil with respect to Nitrogen (N), Phosphorus (P), Potassium (K), Sulphur (S), Calcium (Ca), and Magnesium (Mg) levels on a long term basis.

It was conducted in Kachchh in Western India, which is a typical representative of allied arid and semi-arid tropics that are prone to various natural threats and stressors like drought, salinity, and erratic rainfall pattern.

Seasonal amendment data showed that the traditional knowledge-based systems were efficient in the accrual of soil organic carbon (SOC) over seasons, while their impacts with regards to the major primary (N, P, K) and secondary (S, Ca, Mg) nutrients were at par with or higher than integrated chemical-intensive systems. The traditional knowledge-based amendments were found to ensure proper and timely management of nutrients in the soil.

The comparative study was conducted by analysing soils on 10 fields for the pre, mid and post-harvest phases of the crop in six cropping seasons spread across four years. For avoiding site variability, the 10 fields that were based on the traditional knowledge system were located on one farm and the 10 fields that were based on chemical-intensive systems were located on another farm.

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and 'Jivamrit S' which is a fermented concoction consisting of cow urine, cow dung, jaggery, gram flour, and soil. The concoction was prepared onsite in composting pits and was applied with watering twice, at a seven and fourteen-day interval from sowing.

The study was conducted by researchers from the Department of Earth and Environmental Science, KSKV Kachchh University, and Blue Bay Coastal Research Foundation, Chennai, India. The team consisted of Seema B. Sharma, G.A.Thivakaran, and Mahesh G.Thakkar. They have published a report on their work in the journal, `Scientific Reports'.

Speaking to India Science Wire, Dr. Sharma, who was the team leader, noted, "The world population is expected to be 9.7 billion by 2050. This increased population pressure would demand an increased food production. However, the most important entity in agricultural production-the arable land is limited and its expansion beyond a certain threshold is not possible. Meeting the demands of the growing population would require an increased yield from present arable land. However, this increase in yield has to ensure that it was based on sound soil nutrient management, in a way that a self-reliant system is developed that maintains soil fertility in the long run".
(India Science Wire)

The Medium news

Study establishes relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability

Posted on September 8, 2021 | By The Medium News

New Delhi: Crop nutrients determine the nutritional content and vigour of crops. The deficiency or occurrence below the minimum level of any of the nutrients is often seen as a cause of poor growth or complete crop failure.

A study has found that farm practice based on traditional knowledge was better than chemical-intensive systems in altering and modifying the nutrient dynamics of the soil with respect to Nitrogen (N), Phosphorus (P), Potassium (K), Sulphur (S), Calcium (Ca), and Magnesium (Mg) levels on a long term basis.

It was conducted in Kachchh in Western India, which is a typical representative of allied arid and semi-arid tropics that are prone to various natural threats and stressors like drought, salinity, and erratic rainfall pattern.

Seasonal amendment data showed that the traditional knowledge-based systems were efficient in the accrual of soil organic carbon (SOC) over seasons, while their impacts with regards to the major primary (N, P, K) and secondary (S, Ca, Mg) nutrients were at par with or higher than integrated chemical-intensive systems. The traditional knowledge-based amendments were found to ensure proper and timely management of nutrients in the soil.

The comparative study was conducted by analysing soils on 10 fields for the pre, mid and post-harvest phases of the crop in six cropping seasons spread across four years. For avoiding site variability, the 10 fields that were based on the traditional knowledge system were located on one farm and the 10 fields that were based on chemical-intensive systems were located on another farm.

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and 'Jivamrit S' which is a fermented concoction consisting of cow urine, cow dung, jaggery, gram flour, and soil. The concoction was prepared onsite in composting pits and was applied with watering twice, at a seven and fourteen-day interval from sowing.

The study was conducted by researchers from the Department of Earth and Environmental Science, KSKV Kachchh University, and Blue Bay Coastal Research Foundation, Chennai, India. The team consisted of Seema B. Sharma, G.A.Thivakaran, and Mahesh G.Thakkar. They have published a report on their work in the journal, `Scientific Reports'.

Speaking to India Science Wire, Dr. Sharma, who was the team leader, noted, "The world population is expected to be 9.7 billion by 2050. This increased population pressure would demand an increased food production. However, the most important entity in agricultural production-the arable land is limited and its expansion beyond a certain threshold is not possible. Meeting the demands of the growing population would require an increased yield from present arable land. However, this increase in yield has to ensure that it was based on sound soil nutrient management, in a way that a self-reliant system is developed that maintains soil fertility in the long run". (India Science Wire)

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

The study establishes the relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability

TOPICS: Carbon

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 8TH SEPTEMBER 2021

New Delhi, Sep 08, 2021: Crop nutrients determine the nutritional content and vigour of crops. The deficiency or occurrence below the minimum level of any of the nutrients is often seen as a cause of poor growth or complete crop failure.

A study has found that farm practice based on traditional knowledge was better than chemical-intensive systems in altering and modifying the nutrient dynamics of the soil with respect to Nitrogen (N), Phosphorus (P), Potassium (K), Sulphur (S), Calcium (Ca), and Magnesium (Mg) levels on a long term basis.

It was conducted in Kachchh in Western India, which is a typical representative of allied arid and semi-arid tropics that are prone to various natural threats and stressors like drought, salinity, and erratic rainfall pattern.

Seasonal amendment data showed that the traditional knowledge-based systems were efficient in the accrual of soil organic carbon (SOC) over seasons, while their impacts with regards to the major primary (N, P, K) and secondary (S, Ca, Mg) nutrients were at par with or higher than integrated chemical-intensive systems. The traditional knowledge-based amendments were found to ensure proper and timely management of nutrients in the soil.

The comparative study was conducted by analysing soils on 10 fields for the pre, mid and post-harvest phases of the crop in six cropping seasons spread across four years. For avoiding site variability, the 10 fields that were based on the traditional knowledge system were located on one farm and the 10 fields that were based on chemical-intensive systems were located on another farm.

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and 'Jivamrit S' which is a fermented concoction consisting of cow urine, cow dung, jaggery, gram flour, and soil. The concoction was prepared onsite in composting pits and was applied with watering twice, at a seven and fourteen-day interval from sowing.

The study was conducted by researchers from the Department of Earth and Environmental Science, KSKV Kachchh University, and Blue Bay Coastal Research Foundation, Chennai, India. The team consisted of Seema B. Sharma, G.A.Thivakaran, and Mahesh G.Thakkar. They have published a report on their work in the journal, `Scientific Reports'.

Speaking to India Science Wire, Dr Sharma, who was the team leader, noted, "The world population is expected to be 9.7 billion by 2050. This increased population pressure would demand an increased food production. However, the most important entity in agricultural production-the arable land is limited and its expansion beyond a certain threshold is not possible. Meeting the demands of the growing population would require an increased yield from present arable land. However, this increase in yield has to ensure that it was based on sound soil nutrient management, in a way that a self-reliant system is developed that maintains soil fertility in the long run".

(India Science Wire)

Topics: crop, nutrients, farm, traditional knowledge, chemical-intensive, Nitrogen, Phosphorus, Potassium, Sulphur, Calcium, Magnesium, Kachchh, arid, tropics, drought, salinity, rainfall, soil organic carbon SOC, compost, Jivamrit S, KSKV Kachchh University.

Kashmir Convener
Voice of Courage

Study establishes relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability

EDUCATION

By Online Editor On Sep 8, 2021

New Delhi, Sep 08 (India Science Wire): Crop nutrients determine the nutritional content and vigour of crops. The deficiency or occurrence below the minimum level of any of the nutrients is often seen as a cause of poor growth or complete crop failure.

A study has found that farm practice based on traditional knowledge was better than chemical-intensive systems in altering and modifying the nutrient dynamics of the soil with respect to Nitrogen (N), Phosphorus (P), Potassium (K), Sulphur (S), Calcium (Ca), and Magnesium (Mg) levels on a long term basis.

It was conducted in Kachchh in Western India, which is a typical representative of allied arid and semi-arid tropics that are prone to various natural threats and stressors like drought, salinity, and erratic rainfall pattern.

Seasonal amendment data showed that the traditional knowledge-based systems were efficient in the accrual of soil organic carbon (SOC) over seasons, while their impacts

with regards to the major primary (N, P, K) and secondary (S, Ca, Mg) nutrients were at par with or higher than integrated chemical-intensive systems. The traditional knowledge-based amendments were found to ensure proper and timely management of nutrients in the soil.

The comparative study was conducted by analysing soils on 10 fields for the pre, mid and post-harvest phases of the crop in six cropping seasons spread across four years. For avoiding site variability, the 10 fields that were based on the traditional knowledge system were located on one farm and the 10 fields that were based on chemical-intensive systems were located on another farm.

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and 'Jivamrit S' which is a fermented concoction consisting of cow urine, cow dung, jaggery, gram flour, and soil. The concoction was prepared onsite in composting pits and was applied with watering twice, at a seven and fourteen-day interval from sowing.

The study was conducted by researchers from the Department of Earth and Environmental Science, KSKV Kachchh University, and Blue Bay Coastal Research Foundation, Chennai, India. The team consisted of Seema B. Sharma, G.A.Thivakaran, and Mahesh G.Thakkar. They have published a report on their work in the journal, `Scientific Reports'.

Speaking to India Science Wire, Dr. Sharma, who was the team leader, noted, "The world population is expected to be 9.7 billion by 2050. This increased population pressure would demand an increased food production. However, the most important entity in agricultural production-the arable land is limited and its expansion beyond a certain threshold is not possible. Meeting the demands of the growing population would require an increased yield from present arable land. However, this increase in yield has to ensure that it was based on sound soil nutrient management, in a way that a self-reliant system is developed that maintains soil fertility in the long run".

The Indian Bulletin
www.theindianbulletin.com

Study establishes relevance of traditional knowledge for agricultural sustainability

By **The Indian Bulletin Online** - September 8, 2021

Photo Credit: Pixabay

New Delhi: Crop nutrients determine the nutritional content and vigour of crops. The deficiency or occurrence below the minimum level of any of the nutrients is often seen as a cause of poor growth or complete crop failure.

A study has found that farm practice based on traditional knowledge was better than chemical-intensive systems in altering and modifying the nutrient dynamics of the soil with respect to Nitrogen (N), Phosphorus (P),

Potassium (K), Sulphur (S), Calcium (Ca), and Magnesium (Mg) levels on a long term basis.

It was conducted in Kachchh in Western India, which is a typical representative of allied arid and semi-arid tropics that are prone to various natural threats and stressors like drought, salinity, and erratic rainfall pattern.

Seasonal amendment data showed that the traditional knowledge-based systems were efficient in the accrual of soil organic carbon (SOC) over seasons, while their impacts with regards to the major primary (N, P, K) and secondary (S, Ca, Mg) nutrients were at par with or higher than integrated chemical-intensive systems. The traditional knowledge-based amendments were found to ensure proper and timely management of nutrients in the soil.

The comparative study was conducted by analysing soils on 10 fields for the pre, mid and post-harvest phases of the crop in six cropping seasons spread across four years. For avoiding site variability, the 10 fields that were based on the traditional knowledge system were located on one farm and the 10 fields that were based on chemical-intensive systems were located on another farm.

The traditional knowledge system-based farm used farmyard compost (FYC) as a basal dose before sowing and 'Jivamrit S' which is a fermented concoction consisting of cow urine, cow dung, jaggery, gram flour, and soil. The concoction was prepared onsite in composting pits and was applied with watering twice, at a seven and fourteen-day interval from sowing.

The study was conducted by researchers from the Department of Earth and Environmental Science, KSKV Kachchh University, and Blue Bay Coastal Research Foundation, Chennai, India. The team consisted of Seema B. Sharma, G.A.Thivakaran, and Mahesh G.Thakkar. They have published a report on their work in the journal, `Scientific Reports'.

Speaking to India Science Wire, Dr. Sharma, who was the team leader, noted, "The world population is expected to be 9.7 billion by 2050. This increased population pressure would demand an increased food production. However, the most important entity in agricultural production-the arable land is limited and its expansion beyond a certain threshold is not possible. Meeting the demands of the growing population would require an increased yield from present arable land. However, this increase in yield has to ensure that it was based on sound soil nutrient management, in a way that a self-reliant system is developed that maintains soil fertility in the long run". (India Science Wire)

WEBDUNIA हिंदी

थार मरुस्थल के संरक्षण के लिए आईआईटी जोधपुर की पहल

Last Updated: शुक्रवार, 10 सितम्बर 2021 (12:58 IST)

नई दिल्ली, पृथ्वी पारितंत्र का प्रत्येक पहलू अत्यंत महत्वपूर्ण है। marusthaliya जलवायु और वनस्पति से लेकर उनसे जुड़ा पूरा तंत्र कई मायनों में अपनी विशिष्ट पहचान और महत्व रखता है।

पर्यावरण संतुलन बनाए रखने के लिए मरुस्थलीयतंत्र के संरक्षण के प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। इस - जोधपुर एक बड़ा कदम उठाने जा रहा है। जोधपुर सिटी (आईआईटी) दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान नॉलेज एंड इनोवेशन क्लस्टर के अंतर्गत संस्थान ने थार डेजर्ट इकोसिस्टम साइंसेज गाइडेड बाइ नेचर एंड सेलेक्शन के रूप में एक अद्भुत पहल की है। इसका उद्देश्य थार रेगिस्तान के संरक्षण के साथ ही (डिजाइंस) उसमें हो रहे ह्रास को भी कम करना है।

भारत की पश्चिमोत्तर सीमा पर स्थित थार रेगिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप की भौगोलिक विशिष्टताओं का एक प्रमुख बिंदु है। अधिकतम तापमान, तापीय विभिन्नता, छिटपुट और छितराई हुई वर्षा और पराबैंगनी किरणों का व्यापक विकिरण इस रेगिस्तान की प्रमुख विशेषताएं मानी जाती हैं। ऐसे में यह डिजाइंस और उसके इर्दगिर्द नवाचारों के प्रवर्तन के लिए एक सहज एवं प्राकृतिक प्रयोगशाला बन जाता है।

इससे यहां की जैविकप्रजातियों-, उनकी परस्पर निर्भरता, अनुकूलन स्तर और उनसे जुड़े समूचे परितंत्र के संरक्षण के लिए कार्ययोजना बनाने का अवसर उपलब्ध होगा।

पिछले कुछ समय से पर्यावरणीय अपकर्षण के कारण विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक पर्यावासों को क्षति पहुंची और रेगिस्तान भी उससे अछूते नहीं रहे हैं। प्राकृतिक रेगिस्तानों के पतन के बहुत गहरे दुष्प्रभाव देखे जा रहे हैं, क्योंकि यहां अपनी किस्म की अनूठी और महत्वपूर्ण वनस्पतियां विद्यमान होती हैं। साथ ही ये विभिन्न प्रकार के खनिजों और दवाओं के भंडार भी होते हैं।

इतना ही नहीं पृथ्वी पर जीवन अनुकूल परिस्थितियों को कायम रखने के लिए भी ये अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। इसे इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि प्रायः रेगिस्तान को जमीन का बेकार टुकड़ा समझा जाता है, लेकिन जलवायु को स्थिर रखने में ये निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। ऐसे में इनकी प्रकृति में आया मामूली परिवर्तन भी जलवायु को व्यापक स्तर पर प्रभावित कर सकता है, जिससे समूचा पारितंत्र प्रभावित हो सकता है। इसका कुप्रभाव मानव जीवन से लेकर उसकी आजीविका पर भी पड़ सकता है। इन सभी आशंकाओं के संदर्भ में 'डिजाइंस' जैसी पहल उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए जोधपुर सिटी लॉलेज एंड इनोवेशन क्लस्टर ने इंजीनियरिंग (जेसीकेआईसी), अंतरिक्ष अनुसंधान, मेडिकल, कृषि, प्राणि विज्ञान एवं वनस्पति विज्ञान के विभिन्न पक्षों को एक साथ एक मंच पर लाने की पहल की है। ये सभी मिलकर थार रेगिस्तान के विविधता भरे पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करेंगे। इस सहयोग की कड़ियां एक एकीकृत ढांचे के अंतर्गत समन्वित रूप से कार्य करेंगी।

थार 'डिजाइंस' जैसी पहल को लेकर आईआईटी जोधपुर में बायोसाइंस एंड बायोइंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रोफेसर मिताली मुखर्जी ने बताया है कि 'थार डिजाइंस का मकसद ज्ञान की साझेदारी और नागरिक विज्ञान दृष्टिकोण के माध्यम से साझेदारी प्रोत्साहन देना है। इसमें समग्र समन्वित नेटवर्क के जरिये डिजाइन थिंकिंग भी शामिल है।'

इस अध्ययन के लिए शोधार्थी इंटरनेट से संचालित होने वाले उपकरणों और बिग डेटा एनालिटिक्स का उपयोग कर विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में प्राप्त सूचनाओं का वृहद उपयोग सुनिश्चित करेंगे। इनमें स्थानीय, सांस्कृतिक एवं पारंपरिक औषधियों जैसे पहलू भी शामिल होंगे। ***(इंडिया साइंस वायर(***

थार मरुस्थल के संरक्षण के लिए आईआईटी जोधपुर की पहल

09/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 09 सितंबर पृथ्वी पारितंत्र का प्रत्येक पहलू अत्यंत महत्वपूर्ण है। मरुस्थलीय जलवायु और :(इंडिया साइंस वायर) वनस्पति से लेकर उनसे जुड़ा पूरा तंत्र कई मायनों में अपनी विशिष्ट पहचान और महत्व रखता है। पर्यावरण संतुलन बनाए रखने के लिए मरुस्थलीय तंत्र के संरक्षण के प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। इस दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान-जोधपुर एक बड़ा कदम उठाने जा रहा है। (आईआईटी)

जोधपुर सिटी नॉलेज एंड इनोवेशन क्लस्टर के अंतर्गत संस्थान ने थार डेजर्ट इकोसिस्टम साइंसेज गाइडेड बाइ नेचर एंड सेलेक्शन के रूप में एक अद्भुत पहल की है। इसका उद्देश्य थार रेगिस्तान के संरक्षण के साथ ही उसमें हो रहे ह्रास (डिजाइंस) पश्चिमोत्तर सीमा पर स्थि को भी कम करना है। भारत कीत थार रेगिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप की भौगोलिक विशिष्टताओं का एक प्रमुख बिंदु है। अधिकतम तापमान, तापीय विभिन्नता, छिटपुट और छितराई हुई वर्षा और पराबैंगनी किरणों का व्यापक विकिरण इस रेगिस्तान की प्रमुख विशेषताएं मानी जाती हैं।

ऐसे में यह डिजाइंस और उसके इर्दगिर्द नवाचारों के प्रवर्तन के लिए एक सहज एवं प्राकृतिक प्रयोगशाला बन जाता है। इससे यहां की जैविकप्रजातियों-, उनकी परस्पर निर्भरता,अनुकूलन स्तर और उनसे जुड़े समूचे परितंत्र के संरक्षण के लिए कार्ययोजना बनाने का अवसर उपलब्ध होगा। पिछले कुछ समय से पर्यावरणीय अपकर्षण के कारण विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक

पर्यावासों को क्षति पहुंची और रेगिस्तान भी उससे अछूते नहीं रहे हैं। प्राकृतिक रेगिस्तानों के पतन के बहुत गहरे दुष्प्रभाव देखे जा रहे हैं, क्योंकि यहां अपनी किस्म की अनूठी और महत्वपूर्ण वनस्पतियां विद्यमान होती हैं।

साथ ही ये विभिन्न प्रकार के खनिजों और दवाओं के भंडार भी होते हैं। इतना ही नहीं पृथ्वी पर जीवन अनुकूल परिस्थितियों को कायम रखने के लिए भी ये अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। इसे इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि प्रायः रेगिस्तान को जमीन का बेकार टुकड़ा समझा जाता है, लेकिन जलवायु को स्थिर रखने में ये निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। ऐसे में इनकी प्रकृति में आया मामूली परिवर्तन भी जलवायु को व्यापक स्तर पर प्रभावित कर सकता है, जिससे समूचा पारितंत्र प्रभावित हो सकता है।

इसका कुप्रभाव मानव जीवन से लेकर उसकी आजीविका पर भी पड़ सकता है। इन सभी आशंकाओं के संदर्भ में 'डिजाइंस' जैसी पहल उपयोगी सिद्ध हो सकती है। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए जोधपुर सिटी लॉलेज एंड इनोवेशन क्लस्टर ने (जेसीकेआईसी) इंजीनियरिंग, अंतरिक्ष अनुसंधान, मेडिकल, कृषि, प्राणि विज्ञान एवं वनस्पति विज्ञान के विभिन्न पक्षों को एक साथ एक मंच पर लाने की पहल की है। ये सभी मिलकर थार रेगिस्तान के विविधता भरे पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करेंगे।

इस सहयोग की कड़ियां एक एकीकृत ढांचे के अंतर्गत समन्वित रूप से कार्य करेंगी। थार 'डिजाइंस' जैसी पहल को लेकर आईआईटी जोधपुर में बायोसाइंस एंड बायोइंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रोफेसर मिताली मुखर्जी ने बताया है कि 'थार डिजाइंस का मकसद ज्ञान की साझेदारी और नागरिक विज्ञान दृष्टिकोण के माध्यम से साझेदारी प्रोत्साहन देना है।

इसमें समग्र समन्वित नेटवर्क के जरिये डिजाइन थिंकिंग भी शामिल है।' इस अध्ययन के लिए शोधार्थी इंटरनेट से संचालित होने वाले उपकरणों और बिग डेटा एनालिटिक्स का उपयोग कर विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में प्राप्त सूचनाओं का वृहद उपयोग सुनिश्चित करेंगे। इनमें स्थानीय, सांस्कृतिक एवं पारंपरिक औषधियों जैसे पहलू भी शामिल होंगे।

थार मरुस्थल के संरक्षण के लिए आईआईटी जोधपुर की पहल

By Ram Bharose

सितम्बर 9, 2021 आईआईटी जोधपुर, पर्यावरण संतुलन, रेगिस्तान

IIT Jodhpur's initiative for conservation of Thar desert

नई दिल्ली, 09 सितंबर, 2021: पृथ्वी पारितंत्र का प्रत्येक पहलू अत्यंत महत्वपूर्ण है। **मरुस्थलीय जलवायु और** वनस्पति **से लेकर उनसे जुड़ा पूरा तंत्र (Complete system related to desert climate and vegetation)** कई मायनों में अपनी विशिष्ट पहचान और महत्व रखता है। पर्यावरण संतुलन **(environmental balance)** बनाए रखने के लिए **मरुस्थलीयतंत्र के संरक-्षण के प्रयास** किए जाने की आवश्यकता है। इस दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान जोधपुर एक बड़ा कदम उठाने जा रहा है। (आईआईटी)

जोधपुर सिटी नॉलेज एंड इनोवेशन क्लस्टर के अंतर्गत संस्थान ने **थार डेजर्ट इकोसिस्टम साइंसेज गाइडेड बाइ नेचर एंड सेलेक्शन** (डिजाइंसके र (ूप में एक अद्‌भुत पहल की है। इसका उद्देश्य थार रेगिस्तान के संरक्षण के साथ ही उसमें हो रहे ह्रास को भी कम करना है।

भारत की पश्चिमोत्तर सीमा पर स्थित थार रेगिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप की भौगोलिक विशिष्टताओं का एक प्रमुख बिंदु है। अधिकतम तापमान, तापीय विभिन्नता, छिटपुट और छितराई हुई वर्षा और पराबैंगनी किरणों का व्यापक विकिरण इस रेगिस्तान की प्रमुख विशेषताएं मानी जाती हैं। ऐसे में यह डिजाइंस और उसके इर्दगिर्द नवाचारों के प्रवर्तन के लिए एक सहज एवं प्राकृतिक प्रयोगशाला बन जाता है। इससे यहां की जैविक-प्रजातियों, उनकी परस्पर निर्भरता,अनुकूलन स्तर और उनसे जुड़े समूचे परितंत्र के संरक्षण के लिए कार्ययोजना बनाने का अवसर उपलब्ध होगा।

पिछले कुछ समय से पर्यावरणीय अपकर्षण के कारण विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक पर्यावासों को क्षति पहुंची और रेगिस्तान भी उससे अछूते नहीं रहे हैं।

The deep effects of the degradation of natural deserts

प्राकृतिक रेगिस्तानों के पतन के बहुत गहरे दुष्प्रभाव देखे जा रहे हैं, क्योंकि यहां अपनी किस्म की अनूठी और महत्वपूर्ण वनस्पतियां विद्यमान होती हैं। साथ ही ये विभिन्न प्रकार के खनिजों और दवाओं के भंडार भी होते हैं। इतना ही नहीं पृथ्वी पर जीवन अनुकूल परिस्थितियों को कायम रखने के लिए भी ये अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। इसे इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि प्रायः रेगिस्तान को जमीन का बेकार टुकड़ा समझा जाता है, लेकिन जलवायु को स्थिर रखने में ये निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। ऐसे में इनकी प्रकृति में आया मामूली परिवर्तन भी जलवायु को व्यापक स्तर पर प्रभावित कर सकता है, जिससे समूचा पारितंत्र प्रभावित हो सकता है। इसका कुप्रभाव मानव जीवन से लेकर उसकी आजीविका पर भी पड़ सकता है। इन सभी आशंकाओं के संदर्भ में 'डिजाइंस' जैसी पहल उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए जोधपुर सिटी लॉलेज एंड इनोवेशन क्लस्टर ने इंजीनियरिंग (जेसीकेआईसी), अंतरिक्ष अनुसंधान, मेडिकल, कृषि, प्राणि विज्ञान एवं वनस्पति विज्ञान के विभिन्न पक्षों को एक साथ एक मंच पर लाने की पहल की है। ये सभी मिलकर थार रेगिस्तान के विविधता भरे पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करेंगे। इस सहयोग की कड़ियां एक एकीकृत ढांचे के अंतर्गत समन्वित रूप से कार्य करेंगी।

थार 'डिजाइंस' जैसी पहल को लेकर **आईआईटी जोधपुर** में बायोसाइंस एंड बायोइंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रोफेसर मिताली मुखर्जी ने बताया है कि 'थार डिजाइंस का मकसद ज्ञान की साझेदारी और नागरिक विज्ञान दृष्टिकोण के माध्यम से साझेदारी प्रोत्साहन देना है। इसमें समग्र समन्वित नेटवर्क के जरिये डिजाइन थिंकिंग भी शामिल है।'

इस अध्ययन के लिए शोधार्थी इंटरनेट से संचालित होने वाले उपकरणों और बिग डेटा एनालिटिक्स का उपयोग कर विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में प्राप्त सूचनाओं का वृहद उपयोग सुनिश्चित करेंगे। इनमें स्थानीय, सांस्कृतिक एवं पारंपरिक औषधियों जैसे पहलू भी शामिल होंगे।

(इंडिया साइंस वायर)

थार मरुस्थल के संरक्षण के लिए आईआईटी जोधपुर की पहल

September 9, 2021 Avinash

नई दिल्ली, 09 सितंबर इंडिया)साइंस वायर पृथ्वी पारितंत्र का प्रत्येक पहलू अत्यंत महत्वपूर्ण है। :(marusthaliya जलवायु और वनस्पति से लेकर उनसे जुड़ा पूरा तंत्र कई मायनों में अपनी विशिष्ट पहचान और महत्व रखता है। पर्यावरण संतुलन बनाए रखने के लिए मरुस्थलीयके प्रयास किए ज तंत्र के संरक्षण-ाने की आवश्यकता है। इस दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान जोधपुर एक बड़ा कदम उठाने जा रहा है। जोधपुर सिटी नॉलेज (आईआईटी) एंड इनोवेशन क्लस्टर के अंतर्गत संस्थान ने थार डेजर्ट इकोसिस्टम साइंसेज गाइडेड बाइ नेचर एंड सेलेक्शन में एक अद्भुत पह के रूप (डिजाइंस)ल की है। इसका उद्देश्य थार रेगिस्तान के संरक्षण के साथ ही उसमें हो रहे ह्रास को भी कम करना है।

भारत की पश्चिमोत्तर सीमा पर स्थित थार रेगिस्तान भारतीय उपमहाद्वीप की भौगोलिक विशिष्टताओं का एक प्रमुख बिंदु है। अधिकतम तापमान, तापीय विभिन्नता, छिटपुट और छितराई हुई वर्षा और पराबैंगनी किरणों का व्यापक विकिरण इस रेगिस्तान की प्रमुख विशेषताएं मानी जाती हैं। ऐसे में यह डिजाइंस और उसके इर्दगिर्द नवाचारों के प्रवर्तन के लिए एक सहज एवं प्राकृतिक प्रयोगशाला बन जाता है। इससे यहां की जैविकप्रजातियों-,

उनकी परस्पर निर्भरता,अनुकूलन स्तर और उनसे जुड़े समूचे परितंत्र के संरक्षण के लिए कार्ययोजना बनाने का अवसर उपलब्ध होगा।

पिछले कुछ समय से पर्यावरणीय अपकर्षण के कारण विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक पर्यावासों को क्षति पहुंची और रेगिस्तान भी उससे अछूते नहीं रहे हैं। प्राकृतिक रेगिस्तानों के पतन के बहुत गहरे दुष्प्रभाव देखे जा रहे हैं, क्योंकि यहां अपनी किस्म की अनूठी और महत्वपूर्ण वनस्पतियां विद्यमान होती हैं। साथ ही ये विभिन्न प्रकार के खनिजों और दवाओं के भंडार भी होते हैं। इतना ही नहीं पृथ्वी पर जीवन अनुकूल परिस्थितियों को कायम रखने के लिए भी ये अपनी अहम भूमिका निभाते हैं। इसे इसी तथ्य से समझा जा सकता है कि प्रायः रेगिस्तान को जमीन का बेकार टुकड़ा समझा जाता है, लेकिन जलवायु को स्थिर रखने में ये निर्णायक भूमिका अदा करते हैं। ऐसे में इनकी प्रकृति में आया मामूली परिवर्तन भी जलवायु को व्यापक स्तर पर प्रभावित कर सकता है, जिससे समूचा पारितंत्र प्रभावित हो सकता है। इसका कुप्रभाव मानव जीवन से लेकर उसकी आजीविका पर भी पड़ सकता है। इन सभी आशंकाओं के संदर्भ में 'डिजाइंस' जैसी पहल उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए जोधपुर सिटी लॉलेज एंड इनोवेशन क्लस्टर ने इंजीनियरिंग (जेसीकेआईसी), अंतरिक्ष अनुसंधान, मेडिकल, कृषि, प्राणि विज्ञान एवं वनस्पति विज्ञान के विभिन्न पक्षों को एक साथ एक मंच पर लाने की पहल की है। ये सभी मिलकर थार रेगिस्तान के विविधता भरे पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करेंगे। इस सहयोग की कड़ियां एक एकीकृत ढांचे के अंतर्गत समन्वित रूप से कार्य करेंगी।

थार 'डिजाइंस' जैसी पहल को लेकर आईआईटी जोधपुर में बायोसाइंस एंड बायोइंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रोफेसर मिताली मुखर्जी ने बताया है कि 'थार डिजाइंस का मकसद ज्ञान की साझेदारी और नागरिक विज्ञान दृष्टिकोण के माध्यम से साझेदारी प्रोत्साहन देना है। इसमें समग्र समन्वित नेटवर्क के जरिये डिजाइन थिंकिंग भी शामिल है।'

इस अध्ययन के लिए शोधार्थी इंटरनेट से संचालित होने वाले उपकरणों और बिग डेटा एनालिटिक्स का उपयोग कर विभिन्न परिप्रेक्ष्यों में प्राप्त सूचनाओं का वृहद उपयोग सुनिश्चित करेंगे। इनमें स्थानीय, सांस्कृतिक एवं पारंपरिक औषधियों जैसे पहलू भी शामिल होंगे। (इंडिया साइंस वायर)

भारत में बढ़ रहा है गर्म हवाओं का प्रकोप

09/09/2021 V3news India

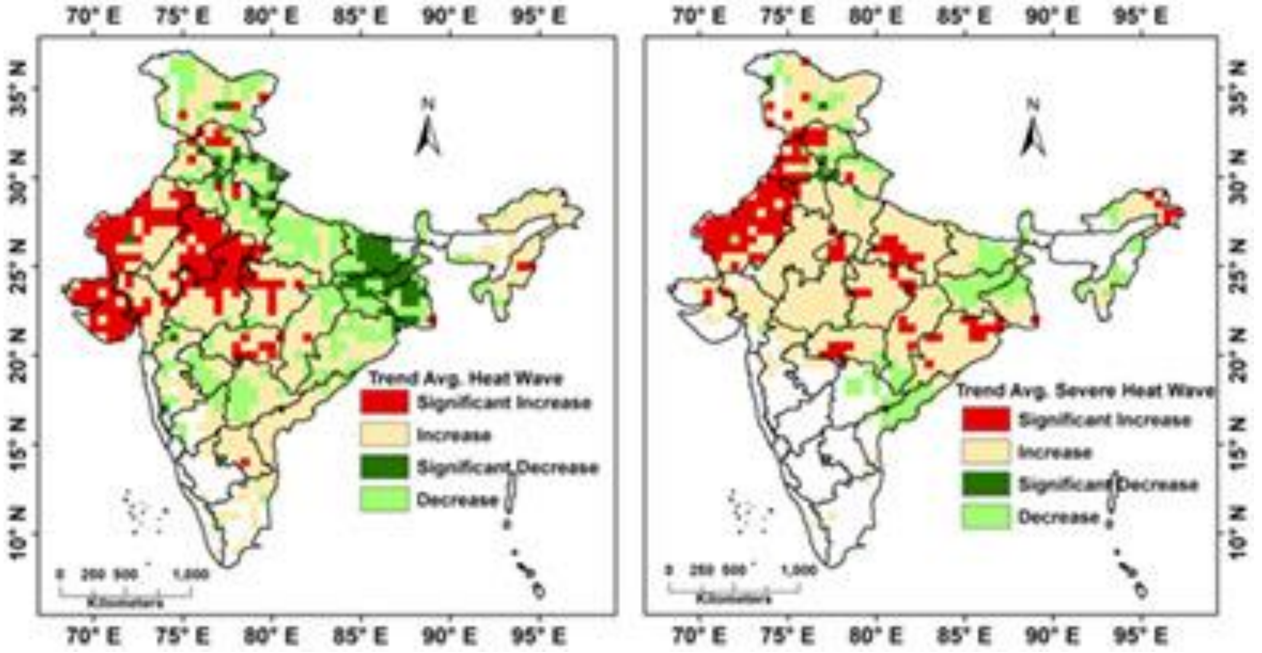

नई दिल्ली, 09 सितंबर प्रतिकूल मौसमी परिघटनाएं मानव जीवन को व्यापक स्तर पर प्रभावित कर :(इंडिया साइंस वायर) रही हैं। पिछले कुछ समय से ऐसी मौसमी परिघटनाओं की आवृत्ति एवं तीव्रता मेंवृद्धि देखी जा रही है। भारत में ग्रीष्म लहर यानी गर्म हवाओं के थपेड़ों का प्रकोप लगातार बढ़ रहा है। एक हालिया अध्ययन के अनुसार भारत के उत्तरपश्चिमी-, मध्य और दक्षिण मध्य क्षेत्र विगत पांच दशकों में ग्रीष्म लहर के मुख्य बिंदु बने हैं।

वैज्ञानिक भाषा में इन स्थानों हो ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट की संज्ञा दी जाती है। इस अध्ययन में दर्शाया गया है कि ये ग्रीष्म लहर स्थानीय निवासियों की सेहत और उनसे संबंधित गतिविधियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती हैं। ऐसे में उनसे निपटने के लिए एक उपयुक्त कार्ययोजना यानी एक्शन प्लान बनाना समय की आवश्यकता हो गई है। अध्ययन में इस समस्या के समाधान पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है। ग्रीष्म लहर ने मानवीय स्वास्थ्य, कृषि, अर्थव्यवस्था और अवसंरचना ढांचे पर गंभीर प्रभाव डाला है।

इन परिस्थितियों को देखते हुए इस मोर्चे पर तत्काल नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता है। इसके लिए ग्रीष्म लहर के लिहाज से संवेदनशील क्षेत्रों को चिह्नित करना अत्यंत आवश्यक है। उन्हें चिह्नित कर और उनसे जुड़ी इस समस्या के मूल को समझकर ही कोई कारगर समाधान तलाशने की दिशा में आगे बढ़ा जा सकता है। यह शोधअध्ययन इसी- दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी वक्तव्य के अनुसार, यह शोध भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के प्रोमाल के नेतृत्व में किया गया है। .के .आर .

इसमें सौम्या सिंह और निधि सिंह सहित काशी हिंदू विश्वविद्यालय में जलवायु परिवर्तन के अनुसंधान के लिए महामना उत्कृष्टता केंद्र ने पिछले सात दशकों में भारत के विभिन्न मौसम संबंधी उपखंडों में ग्रीष्म लहर और गंभीर (एमसीईसीसीआर) ग्रीष्म लहर में स्थानिक और अस्थायी प्रवृत्तियों में परिवर्तन का अध्ययन किया। साथ ही, इसमें ग्रीष्म लहर और गंभीर ग्रीष्म लहर से भारत में मृत्यु दर की कड़ियों को भी जोड़ा गया है। इस कार्य के लिए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के जलवायु परिवर्तन कार्यक्रम के अंतर्गत सहयोग दिया गया है। इस शोध का प्रकाशन "इंटरनेशनल जर्नल ऑफ क्लाइमेटोलॉजी" में हुआ है।

इस अध्ययन में पश्चिम बंगाल और बिहार के गांगेय क्षेत्र से पूर्वी क्षेत्र से उत्तरपश्चिमी-, मध्य और आगे भारत के दक्षिणमध्य - सामयिक प्रवृत्ति में परिवर्तन दर्शाया गया है। इसमें दक्षिण की ओर खतरनाक -क्षेत्र में ग्रीष्म लहर की घटनाओं की स्थानिक विस्तार और एसएचडब्ल्यू घटनाओं में स्थानिक वृद्धि देखी गई है जो पहले से ही कम दैनिक तापमान रेंज या अंतर (डीटीआर) के बीच की विशेषता वाले क्षेत्र में अधिकतम और न्यूनतम तापमान के कारण किसी दिन विशेष में उच्च आर्द्रता वाली गर्मी के अतिरिक्त एक बड़ी आबादी को कई प्रकार के जोखिम में डाल सकती है।

ऐसी घटनाओं के दृष्टिकोण से ओडिशा और आंध्र प्रदेश में मृत्यु दर के साथ सकारात्मक रूप से सहसंबद्ध पाया गया है। इससे - संवेदनशील है। इस अध्ययन में-स्पष्ट है कि मानव स्वास्थ्य गंभीर ग्रीष्म लहर आपदाओं के लिहाज से अति सुझाव दिया गया है कि अत्यधिक तापमान की लगातार बढ़ती सीमा के साथ, गर्मी कम करने के उपाय समय की आवश्यकता हैं। यह अध्ययन समीक्षाधीन तीन ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट क्षेत्रों में प्रभावी ग्रीष्म नियंत्रण कार्य योजना विकसित करने की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है।

Climate Change: भारत में बढ़ रहा है गर्म हवाओं का प्रकोप

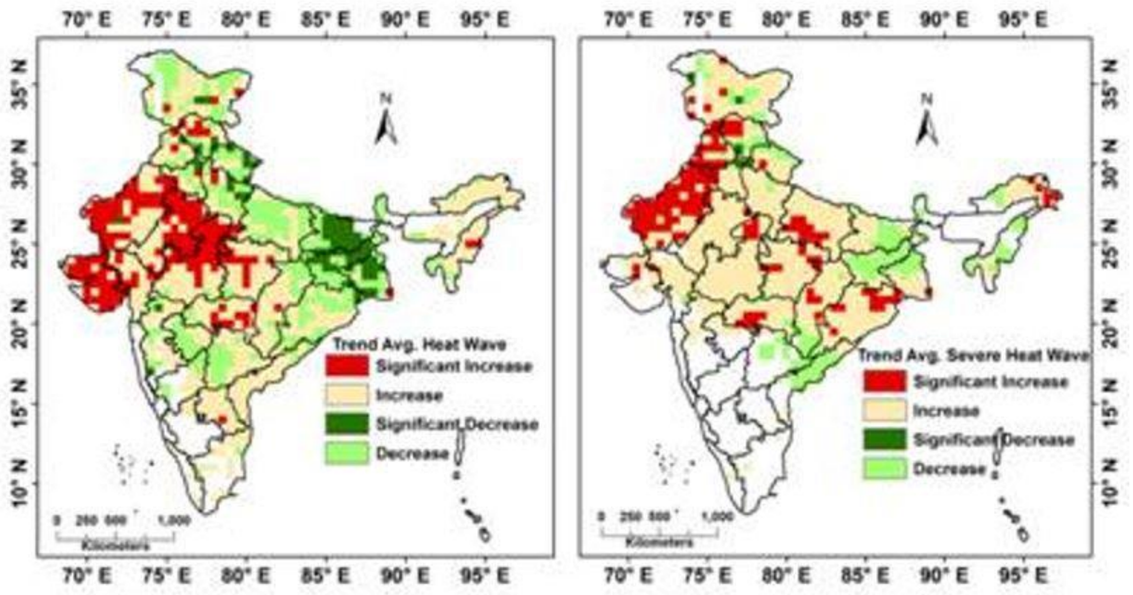

मौसमी ग्रीष्म लहर और गंभीर ग्रीष्म लहर घटनाओं में दीर्घकालिक रुझान

Last Updated: शुक्रवार, 10 सितम्बर 2021 (12:48 IST)

नई दिल्ली, प्रतिकूल मौसमी परिघटनाएं मानव जीवन को व्यापक स्तर पर प्रभावित कर रही हैं। पिछले कुछ समय से ऐसी मौसमी परिघटनाओं की आवृत्ति एवं तीव्रता में वृद्धि देखी जा रही है। भारत में ग्रीष्म लहर यानी गर्म हवाओं के थपेड़ों का प्रकोप लगातार बढ़ रहा है।

एक हालिया अध्ययन के अनुसार भारत के उत्तरपश्चिमी-, मध्य और दक्षिण मध्य क्षेत्र विगत पांच दशकों में ग्रीष्म लहर के मुख्य बिंदु बने हैं। वैज्ञानिक भाषा में इन स्थानों हो ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट की संज्ञा दी जाती है। इस अध्ययन में दर्शाया गया है कि ये ग्रीष्म लहर स्थानीय निवासियों की सेहत और उनसे संबंधित गतिविधियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती हैं। ऐसे में उनसे निपटने के

लिए एक उपयुक्त कार्ययोजना यानी एक्शन प्लान बनाना समय की आवश्यकता हो गई है। अध्ययन में इस समस्या के समाधान पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

ग्रीष्म लहर ने मानवीय स्वास्थ्य, कृषि, अर्थव्यवस्था और अवसंरचना ढांचे पर गंभीर प्रभाव डाला है। इन परिस्थितियों को देखते हुए इस मोर्चे पर तत्काल नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता है। इसके लिए ग्रीष्म लहर के लिहाज से संवेदनशील क्षेत्रों को चिह्नित करना अत्यंत आवश्यक है। उन्हें चिह्नित कर और उनसे जुड़ी इस समस्या के मूल को समझकर ही कोई कारगर समाधान तलाशने की दिशा में आगे बढ़ा जा सकता है। यह

शोधअध्ययन इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।-

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी वक्तव्य के अनुसार, यह शोध भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के प्रोमाल के नेतृत्व में किया गया है। इसमें सौम्या सिंह और .के .आर . निधि सिंह सहित काशी हिंदू विश्वविद्यालय में जलवायु परिवर्तन के अनुसंधान के लिए महामना उत्कृष्टता केंद्र ने पिछले सात दशकों में भारत के विभिन्न मौसम संबंधी (एमसीईसीसीआर) ग्रीष्म लहर में स्थानिक और अस्थायी प्रवृत्तियों में परिवर्तन का उपखंडों में ग्रीष्म लहर और गंभीर अध्ययन किया।

साथ ही, इसमें ग्रीष्म लहर और गंभीर ग्रीष्म लहर से भारत में मृत्यु दर की कड़ियों को भी जोड़ा गया है। इस कार्य के लिए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के जलवायु परिवर्तन कार्यक्रम के अंतर्गत सहयोग दिया गया है। इस शोध का प्रकाशन में हुआ है। "इंटरनेशनल जर्नल ऑफ क्लाइमेटोलॉजी"

इस अध्ययन में पश्चिम बंगाल और बिहार के गांगेय क्षेत्र से पूर्वी क्षेत्र से उत्तरपश्चिमी-, मध्य और आगे भारत के दक्षिणसामयिक प्रवृत्ति में -निकमध्य क्षेत्र में ग्रीष्म लहर की घटनाओं की स्था-परिवर्तन दर्शाया गया है। इसमें दक्षिण की ओर खतरनाक विस्तार और एसएचडब्ल्यू घटनाओं में स्थानिक वृद्धि देखी गई है जो पहले से ही कम दैनिक तापमान रेंज या अंतर के बीच की (डीटीआर) ण किसी दिन विशेष में उच्च आर्द्रता विशेषता वाले क्षेत्र में अधिकतम और न्यूनतम तापमान के कार वाली गर्मी के अतिरिक्त एक बड़ी आबादी को कई प्रकार के जोखिम में डाल सकती है।

ऐसी घटनाओं के दृष्टिकोण से ओडिशा और आंध्र प्रदेश में मृत्यु दर के साथ सकारात्मक रूप से सह-भीर ग्रीष्म लहर आपदाओं के लिहाज से संबद्ध पाया गया है। इससे स्पष्ट है कि मानव स्वास्थ्य गं संवेदनशील है। इस अध्ययन में सुझाव दिया गया है कि अत्यधिक तापमान की लगातार -अति बढ़ती सीमा के साथ, गर्मी कम करने के उपाय समय की आवश्यकता हैं। यह अध्ययन समीक्षाधीन तीन ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट क्षेत्रों में प्रभावी ग्रीष्म नियंत्रण कार्य योजना विकसित करने की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है। ***(इंडिया साइंस वायर(***

HEAD TOPICS इंडिया

भारत में बढ़ रहा है प्रतिकूल मौसमी घटनाओं का प्रकोप

भारत पिछले कुछ समय से विभिन्न किस्म की मौसमी प्रतिकूलताओं से जूझता आया है। उनमें गर्म हवाएं यानी हीटवेव्स को भी एक खतरनाक मौसमी परिघटना माना जाता #HindiNews #WeatherUpdate

08-07-2021 11:34:00

स्रोत
Webdunia Hindi

भारत पिछले कुछ समय से विभिन्न किस्म की मौसमी प्रतिकूलताओं से जूझता आया है। उनमें गर्म हवाएं यानी हीटवेव्स को भी एक खतरनाक मौसमी परिघटना माना जाता HindiNews WeatherUpdate

इस अध्ययन में गर्म हवाओं के कारण मृत्यु दर में बढ़ोतरी के साथ साथ संवेदनशील-राज्यों में वज्रपात की घटनाओं की भी थाह ली गई है। इसमें कहा गया है कि मैदानी इलाकों में 40 डिग्री सेल्सियस और पर्वतीय इलाकों में 30 डिग्री सेल्सियस से अधिक तापमान पर ही गर्म हवाओं के लिए परिवेश निर्मित होता है।

और पढो :Webdunia Hindi »

भारत में बढ़ रहा है गर्म हवाओं का प्रकोप

September 9, 2021 Avinash

नई दिल्ली, 09 सितंबर प्रतिकूल मौसमी परिघटनाएं मानव जीवन को व्यापक स्तर पर प्रभावित कर रही हैं। :(इंडिया साइंस वायर) पिछले कुछ समय से ऐसी मौसमी परिघटनाओं की आवृत्ति एवं तीव्रता में वृद्धि देखी जा रही है। भारत में ग्रीष्म लहर यानी गर्म हवाओं के थपेड़ों का प्रकोप लगातार बढ़ रहा है। एक हालिया अध्ययन के अनुसार भारत के उत्तरपश्चिमी-, मध्य और दक्षिण मध्य क्षेत्र विगत पांच दशकों में ग्रीष्म लहर के मुख्य बिंदु बने हैं। वैज्ञानिक भाषा में इन स्थानों हो ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट की संज्ञा दी जाती है। इस अध्ययन में दर्शाया गया है कि ये ग्रीष्म लहर स्थानीय निवासियों की सेहत और उनसे संबंधित गतिविधियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती हैं। ऐसे में उनसे निपटने के लिए एक उपयुक्त कार्ययोजना यानी एक्शन प्लान बनाना समय की आवश्यकता हो गई है। अध्ययन में इस समस्या के समाधान पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

ग्रीष्म लहर ने मानवीय स्वास्थ्य, कृषि, अर्थव्यवस्था और अवसंरचना ढांचे पर गंभीर प्रभाव डाला है। इन परिस्थितियों को देखते हुए इस मोर्चे पर तत्काल नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता है। इसके लिए ग्रीष्म लहर के लिहाज से संवेदनशील क्षेत्रों को चिह्नित करना अत्यंत आवश्यक है। उन्हें चिह्नित कर और उनसे जुड़ी इस समस्या के मूल को समझकर ही कोई कारगर समाधान तलाशने की दिशा में आगे बढ़ा जा सकता है। यह शोध अध्ययन इसी दिशा में एक-महत्वपूर्ण कदम है।

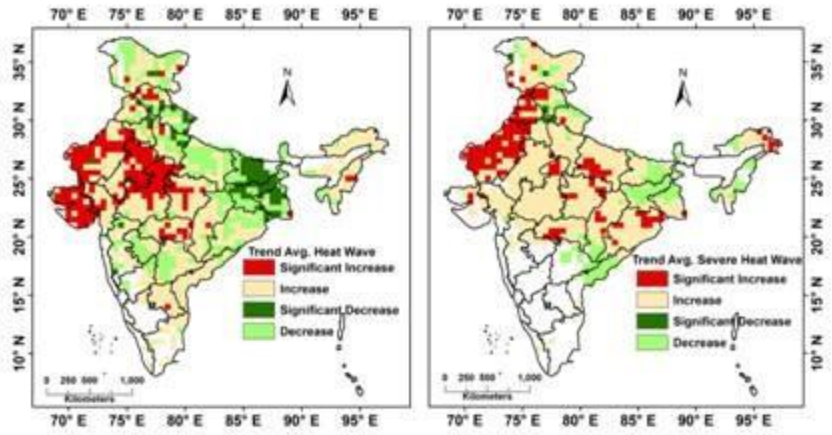

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी वक्तव्य के अनुसार, यह शोध भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के प्रो . माल के नेतृत्व में किया गया है। इसमें सौम्या सिंह और निधि सिंह सहित काशी हिंदू विश्वविद्यालय में .के .आरजलवायु परिवर्तन के अनुसंधान के लिए महामना उत्कृष्टता केंद्र ने पिछले सात दशकों में भारत के विभिन्न मौसम संबंधी उपखंडों में (एमसीईसीसीआर) ग्रीष्म लहर और गंभीर ग्रीष्म लहर में स्थानिक और अस्थायी प्रवृत्तियों में परिवर्तन का अध्ययन किया। साथ ही, इसमें ग्रीष्म लहर और गंभीर ग्रीष्म लहर से भारत में मृत्यु दर की कड़ियों को भी जोड़ा गया है। इस कार्य के लिए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के जलवायु परिवर्तन कार्यक्रम के अंतर्गत सहयोग दिया गया है। इस शोध का प्रकाशन "इंटरनेशनल जर्नल ऑफ क्लाइमेटोलॉजी" में हुआ है।

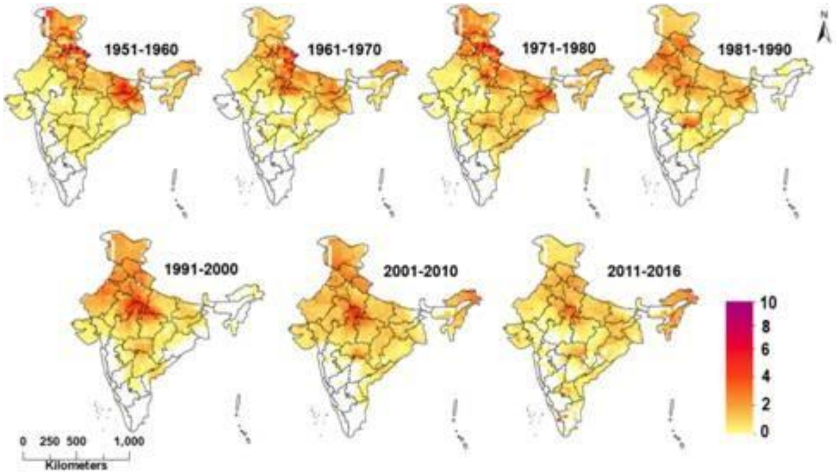

इस अध्ययन में पश्चिम बंगाल और बिहार के गांगेय क्षेत्र से पूर्वी क्षेत्र से उत्तरपश्चिमी-, मध्य और आगे भारत के दक्षिणमध्य क्षेत्र में -सामयिक प्रवृत्ति में परिवर्तन दर्शाया गया है। इसमें दक्षिण की ओर खतरनाक विस्तार और -ग्रीष्म लहर की घटनाओं की स्थानिक एसएचडब्ल्यू घटनाओं में स्थानिक वृद्धि देखी गई है जो पहले से ही कम दैनिक तापमान रेंज या अंतर के बीच की (डीटीआर) विशेषता वाले क्षेत्र में अधिकतम और न्यूनतम तापमान के कारण किसी दिन विशेष में उच्च आर्द्रता वाली गर्मी के अतिरिक्त एक बड़ी आबादी को कई प्रकार के जोखिम में डाल सकती है। ऐसी घटनाओं के दृष्टिकोण से ओडिशा और आंध्र प्रदेश में मृत्यु दर के साथ सकारात्मक रूप से सह-संबद्ध पाया गया है। इससे स्पष्ट है कि मानव स्वास्थ्य गंभीर ग्रीष्म लहर आपदाओं के लिहाज से अति-संवेदनशील है। इस अध्ययन में सुझाव दिया गया है कि अत्यधिक तापमान की लगातार बढ़ती सीमा के साथ, गर्मी कम करने के उपाय समय की आवश्यकता हैं। यह अध्ययन समीक्षाधीन तीन ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट क्षेत्रों में प्रभावी ग्रीष्म नियंत्रण कार्य योजना विकसित करने की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है। (इंडिया साइंस वायर)

हस्तक्षेप.com

भारत में बढ़ रहा है गर्म हवाओं का प्रकोप

भारत में ग्रीष्म लहर)heat wave in india) यानी गर्म हवाओं के थपेड़ों का प्रकोप लगातार बढ़ रहा है। ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट क्या है? | What is a heat wave hotspot?

By Guest Writer | Thu, 9 Sep 2021

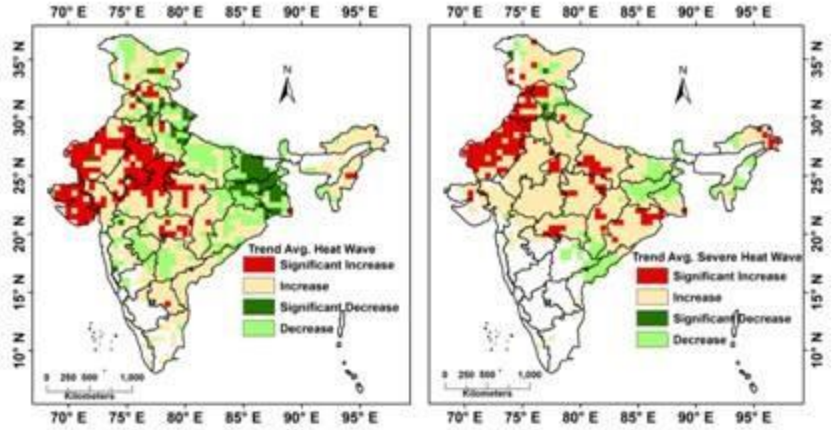

The outbreak of heat waves is increasing in India

नई दिल्ली, 09 सितंबर, 2021: प्रतिकूल मौसमी परिघटनाएं मानव जीवन को व्यापक स्तर पर प्रभावित कर रही हैं। पिछले कुछ समय से ऐसी मौसमी परिघटनाओं की आवृत्ति एवं तीव्रता में वृद्धि देखी जा रही है। **भारत में ग्रीष्म लहर (heat wave in india)** यानी गर्म हवाओं के थपेड़ों का प्रकोप लगातार बढ़ रहा है।

ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट क्या है? | What is a heat wave hotspot?

एक हालिया अध्ययन के अनुसार भारत के उत्तरपश्चिमी-, मध्य और दक्षिण मध्य क्षेत्र विगत पांच दशकों में ग्रीष्म लहर के मुख्य बिंदु बने हैं।

*वैज्ञानिक भाषा में इन स्थानों हो **ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट** की संज्ञा दी जाती है।*

इस अध्ययन में दर्शाया गया है कि ये ग्रीष्म लहर स्थानीय निवासियों की सेहत और उनसे संबंधित गतिविधियों पर प्रतिकूल प्रभाव डाल सकती हैं। ऐसे में उनसे निपटने के लिए एक उपयुक्त कार्ययोजना यानी एक्शन प्लान बनाना समय की आवश्यकता हो गई है। अध्ययन में इस समस्या के समाधान पर भी विस्तार से प्रकाश डाला गया है।

ग्रीष्म लहर ने मानवीय स्वास्थ्य, कृषि, अर्थव्यवस्था और अवसंरचना ढांचे पर गंभीर प्रभाव डाला है। इन परिस्थितियों को देखते हुए इस मोर्चे पर तत्काल नीतिगत हस्तक्षेप की आवश्यकता है। इसके लिए ग्रीष्म लहर के लिहाज से संवेदनशील क्षेत्रों को चिह्नित करना अत्यंत आवश्यक है। उन्हें चिह्नित कर और उनसे जुड़ी इस समस्या के मूल को समझकर ही कोई कारगर समाधान तलाशने की दिशा में आगे बढ़ा जा सकता है। यह शोध-अध्ययन इसी दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी वक्तव्य के अनुसार, यह शोध भारत सरकार के विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग के प्रोमाल के नेतृत्व में किया गया ह .के .आर .ै। इसमें सौम्या सिंह और निधि सिंह सहित काशी हिंदू विश्वविद्यालय में **जलवायु परिवर्तन के अनुसंधान के लिए महामना उत्कृष्टता केंद्र (Mahamana Center of Excellence for Climate Change Research- एमसीईसीसीआर(** ने पिछले सात दशकों में भारत के विभिन्न मौसम संबंधी उपखंडों में ग्रीष्म लहर और गंभीर ग्रीष्म लहर में स्थानिक और अस्थायी प्रवृत्तियों में परिवर्तन का अध्ययन किया। साथ ही, इसमें ग्रीष्म लहर और गंभीर ग्रीष्म लहर से भारत में मृत्यु दर की कड़ियों को भी जोड़ा गया है। इस कार्य के लिए विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के जलवायु परिवर्तन कार्यक्रम के अंतर्गत सहयोग दिया गया है। इस शोध का प्रकाशन "***इंटरनेशनल जर्नल ऑफ क्लाइमेटोलॉजी***" ***(International Journal of Climatology)*** में हुआ है।

इस अध्ययन में पश्चिम बंगाल और बिहार के गांगेय क्षेत्र से पूर्वी क्षेत्र से उत्तरपश्चिमी-, मध्य और आगे भारत के दक्षिणसामयिक प्रवृत्ति में परिवर्तन दर्शाया गया है। इसमें -मध्य क्षेत्र में ग्रीष्म लहर की घटनाओं की स्थानिक-दक्षिण की ओर खतरनाक विस्तार और एसएचडब्ल्यू घटनाओं में स्थानिक वृद्धि देखी गई है जो पहले से ही कम या अं (डीटीआर) दैनिक तापमान रेंजतर के बीच की विशेषता वाले क्षेत्र में अधिकतम और न्यूनतम तापमान के कारण किसी दिन विशेष में उच्च आर्द्रता वाली गर्मी के अतिरिक्त एक बड़ी आबादी को कई प्रकार के जोखिम में डाल सकती है।

ऐसी घटनाओं के दृष्टिकोण से ओडिशा और आंध्र प्रदेश में मृत्यु दर के साथ सकारात्मक रूप से सहसंबद्ध पाया -संवेदनशील है। इस -ष्म लहर आपदाओं के लिहाज से अतिगया है। इससे स्पष्ट है कि मानव स्वास्थ्य गंभीर ग्री अध्ययन में सुझाव दिया गया है कि अत्यधिक तापमान की लगातार बढ़ती सीमा के साथ, गर्मी कम करने के उपाय समय की आवश्यकता हैं।

यह अध्ययन समीक्षाधीन तीन ग्रीष्म लहर हॉटस्पॉट क्षेत्रों में प्रभावी ग्रीष्म नियंत्रण कार्य योजना विकसित करने की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है।

(इंडिया साइंस वायर(

Topics: Science, Technology, DST, heatwave, temperature, health, hazardous, humidity, aridity, climate change, weather, global warming, Odessa, Andhra Pradesh, SHW, MCECCR, Banaras Hindu University, Research, India.

"मजबूत अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक है अन्वेषण उन्मुखी शिक्षा"

September 9, 2021 Avinash

नई दिल्ली, 09 सितंबर इंडिया साइंस वाय)र :("विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में नवाचार का भविष्य उज्ज्वल है और यह भारत को आत्मनिर्भर बनाएगा। नवोन्मेषी शिक्षा भारत के पाँच ट्रिलियन डॉलर अर्थव्यवस्था के लक्ष्य में भी योगदान देगी और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के 'आत्मनिर्भर भारत' के दृष्टिकोण को पूरा करेगी। इसीलिए, स्कूली छात्रों में अन्वेषण की ललक को विकसित किया जाना चाहिए।" 8वें इंस्पायरमानक पुरस्कार प्रदान करते हुए एक वर्चुअल - विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय तथा पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय (स्वतंत्र प्रभार) समारोह में केंद्रीय राज्य मंत्री, राज्य मंत्री प्रधानमंत्री कार्यालय, कार्मिक, लोक शिकायत, पेंशन मंत्रालय, परमाणु ऊर्जा एवं अंतरिक्ष विभाग; डॉ जितेंद्र सिंह ने ये बातें कही हैं।

कोविड-19 से लड़ने के लिए बेहद कम समय में डीएनए आधारित वैक्सीन विकसित करने के अलावा तीन टीकों को उपयोग के लिए जारी करने में भारत के प्रयासों का हवाला देते हुए डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि 21वीं सदी में किसी भी देश की आर्थिक शक्ति उसके वैज्ञानिक विकास और संबंधित तकनीकी अनुप्रयोगों से निर्धारित होती है। उन्होंने कहा कि आने वाले समय में भारत इन नवोन्मेषी युवाओं को तैयार करके और उनके संसाधनों को एक साथ जोड़कर जनसांख्यिकीय लाभांश प्राप्त करेगा।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री ने कहा कि इंस्पायर)INSPIRE) योजना वैज्ञानिक दृष्टिकोण करने में सहायक है, क्योंकि अब हर वर्ष पुरस्कारों के लिए प्रतिस्पर्धा करने वाले इच्छुक छात्रों की संख्या में वृद्धि हो रही है। डॉ जितेंद्र सिंह ने बताया कि इस वर्ष विभिन्न राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के 3.92 लाख से अधिक छात्रों ने अपनी परियोजनाएं जमा कीं थी, जिनमें से 581 को चुना गया, और उनमे से 60 को पुरस्कृत किया गया है। अपनी शुरुआत के बाद से मानक)MANAK) पुरस्कारों के तहत अब तक यह योजना 05 लाख से अधिक स्कूलों तक पहुँची है। उन्होंने कहा कि इससे सिद्ध होता है कि वैज्ञानिक सोच वाले युवा भारतीय मस्तिष्क तैयार करने के अवसरों में तेजी आ रही है।

डॉ सिंह ने कहा कि केंद्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय राज्य सरकारों केंद्र शासित प्रदेशों को अपने संबंधित / और पुरस्कार विजेताओं के बारे में लोगों को संवेदनशील बनाने के लिए पत्र केंद्र शासित प्रदेश में पुरस्कारों / राज्य लिखेगा।उन्होंने कहा कि इससे स्कूली शिक्षा के शुरुआती चरणों से एक संपूर्ण वैज्ञानिक और नवीन अभिरुचि और सीखने की प्रक्रिया विकसित करने में मदद मिलेगी। उन्होंने देश में वैज्ञानिक मानसिकता के निर्माण के लिए तीन विभिन्न वर्गों – 25 वर्ष से कम, 25 से 35 वर्ष का आयु वर्ग और 35 वर्ष से अधिक आयु वर्ग पर ध्यान केंद्रित करने का सुझाव दिया है।

इंस्पायरऔर राष्ट्रीय (डीएसटी) मानक पुरस्कार संयुक्त रूप से भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग-द्वारा कार्यान्वित किया जाता है। (नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन) नवप्रवर्तन प्रतिष्ठान वर्ष 2016 में, इंस्पायर योजना को नया रूप दिया गया और प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा शुरू की गई “स्टार्टअप इंडिया-” पहल के लिए बनी कार्ययोजना के साथ जोड़ा गया। मानक के माध्यम से छात्रों को देश भर के सभी सरकारी अथवा निजी स्कूलों की ओर से प्रोत्साहित किया जाता है, जिससे कि वे जनसामान्य की समस्याओं से जुड़े अपने मौलिक और रचनात्मक - को राष्ट्रीय स्तर की नवाचार पेश करें। इस प्रकार प्राप्त प्रविष्टियों में से चयनित परियोजनाओं/तकनीकी विचारों प्रदर्शनी और परियोजना प्रतियोगिता में भी प्रदर्शित किया जाता है ।

इस वर्चुअल पुरस्कार समारोह को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की सचिव डॉ रेणु स्वरूप और राष्ट्रीय नवप्रवर्तन प्रतिष्ठान एस गोयल ने भी संबोधित किया। विज्ञान पी .के अध्यक्ष डॉ (एनआईएफ-नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन) और प्रौद्योगिकी विभाग के इंस्पायर कार्यक्रम की प्रमुख श्‍्रीमती नमिता गुप्ता, एनआईएफ के निदेशक डॉविपिन . (इंडिया साइंस वायर) कुमार और अन्य वरिष्ठ अधिकारी भी इस कार्यक्रम में शामिल हुए।

“मजबूत अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक है अन्वेषण उन्मुखी शिक्षा”

09/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 09 सितंबर :(इंडिया साइंस वायर)"विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में नवाचार का भविष्य उज्ज्वल है और यह भारत को आत्मनिर्भर बनाएगा। नवोन्मेषी शिक्षा भारत के पाँच ट्रिलियन डॉलर अर्थव्यवस्था के लक्ष्य में भी योगदान देगी और प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के 'आत्मनिर्भर भारत' के दृष्टिकोण को पूरा करेगी। इसीलिए, स्कूली छात्रों में अन्वेषण की ललक को विकसित किया जाना चाहिए।”

8वें इंस्पायरमानक पुरस्कार प्रदान करते हुए एक वर्चुअल समारोह में केंद्र-ीय राज्य मंत्री विज्ञान एवं (स्वतंत्र प्रभार) प्रौद्योगिकी मंत्रालय तथा पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय, राज्य मंत्री प्रधानमंत्री कार्यालय, कार्मिक, लोक शिकायत, पेंशन मंत्रालय, परमाणु ऊर्जा एवं अंतरिक्ष विभाग; डॉ जितेंद्र सिंह ने ये बातें कही हैं। कोविड-19 से लड़ने के लिए बेहद कम समय में डीएनए आधारित वैक्सीन विकसित करने के अलावा तीन टीकों को उपयोग के लिए जारी करने में भारत के प्रयासों का हवाला देते हुए डॉ जितेंद्र सिंह ने कहा कि 21वीं सदी में किसी भी देश की आर्थिक शक्ति उसके वैज्ञानिक विकास और संबंधित तकनीकी अनुप्रयोगों से निर्धारित होती है।

उन्होंने कहा कि आने वाले समय में भारत इन नवोन्मेषी युवाओं को तैयार करके और उनके संसाधनों को एक साथ जोड़कर जनसांख्यिकीय लाभांश प्राप्त करेगा। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्री ने कहा कि इंस्पायर)INSPIRE) योजना वैज्ञानिक दृष्टिकोण करने में सहायक है, क्योंकि अब हर वर्ष पुरस्कारों के लिए प्रतिस्पर्धा करने वाले इच्छुक छात्रों की संख्या में वृद्धि हो रही है। डॉ जितेंद्र सिंह ने बताया कि इस वर्ष विभिन्न राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के 3.92 लाख से अधिक छात्रों ने अपनी परियोजनाएं जमा कीं थी, जिनमें से 581 को चुना गया, और उनमे से 60 को पुरस्कृत किया गया है।

अपनी शुरुआत के बाद से मानक)MANAK) पुरस्कारों के तहत अब तक यह योजना 05 लाख से अधिक स्कूलों तक पहुँची है। उन्होंने कहा कि इससे सिद्ध होता है कि वैज्ञानिक सोच वाले युवा भारतीय मस्तिष्क तैयार करने के अवसरों में तेजी आ रही है। डॉ सिंह ने कहा कि केंद्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय राज्य सरकारों केंद्र / केंद्र शासित प्रदेशों को अपने संबंधित राज्य / और पुरस्कार विजेताओं के बारे में लोगों को संवेदनशील ब शासित प्रदेश में पुरस्कारोंनाने के लिए पत्र लिखेगा।

उन्होंने कहा कि इससे स्कूली शिक्षा के शुरुआती चरणों से एक संपूर्ण वैज्ञानिक और नवीन अभिरुचि और सीखने की प्रक्रिया विकसित करने में मदद मिलेगी। उन्होंने देश में वैज्ञानिक मानसिकता के निर्माण के लिए तीन विभिन्न वर्गों – 25 वर्ष से कम, 25 से 35 वर्ष का आयु वर्ग और 35 वर्ष से अधिक आयु वर्ग पर ध्यान केंद्रित करने का सुझाव दिया है। इंस्पायरऔर राष्ट्रीय (डीएसटी) प से भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभागमानक पुरस्कार संयुक्त रू-नवप्रवर्तन प्रतिष्ठान द्वारा (नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन)कार्यान्वित किया जाता है।

वर्ष 2016 में, इंस्पायर योजना को नया रूप दिया गया और प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी द्वारा शुरू की गई "स्टार्टअप इंडिया-" पहल के लिए बनी कार्ययोजना के साथ जोड़ा गया। मानक के माध्यम से छात्रों को देश भर के सभी सरकारी अथवा निजी स्कूलों की ओर से प्रोत्साहित किया जाता है, जिससे कि वे जनसामान्य की समस्याओं से जुड़े अपने मौलिक और रचनात्मक -रें। इस प्रकार प्राप्त प्रविष्टियों में से चयनित परियोजनाओं को राष्ट्रीय स्तर की प्रदर्शनी और नवाचार पेश क/तकनीकी विचारों परियोजना प्रतियोगिता में भी प्रदर्शित किया जाता है ।

इस वर्चुअल पुरस्कार समारोह को विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की सचिव डॉ रेणु स्वरूप और राष्ट्रीय नवप्रवर्तन प्रतिष्ठान पी एस गोयल ने भी संबोधित किया। विज्ञान और .के अध्यक्ष डॉ (एनआईएफ-नेशनल इनोवेशन फाउंडेशन) प्रौद्योगिकी विभाग के इंस्पायर कार्यक्रम की प्रमुख श्रीमती नमिता गुप्ता, एनआईएफ के निदेशक डॉविपिन कुमार और . अन्य वरिष्ठ अधिकारी भी इस कार्यक्रम में शामिल हुए।

Voice of the Nation

ORGANISER

‘DESIGNS’ to conserve and restore Thar desert

WEBDESK Sep 11, 2021, 08:31 AM IST

High maximum temperature with large diurnal variations, scanty rainfall, extreme aridity, and intense UV radiations characterizes the Thar.

New Delhi: The Indian Institute of Technology-Jodhpur has launched a new initiative to conserve and restore the Thar desert, its minerals and medicines, and its flora and fauna by carrying out ecosystem phenomics through a transdisciplinary framework of medical, engineering, environmental, and life sciences.

Called Thar Desert Ecosystem Sciences Guided by Nature and Selection (Thar DESIGNS), the initiative has been launched under the aegis of the Jodhpur City Knowledge and Innovation Cluster.

The Thar is characterized by high maximum temperature with large diurnal variations, scanty rainfall, extreme aridity, and intense UV radiations. This has been one of the largest natural laboratories for evolving systems that ensure the adaptation and survival of its constituent species, their interdependencies, and the conservation of the entire ecosystem.

The impact of any loss of natural deserts will be immense as these habitats are rich in flora and fauna and minerals and medicines that nurture and maintain different life forms on earth. Often considered as wastelands, deserts are crucial for the stabilization of climate.

Any shift in climate or anthropogenic activity can lead to maladaptations for organisms that live at the ebb of physiological extremes, loss of diversity through extirpations, and ultimately an ecosystem collapse. This threatens the lives and livelihood of the native inhabitants.

To address this, the Jodhpur City Knowledge and Innovation Cluster (JCKIC) has brought together organizations that are engaged in activities ranging from engineering, space research, medicine, agriculture, zoology, and forestry, which have carried out focused efforts in tackling diverse aspects of the Thar desert. This collaboration includes projects that address the complex and networked issues of the desert in an integrative framework.

Prof. Mitali Mukerji, Head of the Department of Bioscience and Bioengineering at IIT-Jodhpur, said, "`Thar DESIGNS' aims to disseminate knowledge and encourage participation through a citizen science approach and inculcate design thinking across the entire collaborative network."

Under the initiative, the researchers will use IOT enabled devices and big data analytics framework to crowdsource observations from the local ecosystem to the regional level keeping the cultural context and traditional medicine knowledge in perspective. Researchers would also integrate computer vision, machine learning, and domain knowledge to infer links between environment, phenotype, and genotype at geo-spatiotemporal scales and identify early actionable intervention strategies. The knowledge generation will result in providing a 'Desert Ecosystem Knowledge Grid' that could foster the cycle of engineering- research-development-commercialization.

This data grid will, among other things, help find solutions for the management of diseases common and endemic to desert regions and the generation of novel bioprospecting opportunities and innovative bio-inspired engineering designs. It could also help evolve unique strategies for ecological conservation and restoration that ensure sustained livelihood for its inhabitants.

Thar DESIGNS is likely to propel the growth of new industry and capacity building for next-generation tech-savvy social and eco-entrepreneurs. An AI-assisted recommendation engine for the sustenance of desert ecosystems based on the interacting principles of desert ecology, evolutionary biology, and culture would also be of enormous utility for policymakers and diverse stakeholders.

Courtesy: India Science Wire

DESIGNS to Conserve and Restore Thar Desert

By **ISW Desk** On **Sep 11, 2021**

The Indian Institute of Technology-Jodhpur has launched a new initiative to conserve and restore the Thar Desert, its minerals and medicines, and its flora and fauna by carrying out ecosystem phenomics through a trans-disciplinary framework of medical, engineering, environmental, and life sciences.

Source: creative commons

Called Thar Desert Ecosystem Sciences Guided by Nature and Selection (Thar DESIGNS), the initiative has been launched under the aegis of the Jodhpur City Knowledge and Innovation Cluster.

The Thar is characterized by high maximum temperature with large diurnal variations, scanty rainfall, extreme aridity, and intense UV radiations. This has been one of the largest natural laboratories for evolving systems that ensure the adaptation and survival

of its constituent species, their interdependencies, and the conservation of the entire ecosystem.

The impact of any loss of natural deserts will be immense as these habitats are rich in flora and fauna as well as minerals and medicines that nurture and maintain different life forms on earth. Often considered as wastelands, deserts are crucial for the stabilisation of climate. Any shift in climate or anthropogenic activity can lead to maladaptations for organisms that live at the ebb of physiological extremes, loss of diversity through extirpations, and ultimately an ecosystem collapse. This threatens the lives and livelihood of the native inhabitants.

To address this, the Jodhpur City Knowledge and Innovation Cluster (JCKIC) has brought together organizations that are engaged in activities ranging from engineering, space research, medicine, agriculture, zoology, and forestry, which have carried out focused efforts in tackling diverse aspects of the Thar desert. This collaboration includes projects that address the complex and networked issues of the desert in an integrative framework.

Prof. Mitali Mukerji, Head of the Department of Bioscience and Bioengineering at IIT-Jodhpur, said, "`Thar DESIGNS' aims to disseminate knowledge and encourage participation through a citizen science approach and inculcate design thinking across the entire collaborative network."

Under the initiative, the researchers will use IOT enabled devices and big data analytics framework to crowd source observations from the local ecosystem to the regional level keeping the cultural context and traditional medicine knowledge in perspective. Researchers would also integrate computer vision and machine learning along with domain knowledge to infer links between environment, phenotype, and genotype at geo-spatiotemporal scales and identify early actionable intervention strategies. The knowledge generation will result in providing a 'Desert Ecosystem Knowledge Grid' that could foster the cycle of engineering- research-development-commercialization.

This data grid will, among other things, help find solutions for the management of diseases common and endemic to desert regions and the generation of novel bio-prospecting opportunities and innovative bio-inspired engineering designs. It could also help evolve unique strategies for ecological conservation and restoration that ensure sustained livelihood for its inhabitants.

Thar DESIGNS is likely to propel the growth of new industry and capacity building for next-generation tech-savvy social and eco-entrepreneurs. An AI-assisted recommendation engine for the sustenance of desert ecosystems based on the interacting principles of desert ecology, evolutionary biology, and culture would also be of enormous utility for policymakers and diverse stakeholders.

GS Times

‘DESIGNS’ to conserve and restore Thar desert

September 12, 2021

India Science Wire

A representative picture of Thar Desert (Source: creative commons)

The Indian Institute of Technology-Jodhpur has launched a new initiative to conserve and restore the Thar desert, its minerals and medicines, and its flora and fauna by carrying out ecosystem phenomics through a transdisciplinary framework of medical, engineering, environmental, and life sciences.

Called Thar Desert Ecosystem Sciences Guided by Nature and Selection (Thar DESIGNS), the initiative has been launched under the aegis of the Jodhpur City Knowledge and Innovation Cluster.

The Thar is characterized by high maximum temperature with large diurnal variations, scanty rainfall, extreme aridity, and intense UV radiations. This has been one of the largest natural

laboratories for evolving systems that ensure the adaptation and survival of its constituent species, their interdependencies, and the conservation of the entire ecosystem.

The impact of any loss of natural deserts will be immense as these habitats are rich in flora and fauna as well as minerals and medicines that nurture and maintain different life forms on earth. Often considered as wastelands, deserts are crucial for the stabilisation of climate. Any shift in climate or anthropogenic activity can lead to maladaptations for organisms that live at the ebb of physiological extremes, loss of diversity through extirpations, and ultimately an ecosystem collapse. This threatens the lives and livelihood of the native inhabitants.

To address this, the Jodhpur City Knowledge and Innovation Cluster (JCKIC) has brought together organizations that are engaged in activities ranging from engineering, space research, medicine, agriculture, zoology, and forestry, which have carried out focused efforts in tackling diverse aspects of the Thar desert. This collaboration includes projects that address the complex and networked issues of the desert in an integrative framework.

Prof. MitaliMukerji, Head of the Department of Bioscience and Bioengineering at IIT-Jodhpur, said, "`Thar DESIGNS' aims to disseminate knowledge and encourage participation through a citizen science approach and inculcate design thinking across the entire collaborative network."

Under the initiative, the researchers will use IOT enabled devices and big data analytics framework to crowdsource observations from the local ecosystem to the regional level keeping the cultural context and traditional medicine knowledge in perspective. Researchers would also integrate computer vision and machine learning along with domain knowledge to infer links between environment, phenotype, and genotype at geo-spatiotemporal scales and identify early actionable intervention strategies. The knowledge generation will result in providing a 'Desert Ecosystem Knowledge Grid' that could foster the cycle of engineering- research-development-commercialization.

This data grid will, among other things, help find solutions for the management of diseases common and endemic to desert regions and the generation of novel bioprospecting opportunities and innovative bio-inspired engineering designs. It could also help evolve unique strategies for ecological conservation and restoration that ensure sustained livelihood for its inhabitants.

Thar DESIGNS is likely to propel the growth of new industry and capacity building for next-generation tech-savvy social and eco-entrepreneurs. An AI-assisted recommendation engine for the sustenance of desert ecosystems based on the interacting principles of desert ecology, evolutionary biology, and culture would also be of enormous utility for policymakers and diverse stakeholders.

Keywords: Indian Institute of Technology, Jodhpur, conserve, Thar, desert, medicine, flora, fauna, ecosystem, phenomics, transdisciplinary, medical, engineering, environment, life science, Jodhpur City Knowledge and Innovation Cluster, aridity, adaptation, species, wasteland, climate, organism, machine learning research, commercialization, diseases.

Voice of the Nation

ORGANISER

New nano-composite to beat antimicrobial resistance

WEBDESK Sep 11, 2021, 08:58 AM IST

Studies have shown that nanomaterials with their unique physicochemical and antibacterial properties can break the chain of microbe proliferation, preventing biofilm formations via diverse mechanisms. But for human use, such nanomaterials need to be non-toxic.

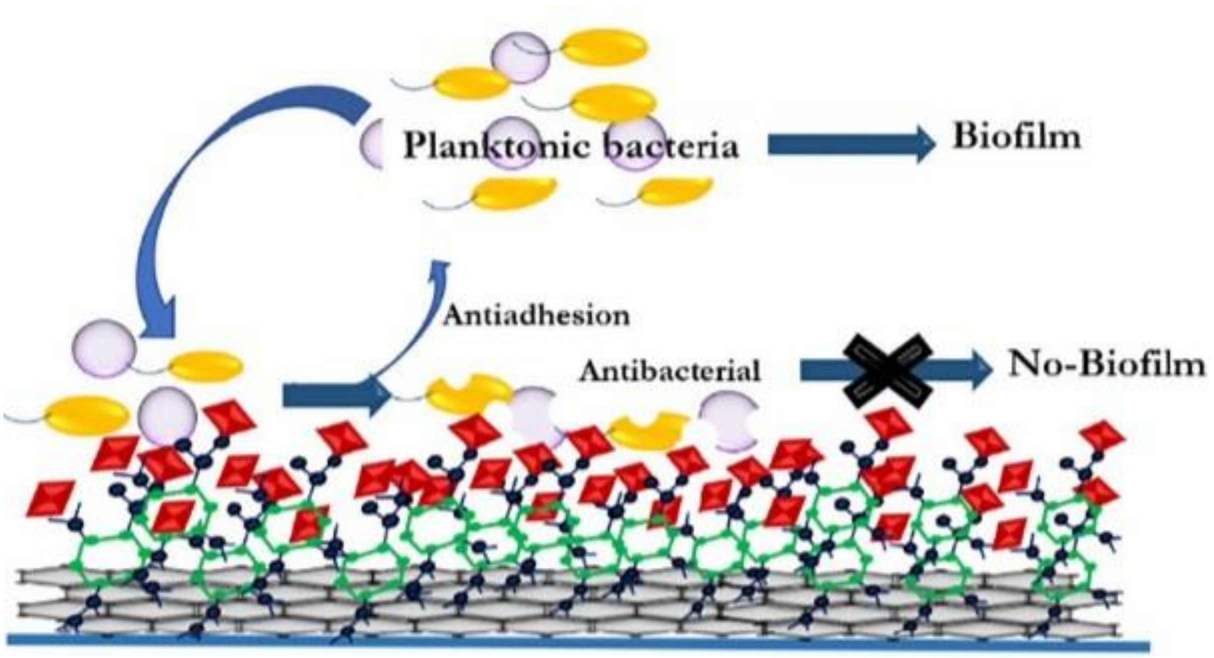

New Delhi, Sep 10: The battle against antimicrobial resistance is set to get a major boost with researchers from the Indian Institute of Technology (IIT)-Roorkee and Bengaluru-based startup Log 9 Materials Scientific Pvt. Ltd., developing a new non-toxic antibacterial and antibiofilm composite.

Bacterial biofilms are notorious for resisting antibiotics, escaping immune systems, and other external stresses, resulting in persistent chronic infections, particularly when formed in damp indoor settings. Biofilms pose a serious global health concern.

Formed when different colonies or even a single type of bacterial cells adhere to biotic or abiotic surfaces, they get embedded in a matrix composed of extracellular polymeric substances. Biofilms form on different surfaces, including hospital surfaces, healthcare implants, swimming pools, water tanks, and water treatment plants, and hence easily transmit infections. Of these,

hospital-acquired infections are the most dangerous, as observed by the extremely high incidence of multidrug-resistant bacterial illnesses in hospital settings.

Studies have shown that nanomaterials with their unique physicochemical and antibacterial properties can break the chain of microbe proliferation, preventing biofilm formations via diverse mechanisms. But for human use, such nanomaterials need to be non-toxic. Researchers from IIT Roorkee and Log 9 Materials Scientific Private Limited, which is funded under the Department of Biotechnology's Bengaluru-based Centre for Cellular and Molecular Platforms (C-CAMP)'s Biotech Ignition Grant scheme, have now developed an antibacterial and antibiofilm composite using non-toxic and hydrophobic nanomaterial, graphene nanoplatelets (GNP), and tannic acid and silver. When tested, it exhibited good antibacterial properties.

According to the scientists, it showed complete growth inhibition against gram-negative bacteria, Escherichia coli, at a concentration as low as 64 µg/mL, while it showed complete inhibition against gram-positive bacteria, Staphylococcus aureus at a concentration of 128 µg/mL. When epoxy coatings based on the material were applied on glass substrates, over 97% antibiofilm efficiency was seen against the antibiotic-resistant, Methicillin strain of S. aureus.

When coated on a surface, the abundant presence of hydroxyl groups due to tannic acid, hydrophobicity of graphene and epoxy, and remarkable antibacterial efficiency of tannic acid, silver, and graphene was found to enhance the antibiofilm efficiency synergistically. Additionally, this coating was found to be highly stable in water, the common solvent most surfaces come in contact with, and no active component was found to be leaching out.

Courtesy: India Science Wire

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

New Nano-Composite to Beat Antimicrobial Resistance

By **Team DP** On **Sep 12, 2021**

The battle against antimicrobial resistance is set to get a major boost with researchers from the Indian Institute of Technology (IIT)-Roorkee and Bengaluru-based startup Log 9 Materials Scientific Pvt. Ltd., developing a new non-toxic antibacterial and antibiofilm composite.

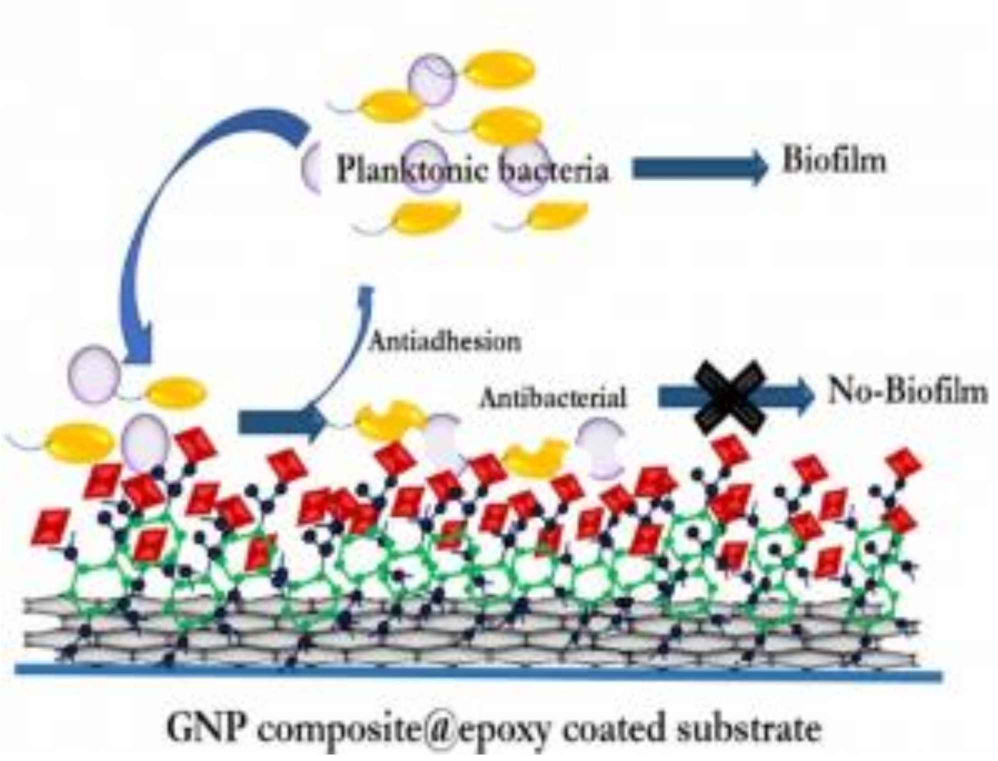

Bacterial biofilms are notorious for resisting antibiotics, escaping immune systems, and other external stresses, resulting in persistent chronic infections, particularly when formed in damp indoor settings. Biofilms pose a serious global health concern.

Formed when different colonies or even a single type of bacterial cells adhere to biotic or abiotic surfaces, they get embedded in a matrix composed of extracellular polymeric substances. Biofilms form on different surfaces including hospital surfaces, healthcare implants, swimming pools, water tanks, and water treatment plants, and hence easily transmit infections. Of these, hospital-acquired infections are the most dangerous as observed by the extremely high incidence of multidrug-resistant bacterial illnesses in hospital settings.

Studies have shown that nanomaterials with their unique physicochemical and antibacterial properties can break the chain of microbe proliferation, preventing biofilm formations via diverse mechanisms. But for human use, such nanomaterials need to be non-toxic.

Researchers from IIT Roorkee and Log 9 Materials Scientific Private Limited, which is funded under the Department of Biotechnology's Bengaluru-based Centre for Cellular and Molecular Platforms (C-CAMP)'s Biotech Ignition Grant scheme, have now developed an antibacterial and antibiofilm composite using non-toxic and hydrophobic nanomaterial, graphene nanoplatelets (GNP), and tannic acid and silver. When tested, it exhibited good antibacterial properties.

According to the scientists, it showed complete growth inhibition against gram-negative bacteria, Escherichia coli at a concentration as low as 64 μg/mL while it showed complete inhibition against gram-positive bacteria, Staphylococcus aureus at a concentration of 128 μg/mL. When epoxy coatings based on the material were applied on glass substrates, more than 97% antibiofilm efficiency was seen against the antibiotic-resistant, Methicillin strain of S. aureus.

When coated on a surface, the abundant presence of hydroxyl groups due to tannic acid, hydrophobicity of graphene and epoxy, and remarkable antibacterial efficiency of tannic acid, silver, and graphene was found to synergistically enhance the antibiofilm efficiency. Additionally, this coating was found to be highly stable in water, the common solvent most surfaces come in contact with, and no active component was found to be leaching out. (Indian Science Wire)

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

New nano-composite to beat antimicrobial resistance

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 10TH SEPTEMBER 2021

New Delhi, Sep 10: The battle against antimicrobial resistance is set to get a major boost with researchers from the Indian Institute of Technology (IIT)-Roorkee and Bengaluru-based startup Log 9 Materials Scientific Pvt. Ltd., developing a new non-toxic antibacterial and antibiofilm composite.

What Are Bacterial biofilms?

Bacterial biofilms are notorious for resisting antibiotics, escaping immune systems, and other external stresses, resulting in persistent chronic infections, particularly when formed in damp indoor settings. Biofilms pose a serious global health concern.

Formed when different colonies or even a single type of bacterial cells adhere to biotic or abiotic surfaces, they get embedded in a matrix composed of extracellular polymeric substances. Biofilms form on different surfaces including hospital surfaces, healthcare implants, swimming pools, water tanks, and water treatment plants, and hence easily transmit infections. Of these, hospital-acquired infections are the most dangerous as observed by the extremely high incidence of multidrug-resistant bacterial illnesses in hospital settings.

Studies have shown that nanomaterials with their unique physicochemical and antibacterial properties can break the chain of microbe proliferation, preventing biofilm formations via diverse mechanisms. But for human use, such nanomaterials need to be non-toxic.

Researchers from IIT Roorkee and Log 9 Materials Scientific Private Limited, which is funded under the Department of Biotechnology's Bengaluru-based Centre for Cellular and Molecular Platforms (C-CAMP)'s Biotech Ignition Grant scheme, have now developed an antibacterial and antibiofilm composite using non-toxic and hydrophobic nanomaterial, graphene nanoplatelets (GNP), and tannic acid and silver. When tested, it exhibited good antibacterial properties.

According to the scientists, it showed complete growth inhibition against gram-negative bacteria, Escherichia coli at a concentration as low as 64 µg/mL while it showed complete inhibition against gram-positive bacteria, Staphylococcus aureus at a concentration of 128 µg/mL. When epoxy coatings based on the material were applied on glass substrates, more than 97% antibiofilm efficiency was seen against the antibiotic-resistant, Methicillin strain of S. aureus.

When coated on a surface, the abundant presence of hydroxyl groups due to tannic acid, hydrophobicity of graphene and epoxy, and remarkable antibacterial efficiency of tannic acid, silver, and graphene was found to synergistically enhance the antibiofilm efficiency. Additionally, this coating was found to be highly stable in water, the common solvent most surfaces come in contact with, and no active component was found to be leaching out.

Topics: antimicrobial resistance, AMR, Indian Institute of Technology, Roorkee, non-toxic, antibacterial, antibiofilm, composite, antibiotics, infections, hospital, implant, swimming pool, water tank, nanomaterial, Centre for Cellular and Molecular Platforms, C-CAMP, Biotech Ignition Grant scheme, graphene, tannic acid, silver.

कपड़ा उद्योग से निकले दूषित जल के शोधन की नयी तकनीक विकसित

Last Updated: रविवार, 12 सितम्बर 2021 (12:59 IST)

नई दिल्ली, कई उद्योग ऐसे हैं जिनसे बड़ी मात्रा में दूषित जल निकलता है, जिसके पुनः उपयोग की संभावनाएं तलाशने के प्रयास किए जा रहे हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं के एक दल ने कपड़ा उद्योग से डाई यानी रंगाई की प्रक्रिया में निकलने वाले दूषित जल के शोधन के लिए एक कारगर समाधान तलाशा है। इससे रंगाई के बाद शेष बचे दूषित जल से विषैले तत्वों को निकालकर उससे घरेलू एवं औद्योगिक उपयोग के लायक बनाया जा सकेगा। इससे प्रदूषित जल की समस्या से निजात मिलने के साथ ही पानी की किल्लत जैसे दोहरे लाभ हासिल हो सकेंगे।

वर्तमान में कपड़ा क्षेत्र से प्रदूषित जल को प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक, तीन स्तरों पर शोधित किया जाता है। फिर भी दूषित जल पूरी तरह शोधित नहीं हो पाता। इसमें प्रयुक्त

स्टैंडट्रीटमेंट टेक्निक शोधन के सरकारी मानकों के अनुरूप सक्षम (एओपी) अलोन एडवांस्ड ऑक्सिडेशन प्रोसेस-शोधन की य-नहीं साबित हुई है। रसायनों की निरंतर आपूर्ति जैसे पहलू को लेकर जलह प्रक्रिया खर्चीली हो जाती है।

ऐसे में, इस समूची प्रक्रिया को अपेक्षित स्तर पर पूरी किफायत के साथ संपन्न कराना एक बड़ी आवश्यकता समझी जा रही थी। नयी पहल इस आवश्यकता की पूर्ति में सहायक होगी। इस पर भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की ओ (डीएसटी)र से जानकारी दी गई है कि 'वर्तमान तकनीक सिंथेटिक औद्योगिक रंगों और चमकीले रंग की गंध को दूर नहीं कर सकती है, जिसका पारिस्थितिक और विशेष रूप से जलीय जीवन पर कार्सिनोजेनिक और विषाक्त प्रभाव पड़ता है जो लंबे समय तक कायम रहता है। ऐसे में, इस विषाक्तता को दूर करने के लिए उन्नत एओपी तकनीक समय की आवश्यकता है।'

इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), कानपुर के शोधार्थियों और मालवीय नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, जयपुर और एमबीएम कॉलेज, जोधपुर के शोधार्थियों ने मिलकर काम किया और एक उन्नत एओपी का निर्माण किया।

इस उन्नत एओपी शोधन में प्राथमिक चरण के शोधन के बाद सैंड फिल्ट्रेशन स्टेप और (लवण निस्यंदन चरण) एक अन्य एओपी और उससे सहबद्ध कार्बन फिल्ट्रेशन स्टेप जैसे पड़ाव शामिल हैं। यह न केवल प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक प्रक्रियाओं से मुक्ति दिलाता है, अपितु इससे रंगों से भी अधिक से अधिक छुटकारा मिलने के साथ ही शोधित जल भी मानकों के अनुरूप प्राप्त होता है।

इस परियोजना को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी), वॉटर टेक्नोलॉजी इनिशिएटिव के साथ ही इंडियन नेशनल एकेडमी (डब्ल्यूटीआई)ऑफ इंजीनियरिंग से सहयोग प्राप्त हुआ। (आईएनएई)

प्रायोगिक स्तर पर इसकी परख लक्ष्मी टेक्सटाइल प्रिंट्स जयपुर में की गई। अभी इस एओपी संयंत्र की क्षमता 10 किलोलीटर प्रतिदिन की है, जिसे बढ़ाकर 100 किलोलीटर प्रति दिन तक किए जाने की तैयारी है। बताया जा रहा है कि इस तकनीक से जल शोधन की लागत 50 प्रतिशत तक कम हुई है। ***(इंडिया साइंस वायर(***

कपड़ा उद्योग से निकले दूषित जल के शोधन की नयी तकनीक विकसित

10/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 10 सितंबर कई उद्योग ऐसे हैं जिनसे बड़ी मात्रा में दूषित जल निकलता है :(इंडिया साइंस वायर), जिसके पुनः उपयोग की संभावनाएं तलाशने के प्रयास किए जा रहे हैं। भारतीय शोधकर्ताओं के एक दल ने कपड़ा उद्योग से डाई यानी रंगाई की प्रक्रिया में निकलने वाले दूषित जल के शोधन के लिए एक कारगर समाधान तलाशा है। इससे रंगाई के बाद शेष बचे दूषित जल से विषैले तत्वों को निकालकर उससे घरेलू एवं औद्योगिक उपयोग के लायक बनाया जा सकेगा।

इससे प्रदूषित जल की समस्या से निजात मिलने के साथ ही पानी की किल्लत जैसे दोहरे लाभ हासिल हो सकेंगे। वर्तमान में कपड़ा क्षेत्र से प्रदूषित जल को प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक, तीन स्तरों पर शोधित किया जाता है। फिर भी दूषित जल पूरी तरह शोधित नहीं हो पाता। इसमें प्रयुक्त स्टैंडट्रीटमेंट टेक्निक शोधन के (एओपी) अलोन एडवांस्ड ऑक्सिडेशन प्रोसेस-सरकारी मानकों के अनुरूप सक्षम नहीं साबित हुई है। रसायनों की निरंतर आपूर्ति जैसे पहलू को लेकर जलशोधन की यह -प्रक्रिया खर्चीली हो जाती है।

ऐसे में, इस समूची प्रक्रिया को अपेक्षित स्तर पर पूरी किफायत के साथ संपन्न कराना एक बड़ी आवश्यकता समझी जा रही थी। नयी पहल इस आवश्यकता की पूर्ति में सहायक होगी। इस पर भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की (डीएसटी) ओर से जानकारी दी गई है कि'वर्तमान तकनीक सिंथेटिक औद्योगिक रंगों और चमकीले रंग की गंध को दूर नहीं कर सकती है, जिसका पारिस्थितिक और विशेष रूप से जलीय जीवन पर कार्सिनोजेनिक और विषाक्त प्रभाव पड़ता है जो लंबे समय तक कायम रहता है।

ऐसे में, इस विषाक्तता को दूर करने के लिए उन्नत एओपी तकनीक समय की आवश्यकता है।' इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), कानपुर के शोधार्थियों और मालवीय नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, जयपुर और एमबीएम कॉलेज, जोधपुर के शोधार्थियों ने मिलकर काम किया और एक उन्नत एओपी का निर्माण किया। इस उन्नत एओपी शोधन में प्राथमिक चरण के शोधन के बाद सैंड फिल्ट्रेशन स्टेप लवण निस्यंदन)
चरणऔर एक अन्य एओपी और उससे सहबद्ध कार्बन फिल्ट्रेशन स्टेप जैसे पड़ाव (शामिल हैं।

यह न केवल प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक प्रक्रियाओं से मुक्ति दिलाता है, अपितु इससे रंगों से भी अधिक से अधिक छुटकारा मिलने के साथ ही शोधित जल भी मानकों के अनुरूप प्राप्त होता है। इस परियोजना को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग डीएसट)ी(, वॉटर टेक्नोलॉजी इनिशिएटिव के साथ ही इंडियन नेशनल एकेडमी ऑफ (डब्ल्यूटीआई) से सहयोग प्राप्त हुआ। (आईएनएई) इंजीनियरिंग

प्रायोगिक स्तर पर इसकी परख लक्ष्मी टेक्सटाइल प्रिंट्स जयपुर में की गई। अभी इस एओपी संयंत्र की क्षमता 10 किलोलीटर प्रतिदिन की है, जिसे बढ़ाकर 100 किलोलीटर प्रति दिन तक किए जाने की तैयारी है। बताया जा रहा है कि इस तकनीक से जल शोधन की लागत 50 प्रतिशत तक कम हुई है।

कपड़ा उद्योग से निकले दूषित जल के शोधन की नयी तकनीक विकसित

Author: इंडिया साइंस वायर
Source: इंडिया साइंस वायर

Submitted by Editorial Team on Fri, 09/10/2021 - 19:16

नई दिल्ली, 10 सितंबर (इंडिया साइंस वायर): कई उद्योग ऐसे हैं जिनसे बड़ी मात्रा में दूषित जल निकलता है, जिसके पुनः उपयोग की संभावनाएं तलाशने के प्रयास किए जा रहे हैं। भारतीय शोधकर्ताओं के एक दल ने कपड़ा उद्योग से डाई यानी रंगाई की प्रक्रिया में निकलने वाले दूषित जल के शोधन के लिए एक कारगर समाधान तलाशा है। इससे रंगाई के बाद शेष बचे दूषित जल से विषैले तत्वों को निकालकर उससे घरेलू एवं औद्योगिक उपयोग के लायक बनाया जा सकेगा। इससे प्रदूषित जल की समस्या से निजात मिलने के साथ ही पानी की किल्लत जैसे दोहरे लाभ हासिल हो सकेंगे।

वर्तमान में कपड़ा क्षेत्र से प्रदूषित जल को प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक, तीन स्तरों पर शोधित किया जाता है। फिर भी दूषित जल पूरी तरह शोधित नहीं हो पाता। इसमें प्रयुक्त स्टैंड-अलोन एडवांस्ड ऑक्सिडेशन प्रोसेस (एओपी) ट्रीटमेंट टेक्निक शोधन के सरकारी मानकों के अनुरूप सक्षम नहीं साबित हुई है। रसायनों की निरंतर आपूर्ति जैसे पहलू को लेकर जल-शोधन की यह प्रक्रिया खर्चीली हो जाती है।

ऐसे में, इस समूची प्रक्रिया को अपेक्षित स्तर पर पूरी किफायत के साथ संपन्न कराना एक बड़ी आवश्यकता समझी जा रही थी। नयी पहल इस आवश्यकता की पूर्ति में सहायक होगी। इस पर भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी (डीएसटी) विभाग की ओर से जानकारी दी गई है कि 'वर्तमान तकनीक सिंथेटिक औद्योगिक

रंगों और चमकीले रंग की गंध को दूर नहीं कर सकती है, जिसका पारिस्थितिक और विशेष रूप से जलीय जीवन पर कार्सिनोजेनिक और विषाक्त प्रभाव पड़ता है जो लंबे समय तक कायम रहता है। ऐसे में, इस विषाक्तता को दूर करने के लिए उन्नत एओपी तकनीक समय की आवश्यकता है।'

इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), कानपुर के शोधार्थियों और मालवीय नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, जयपुर और एमबीएम कॉलेज, जोधपुर के शोधार्थियों ने मिलकर काम किया और एक उन्नत एओपी का निर्माण किया। इस उन्नत एओपी शोधन में प्राथमिक चरण के शोधन के बाद सैंड फिल्ट्रेशन स्टेप (लवण निस्यंदन चरण) और एक अन्य एओपी और उससे सहबद्ध कार्बन फिल्ट्रेशन स्टेप जैसे पड़ाव शामिल हैं। यह न केवल प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक प्रक्रियाओं से मुक्ति दिलाता है, अपितु इससे रंगों से भी अधिक से अधिक छुटकारा मिलने के साथ ही शोधित जल भी मानकों के अनुरूप प्राप्त होता है।

इस परियोजना को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी), वॉटर टेक्नोलॉजी इनिशिएटिव (डब्ल्यूटीआई) के साथ ही इंडियन नेशनल एकेडमी ऑफ इंजीनियरिंग (आईएनएई) से सहयोग प्राप्त हुआ। प्रायोगिक स्तर पर इसकी परख लक्ष्मी टेक्सटाइल प्रिंट्स जयपुर में की गई। अभी इस एओपी संयंत्र की क्षमता 10 किलोलीटर प्रतिदिन की है, जिसे बढ़ाकर 100 किलोलीटर प्रति दिन तक किए जाने की तैयारी है। बताया जा रहा है कि इस तकनीक से जल शोधन की लागत 50 प्रतिशत तक कम हुई है। (इंडिया साइंस वायर)

ISW/RM/HIN/01/09/2021

Keywords: Science, Technology, Innovation, Research, Water, Management, Waste water, Jaipur, IIT, Kanpur, Jodhpur, sand filtration step, INAE, WTI, AOP, Water Crisis, Population, City, colours, Carbon Filtration Step, scientists, Researchers, MBM College, India.

कपड़ा उद्योग से निकले दूषित जल के शोधन की नयी तकनीक विकसित

इस तकनीक से रंगाई के बाद बचे दूषित जल से विषैले तत्वों को निकालकर उससे घरेलू और औद्योगिक उपयोग के लायक बनाया जा सकेगा। इससे प्रदूषित जल की समस्या से निजात मिलने के साथ ही पानी की किल्लत जैसे दोहरे लाभ हासिल हो सकेंगे।

India Science Wire 10 Sep 2021

वर्तमान में कपड़ा क्षेत्र से प्रदूषित जल को प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक, तीन स्तरों पर शोधित किया जाता है। फिर भी दूषित जल पूरी तरह शोधित नहीं हो पाता।)Photo: Pixfuel)

कई उद्योग ऐसे हैं जिनसे बड़ी मात्रा में दूषित जल निकलता है, जिसके पुनः उपयोग की संभावनाएं तलाशने के प्रयास किए जा रहे हैं। भारतीय शोधकर्ताओं के एक दल ने कपड़ा उद्योग से डाई यानी रंगाई की प्रक्रिया में निकलने वाले दूषित जल के शोधन के लिए एक कारगर समाधान तलाशा है।

इससे रंगाई के बाद शेष बचे दूषित जल से विषैले तत्वों को निकालकर उससे घरेलू और औद्योगिक उपयोग के लायक बनाया जा सकेगा। इससे प्रदूषित जल की समस्या से निजात मिलने के साथ ही पानी की किल्लत जैसे दोहरे लाभ हासिल हो सकेंगे।

वर्तमान में कपड़ा क्षेत्र से प्रदूषित जल को प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक, तीन स्तरों पर शोधित किया जाता है। फिर भी दूषित जल पूरी तरह शोधित नहीं हो पाता। इसमें प्रयुक्त स्टैंड अलोन एडवांस्ड ऑक्सिडेशन प्रोसेस-ट्रीटमेंट टेक्निक शोधन के सरकारी मानकों के अ (एओपी)नुरूप सक्षम नहीं साबित हुई है। रसायनों की निरंतर आपूर्ति जैसे पहलू को लेकर जलशोधन की य-ह प्रक्रिया खर्चीली हो जाती है।

ऐसे में, इस समूची प्रक्रिया को अपेक्षित स्तर पर पूरी किफायत के साथ संपन्न कराना एक बड़ी आवश्यकता समझी जा रही थी। नयी पहल इस आवश्यकता की पूर्ति में सहायक होगी। इस पर भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से जानकारी दी गई है कि (डीएसटी)'वर्तमान तकनीक सिंथेटिक औद्योगिक रंगों और चमकीले रंग की गंध को दूर नहीं कर सकती है, जिसका पारिस्थितिक और विशेष रूप से जलीय जीवन पर कार्सिनोजेनिक और विषाक्त प्रभाव पड़ता है जो लंबे समय तक कायम रहता है। ऐसे में, इस विषाक्तता को दूर करने के लिए उन्नत एओपी तकनीक समय की आवश्यकता है।'

इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), कानपुर के शोधार्थियों और मालवीय नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, जयपुर और एमबीएम कॉलेज, जोधपुर के शोधार्थियों ने मिलकर काम किया और एक उन्नत एओपी का निर्माण किया। इस उन्नत एओपी शोधन में प्राथमिक चरण के शोधन के बाद सैंड फिल्ट्रेशन स्टेप और एक अन्य एओपी और उससे सहबद्ध कार्बन फिल्ट्रेशन स्टेप (लवण निस्यंदन चरण)

जैसे पड़ाव शामिल हैं। यह न केवल प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक प्रक्रियाओं से मुक्ति दिलाता है, अपितु इससे रंगों से भी अधिक से अधिक छुटकारा मिलने के साथ ही शोधित जल भी मानकों के अनुरूप प्राप्त होता है।

इस परियोजना को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग (डीएसटी), वॉटर टेक्नोलॉजी इनिशिएटिव से सहयोग प्राप्त हुआ (आईएनएई) के साथ ही इंडियन नेशनल एकेडमी ऑफ इंजीनियरिंग (डब्ल्यूटीआई)। प्रायोगिक स्तर पर इसकी परख लक्ष्मी टेक्सटाइल प्रिंट्स जयपुर में की गई। अभी इस एओपी संयंत्र की क्षमता 10 किलोलीटर प्रतिदिन की है, जिसे बढ़ाकर 100 किलोलीटर प्रति दिन तक किए जाने की तैयारी है। बताया जा रहा है कि इस तकनीक से जल शोधन की लागत 50 प्रतिशत तक कम हुई है।

बैक्टीरियल बायोफिल्म के विरुद्ध शोधकर्ताओं ने विकसित किया ग्राफीन नैनोकम्पोजिट-

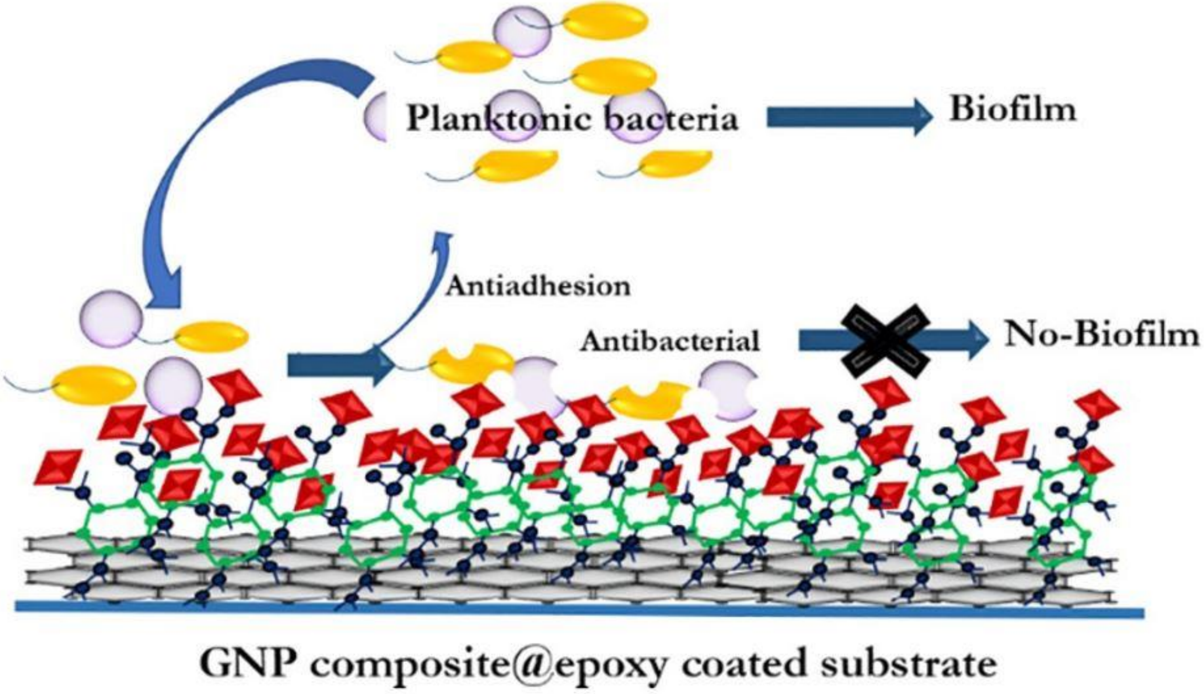

Last Updated: रविवार, 12 सितम्बर 2021 (13:14 IST)

नई दिल्ली, हमारे दांतों पर जमी परत, मछली से भरे टैंक की दीवारों पर लिसलिसा पदार्थ और जहाजों की संरचना पर जमी परत बायोफिल्म या जैविक परत के कुछ उदाहरण हैं।

बैक्टीरियल बायोफिल्म, चिकित्सा उपकरणों के दूषित होने और शरीर में माइक्रोबियल एवं पुराने संक्रमणों की उत्पत्ति का एक प्रमुख कारण है। वास्तव में, बायोफिल्म कई मानव रोगों के स्रोत माने जाते हैं, क्योंकि वे गंभीर संक्रमण का कारण बनते हैं, और उनमें दवाओं के खिलाफ प्रतिरोधी गुण भी होते हैं।

हाल के वर्षों में, कई अध्ययनों से पता चला है कि अपने विशिष्ट भौतिक रासायनिक और जीवाणुरोधी गुणों के साथ नैनोमैटेरियल्स सूक्ष्म जीवों के प्रसार की श्रृंखला को तोड़ सकते हैं-, और विभिन्न तंत्रों के माध्यम से बायोफिल्म संरचनाओं को नियंत्रित कर सकते हैं। लेकिन, मानव उपयोग के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे नैनोमैटेरियल्स को विषाक्त नहीं होना चाहिए।-

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान)IIT) रुड़की द्वारा इनक्यूबेटेड, बेंगलूरू स्थित स्टार्ट अप लॉग-9 मैटेरियल्स के शोधकर्ताओं ने गैरमैटेरियल्स-विषैले और हाइड्रोफोबिक नैनो-, ग्राफीन नैनो-) प्लेटलेट्सGNP) का उपयोग करके एक जीवाणुरोधी और एंटीबायोफिल्म कम्पोजिट विकसित - किया है। शोधकर्ताओं का कहना है कि इसे आसान और हरित हाइड्रोथर्मल तकनीक के माध्यम से विकसित किया गया है।

परीक्षण में, इस नये विकसित नैनो-कम्पोजिट में प्रभावी जीवाणुरोधी गुण पाए गए हैं। नैनो-कम्पोजिट, जिसमें ग्राफीन नैनो) सिल्वर-टैनिक एसिड-प्लेटलेट्स-GNP-TA-Ag) शामिल है, की 64 माइक्रोग्रामनेगेटिव बैक्टीरिया-एमएल जितनी कम सांद्रता को ग्राम /, एशेरिकिया कोलाई के खिलाफ असरदार पाया गया है, जबकि ग्रामपॉजिटिव बैक्टीरिया स्टैफिलोकॉकस ऑरियस के - खिलाफ128 माइक्रोग्राम एमएल मात्रा को बैक्टीरिया वृद्धि रोकने में प्रभावी पाया गया है। /

जब इस ग्राफीन कम्पोजिट आधारित एपॉक्सी कोटिंग को ग्लास की अंतर्निहित परत पर लगाया गया, तो स्टैफिलोकॉकस ऑरियस के मेथिसिलिन स्ट्रेन के खिलाफ 97 प्रतिशत से अधिक बायोफिल्मप्रतिरोधी प्रभाव दर्ज किया गया।-

बायोफिल्म; बैक्टीरिया के एक सुव्यवस्थित समुदाय में पायी जाने वाली एक प्रकार की जीवन शैली है, जिसमें बैक्टीरिया एकदूसरे से-, और अन्य सतहों से चिपके रहते हैं। सूक्ष्मजीव विज्ञानी अब यह जान चुके हैं कि बैक्टीरिया एककोशिकीय शैली भी -साथ बहु-कोशिकीय जीवन शैली के साथ-कोशिकीय जीवन शैली का एक उदाहरण है।-अपनाते हैं। बायोफिल्म इसी बहु

यह कोशिकाओं के बीच संचार की एक जटिल प्रणाली है, जिसमें कुछ विशिष्ट जीन्स को नियंत्रित किया जाता है। बैक्टीरियल बायोफिल्म एंटीबायोटिक दवाओं का प्रतिरोध करने, प्रतिरक्षा प्रणाली और अन्य बाहरी तनावों से बचे रहने के लिए जाने जाते हैं। बायोफिल्म एक गंभीर वैश्विक स्वास्थ्य चिंता का विषय है, क्योंकि रोगाणुरोधी प्रतिरोध के कारण दुनिया भर में हर साल लगभग एक करोड़ मौतें होती हैं।

नमी वाले इनडोर स्थानों पर बायोफिल्म के प्रभाव की स्थिति अधिक पायी जाती है। इसकी कॉलोनियां या एक प्रकार की जीवाणु कोशिकाएं जैविक या अजैविक सतहों से चिपकी रहती हैं,

और वे बाह्य कोशिकीय बहुलक पदार्थों से बने मैट्रिक्स में अंतर्निहित हो जाती हैं।

बायोफिल्म की परत अक्सर ऐसी स्थायी सतहों पर बनती है, जिनके संपर्क में हम अक्सर आते हैं, जिसमें अस्पताल, स्वास्थ्य केंद्र, स्विमिंग पूल, पानी की टंकी, जल उपचार संयंत्र आदि शामिल हैं। इसीलिए ये आसानी से संक्रमण फैला सकते हैं। इनमें अस्पताल से प्राप्त संक्रमण सबसे खतरनाक हैं, क्योंकि अस्पतालों में मल्टी ड्रगबैक्टीरियल बीमारियों की अत्यधिक उच्च घटनाओं को - प्रतिरोधी-देखा गया है।

यह अध्ययन सेंटर फॉर सेल्युलर ऐंड मॉलिक्यूलर प्लेटफॉर्म्स)C-CAMP)-बायोटेक्नोलॉजी इग्निशन ग्रांट)BIG) के अनुदान पर आधारित है। C-CAMP, जैव प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा समर्थित पहल है, जिसके अंतर्गत वर्ष 2009 से जीवनविज्ञान में अत्याधुनिक अनुसंधान और -नवाचार को बढ़ावा दिया जा रहा है। C-CAMP ने बायोटेक्नोलॉजी इग्निशन ग्रांट)BIG) योजना के लिए जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान सहायता परिषद)BIRAC) के साथ भागीदारी की है, जो युवा कंपनियों और व्यक्तियों को जीवन-ऑफ-विज्ञान के क्षेत्र में उनके प्रभावी विचारों के लिए प्रूफ-कॉन्सेप्ट डेटा स्थापित करने के लिए फंड करती है।

इस अध्ययन को शोध पत्रिका प्रोग्रेस इन ऑर्गेनिक कोटिंग्स में प्रकाशित किया गया है। शोधकर्ताओं में आईआईटी रुड़की के इंद्रानील लहिरी एवं अक्षय वीसिंघल ., और लॉग 9 मैटेरियल्स साइंटिफिक प्राइवेट लिमिटेड की शोधकर्ता दीपिका मलवाल एवं शंकर त्यागराजन शामिल थे। **(इंडिया साइंस वायर(**

बैक्टीरियल बायोफिल्म के विरुद्ध शोधकर्ताओं ने विकसित किया ग्राफीन नैनोकम्पोजिट-

10/09/2021 V3news India

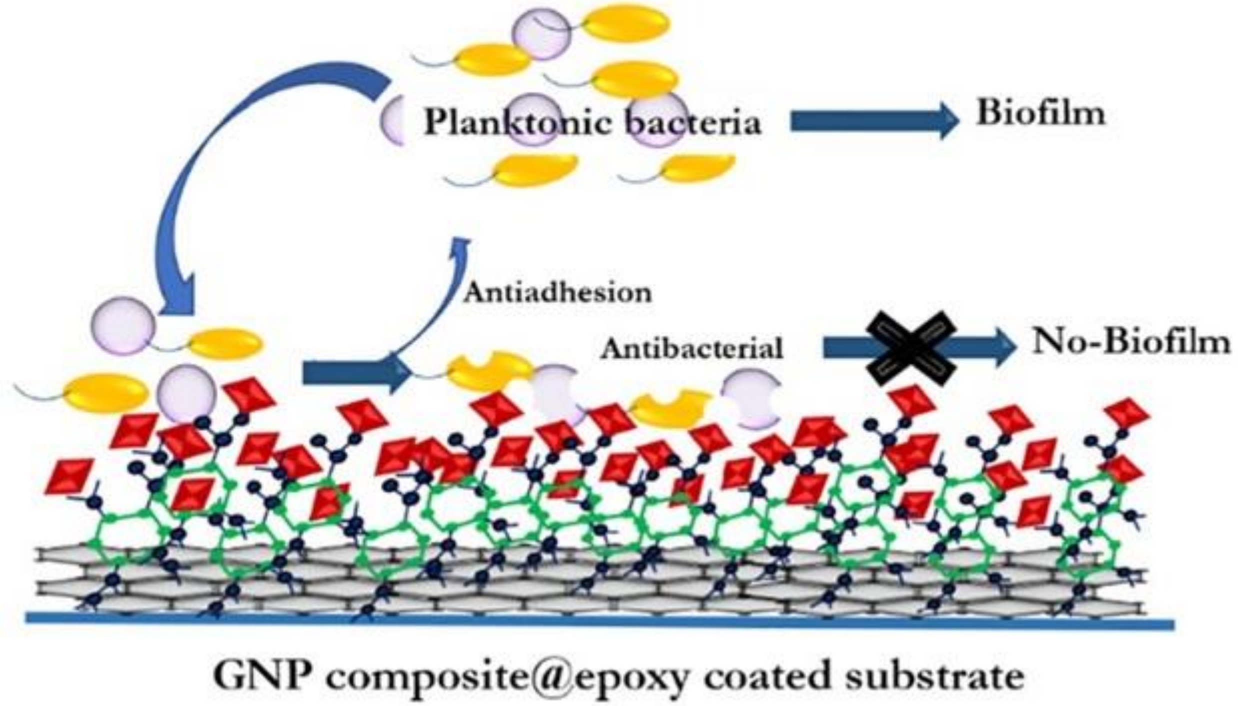

नई दिल्ली, 10 सितंबर हमारे दाँतों पर जमी परत :(इंडिया साइंस वायर), मछली से भरे टैंक की दीवारों पर लिसलिसा पदार्थ और जहाजों की संरचना पर जमी परत बायोफिल्म या जैविक परत के कुछ उदाहरण हैं। बैक्टीरियल बायोफिल्म, चिकित्सा उपकरणों के दूषित होने और शरीर में माइक्रोबियल एवं पुराने संक्रमणों की उत्पत्ति का एक प्रमुख कारण है वास्तव में, बायोफिल्म कई मानव रोगों के स्रोत माने जाते हैं, क्योंकि वे गंभीर संक्रमण का कारण बनते हैं, और उनमें दवाओं के खिलाफ प्रतिरोधी गुण भी होते हैं।

हाल के वर्षों में, कई अध्ययनों से पता चला है कि अपने विशिष्ट भौतिक रासायनिक और जीवाणुरोधी गुणों के साथ नैनो मैटेरियल्स सूक्ष्म जीवों के प्रसार की श्रृंखला को तोड़ सकते हैं, और विभिन्न तंत्रों के माध्यम से बायोफिल्म संरचनाओं को नियंत्रित कर सकते हैं। लेकिन, मानव उपयोग के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे नैनोमैटेरियल्स को विषाक्त नहीं होना चाहिए। -) भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानIIT) रुड़की द्वारा इनक्यूबेटेड, बेंगलूरू स्थित स्टार्ट अप लॉग-9 मैटेरियल्स के शोधकर्ताओं ने गैरमैटेरियल्स-विषैले और हाइड्रोफोबिक नैनो-, ग्राफीन नैनो) प्लेटलेट्स-GNP) का उपयोग करके एक जीवाणुरोधी और एंटी-बायोफिल्म कम्पोजिट विकसित किया है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि इसे आसान और हरित हाइड्रोथर्मल तकनीक के माध्यम से विकसित किया गया है परीक्षण में, इस नये विकसित नैनोकम्पोजिट-कम्पोजिट में प्रभावी जीवाणुरोधी गुण पाए गए हैं। नैनो-, जिसमें ग्राफीन नैनोटैनिक -प्लेटलेट्स-) सिल्वर-एसिडGNP-TA-Ag) शामिल है, की 64 माइक्रोग्राम नेगेटिव बैक्टीरिया-एमएल जितनी कम सांद्रता को ग्राम /, एशेरिकिया कोलाई के खिलाफ असरदार पाया गया है, जबकि ग्राम पॉजिटिव बैक्टीरिया स्टैफिलोकॉकस ऑरियस के खिलाफ-128 माइक्रोग्राम एमएल मात्रा को बैक्टीरिया वृद्धि रोकने में प्रभावी पाया गया है। /

जब इस ग्राफीन कम्पोजिट आधारित एपॉक्सी कोटिंग को ग्लास की अंतर्निहित परत पर लगाया गया, तो स्टैफिलोकॉकस ऑरियस के मेथिसिलिन स्ट्रेन के खिलाफ 97 प्रतिशत से अधिक बायोफिल्मप्रतिरोधी प्रभाव दर्ज किया गया बायोफिल्म-; बैक्टीरिया के एक सुव्यवस्थित समुदाय में पायी जाने वाली एक प्रकार की जीवन शैली है, जिसमें बैक्टीरिया एकदूसरे से-, और अन्य सतहों से चिपके रहते हैं। सूक्ष्मजीव विज्ञानी अब यह जान चुके हैं कि बैक्टीरिया एकसाथ -कोशिकीय जीवन शैली के साथ-कोशिकीय शैली भी अपनाते हैं।-बहु

बायोफिल्म इसी बहुकोशिकीय जीवन शैली का एक उदाहरण है। यह कोशिकाओं के बीच संचार की एक जटिल प्रणाली है-, जिसमें कुछ विशिष्ट जीन्स को नियंत्रित किया जाता है। बैक्टीरियल बायोफिल्म एंटीबायोटिक दवाओं का प्रतिरोध करने, प्रतिरक्षा प्रणाली और अन्य बाहरी तनावों से बचे रहने के लिए जाने जाते हैं। बायोफिल्म एक गंभीर वैश्विक स्वास्थ्य चिंता का विषय है, क्योंकि रोगाणुरोधी प्रतिरोध के कारण दुनिया भर में हर साल लगभग एक करोड़ मौतें होती हैं।

नमी वाले इनडोर स्थानों पर बायोफिल्म के प्रभाव की स्थिति अधिक पायी जाती है। इसकी कॉलोनियां या एक प्रकार की जीवाणु कोशिकाएं जैविक या अजैविक सतहों से चिपकी रहती हैं, और वे बाह्य कोशिकीय बहुलक पदार्थों से बने मैट्रिक्स में अंतर्निहित हो जाती हैं। बायोफिल्म की परत अक्सर ऐसी स्थायी सतहों पर बनती है, जिनके संपर्क में हम अक्सर आते हैं, जिसमें अस्पताल, स्वास्थ्य केंद्र, स्विमिंग पूल, पानी की टंकी, जल उपचार संयंत्र आदि शामिल हैं।

इसीलिए ये आसानी से संक्रमण फैला सकते हैं। इनमें अस्पताल से प्राप्त संक्रमण सबसे खतरनाक हैं, क्योंकि अस्पतालों में मल्टी ड्रग प्रतिरोधी-– बैक्टीरियल बीमारियों की अत्यधिक उच्च घटनाओं को देखा गया है। यह अध्ययन सेंटर फॉर सेल्युलर ऐंड मॉलिक्यूलर प्लेटफॉर्म्स)C-CAMP)-बायोटेक्नोलॉजी इग्निशन ग्रांट)BIG) के अनुदान पर आधारित है। C-CAMP, जैव प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा समर्थित पहल है, जिसके अंतर्गत वर्ष 2009 से जीवनविज्ञान में अत्याधुनिक -अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा दिया जा रहा है।

C-CAMP ने बायोटेक्नोलॉजी इग्निशन ग्रांट)BIG) योजना के लिए जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान सहायता परिषद)BIRAC) के साथ भागीदारी की है, जो युवा कंपनियों और व्यक्तियों को जीवनविज्ञान के क्षेत्र में उनके प्रभावी विचारों के -कॉन्सेप्ट डेटा स्थापित करने के लिए फंड करती है। इस अध्ययन को शोध पत्रिका प्रोग्रेस इन-ऑफ-लिए प्रूफ ऑर्गेनिक कोटिंग्स में प्रकाशित किया गया है। शोधकर्ताओं में आईआईटी रुड़की के इंद्रानील लहिरी एवं अक्षय वीसिंघल ., और लॉग 9 मैटेरियल्स साइंटिफिक प्राइवेट लिमिटेड की शोधकर्ता दीपिका मलवाल एवं शंकर त्यागराजन शामिल थे।

हस्तक्षेप.com

उनकी खबरें जो खबर नहीं बनती

बैक्टीरियल बायोफिल्म के विरुद्ध शोधकर्ताओं ने विकसित किया ग्राफीन नैनोकम्पोजिट-

बैक्टीरियल बायोफिल्म, चिकित्सा उपकरणों के दूषित होने और शरीर में माइक्रोबियल एवं पुराने संक्रमणों की उत्पत्ति का एक प्रमुख कारण है। वास्तव में, बायोफिल्म कई मानव रोगों के स्रोत माने जाते हैं, क्योंकि वे गंभीर संक्रमण का कारण बनते हैं, और उनमें दवाओं के खिलाफ प्रतिरोधी गुण भी होते हैं।....Read More.

By amalendu upadhyay | Fri, 10 Sep 2021

New nano-composite to beat antimicrobial resistance

नई दिल्ली, 10 सितंबर: हमारे दाँतों पर जमी परत, मछली से भरे टैंक की दीवारों पर लिसलिसा पदार्थ और जहाजों की संरचना पर जमी परत बायोफिल्म या जैविक परत के कुछ उदाहरण हैं।

बैक्टीरियल बायोफिल्म, चिकित्सा उपकरणों के दूषित होने और शरीर में माइक्रोबियल एवं पुराने संक्रमणों की उत्पत्ति का एक प्रमुख कारण है।

वास्तव में, बायोफिल्म कई मानव रोगों के स्रोत माने जाते हैं, क्योंकि वे गंभीर संक्रमण का कारण बनते हैं, और उनमें दवाओं के खिलाफ प्रतिरोधी गुण भी होते हैं।

हाल के वर्षों में, कई अध्ययनों से पता चला है कि अपने विशिष्ट भौतिक रासायनिक और जीवाणुरोधी गुणों के साथ नैनोमैटेरियल्स सूक्ष्म जीवों के प्रसार की श्रृंखला को तोड़ सकते हैं-, और विभिन्न तंत्रों के माध्यम से बायोफिल्म संरचनाओं को नियंत्रित कर सकते हैं। लेकिन, मानव उपयोग के लिए यह आवश्यक है कि ऐसे नैनो-मैटेरियल्स को विषाक्त नहीं होना चाहिए।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान)IIT) रुड़की द्वारा इनक्यूबेटेड, बेंगलूरू स्थित स्टार्ट अप लॉग-9 मैटेरियल्स के शोधकर्ताओं ने गैरमैटेरियल्स-विषैले और हाइड्रोफोबिक नैनो-, ग्राफीन नैनो) प्लेटलेट्स-GNP) का उपयोग करके एक जीवाणुरोधी और एंटीबायोफिल्म कम्पोजिट विकसित किया है।-

शोधकर्ताओं का कहना है कि इसे आसान और हरित हाइड्रोथर्मल तकनीक के माध्यम से विकसित किया गया है।

परीक्षण में, इस नये विकसित नैनोकम्पोजिट में प्रभावी जीवाणुरोधी गुण पाए गए हैं।-

नैनोकम्पोजिट-, जिसमें ग्राफीन नैनो) सिल्वर-टैनिक एसिड-प्लेटलेट्स-GNP-TA-Ag) शामिल है, की 64 माइक्रोग्राम नेगेटिव बैक्टीरिया-एमएल जितनी कम सांद्रता को ग्राम /, एशेरिकिया कोलाई के खिलाफ असरदार पाया गया है, जबकि ग्राम पॉजिटिव बैक्टीरिया स्टैफिलोकॉकस ऑरियस के खिलाफ-128 माइक्रोग्राम एमएल /मात्रा को बैक्टीरिया वृद्धि रोकने में प्रभावी पाया गया है। जब इस ग्राफीन कम्पोजिट आधारित एपॉक्सी कोटिंग को ग्लास की अंतर्निहित परत पर लगाया गया, तो स्टैफिलोकॉकस ऑरियस के मेथिसिलिन स्ट्रेन के खिलाफ 97 प्रतिशत से अधिक बायोफिल्मप्रतिरोधी प्रभाव दर्ज किया गया-।

बायोफिल्म; बैक्टीरिया के एक सुव्यवस्थित समुदाय में पायी जाने वाली एक प्रकार की जीवन शैली है, जिसमें बैक्टीरिया एकदूसरे से-, और अन्य सतहों से चिपके रहते हैं।

सूक्ष्मजीव विज्ञानी अब यह जान चुके हैं कि बैक्टीरिया एक कोशिकीय-साथ बहु-कोशिकीय जीवन शैली के साथ-शैली भी अपनाते हैं। बायोफिल्म इसी बहुकोशिकीय जीवन शैली का एक उदाहरण है। यह कोशिकाओं के बीच - संचार की एक जटिल प्रणाली है, जिसमें कुछ विशिष्ट जीन्स को नियंत्रित किया जाता है।

बैक्टीरियल बायोफिल्म एंटीबायोटिक दवाओं का प्रतिरोध करने, प्रतिरक्षा प्रणाली और अन्य बाहरी तनावों से बचे रहने के लिए जाने जाते हैं।

बायोफिल्म एक गंभीर वैश्विक स्वास्थ्य चिंता का विषय है, क्योंकि रोगाणुरोधी प्रतिरोध के कारण दुनिया भर में हर साल लगभग एक करोड़ मौतें होती हैं।

नमी वाले इनडोर स्थानों पर बायोफिल्म के प्रभाव की स्थिति अधिक पायी जाती है। इसकी कॉलोनियां या एक प्रकार की जीवाणु कोशिकाएं जैविक या अजैविक सतहों से चिपकी रहती हैं, और वे बाह्य कोशिकीय बहुलक पदार्थों से बने मैट्रिक्स में अंतर्निहित हो जाती हैं।

बायोफिल्म की परत अक्सर ऐसी स्थायी सतहों पर बनती है, जिनके संपर्क में हम अक्सर आते हैं, जिसमें अस्पताल, स्वास्थ्य केंद्र, स्विमिंग पूल, पानी की टंकी, जल उपचार संयंत्र आदि शामिल हैं। इसीलिए ये आसानी

से संक्रमण फैला सकते हैं। इनमें अस्पताल से प्राप्त संक्रमण सबसे खतरनाक हैं, क्योंकि अस्पतालों में मल्टी ड्रग-बैक्टीरियल बीमार - प्रतिरोधीियों की अत्यधिक उच्च घटनाओं को देखा गया है।

यह अध्ययन सेंटर फॉर सेल्युलर ऐंड मॉलिक्यूलर प्लेटफॉर्म्स)C-CAMP)-बायोटेक्नोलॉजी इग्निशन ग्रांट)BIG) के अनुदान पर आधारित है।

C-CAMP,जैव प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा समर्थित पहल है, जिसके अंतर्गत वर्ष 2009 से जीवन-विज्ञान में अत्याधुनिक अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा दिया जा रहा है। C-CAMP ने बायोटेक्नोलॉजी इग्निशन ग्रांट)BIG) योजना के लिए जैव प्रौद्योगिकी उद्योग अनुसंधान सहायता परिषद)BIRAC) के साथ भागीदारी की है, जो युवा कंपनियों और व्यक्तियों को जीवनविज्ञान के क्षेत्र में उनके प्रभावी विचारों के लिए -कॉन्सेप्ट डेटा स्थापित करने के लिए फंड करती है।-ऑफ-प्रूफ

इस अध्ययन को शोध पत्रिका प्रोग्रेस इन ऑर्गेनिक कोटिंग्स में प्रकाशित किया गया है। शोधकर्ताओं में आईआईटी रुड़की के इंद्रानील लहिरी एवं अक्षय वीसिंघल ., और लॉग 9 मैटेरियल्स साइंटिफिक प्राइवेट लिमिटेड की शोधकर्ता दीपिका मलवाल एवं शंकर त्यागराजन शामिल थे।

(इंडिया साइंस वायर(

Topics: antimicrobial resistance, AMR, Indian Institute of Technology, Roorkee, non-toxic, antibacterial, antibiofilm, composite, antibiotics, infections, hospital, implant, swimming pool, water tank, nanomaterial, Centre for Cellular and Molecular Platforms, C-CAMP, Biotech Ignition Grant scheme, graphene, tannic acid, silver, बैक्टीरियल बायोफिल्म एंटीबायोटिक दवाओं का प्रतिरोध,

CSIR lab transfers know-how for new COVID-19 testing technique

By **Rupesh Dharmik** - September 14, 2021

New Delhi: In a development that could help strengthen the fight against COVID-19, the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Nagpur-based National Environmental Engineering Research Institute (NEERI) has transferred the know-how for a technique developed by its scientists for testing of samples from suspected coronavirus patients.

The new test promises to be simple, fast, cost-effective, patient-friendly, and comfortable even as it is based on the standard RT-PCR technology. According to the scientists, it will provide test results within a mere three hours and is well-suited for rural and tribal areas as it required minimal infrastructure.

The know-how has been transferred to the Union Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises (MSME), on a non-exclusive basis. This would enable the innovation to be commercialized and licensed to all capable parties in the private and government sectors.

The technique is non-invasive and is very simple. The patient has to just gargle with a solution developed by the scientists and rinse it inside a tube filled with saline solution. This sample in the collection tube will be then taken to the laboratory where it will be kept in a special buffer solution at room temperature. An RNA template will be produced when this solution is heated and this will be further processed for the RT-PCR test.

“The new method of collecting and processing the sample enables savings on the otherwise costly infrastructural requirement of RNA extraction. People can also test themselves. The method allows for self-sampling”, explained Dr. Krishna Khairnar, the principal inventor of the technology named simply as `Saline Gargle RT-PCR technology’.

The licensees would set up manufacturing facilities for commercial production in the form of easily usable compact kits. CSIR-NEERI had fast-tracked the know-how transfer process in the light of the prevailing pandemic situation and probable third wave of COVID-19.

The ceremonial transfer of the Standard Operating Procedure and Know-How of the Saline Gargle RT-PCR technique was done in the presence of Union Minister for Road Transport & Highways, Mr. Nitin Gadkari on Saturday.

Speaking on the occasion, Mr. Gadkari said: “The Saline Gargle RT-PCR method needs implementation across the nation, especially in resource-poor regions like rural and tribal areas. This would result in faster and more citizen-friendly testing and will strengthen our fight against the pandemic”.

Director, CSIR-NEERI, Dr.Srivari Chandrasekhar, Chairman, Technology Transfer, CSIR-NEERI, Dr.Atul Vaidya, and Dr. Krishna Khairnar were also present on the occasion. (India Science Wire)

RD TIMES.in Health

CSIR lab transfers know-how for new COVID-19 testing technique

RD Times Health | 1 week ago

New Delhi: In a development that could help strengthen the fight against COVID-19, the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Nagpur-based National Environmental Engineering Research Institute (NEERI) has transferred the know-how for a technique developed by its scientists for testing of samples from suspected coronavirus patients.

The new test promises to be simple, fast, cost-effective, patient-friendly, and comfortable even as it is based on the standard RT-PCR technology. According to the scientists, it will provide test results within a mere three hours and is well-suited for rural and tribal areas as it required minimal infrastructure.

The know-how has been transferred to the Union Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises (MSME), on a non-exclusive basis. This would enable the innovation to be commercialized and licensed to all capable parties in the private and government sectors.

The technique is non-invasive and is very simple. The patient has to just gargle with a solution developed by the scientists and rinse it inside a tube filled with saline solution. This sample in the collection tube will be then taken to the laboratory where it will be kept in a special buffer solution at room temperature. An RNA template will be produced when this solution is heated and this will be further processed for the RT-PCR test.

"The new method of collecting and processing the sample enables savings on the otherwise costly infrastructural requirement of RNA extraction. People can also test themselves. The method allows for self-sampling", explained Dr. Krishna Khairnar, the principal inventor of the technology named simply as `Saline Gargle RT-PCR technology'.

The licensees would set up manufacturing facilities for commercial production in the form of easily usable compact kits. CSIR-NEERI had fast-tracked the know-how transfer process in the light of the prevailing pandemic situation and probable third wave of COVID-19.

The ceremonial transfer of the Standard Operating Procedure and Know-How of the Saline Gargle RT-PCR technique was done in the presence of Union Minister for Road Transport & Highways, Mr. Nitin Gadkari on Saturday.

Speaking on the occasion, Mr. Gadkari said: “The Saline Gargle RT-PCR method needs implementation across the nation, especially in resource-poor regions like rural and tribal areas. This would result in faster and more citizen-friendly testing and will strengthen our fight against the pandemic”.

Director, CSIR-NEERI, Dr.Srivari Chandrasekhar, Chairman, Technology Transfer, CSIR-NEERI, Dr.Atul Vaidya, and Dr. Krishna Khairnar were also present on the occasion. (India Science Wire)

www.biovoicenews.com

CSIR lab transfers know-how for new COVID-19 testing technique

CSIR-NEERI had fast-tracked the know-how transfer process in the light of the prevailing pandemic situation and probable third wave of COVID-19

By **BioVoice News Desk** - September 14, 2021

New Delhi: In a development that could help strengthen the fight against COVID-19, the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Nagpur-based National Environmental Engineering Research Institute (NEERI) has transferred the know-how for a technique developed by its scientists for testing of samples from suspected coronavirus patients.

The new test promises to be simple, fast, cost-effective, patient-friendly, and comfortable even as it is based on the standard RT-PCR technology. According to the scientists, it will provide test results within a mere three hours and is well-suited for rural and tribal areas as it required minimal infrastructure.

The know-how has been transferred to the Union Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises (MSME), on a non-exclusive basis. This would enable the innovation to be commercialized and licensed to all capable parties in the private and government sectors.

The technique is non-invasive and is very simple. The patient has to just gargle with a solution developed by the scientists and rinse it inside a tube filled with saline solution. This sample in the collection tube will be then taken to the laboratory where it will be kept in a special buffer solution at room temperature. An RNA template will be produced when this solution is heated and this will be further processed for the RT-PCR test.

“The new method of collecting and processing the sample enables savings on the otherwise costly infrastructural requirement of RNA extraction. People can also test themselves. The method allows for self-sampling”, explained Dr. Krishna Khairnar, the principal inventor of the technology named simply as `Saline Gargle RT-PCR technology’.

The licensees would set up manufacturing facilities for commercial production in the form of easily usable compact kits. CSIR-NEERI had fast-tracked the know-how transfer process in the light of the prevailing pandemic situation and probable third wave of COVID-19.

The ceremonial transfer of the Standard Operating Procedure and Know-How of the Saline Gargle RT-PCR technique was done in the presence of Union Minister for Road Transport & Highways, Mr. Nitin Gadkari on Saturday.

Speaking on the occasion, Mr. Gadkari said: “The Saline Gargle RT-PCR method needs implementation across the nation, especially in resource-poor regions like rural and tribal areas. This would result in faster and more citizen-friendly testing and will strengthen our fight against the pandemic”.

Director, CSIR-NEERI, Dr. Srivari Chandrasekhar, Chairman, TechnologyTransfer, CSIR-NEERI, Dr. Atul Vaidya, and Dr. Krishna Khairnar were also present on the occasion.

CSIR lab transfers know-how for new COVID-19 testing technique

NEWS

By Online Editor On Sep 13, 2021

New Delhi, Sep 13 (India Science Wire): In a development that could help strengthen the fight against COVID-19, the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Nagpur-based National Environmental Engineering Research Institute (NEERI) has transferred the know-how for a technique developed by its scientists for testing of samples from suspected coronavirus patients.

The new test promises to be simple, fast, cost-effective, patient-friendly, and comfortable even as it is based on the standard RT-PCR technology. According to the scientists, it will provide test results within a mere three hours and is well-suited for rural and tribal areas as it required minimal infrastructure.

The know-how has been transferred to the Union Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises (MSME), on a non-exclusive basis. This would enable the innovation to be commercialized and licensed to all capable parties in the private and government sectors.

The technique is non-invasive and is very simple. The patient has to just gargle with a solution developed by the scientists and rinse it inside a tube filled with saline solution. This sample in the collection tube will be then taken to the laboratory where it will be kept in a special buffer solution at room temperature. An RNA template will be produced when this solution is heated and this will be further processed for the RT-PCR test.

“The new method of collecting and processing the sample enables savings on the otherwise costly infrastructural requirement of RNA extraction. People can also test themselves. The method allows for self-sampling”, explained Dr. Krishna Khairnar, the principal inventor of the technology named simply as `Saline Gargle RT-PCR technology’.

The licensees would set up manufacturing facilities for commercial production in the form of easily usable compact kits. CSIR-NEERI had fast-tracked the know-how transfer process in the light of the prevailing pandemic situation and probable third wave of COVID-19.

The ceremonial transfer of the Standard Operating Procedure and Know-How of the Saline Gargle RT-PCR technique was done in the presence of Union Minister for Road Transport & Highways, Mr. Nitin Gadkari on Saturday.

Speaking on the occasion, Mr. Gadkari said: “The Saline Gargle RT-PCR method needs implementation across the nation, especially in resource-poor regions like rural and tribal areas. This would result in faster and more citizen-friendly testing and will strengthen our fight against the pandemic”.

Director, CSIR-NEERI, Dr.Srivari Chandrasekhar, Chairman, TechnologyTransfer, CSIR-NEERI, Dr.Atul Vaidya, and Dr. Krishna Khairnar were also present on the occasion.

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

CSIR-NEERI Transfers Know-How for New COVID-19 Testing Technique

By **ISW Desk** On **Sep 13, 2021**

In a development that could help strengthen the fight against COVID-19, the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Nagpur-based National Environmental Engineering Research Institute (NEERI) has transferred the know-how for a technique developed by its scientists for testing of samples from suspected coronavirus patients.

The new test promises to be simple, fast, cost-effective, patient-friendly, and comfortable even as it is based on the standard RT-PCR technology. According to the scientists, it will provide test results within a mere three hours and is well-suited for rural and tribal areas as it required minimal infrastructure.

The know-how has been transferred to the Union Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises (MSME), on a non-exclusive basis. This would enable the innovation to be commercialized and licensed to all capable parties in the private and government sectors.

The technique is non-invasive and is very simple. The patient has to just gargle with a solution developed by the scientists and rinse it inside a tube filled with saline solution. This sample in the collection tube will be then taken to the laboratory where it will be kept in a special buffer solution at room temperature. An RNA template will be produced when this solution is heated and this will be further processed for the RT-PCR test.

“The new method of collecting and processing the sample enables savings on the otherwise costly infrastructural requirement of RNA extraction. People can also test themselves. The method allows for self-sampling”, explained Dr. Krishna Khairnar, the principal inventor of the technology named simply as `Saline Gargle RT-PCR technology’.

The licensees would set up manufacturing facilities for commercial production in the form of easily usable compact kits. CSIR-NEERI had fast-tracked the know-how transfer process in the light of the prevailing pandemic situation and probable third wave of COVID-19.

The ceremonial transfer of the Standard Operating Procedure and Know-How of the Saline Gargle RT-PCR technique was done in the presence of Union Minister for Road Transport & Highways, Mr. Nitin Gadkari on Saturday.

Speaking on the occasion, Mr. Gadkari said: “The Saline Gargle RT-PCR method needs implementation across the nation, especially in resource-poor regions like rural and tribal areas. This would result in faster and more citizen-friendly testing and will strengthen our fight against the pandemic”.

Director, CSIR-NEERI, Dr.Srivari Chandrasekhar, Chairman, Technology Transfer, CSIR-NEERI, Dr. Atul Vaidya, and Dr. Krishna Khairnar were also present on the occasion.

Science THE WIRE

CSIR Lab Transfers Saline Gargle RT-PCR Technique to MSME Ministry

13/09/2021

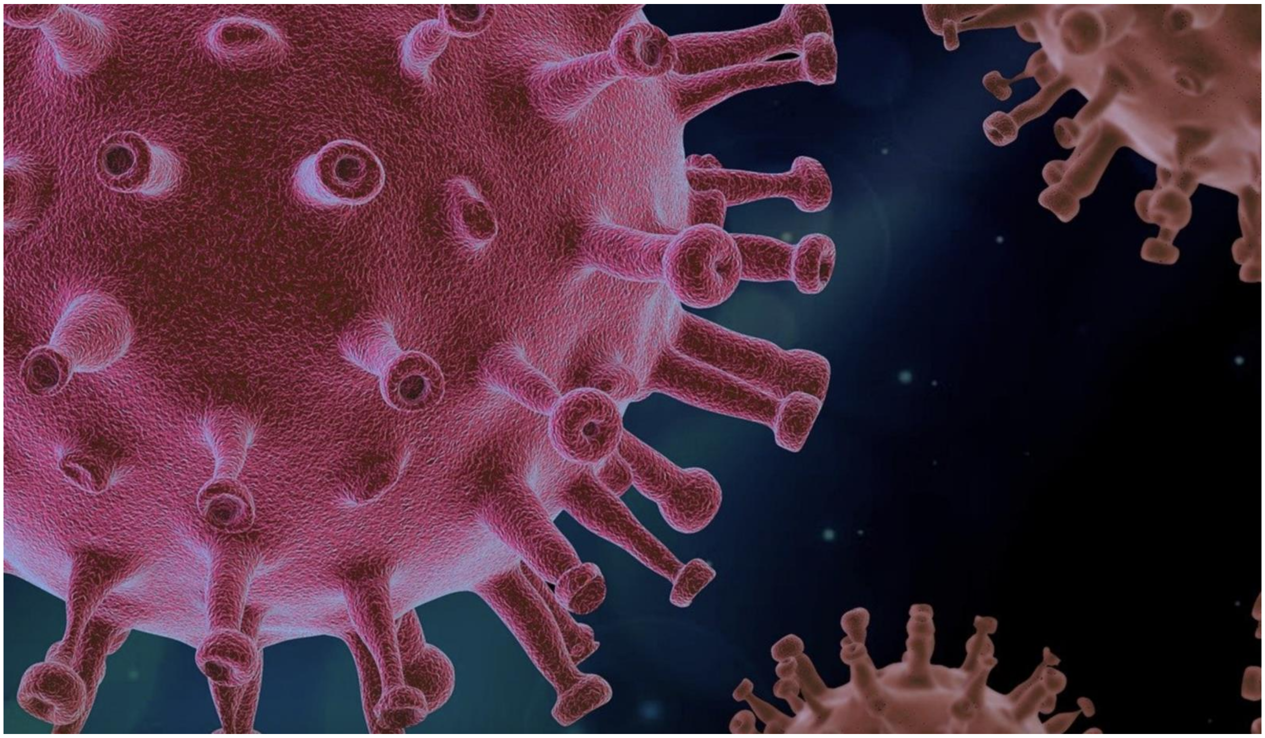

Image: PIRO4D/pixabay

New Delhi: The Nagpur-based National Environmental Engineering Research Institute (NEERI) has transferred the knowhow of an indigenous saline gargle RT-PCR technique to the Ministry of Micro, Small and Medium Enterprises (MSME) for commercialising it, according to a statement published on September 12.

The saline gargle RT-PCR technology is simple, fast, cost-effective, patient-friendly and comfortable, according to the statement.

The test also provides instant results and is well-suited for rural and tribal areas, given minimal infrastructure requirements, it said.

NEERI is an institute under the Centre-funded Council for Scientific and Industrial Research (CSIR).

The transfer of knowhow “on a non-exclusive basis” is expected to “enable the innovation to be commercialised and licensed to all capable parties, including private, government and various rural development schemes and departments,” the statement added.

The licensees are expected to set up manufacturing facilities for commercial production in the form of easily usable compact kits.

In light of the prevailing COVID-19 situation, and a probable third wave in the offing, NEERI fast-tracked the transfer process – in the presence of Union minister Nitin Gadkari – to potential licensees for wider dissemination.

The test “needs implementation across the nation, especially in resource-poor regions like rural and tribal areas. This would result in faster and more citizen-friendly testing and will strengthen our fight against the pandemic,” Gadkari said.

The Indian Bulletin
www.theindianbulletin.com

CSIR lab transfers know-how for new COVID-19 testing technique

By **The Indian Bulletin Online** - September 14, 2021

New Delhi: In a development that could help strengthen the fight against COVID-19, the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Nagpur-based National Environmental Engineering Research Institute (NEERI) has transferred the know-how for a technique developed by its scientists for testing of samples from suspected coronavirus patients.

The new test promises to be simple, fast, cost-effective, patient-friendly, and comfortable even as it is based on the standard RT-PCR technology. According to the scientists, it will provide test results within a mere three hours and is well-suited for rural and tribal areas as it required minimal infrastructure.

The know-how has been transferred to the Union Ministry of Micro, Small & Medium Enterprises (MSME), on a non-exclusive basis. This would enable the innovation to be commercialized and licensed to all capable parties in the private and government sectors.

The technique is non-invasive and is very simple. The patient has to just gargle with a solution developed by the scientists and rinse it inside a tube filled with saline solution. This sample in the collection tube will be then taken to the laboratory where it will be kept in a special buffer solution at room temperature. An RNA template will be produced when this solution is heated and this will be further processed for the RT-PCR test.

"The new method of collecting and processing the sample enables savings on the otherwise costly infrastructural requirement of RNA extraction. People can also test themselves. The method allows for self-sampling", explained Dr. Krishna Khairnar, the principal inventor of the technology named simply as `Saline Gargle RT-PCR technology'.

The licensees would set up manufacturing facilities for commercial production in the form of easily usable compact kits. CSIR-NEERI had fast-tracked the know-how transfer process in the light of the prevailing pandemic situation and probable third wave of COVID-19.

The ceremonial transfer of the Standard Operating Procedure and Know-How of the Saline Gargle RT-PCR technique was done in the presence of Union Minister for Road Transport & Highways, Mr. Nitin Gadkari on Saturday.

Speaking on the occasion, Mr. Gadkari said: "The Saline Gargle RT-PCR method needs implementation across the nation, especially in resource-poor regions like rural and tribal areas. This would result in faster and more citizen-friendly testing and will strengthen our fight against the pandemic".

Director, CSIR-NEERI, Dr.Srivari Chandrasekhar, Chairman, Technology Transfer, CSIR-NEERI, Dr.Atul Vaidya, and Dr. Krishna Khairnar were also present on the occasion. (India Science Wire)

DownToEarth | डाउन टू अर्थ

IIT Delhi to start bachelor of design from session 2022-23

The four-year programme will have 20 seats to start with, and will be open to students of all specialisations

By India Science Wire

Published: Tuesday 14 September 2021

Design has an enormous impact on human lives and is a vehicle for the social and economic progress of any country. It is now central to all the knowledge application activities of the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi.

Keeping this in mind, the IIT Delhi board of governors has approved starting of 'Bachelor of Design (B.Des.)' from the session 2022-23.

The B.Des. programme will be offered by the Institute's Department of Design, which came into existence in 2017. The four-year programme will have 20 seats to start with, and will be open to students of all specializations such as science, arts and commerce.

Students for the B.Des. programme will be admitted based on Undergraduate Common Entrance Examination for Design (UCEED) ranks. Registration for UCEED examination has begun.

Speaking of the new programme launched by the Institute, V Ramgopal Rao, Director, IIT-Delhi, said: "We are delighted about starting of this new bachelor's programme in design as this is the first time IIT Delhi would be admitting undergraduate students (B.Des) from other than Physics, Chemistry and Mathematics. We expect that the students who graduate with a B. Des. degree from IIT Delhi would take up leadership positions in industry, academia, government, consulting, and entrepreneurship over a period of time."

"Bachelor of Design (B.Des.) programme and other programmes in design, which are in pipeline at IIT Delhi will bridge the huge demand supply gap of quality design professionals, which our country needs to excel as a creative economy," he added.

"The programme is designed for imparting high quality education to produce industry-ready and socially conscious design professionals for addressing some of the grand challenges facing our society/country", PV Madhusudhan Rao, head, Department of Design, IIT-Delhi said.

IIT Delhi has been running a successful Master of Design (M.Des.) programme since 1994 and has produced some of the outstanding design professionals, design leaders, design researchers and design educators since then. The Department of Design also has a strong PhD programme in place with more than 35 research scholars presently enrolled in the programme, IIT Delhi statement said. **(India Science Wire)**

RD TIMES education

IIT Delhi to start bachelor of design from next session

RD Times Education | 1 week ago

Students at Department of Design, IIT Delhi

New Delhi: Design has an enormous impact on human lives and is a vehicle for the social and economic progress of any country. Design is now central to all the knowledge application activities of the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi. Keeping this in mind, the IIT Delhi board of governors has approved starting of 'Bachelor of Design (B.Des.)' from the session 2022-23.

The B.Des. programme will be offered by the Institute's Department of Design, which came into existence in 2017. The four-year programme will have 20 seats to start with and will be open to students of all specializations such as science, arts, and commerce. Students for the B.Des. programme will be admitted based on UCEED (Undergraduate Common Entrance Examination for Design) ranks. Registration for UCEED examination has begun (http://www.uceed.iitb.ac.in/2022/).

Speaking of the new programme launched by the Institute, Prof V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi said: "We are delighted about starting of this new bachelor's programme in design as this is the first time IIT Delhi would be admitting undergraduate students(B.Des)from other than Physics, Chemistry and

Mathematics. We expect that the students who graduate with a B.Des.degree from IIT Delhi would take up leadership positions in industry, academia, government, consulting, and entrepreneurship over a period of time."

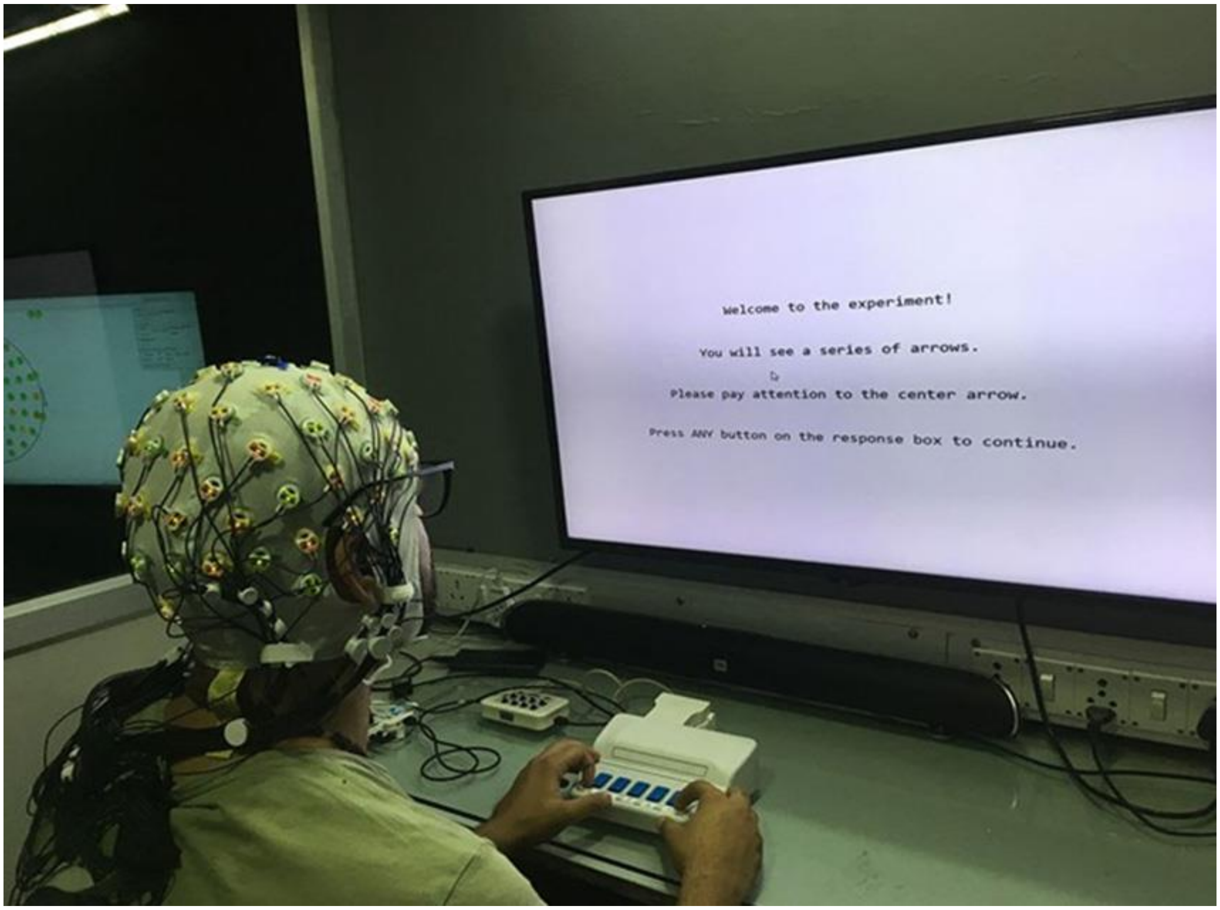

Student at Department of Design, IIT Delhi

"Bachelor of Design (B.Des.) Programme and other programmes in design, which are in pipeline at IIT Delhi will bridge the huge demand-supply gap of quality design professionals, which our country needs to excel as a creative economy," Prof Rao added.

"The programme is designed for imparting high-quality education to produce industry-ready and socially conscious design professionals for addressing some of the grand challenges facing our society/country", Prof. P. V. Madhusudhan Rao, Head, Department of Design, IIT Delhi said.

IIT Delhi has been running a successful Master of Design (M.Des.) programme since 1994 and has produced some of the outstanding design professionals, design leaders, design researchers and design educators since then. The Department of Design also has a strong PhD programme in place with more than 35 research scholars presently enrolled in the programme, IIT Delhi statement said. (India Science Wire)

Republic NewsIndia

New study to help develop salt-tolerant plants

By **Rupesh Dharmik** - September 14, 2021

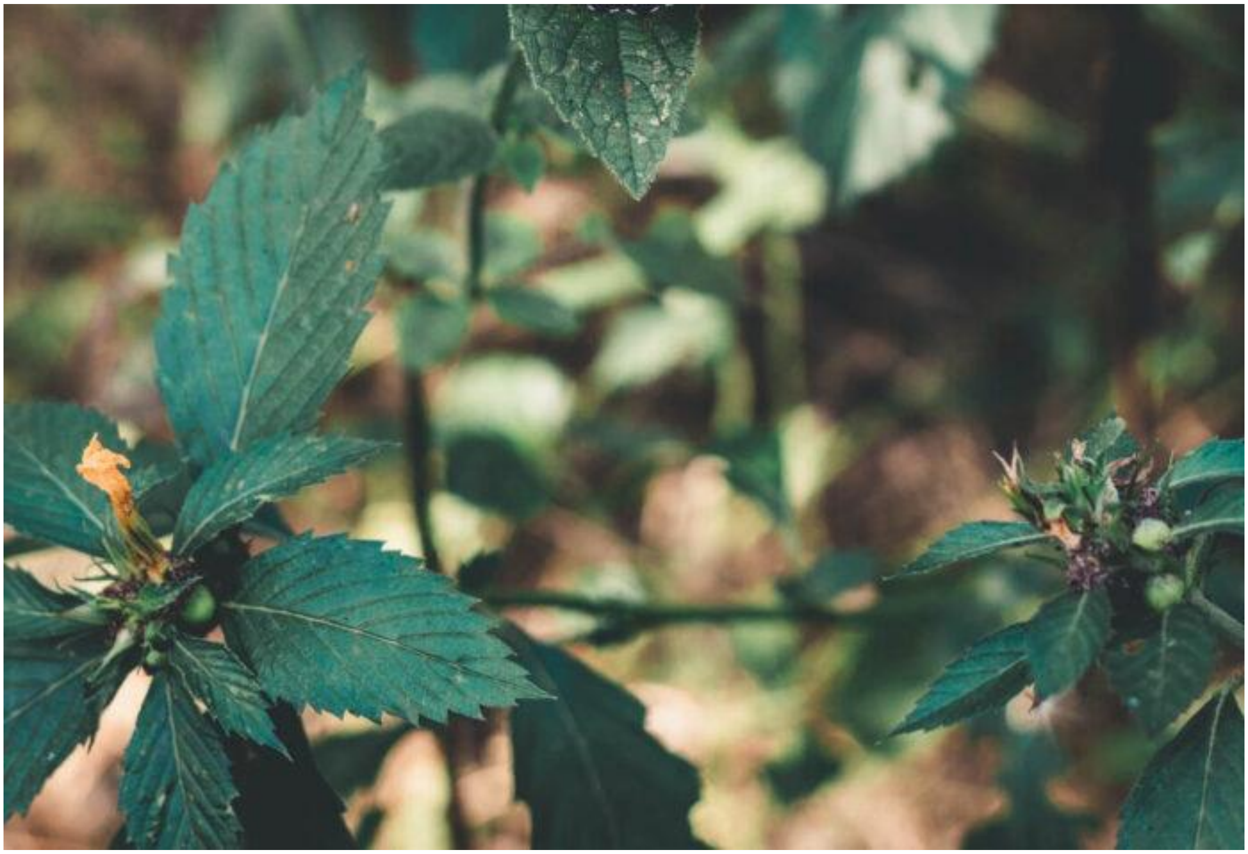

Representative Image by Pexels.com

New Delhi: Efforts to make use of mangrove plants to meet the increasing need for food production in the wake of a growing world population could get a major boost with a team of Indian researchers reporting a reference-grade genome of a highly salt-tolerant mangrove species called Avicennia marina. It grows optimally in 75% seawater and can tolerate even 250% seawater.

It is estimated that the world population could increase by more than 20 percent to about nine billion by 2050. With two billion people already not

having sufficient food, crop production needs to increase significantly to feed the ever-increasing global population. Availability of water is a significant challenge to crop production in dryland areas, which accounts for about 40 percent of the world's total land area. Further, salinity, another water-related problem, is prevalent in about 900 million hectares.

Water makes up about 71% of the earth's surface. But, 96.5% is saline seawater that is unsuitable for growing plants. However, an exception to this is the mangrove plants that thrive in seawater. Scientists have been studying the mangrove plants' remarkable adaptions to an otherwise harsh ecological setting. Among other things, it has been found out that mangroves have specialized roots with hydrophobic barriers and ultrafiltration mechanisms that prevent salts from getting in. However, a lot more remains to be known.

The advances in genome sequencing and assembly technologies have enhanced the understanding of many plants and animals. While gene expression analysis and whole-genome sequencing studies are beginning to provide a molecular understanding of the mangrove plants, reference-grade genome assembly, which is essential to carry out a comprehensive study on salinity tolerance genes at the whole-genome level, is not available for any mangrove species.

In the new study, a joint team of researchers from three institutions — the Department of Biotechnology's Bhubaneswar-based Institute of Life Science; Annamalai University, Parangipettai, Tamil Nadu; and SRM Institute of Science and Technology, Kattankulathur, Tamil Nadu has filled the gap.

They sequenced the genome and analyzed the salinity tolerance genes of Avicennia marina, an extremely salt-tolerant mangrove species. They have come up with a reference-grade genome that contains 31,477 protein-coding genes. Further, they found that about 12% of the A. marina genes (3,860) constitute the `salinome' – the set of genes that are associated with salinity tolerance. This is the first-ever reference-grade genome of any mangrove species worldwide. The scientists said the findings are significant as they could eventually help develop salt-tolerant agricultural crops.

The study team was led by Dr. Ajay Parida and Dr. M. Parani and included P. Natarajajan, A. Murugesan, G. Govindan, A. Gopalakrishnan, K. Ravichandran, P. Duraisamy, R. Balaji, Tanuja, and P. Shyamli. The findings of the study have been published in the journal, `Communication Biology'. (India Science Wire)

New study to help develop salt-tolerant plants

In the new study, a joint team of researchers have sequenced the genome and analyzed the salinity tolerance genes of Avicennia marina, an extremely salt-tolerant mangrove specie

By **BioVoice News Desk** - September 14, 2021

New Delhi: Efforts to make use of mangrove plants to meet the increasing need for food production in the wake of a growing world population could get a major boost with a team of Indian researchers reporting a reference-grade genome of a highly salt-tolerant mangrove species called Avicennia marina. It grows optimally in 75% seawater and can tolerate even 250% seawater.

It is estimated that the world population could increase by more than 20 percent to about nine billion by 2050. With two billion people already not having sufficient food, crop production needs to increase significantly to feed the ever-increasing global population. Availability of water is a significant challenge to crop production in dryland areas, which accounts for about 40 percent of the world's total land area. Further, salinity, another water-related problem, is prevalent in about 900 million hectares.

Water makes up about 71% of the earth's surface. But, 96.5% is saline seawater that is unsuitable for growing plants. However, an exception to this is the mangrove plants that thrive in seawater. Scientists have been studying the mangrove plants' remarkable adaptions to an otherwise harsh ecological setting. Among other things, it has been found out that mangroves have specialized roots with hydrophobic barriers and ultrafiltration mechanisms that prevent salts from getting in. However, a lot more remains to be known.

The advances in genome sequencing and assembly technologies have enhanced the understanding of many plants and animals. While gene expression analysis and whole-genome sequencing studies are beginning to provide a molecular understanding of the mangrove plants, reference-grade genome assembly, which is essential to carry out a comprehensive study on salinity tolerance genes at the whole-genome level, is not available for any mangrove species.

In the new study, a joint team of researchers from three institutions — the Department of Biotechnology's Bhubaneswar-based Institute of Life Science; Annamalai University, Parangipettai, Tamil Nadu; and SRM Institute of Science and Technology, Kattankulathur, Tamil Nadu has filled the gap.

They sequenced the genome and analyzed the salinity tolerance genes of Avicennia marina, an extremely salt-tolerant mangrove species. They have come up with a reference-grade genome that contains 31,477 protein-coding genes. Further, they found that about 12% of the A. marina genes (3,860) constitute the `salinome' – the set of genes that are associated with salinity tolerance. This is the first-ever reference-grade genome of any mangrove species worldwide. The scientists said the findings are significant as they could eventually help develop salt-tolerant agricultural crops.

The study team was led by Dr. Ajay Parida and Dr. M. Parani and included P. Natarajajan, A. Murugesan, G. Govindan, A. Gopalakrishnan, K. Ravichandran, P. Duraisamy, R. Balaji, Tanuja, and P. Shyamli. The findings of the study have been published in the journal, `Communication Biology'.

New Study to Help Develop Salt-Tolerant Plants

Research Stash | News | Sep 13, 2021

Efforts to make use of mangrove plants to meet the increasing need for food production in the wake of a growing world population could get a major boost with a team of Indian researchers reporting a reference-grade genome of a highly salt-tolerant mangrove species called Avicennia marina. It grows optimally in 75% seawater and can tolerate even 250% seawater.

It is estimated that the world population could increase by more than 20 percent to about nine billion by 2050. With two billion people already not having sufficient food, crop production needs to increase significantly to feed the ever-increasing global population. Availability of water is a significant challenge to crop production in dryland areas, which accounts for about 40 percent of the world's total land area. Further, salinity, another water-related problem, is prevalent in about 900 million hectares.

Water makes up about 71% of the earth's surface. But, 96.5% is saline seawater that is unsuitable for growing plants. However, an exception to this is the mangrove plants that thrive in seawater. Scientists have been studying the mangrove plants' remarkable adaptions to an otherwise harsh ecological setting. Among other things, it has been found out that mangroves have specialized roots with hydrophobic barriers and ultrafiltration mechanisms that prevent salts from getting in. However, a lot more remains to be known.

The advances in genome sequencing and assembly technologies have enhanced the understanding of many plants and animals. While gene expression analysis and whole-genome sequencing studies are beginning to provide a molecular understanding of the mangrove plants, reference-grade genome assembly, which is essential to carry out a comprehensive study on salinity tolerance genes at the whole-genome level, is not available for any mangrove species.

In the new study, a joint team of researchers from three institutions — the Department of Biotechnology's Bhubaneswar-based Institute of Life Science; Annamalai University,

Parangipettai, Tamil Nadu; and SRM Institute of Science and Technology, Kattankulathur, Tamil Nadu has filled the gap.

They sequenced the genome and analyzed the salinity tolerance genes of Avicennia marina, an extremely salt-tolerant mangrove species. They have come up with a reference-grade genome that contains 31,477 protein-coding genes. Further, they found that about 12% of the A. marina genes (3,860) constitute the `salinome' – the set of genes that are associated with salinity tolerance. This is the first-ever reference-grade genome of any mangrove species worldwide. The scientists said the findings are significant as they could eventually help develop salt-tolerant agricultural crops.

The study team was led by Dr. Ajay Parida and Dr. M. Parani and included P. Natarajajan, A. Murugesan, G. Govindan, A. Gopalakrishnan, K. Ravichandran, P. Duraisamy, R. Balaji, Tanuja, and P. Shyamli. The findings of the study have been published in the journal, `Communication Biology'.

RD TIMES.in

New study to help develop salt-tolerant plants

By **RD Times Online** - September 14, 2021

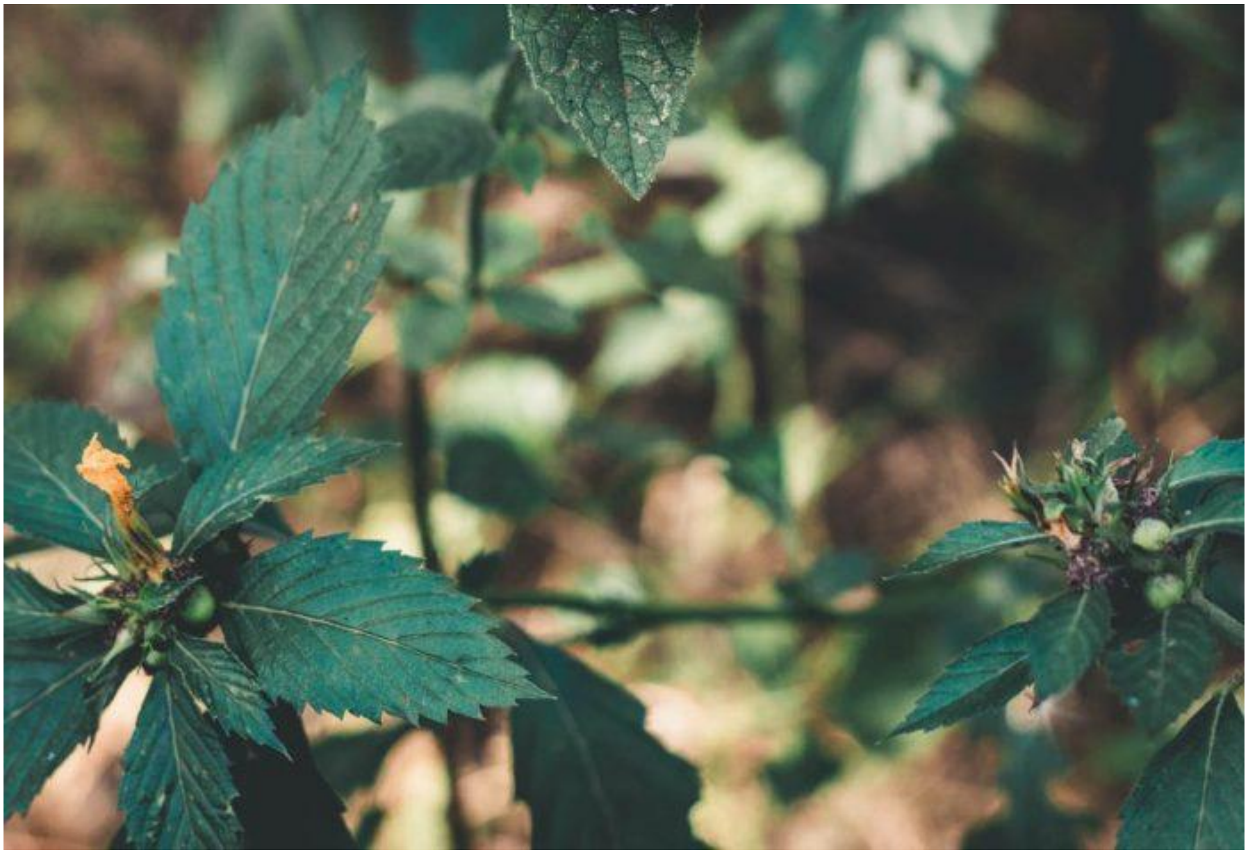

Representative Image by Pexels.com

New Delhi: Efforts to make use of mangrove plants to meet the increasing need for food production in the wake of a growing world population could get a major boost with a team of Indian researchers reporting a reference-grade genome of a highly salt-tolerant mangrove species called Avicennia marina. It grows optimally in 75% seawater and can tolerate even 250% seawater.

It is estimated that the world population could increase by more than 20 percent to about nine billion by 2050. With two billion people already not having sufficient food, crop production needs to increase significantly to feed the ever-increasing global population. Availability of water is a significant challenge to crop production in dryland areas, which accounts for about 40

percent of the world’s total land area. Further, salinity, another water-related problem, is prevalent in about 900 million hectares.

Water makes up about 71% of the earth’s surface. But, 96.5% is saline seawater that is unsuitable for growing plants. However, an exception to this is the mangrove plants that thrive in seawater. Scientists have been studying the mangrove plants’ remarkable adaptions to an otherwise harsh ecological setting. Among other things, it has been found out that mangroves have specialized roots with hydrophobic barriers and ultrafiltration mechanisms that prevent salts from getting in. However, a lot more remains to be known.

The advances in genome sequencing and assembly technologies have enhanced the understanding of many plants and animals. While gene expression analysis and whole-genome sequencing studies are beginning to provide a molecular understanding of the mangrove plants, reference-grade genome assembly, which is essential to carry out a comprehensive study on salinity tolerance genes at the whole-genome level, is not available for any mangrove species.

In the new study, a joint team of researchers from three institutions — the Department of Biotechnology’s Bhubaneswar-based Institute of Life Science; Annamalai University, Parangipettai, Tamil Nadu; and SRM Institute of Science and Technology, Kattankulathur, Tamil Nadu has filled the gap.

They sequenced the genome and analyzed the salinity tolerance genes of Avicennia marina, an extremely salt-tolerant mangrove species. They have come up with a reference-grade genome that contains 31,477 protein-coding genes. Further, they found that about 12% of the A. marina genes (3,860) constitute the `salinome’ – the set of genes that are associated with salinity tolerance. This is the first-ever reference-grade genome of any mangrove species worldwide. The scientists said the findings are significant as they could eventually help develop salt-tolerant agricultural crops.

The study team was led by Dr. Ajay Parida and Dr. M. Parani and included P. Natarajajan, A. Murugesan, G. Govindan, A. Gopalakrishnan, K. Ravichandran, P. Duraisamy, R. Balaji, Tanuja, and P. Shyamli. The findings of the study have been published in the journal, `Communication Biology’. (India Science Wire)

शोधकर्ताओं ने ड्रैगन फ्रूट को बताया 'सुपरफूड-'

Last Updated: सोमवार, 13 सितम्बर 2021 (18:48 IST)

नई दिल्ली, कैक्टस कुल को आमतौर पर कांटेदार पौधों के लिए जाना जाता है। ऐसे में, यह जानकर हैरानी हो सकती है कि कैक्टस परिवार से संबंधित फल ड्रैगन फ्रूट दुनियाभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है।

ड्रैगन फ्रूट के प्रचलन के साथसाथ इसकी खेती हाल के वर्षों में भारत में बढ़ी है। इसके स्वास्थ्यवर्द्धक गुणों को - विदेश में शोध हो रहे हैं।-शदेखते हुए इस पर दे

भारतीय शोधकर्ताओं के ऐसे ही एक अध्ययन में ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus species) में पाए जाने वाले पोषक तत्वों की पड़ताल की है। ड्रैगन फ्रूट की कम कैलोरी और पोषक गुणों के कारण इसे सुपरफूड की संज्ञा दी जा - रही है।

ड्रैगन फ्रूट को यह नाम उसकी बाहरी त्वचा और पपड़ीदार स्पाइक्स के कारण दिया गया है। हालांकि नाम

सुनने में भले ही लगे, लेकिन ड्रैगन फ्रूट में विभिन्न पोषक तत्वों के साथ भरपूर मात्रा में पानी और अन्य महत्वपूर्ण खनिज होते हैं।

इसका स्वाद हल्का मीठा होता है और इसकी कीवी और सेब की मिलीजुली बनावट होती है। इस फल का रसदार गूदा बेहद स्वादिष्ट होता है। कैक्टस कुल में इसके फूल बेहद सुंदर माने जाते हैं। इसीलिए, इसे 'नोबेल वुमन' या 'क्वीन ऑफ द नाइट' के नाम से भी जाना जाता है।

इस फल के उच्च पोषण मूल्य की जानकारी तो पहले से उपलब्ध है। लेकिन, फल की किस किस्म में बेहतर पोषण होता है और अच्छी उपज के लिए किसान को किस पर विचार करना चाहिए, इसके बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है।

इसी बात को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भारतीय बागवानी अनुसंधान -(आईसीएआर) संस्थान, बेंगलुरु के शोधकर्ताओं की एक टीम ने भारत में उगायी जाने वाली ड्रैगन फ्रूट के सात लोकप्रिय क्लोनों की जाँच की है, जिनमें दो में सफेद गूदे वाले फल और पाँच में लाल गूदे वाले फल शामिल हैं।

अध्ययन में, ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus) प्रजाति एच(सफेद गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले फल) अनडेटस ., और एच के पोषण और (लाल गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले फल) पॉलिराइजस .जैवरासायनिक संरचना की जाँच - ड्रैगन फ्रूट संबंधित पोषण संरचना डेटा विकसित करने और उनकी तुलना के लिए की गई है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि सफेद गूदे वाले ड्रैगन फ्रूट लाल गूदे वाले फलों के मुकाबले उपज और शर्करा की मात्रा के मामले में बेहतर होते हैं। वहीं, लाल गूदे वाले फल फाइबर, फेनोलिक्स और एंटीऑक्सिडेंट के मामले में - बेहतर पाए गए हैं।

अमीनो एसिड से भरपूर ड्रैगन फ्रूट में हिस्टिडीन, लाइसिन, मेथियोनीन, और फेनिलएलनिन जैसे तत्व पाए जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट में कैफिक एसिड, फेरुलिक एसिड, विटामिनसी-, विटामिन K1, पोटेशियम और आयरन भी पाया जाता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि दोनों प्रकार के फल अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आदर्श हैं, क्योंकि इनमें कैलोरी कम होती है।

ड्रैगन फ्रूट को स्टेम कटिंग के माध्यम से संवर्द्धित किया जाता है। अध्ययन के दौरान, आईसीएआरभारतीय - बागवानी अनुसंधान संस्थान के प्रायोगिक फार्मयार्ड में क्लोन लगाए थे। 12 से 15 महीनों में इसमें फूल आना शुरू हो जाते हैं और फल लगने के 30-35 दिनों बाद वे तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट की बेल दिखने में कैक्टस जैसी होती है, जिसे सहारा देने के लिए खंभों का उपयोग किया जाता है, ताकि फलों की बेलें फैल सकें।

ड्रैगन फ्रूट की हिरेहल्ली व्हाइट किस्म के प्रत्येक खंभे पर 51 फलों से लेकर अंडमान रेड में 96 तक फल होते हैं। अंडमान रेड की प्रति खंबे पर लगभग 10 किलो उपज मिली है, जबकि हिरियूर राउंड रेड की पैदावार 30 किलो से अधिक थी। हिरियूर राउंड रेड की प्रति हेक्टेयर उपज अंडमान रेड की तुलना में दोगुने से अधिक थी। फलों के स्वाद और पोषण गुण इन कारकों को प्रभावित करते हैं।

लाल किस्मों के गूदे में फेनोलिक एसिड की मात्रा अधिक होती है। यह बीटासायनिन के अलावा विटामिनसी-, विटामिनके से भी भरपूर होता है-ई और विटामिन-, जिसे कई स्वास्थ्य लाभ के लिए जाना जाता है। घुलित शर्करा और कार्बनिक अम्ल सहित कुल घुलनशील ठोस पदार्थ भी इसमें भरपूर मात्रा में पाये गए हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि जब किसान खेती के लिए क्लोन चुनते हैं, तो विभिन्न किस्मों के दाम किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए, विभिन्न किस्मों के गुणों का पता लगाना आवश्यक होता है।

शोधकर्ताओं में शामिल जी - करुणाकरण कहते हैं .'कुल घुलनशील ठोस और अम्लता का संयोजन इसे बेहतर स्वाद देता है।' सफेद गूदे वाले फलों में उच्च फाइबर और शर्करा कम होती है। शोधकर्ता कहते हैं, 'वजन घटाने में यह मददगार हो सकता है। इसके साथ ही, मधुमेह रोगियों के लिए यह आदर्श फल हो सकता है। उपज और जैवमले में फलों की गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुएरासायनिक दोनों मापदंडों के मा-, सफेद गूदे वाले हिरेहल्ली व्हाइट ड्रैगन फ्रूट क्लोन और लाल क्लोनों में हिरियूर राउंड रेड बेहतर पाए गए हैं।

दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और एशियाई मूल का फल डैगन फ्रूट को पिताया या पितहाया के नाम से भी जाना जाता है। ड्रैगन फ्रूट की खेती दक्षिणपूर्व एशिया-, अमेरिका, कैरिबियाई क्षेत्र और ऑस्ट्रेलिया समेत दुनिया के उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में मुख्य रूप से की जाती है।-कटिबंधीय और उपोष्ण-

इस अध्ययन में, आईसीएआरभारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान-, बेंगलूरू के शोधकर्ता

एमअरिवलगन ., जीकरुणाकरण ., टीरॉय .के., एमदिन्शा ., बीसिंधु .सी., वीशिल्पाश्री .एम., जीसतीश .सी. शिवशंकर शामिल हैं। यह अध्ययन शोध पत्रिका फूड केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। .एस.और के ***(इंडिया साइंस वायर(***

शोधकर्ताओं ने ड्रैगन फ्रूट को बताया सुपरफूड-

By RD Times Hindi | September 14, 2021

लाल एवं सफेद गूदे वाला ड्रैगन फ्रूट

नई दिल्ली: कैक्टस कुल को आमतौर परकांटेदार पौधों के लिए जाना जाता है। ऐसे में, यह जानकर हैरानी हो सकती है किकैक्टस परिवार सेसंबंधित फल ड्रैगन फ्रूट दुनियाभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। ड्रैगन फ्रूट के प्रचलन के साथसाथ इसकी खेती हाल के वर्षों में भारत मेंबढ़ी है। इसके स्वास्थ्यवर्द्धक गुणों को देखते हुए इस - के ऐसे ही एक अध विदेश में शोध हो रहे हैं। भारतीय शोधकर्ताओं-पर देश्‍्ययन में ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus species)में पाए जाने वाले पोषक तत्वों की पड़ताल की है। ड्रैगन फ्रूट की कम कैलोरी और पोषक गुणों के कारण इसे सुपरफूड की संज्ञा दी जा रही है।-

ड्रैगन फ्रूट को यह नाम उसकी बाहरी त्वचा और पपड़ीदार स्पाइक्स के कारण दिया गया है। हालांकि नाम सुनने में भले ही लगे, लेकिनड्रैगन फ्रूट में विभिन्न पोषक तत्वों के साथ भरपूर मात्रा में पानी और अन्य

महत्वपूर्ण खनिज होते हैं।इसका स्वाद हल्का मीठा होता है और इसकी कीवी और सेब की मिलीजुली बनावट होती है। इस फल का रसदार गूदा बेहद स्वादिष्ट होता है। कैक्टस कुल में इसके फूल बेहद सुंदर माने जाते हैं। इसीलिए, इसे 'नोबेल वुमन' या 'क्वीन ऑफ द नाइट' के नाम से भी जाना जाता है।

इस फल के उच्च पोषण मूल्य की जानकारी तो पहले से उपलब्ध है। लेकिन, फल की किस किस्म में बेहतर पोषण होता है और अच्छी उपज के लिए किसान को किस पर विचार करना चाहिए, इसके बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है। इसी बात को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भारतीय -(आईसीएआर) बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु के शोधकर्ताओं की एक टीम ने भारत में उगायी जाने वाली ड्रैगन फ्रूट के सात लोकप्रिय क्लोनों की जाँच की है, जिनमें दो में सफेद गूदे वाले फल और पाँच में लाल गूदे वाले फल शामिल हैं। अध्ययन में, ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus) प्रजाति एचसफेद गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले) अनडेटस . (फल, और एचरासायनिक संरचना -के पोषण और जैव (लाल गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले फल) पॉलिराइजस . की जाँच ड्रैगन फ्रूट संबंधित पोषण संरचना डेटा विकसित करने और उनकी तुलना के लिए की गई है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि सफेद गूदे वाले ड्रैगन फ्रूट लाल गूदे वाले फलों के मुकाबले उपज और शर्करा की मात्रा के मामले में बेहतर होते हैं। वहीं,लाल गूदे वाले फल फाइबर, फेनोलिक्स और एंटीऑक्सिडेंट के मामले में - बेहतर पाए गए हैं।अमीनो एसिड से भरपूर ड्रैगन फ्रूट में हिस्टिडीन, लाइसिन, मेथियोनीन, और फेनिलएलनिन जैसे तत्व पाए जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट में कैफिक एसिड, फेरुलिक एसिड, विटामिनसी-, विटामिन K1, पोटेशियम और आयरन भी पाया जाता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि दोनों प्रकार के फल अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आदर्श हैं, क्योंकि इनमें कैलोरी कम होती है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती (फोटोः क्रिएटिव कॉमन्स)

ड्रैगन फ्रूट को स्टेम कटिंग के माध्यम से संवर्द्धित किया जाता है। अध्ययन के दौरान,आईसीएआरभारतीय - बागवानी अनुसंधान संस्थानके प्रायोगिक फार्मयार्ड में क्लोन लगाए थे।12 से 15 महीनों मेंइसमें फूल आना शुरू हो जाते हैं और फल लगने के 30-35 दिनों बाद वे तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं।ड्रैगन फ्रूट की बेल दिखने में कैक्टस जैसी होती है, जिसे सहारा देने के लिए खंभों का उपयोग किया जाता है, ताकि फलों की बेलें फैल सकें।

ड्रैगन फ्रूट की हिरेहल्ली व्हाइटकिस्म के प्रत्येक खंभे पर 51 फलों से लेकरअंडमान रेड में96 तक फल होते हैं। अंडमान रेड की प्रति खंबे पर लगभग 10 किलो उपज मिली है, जबकि हिरियूर राउंड रेड की पैदावार 30 किलो से अधिक थी। हिरियूर राउंड रेड की प्रति हेक्टेयर उपज अंडमान रेड की तुलना में दोगुने से अधिक थी।फलों के स्वाद और पोषण गुणइन कारकों को प्रभावित करते हैं। लाल किस्मों के गूदे में फेनोलिक एसिड की मात्रा अधिक होती है। यह बीटासायनिन के अलावा विटामिनसी-, विटामिनके से भी भरपूर होता -ई और विटामिन-है, जिसे कई स्वास्थ्य लाभ के लिए जाना जाता है। घुलित शर्करा और कार्बनिक अम्ल सहित कुल घुलनशील ठोस पदार्थ भी इसमेंभरपूर मात्रा में पाये गए हैं। शोधकर्ताओं का कहना है किजब किसान खेती के लिए क्लोन चुनते हैं, तो विभिन्न किस्मों के दाम किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए, विभिन्न किस्मों के गुणों का पता लगाना आवश्यक होता है।

शोधकर्ताओं में शामिल जी- करुणाकरणकहते हैं .'कुल घुलनशील ठोस और अम्लता का संयोजन इसे बेहतर स्वाद देता है।'सफेद गूदे वाले फलों में उच्च फाइबर और शर्करा कम होती है। शोधकर्ता कहते हैं, 'वजन घटानेमें यह मददगार हो सकता है। इसके साथ ही, मधुमेह रोगियों के लिए यह आदर्श फल हो सकता है। उपज और जैवन में रखतेरासायनिक दोनों मापदंडों के मामले में फलों की गुणवत्ता को ध्या- हुए, सफेद गूदे वाले हिरेहल्ली व्हाइट ड्रैगन फ्रूट क्लोन और लाल क्लोनों में हिरियूर राउंड रेडबेहतर पाए गए हैं।

दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और एशियाई मूल का फल डैगन फ्रूट को पिताया या पितहाया के नाम से भी जाना जाता है। ड्रैगन फ्रूट की खेती दक्षिणपूर्व एशि-या, अमेरिका, कैरिबियाई क्षेत्र औरऑस्ट्रेलियासमेत दुनिया के उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में मुख्य रूप से की जाती है।-कटिबंधीय और उपोष्ण-

इस अध्ययन में, आईसीएआरभारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान-, बेंगलूरू के शोधकर्ता एमअरिवलगन ., जीकरुणाकरण ., टीयरॉ .के., एमदिन्श .ा, बीसिंधु .सी., वीशिल्पाश्री .एम., जी .एस.सतीश और के .सी. शिवशंकर शामिल हैं। यह अध्ययन शोध पत्रिका फूड केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। (वायर इंडिया साइंस)

हस्तक्षेप.com

ड्रैगन फ्रूट को शोधकर्ताओं ने बताया सुपरफूड-

ड्रैगन फ्रूट की खेती कहाँ होती है ? ड्रैगन फ्रूट का स्वाद कैसा होता है ? ड्रैगन फ्रूट कौन से देश में पाया जाता है?

By amalendu upadhyay | Mon, 13 Sep 2021

Researchers call dragon fruit a super-food

नई दिल्ली, 13 सितंबर, 2021 : कैक्टस कुल को आमतौर पर कांटेदार पौधों के लिए जाना जाता है। ऐसे में, यह जानकर हैरानी हो सकती है कि कैक्टस परिवार से संबंधित फल ड्रैगन फ्रूट दुनियाभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। ड्रैगन फ्रूट के प्रचलन के साथसाथ इसकी खेती हाल के वर्षों में भारत में बढ़ी है। इसके स्वास्थ्यवर्द्धक - विदेश में शोध हो रहे हैं।-गुणों को देखते हुए इस पर देश

ड्रैगन फ्रूट में पाए जाने वाले पोषक तत्व | Nutrients found in dragon fruit

भारतीय शोधकर्ताओं के ऐसे ही एक अध्ययन में ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus species) में पाए जाने वाले पोषक तत्वों की पड़ताल की है। ड्रैगन फ्रूट की कम कैलोरी और पोषक गुणों के कारण इसे सुपरफूड की संज्ञा दी जा - रही है।

ड्रैगन फ्रूट को यह नाम उसकी बाहरी त्वचा और पपड़ीदार स्पाइक्स के कारण दिया गया है। हालांकि नाम सुनने में भले ही लगे, लेकिन ड्रैगन फ्रूट में विभिन्न पोषक तत्वों के साथ भरपूर मात्रा में पानी और अन्य महत्वपूर्ण खनिज होते हैं।

ड्रैगन फ्रूट का स्वाद कैसा होता है? What does dragon fruit taste like?

इसका स्वाद हल्का मीठा होता है और इसकी कीवी और सेब की मिलीजुली बनावट होती है। इस फल का रसदार गूदा बेहद स्वादिष्ट होता है। कैक्टस कुल में इसके फूल बेहद सुंदर माने जाते हैं। इसीलिए, इसे 'नोबेल वुमन' या 'क्वीन ऑफ द नाइट' के नाम से भी जाना जाता है।

इस फल के उच्च पोषण मूल्य की जानकारी तो पहले से उपलब्ध है। लेकिन, फल की किस किस्म में बेहतर पोषण होता है और अच्छी उपज के लिए किसान को किस पर विचार करना चाहिए, इसके बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है। इसी बात को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भारतीय -(आईसीएआर) बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु के शोधकर्ताओं की एक टीम ने भारत में उगायी जाने वाली ड्रैगन फ्रूट के सात लोकप्रिय क्लोनों की जाँच की है, जिनमें दो में सफेद गूदे वाले फल और पाँच में लाल गूदे वाले फल शामिल हैं।

अध्ययन में, ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus) प्रजाति एच(सफेद गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले फल) अनडेटस ., और एच . लाल गूदे एवं ग) पॉलिराइजस ुलाबी त्वचा वाले फलजाँच ड्रैगन रासायनिक संरचना की-के पोषण और जैव (फ्रूट संबंधित पोषण संरचना डेटा विकसित करने और उनकी तुलना के लिए की गई है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि **सफेद गूदे वाले ड्रैगन फ्रूट (white fleshed dragon fruit)** लाल गूदे वाले फलों के मुकाबले उपज और शर्करा की मात्रा के मामले में बेहतर होते हैं। वहीं, लाल गूदे वाले फल फाइबर, फेनोलिक्स और एंटीऑक्सिडेंट के मामले में बेहतर पाए गए हैं। अमीनो एसिड से भरपूर ड्रैगन फ्रूट में - हिस्टिडीन, लाइसिन, मेथियोनीन, और फेनिलएलनिन जैसे तत्व पाए जाते हैं।

ड्रैगन फ्रूट में कैफिक एसिड, फेरुलिक एसिड, विटामिनसी-, विटामिन K1, पोटेशियम और आयरन भी पाया जाता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि दोनों प्रकार के फल अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आदर्श हैं, क्योंकि इनमें कैलोरी कम होती है।

ड्रैगन फ्रूट को स्टेम कटिंग के माध्यम से संवर्द्धित किया जाता है।

अध्ययन के दौरान, आईसीएआरभारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान के प्रायोगिक फार्मयार्ड में क्लोन लगाए - थे।12 से 15 महीनों में इसमें फूल आना शुरू हो जाते हैं और फल लगने के 30-35 दिनों बाद वे तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं।

ड्रैगन फ्रूट की बेल दिखने में कैक्टस जैसी होती है, जिसे सहारा देने के लिए खंभों का उपयोग किया जाता है, ताकि फलों की बेलें फैल सकें।

ड्रैगन फ्रूट की हिरेहल्ली व्हाइट किस्म के प्रत्येक खंभे पर 51 फलों से लेकर अंडमान रेड में 96 तक फल होते हैं। अंडमान रेड की प्रति खंबे पर लगभग 10 किलो उपज मिली है, जबकि हिरियूर राउंड रेड की पैदावार 30 किलो से अधिक थी। हिरियूर राउंड रेड की प्रति हेक्टेयर उपज अंडमान रेड की तुलना में दोगुने से अधिक थी। फलों के स्वाद और पोषण गुण इन कारकों को प्रभावित करते हैं।

लाल किस्मों के गूदे में फेनोलिक एसिड की मात्रा अधिक होती है। यह बीटासायनिन के अलावा विटामिन-सी, विटामिनके से भी भरपूर होता है-ई और विटामिन-, जिसे कई स्वास्थ्य लाभ के लिए जाना जाता है। घुलित शर्करा और कार्बनिक अम्ल सहित कुल घुलनशील ठोस पदार्थ भी इसमें भरपूर मात्रा में पाये गए हैं।

शोधकर्ताओं का कहना है कि जब किसान खेती के लिए क्लोन चुनते हैं, तो विभिन्न किस्मों के दाम किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए, विभिन्न किस्मों के गुणों का पता लगाना आवश्यक होता है।

शोधकर्ताओं में शामिल जी- करुणाकरण कहते हैं . 'कुल घुलनशील ठोस और अम्लता का संयोजन इसे बेहतर स्वाद देता है।' सफेद गूदे वाले फलों में उच्च फाइबर और शर्करा कम होती है।

शोधकर्ता कहते हैं, 'वजन घटाने में यह मददगार हो सकता है। इसके साथ ही, मधुमेह रोगियों के लिए यह आदर्श फल हो सकता है। उपज और जैव रासायनिक दोनों मापदंडों के मामले में-फलों की गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए, सफेद गूदे वाले हिरेहल्ली व्हाइट ड्रैगन फ्रूट क्लोन और लाल क्लोनों में हिरियूर राउंड रेड बेहतर पाए गए हैं।

Pitaya (पिताया(

दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और एशियाई मूल का फल डैगन फ्रूट को पिताया या पितहाया के नाम से भी जाना जाता है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती कहाँ होती है ? ड्रैगन फ्रूट कौन से देश में पाया जाता है?

ड्रैगन फ्रूट की खेती (dragon fruit farming) दक्षिणपूर्व एशिया-, **अमेरिका**, कैरिबियाई क्षेत्र और ऑस्ट्रेलिया समेत दुनिया के उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों-कटिबंधीय और उपोष्ण-में मुख्य रूप से की जाती है।

इस अध्ययन में, आईसीएआरभारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान-, बेंगलूरू के शोधकर्ता एम . अरिवलगन, जीकरुणाकरण ., टीरॉय .के., एमदिन्शा ., बीसिंधु .सी., वीशिल्पाश्री .एम., जीसतीश और .सी. शिवशंकर शामिल हैं। यह अध्ययन शोध पत्रिका .एस.के फूड केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इंडिया साइंस) (वायर

Topics: Biochemical, nutritional, dragon fruit, Hylocereus species, ICAR, Indian Institute of Horticultural Research, Fruit Crops, Horticultural

भारत हेराल्ड

शोधकर्ताओं ने ड्रैगन फ्रूट को बताया सुपर-फूड

1 week ago

लाल एवं सफेद गूदे वाला ड्रैगन फ्रूट

नई दिल्ली: कैक्टस कुल को आमतौर परकांटेदार पौधों के लिए जाना जाता है। ऐसे में, यह जानकर हैरानी हो सकती है किकैक्टस परिवार सेसंबंधित फल ड्रैगन फ्रूट दुनियाभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। ड्रैगन फ्रूट के प्रचलन के साथ इस हुए देखते को गुणों स्वास्थ्यवर्द्धक इसके है। मेंबढ़ी भारत में वर्षों के हाल खेती इसकी साथ-अध एक ही ऐसे के शोधकर्ताओं भारतीय हैं। रहे हो शोध में विदेश-देश पर्ययन में ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus species)में पाए जाने वाले पोषक तत्वों की पड़ताल की है। ड्रैगन फ्रूट की कम कैलोरी और पोषक गुणों के कारण इसे सुपरहै। रही जा दी संज्ञा की फूड-

ड्रैगन फ्रूट को यह नाम उसकी बाहरी त्वचा और पपड़ीदार स्पाइक्स के कारण दिया गया है। हालांकि नाम सुनने में भले ही लगे, लेकिनड्रैगन फ्रूट में विभिन्न पोषक तत्वों के साथ भरपूर मात्रा में पानी और अन्य महत्वपूर्ण खनिज होते हैं।इसका स्वाद हल्का मीठा होता है और इसकी कीवी और सेब की मिलीजुली बनावट होती है। इस फल का रसदार गूदा बेहद स्वादिष्ट होता है। कैक्टस कुल में इसके फूल बेहद सुंदर माने जाते हैं। इसीलिए, इसे 'नोबेल वुमन' या 'क्वीन ऑफ द नाइट' के नाम से भी जाना जाता है।

इस फल के उच्च पोषण मूल्य की जानकारी तो पहले से उपलब्ध है। लेकिन, फल की किस किस्म में बेहतर पोषण होता है और अच्छी उपज के लिए किसान को किस पर विचार करना चाहिए, इसके बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है। इसी बात को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भारतीय-(आईसीएआर) संस्थान अनुसंधान बागवानी, बेंगलुरु के शोधकर्ताओं की एक टीम ने भारत में उगायी जाने वाली ड्रैगन फ्रूट के सात लोकप्रिय क्लोनों की जाँच की है, जिनमें दो में सफेद गूदे वाले फल और पाँच में लाल गूदे वाले फल शामिल हैं। अध्ययन में, ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus) प्रजाति एच वाले त्वचा गुलाबी एवं गूदे सफेद) अनडेटस . (फल, और एच संरचना रासायनिक-जैव और पोषण के (फल वाले त्वचा गुलाबी एवं गूदे लाल) पॉलिराइजस . है। गई की लिए के तुलना उनकी और करने विकसित डेटा संरचना पोषण संबंधित फ्रूट ड्रैगन जाँच की

शोधकर्ताओं ने पाया कि सफेद गूदे वाले ड्रैगन फ्रूट लाल गूदे वाले फलों के मुकाबले उपज और शर्करा की मात्रा के मामले में बेहतर होते हैं। वहीं,लाल गूदे वाले फल फाइबर, फेनोलिक्स और एंटी में मामले के ऑक्सिडेंट-हिस्टिडीन में फ्रूट ड्रैगन भरपूर से एसिड हैं।अमीनो गए पाए बेहतर, लाइसिन, मेथियोनीन, और फेनिलएलनिन जैसे तत्व पाए जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट में कैफिक एसिड, फेरुलिक एसिड, विटामिनसी-, विटामिन K1, पोटेशियम और आयरन भी पाया जाता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि दोनों प्रकार के फल अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आदर्श हैं, क्योंकि इनमें कैलोरी कम होती है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती (फोटोः क्रिएटिव कॉमन्स)

ड्रैगन फ्रूट को स्टेम कटिंग के माध्यम से संवर्द्धित किया जाता है। अध्ययन के दौरान,आईसीएआर भारतीय- थे। लगाए क्लोन में फार्मयार्ड प्रायोगिक संस्थानके अनुसंधान बागवानी12 से 15 महीनों मेंइसमें फूल आना शुरू हो जाते हैं और फल लगने के 30-35 दिनों बाद वे तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं।ड्रैगन फ्रूट की बेल दिखने में कैक्टस जैसी होती है, जिसे सहारा देने के लिए खंभों का उपयोग किया जाता है, ताकि फलों की बेलें फैल सकें।

ड्रैगन फ्रूट की हिरेहल्ली व्हाइटकिस्म के प्रत्येक खंभे पर 51 फलों से लेकरअंडमान रेड में96 तक फल होते हैं। अंडमान रेड की प्रति खंबे पर लगभग 10 किलो उपज मिली है, जबकि हिरियूर राउंड रेड की पैदावार 30 किलो से अधिक थी। हिरियूर राउंड रेड की प्रति हेक्टेयर उपज अंडमान रेड की तुलना में दोगुने से अधिक थी।फलों के स्वाद और पोषण गुणइन कारकों को प्रभावित करते हैं। लाल किस्मों के गूदे में फेनोलिक एसिड की मात्रा अधिक होती है। यह बीटासायनिन के अलावा विटामिनसी-, विटामिन भरपूर भी से के-विटामिन और ई- है होता, जिसे कई स्वास्थ्य लाभ के लिए जाना जाता है। घुलित शर्करा और कार्बनिक अम्ल सहित कुल घुलनशील ठोस पदार्थ भी इसमेंभरपूर मात्रा में पाये गए हैं। शोधकर्ताओं का कहना है किजब किसान खेती के लिए क्लोन चुनते हैं, तो विभिन्न किस्मों के दाम किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए, विभिन्न किस्मों के गुणों का पता लगाना आवश्यक होता है।

शोधकर्ताओं में शामिल जी- हैं करुणाकरणकहते .'कुल घुलनशील ठोस और अम्लता का संयोजन इसे बेहतर स्वाद देता है।'सफेद गूदे वाले फलों में उच्च फाइबर और शर्करा कम होती है। शोधकर्ता कहते हैं, 'वजन घटानेमें

यह मददगार हो सकता है। इसके साथ ही, मधुमेह रोगियों के लिए यह आदर्श फल हो सकता है। उपज और जैवहुए रखते में ध्यान को गुणवत्ता की फलों में मामले के मापदंडों दोनों रासायनिक-, सफेद गूदे वाले हिरेहल्ली व्हाइट ड्रैगन फ्रूट क्लोन और लाल क्लोनों में हिरियूर राउंड रेडबेहतर पाए गए हैं।

दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और एशियाई मूल का फल डैगन फ्रूट को पिताया या पितहाया के नाम से भी जाना जाता है। ड्रैगन फ्रूट की खेती दक्षिणएशिया पूर्व-, अमेरिका, कैरिबियाई क्षेत्र औरऑस्ट्रेलियासमेत दुनिया के उष्णहै। जाती की से रूप मुख्य में क्षेत्रों कटिबंधीय-उपोष्ण और कटिबंधीय-

इस अध्ययन में, आईसीएआरसंस्थान अनुसंधान बागवानी भारतीय-, बेंगलूरू के शोधकर्ता एमअरिवलगन ., जीकरुणाकरण ., टीरॉय .के., एमदिन्शा ., बीस.ीसिंधु ., वीशिल्पाश्री .एम., जी .एस.के और सतीश .सी. पत्रिका शोध अध्ययन यह हैं। शामिल शिवशंकर फूड केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। (वायर साइंस इंडिया)

शोधकर्ताओं ने ड्रैगन फ्रूट को बताया सुपर-फूड

By **Rupesh Dharmik** - September 14, 2021

लाल एवं सफेद गूदे वाला ड्रैगन फ्रूट

नई दिल्ली: कैक्टस कुल को आमतौर परकांटेदार पौधों के लिए जाना जाता है। ऐसे में, यह जानकर हैरानी हो सकती है किकैक्टस परिवार सेसंबंधित फल ड्रैगन फ्रूट दुनियाभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। ड्रैगन फ्रूट के प्रचलन के साथसाथ इसकी खेती हाल के वर्षों में भारत मेंबढ़ी है। इसके स्वास्थ्यवर्द्धक गुणों को देखते हुए इस - विदेश म-शपर देोें शोध हो रहे हैं। भारतीय शोधकर्ताओं के ऐसे ही एक अध्ययन में ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus

species)में पाए जाने वाले पोषक तत्वों की पड़ताल की है। ड्रैगन फ्रूट की कम कैलोरी और पोषक गुणों के कारण इसे सुपरफूड की संज्ञा दी जा रही है।-

ड्रैगन फ्रूट को यह नाम उसकी बाहरी त्वचा और पपड़ीदार स्पाइक्स के कारण दिया गया है। हालांकि नाम सुनने में भले ही लगे, लेकिनड्रैगन फ्रूट में विभिन्न पोषक तत्वों के साथ भरपूर मात्रा में पानी और अन्य महत्वपूर्ण खनिज होते हैं।इसका स्वाद हल्का मीठा होता है और इसकी कीवी और सेब की मिलीजुली बनावट होती है। इस फल का रसदार गूदा बेहद स्वादिष्ट होता है। कैक्टस कुल में इसके फूल बेहद सुंदर माने जाते हैं। इसीलिए, इसे 'नोबेल वुमन' या 'क्वीन ऑफ द नाइट' के नाम से भी जाना जाता है।

इस फल के उच्च पोषण मूल्य की जानकारी तो पहले से उपलब्ध है। लेकिन, फल की किस किस्म में बेहतर पोषण होता है और अच्छी उपज के लिए किसान को किस पर विचार करना चाहिए, इसके बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है। इसी बात को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भारतीय -(आईसीएआर) बागवानी अनुसंधान संस्थान, बेंगलुरु के शोधकर्ताओं की एक टीम ने भारत में उगायी जाने वाली ड्रैगन फ्रूट के सात लोकप्रिय क्लोनों की जाँच की है, जिनमें दो में सफेद गूदे वाले फल और पाँच में लाल गूदे वाले फल शामिल हैं। अध्ययन में, ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus) प्रजाति एचसफेद गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले) अनडेटस . (फल, और एचपॉलिर .ाइजस रासायनिक संरचना -के पोषण और जैव (लाल गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले फल) की जाँच ड्रैगन फ्रूट संबंधित पोषण संरचना डेटा विकसित करने और उनकी तुलना के लिए की गई है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि सफेद गूदे वाले ड्रैगन फ्रूट लाल गूदे वाले फलों के मुकाबले उपज और शर्करा की मात्रा के मामले में बेहतर होते हैं। वहीं,लाल गूदे वाले फल फाइबर, फेनोलिक्स और एंटीऑक्सिडेंट के मामले में -बेहतर पाए गए हैं।अमीनो एसिड से भरपूर ड्रैगन फ्रूट में हिस्टिडीन, लाइसिन, मेथियोनीन, और फेनिलएलनिन जैसे तत्व पाए जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट में कैफिक एसिड, फेरुलिक एसिड, विटामिनसी-, विटामिन K1, पोटेशियम और आयरन भी पाया जाता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि दोनों प्रकार के फल अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आदर्श हैं, क्योंकि इनमें कैलोरी कम होती है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती (फोटोः क्रिएटिव कॉमन्स)

ड्रैगन फ्रूट को स्टेम कटिंग के माध्यम से संवर्द्धित किया जाता है। अध्ययन के दौरान,आईसीएआरभारतीय - बागवानी अनुसंधान संस्थानके प्रायोगिक फार्मयार्ड में क्लोन लगाए थे।12 से 15 महीनों मेंइसमें फूल आना शुरू हो जाते हैं और फल लगने के 30-35 दिनों बाद वे तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं।ड्रैगन फ्रूट की बेल दिखने में कैक्टस जैसी होती है, जिसे सहारा देने के लिए खंभों का उपयोग किया जाता है, ताकि फलों की बेलें फैल सकें।

ड्रैगन फ्रूट की हिरेहल्ली व्हाइटकिस्म के प्रत्येक खंभे पर 51 फलों से लेकरअंडमान रेड में96 तक फल होते हैं। अंडमान रेड की प्रति खंबे पर लगभग 10 किलो उपज मिली है, जबकि हिरियूर राउंड रेड की पैदावार 30 किलो से अधिक थी। हिरियूर राउंड रेड की प्रति हेक्टेयर उपज अंडमान रेड की तुलना में दोगुने से अधिक थी।फलों के स्वाद और पोषण गुणइन कारकों को प्रभावित करते हैं। लाल किस्मों के गूदे में फेनोलिक एसिड की मात्रा अधिक होती है। यह बीटासायनिन के अलावा विटामिनसी-, विटामिनके से भी भरपूर -ई और विटामिन-होता है, जिसे कई स्वास्थ्य लाभ के लिए जाना जाता है। घुलित शर्करा और कार्बनिक अम्ल सहित कुल घुलनशील ठोस पदार्थ भी इसमेंभरपूर मात्रा में पाये गए हैं। शोधकर्ताओं का कहना है किजब किसान खेती के लिए क्लोन चुनते हैं, तो विभिन्न किस्मों के दाम किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए, विभिन्न किस्मों के गुणों का पता लगाना आवश्यक होता है।

शोधकर्ताओं में शामिल जीकरुणाकर .णकहते हैं -'कुल घुलनशील ठोस और अम्लता का संयोजन इसे बेहतर स्वाद देता है।'सफेद गूदे वाले फलों में उच्च फाइबर और शर्करा कम होती है। शोधकर्ता कहते हैं, 'वजन घटानेमें

यह मददगार हो सकता है। इसके साथ ही, मधुमेह रोगियों के लिए यह आदर्श फल हो सकता है। उपज और जैवर-ासायनिक दोनों मापदंडों के मामले में फलों की गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए, सफेद गूदे वाले हिरेहल्ली व्हाइट ड्रैगन फ्रूट क्लोन और लाल क्लोनों में हिरियूर राउंड रेडबेहतर पाए गए हैं।

दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और एशियाई मूल का फल डैगन फ्रूट को पिताया या पितहाया के नाम से भी जाना जाता है। ड्रैगन फ्रूट की खेती दक्षिणपूर्व एशिया-, अमेरिका, कैरिबियाई क्षेत्र औरऑस्ट्रेलियासमेत दुनिया के उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में मुख्य रूप से की जाती है।-कटिबंधीय और उपोष्ण-

इस अध्ययन में, आईसीएआरभारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान-, बेंगलूरू के शोधकर्ता एमअरिवलगन ., जीकरुणाकरण ., टीरॉय .के., एमदिन्शा ., बीसिंधु .सी., वीशिल्पाश्री .एम., जी .एस.सतीश और के .सी. शिवशंकर शामिल हैं। यह अध्ययन शोध पत्रिका फूड केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। (इंडिया साइंस वायर)

दी इंडियन बुलेटिन

शोधकर्ताओं ने ड्रैगन फ्रूट को बताया सुपर-फूड

1 week ago

लाल एवं सफेद गूदे वाला ड्रैगन फ्रूट

नई दिल्ली: कैक्टस कुल को आमतौर परकांटेदार पौधों के लिए जाना जाता है। ऐसे में, यह जानकर हैरानी हो सकती है किकैक्टस परिवार सेसंबंधित फल ड्रैगन फ्रूट दुनियाभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। ड्रैगन फ्रूट के प्रचलन के साथ इस हुए देखते को गुणों स्वास्थ्यवर्द्धक इसके है। मेंबढ़ी भारत में वर्षों के हाल खेती इसकी साथ-श भारतीय हैं। रहे हो शोध में विदेश-देश परोधकर्ताओं के ऐसे ही एक अध्ययन में ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus

species)में पाए जाने वाले पोषक तत्वों की पड़ताल की है। ड्रैगन फ्रूट की कम कैलोरी और पोषक गुणों के कारण इसे सुपरहै। रही जा दी संज्ञा की फूड-

ड्रैगन फ्रूट को यह नाम उसकी बाहरी त्वचा और पपड़ीदार स्पाइक्स के कारण दिया गया है। हालांकि नाम सुनने में भले ही लगे, लेकिनड्रैगन फ्रूट में विभिन्न पोषक तत्वों के साथ भरपूर मात्रा में पानी और अन्य महत्वपूर्ण खनिज होते हैं।इसका स्वाद हल्का मीठा होता है और इसकी कीवी और सेब की मिलीजुली बनावट होती है। इस फल का रसदार गूदा बेहद स्वादिष्ट होता है। कैक्टस कुल में इसके फूल बेहद सुंदर माने जाते हैं। इसीलिए, इसे 'नोबेल वुमन' या 'क्वीन ऑफ द नाइट' के नाम से भी जाना जाता है।

इस फल के उच्च पोषण मूल्य की जानकारी तो पहले से उपलब्ध है। लेकिन, फल की किस किस्म में बेहतर पोषण होता है और अच्छी उपज के लिए किसान को किस पर विचार करना चाहिए, इसके बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है। इसी बात को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भारतीय-(आईसीएआर) संस्थान अनुसंधान बागवानी, बेंगलुरु के शोधकर्ताओं की एक टीम ने भारत में उगायी जाने वाली ड्रैगन फ्रूट के सात लोकप्रिय क्लोनों की जाँच की है, जिनमें दो में सफेद गूदे वाले फल और पाँच में लाल गूदे वाले फल शामिल हैं। अध्ययन में, ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus) प्रजाति एच वाले त्वचा गुलाबी एवं गूदे सफेद) अनडेटस . (फल, और एचत्वच गुलाबी एवं गूदे लाल) पॉलिराइजस .ा वाले फल संरचना रासायनिक-जैव और पोषण के (है। गई की लिए के तुलना उनकी और करने विकसित डेटा संरचना पोषण संबंधित फ्रूट ड्रैगन जाँच की

शोधकर्ताओं ने पाया कि सफेद गूदे वाले ड्रैगन फ्रूट लाल गूदे वाले फलों के मुकाबले उपज और शर्करा की मात्रा के मामले में बेहतर होते हैं। वहीं,लाल गूदे वाले फल फाइबर, फेनोलिक्स और एंटी में मामले के ऑक्सिडेंट-हिस्टिडीन में फ्रूट ड्रैगन भरपूर से एसिड हैं।अमीनो गए पाए बेहतर, लाइसिन, मेथियोनीन, और फेनिलएलनिन जैसे तत्व पाए जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट में कैफिक एसिड, फेरुलिक एसिड, विटामिनसी-, विटामिन K1, पोटेशियम और आयरन भी पाया जाता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि दोनों प्रकार के फल अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आदर्श हैं, क्योंकि इनमें कैलोरी कम होती है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती (फोटोः क्रिएटिव कॉमन्स)

ड्रैगन फ्रूट को स्टेम कटिंग के माध्यम से संवर्द्धित किया जाता है। अध्ययन के दौरान,आईसीएआर भारतीय- थे। लगाए क्लोन में फार्मयार्ड प्रायोगिक संस्थानके अनुसंधान बागवानी12 से 15 महीनों मेंइसमें फूल आना शुरू हो जाते हैं और फल लगने के 30-35 दिनों बाद वे तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं।ड्रैगन फ्रूट की बेल दिखने में कैक्टस जैसी होती है, जिसे सहारा देने के लिए खंभों का उपयोग किया जाता है, ताकि फलों की बेलें फैल सकें।

ड्रैगन फ्रूट की हिरेहल्ली व्हाइटकिस्म के प्रत्येक खंभे पर 51 फलों से लेकरअंडमान रेड में96 तक फल होते हैं। अंडमान रेड की प्रति खंबे पर लगभग 10 किलो उपज मिली है, जबकि हिरियूर राउंड रेड की पैदावार 30 किलो से अधिक थी। हिरियूर राउंड रेड की प्रति हेक्टेयर उपज अंडमान रेड की तुलना में दोगुने से अधिक थी।फलों के स्वाद और पोषण गुणइन कारकों को प्रभावित करते हैं। लाल किस्मों के गूदे में फेनोलिक एसिड की मात्रा अधिक होती है। यह बीटासायनिन के अलावा विटामिनसी-, विटामिन भरपूर भी से के-विटामिन और ई-है होता, जिसे कई स्वास्थ्य लाभ के लिए जाना जाता है। घुलित शर्करा और कार्बनिक अम्ल सहित कुल घुलनशील ठोस पदार्थ भी इसमेंभरपूर मात्रा में पाये गए हैं। शोधकर्ताओं का कहना है किजब किसान खेती के लिए क्लोन चुनते हैं, तो विभिन्न किस्मों के दाम किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए, विभिन्न किस्मों के गुणों का पता लगाना आवश्यक होता है।

शोधकर्ताओं में शामिल जी- हैं करुणाकरणकहते .'कुल घुलनशील ठोस और अम्लता का संयोजन इसे बेहतर स्वाद देता है।'सफेद गूदे वाले फलों में उच्च फाइबर और शर्करा कम होती है। शोधकर्ता कहते हैं, 'वजन घटानेमें

यह मददगार हो सकता है। इसके साथ ही, मधुमेह रोगियों के लिए यह आदर्श फल हो सकता है। उपज और जैवगुणवत्ता की फलों में मामले के मापदंडों दोनों रासायनिक- को ध्यान में रखते हुए, सफेद गूदे वाले हिरेहल्ली व्हाइट ड्रैगन फ्रूट क्लोन और लाल क्लोनों में हिरियूर राउंड रेडबेहतर पाए गए हैं।

दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और एशियाई मूल का फल डैगन फ्रूट को पिताया या पितहाया के नाम से भी जाना जाता है। ड्रैगन फ्रूट की खेती दक्षिणएशिया पूर्व-, अमेरिका, कैरिबियाई क्षेत्र औरऑस्ट्रेलियासमेत दुनिया के उष्णहै। जाती की से रूप मुख्य में क्षेत्रों कटिबंधीय-उपोष्ण और कटिबंधीय-

इस अध्ययन में, आईसीएआरसंस्थान अनुसंधान बागवानी भारतीय-, बेंगलूरू के शोधकर्ता एमअरिवलगन ., जीकरुणाकरण ., टी.केरॉय ., एमदिन्शा ., बीसिंधु .सी., वीशिल्पाश्री .एम., जी .एस.के और सतीश .सी. पत्रिका शोध अध्ययन यह हैं। शामिल शिवशंकर फूड केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इंडिया)साइंस वायर(

शोधकर्ताओं ने ड्रैगन फ्रूट को बताया सुपरफूड-

13/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 13 सितंबर कैक्टस कुल को आमतौर पर कांटेदार पौधों के लिए जाना जाता है। :(इंडिया साइंस वायर)ऐसे में, यह जानकर हैरानी हो सकती है कि कैक्टस परिवार से संबंधित फल ड्रैगन फ्रूट दुनियाभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है। ड्रैगन फ्रूट के प्रचलन के साथ-साथ इसकी खेती हाल के वर्षों में भारत में बढ़ी है। इसके स्वास्थ्यवर्द्धक गुणों को देखते हुए इस पर देश-विदेश में शोध हो रहे हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं के ऐसे ही एक अध्ययन में ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus species) में पाए जाने वाले पोषक तत्वों की पड़ताल की है। ड्रैगन फ्रूट की कम कैलोरी और पोषक गुणों के कारण इसे सुपरफूड की संज्ञा दी जा रही है।-
ड्रैगन फ्रूट को यह नाम उसकी बाहरी त्वचा और पपड़ीदार स्पाइक्स के कारण दिया गया है। हालांकि नाम सुनने में भले ही लगे, लेकिन ड्रैगन फ्रूट में विभिन्न पोषक तत्वों के साथ भरपूर मात्रा में पानी और अन्य महत्वपूर्ण खनिज होते हैं। इसका स्वाद हल्का मीठा होता है और इसकी कीवी और सेब की मिलीजुली बनावट होती है।

इस फल का रसदार गूदा बेहद स्वादिष्ट होता है। कैक्टस कुल में इसके फूल बेहद सुंदर माने जाते हैं। इसीलिए, इसे 'नोबेल वुमन' या 'क्वीन ऑफ द नाइट' के नाम से भी जाना जाता है। इस फल के उच्च पोषण मूल्य की जानकारी तो पहले से उपलब्ध

है। लेकिन, फल की किस किस्म में बेहतर पोषण होता है और अच्छी उपज के लिए किसान को किस पर विचार करना चाहिए, इसके बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है।

इसी बात को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान-(आईसीएआर), बेंगलुरु के शोधकर्ताओं की एक टीम ने भारत में उगायी जाने वाली ड्रैगन फ्रूट के सात लोकप्रिय क्लोनों की जाँच की है, जिनमें दो में सफेद गूदे वाले फल और पाँच में लाल गूदे वाले फल शामिल हैं। अध्ययन में, ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus) प्रजाति एच . (सफेद गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले फल) अनडेटस, और एचपाॅ .लिराइजस के पोषण (लाल गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले फल) रासायनिक संरचना की जाँच ड्रैगन फ्रूट संबंधित पोषण संरचना डेटा विकसित करने और उनकी तुलना के लिए की -और जैव गई है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि सफेद गूदे वाले ड्रैगन फ्रूट लाल गूदे वाले फलों के मुकाबले उपज और शर्करा की मात्रा के मामले में बेहतर होते हैं। वहीं, लाल गूदे वाले फल फाइबर, फेनोलिक्स और एंटीऑक्सिडेंट के मामले में बेहतर पाए गए हैं। अमीनो - एसिड से भरपूर ड्रैगन फ्रूट में हिस्टिडीन, लाइसिन, मेथियोनीन, और फेनिलएलनिन जैसे तत्व पाए जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट में कैफिक एसिड, फेरुलिक एसिड, विटामिनसी-, विटामिन K1, पोटेशियम और आयरन भी पाया
जाता है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि दोनों प्रकार के फल अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आदर्श हैं, क्योंकि इनमें कैलोरी कम होती है। ड्रैगन फ्रूट को स्टेम कटिंग के माध्यम से संवर्द्धित किया जाता है। अध्ययन के दौरान, आईसीएआरभारतीय बागवानी - अनुसंधान संस्थान के प्रायोगिक फार्मयार्ड में क्लोन लगाए थे।12 से 15 महीनों में इसमें फूल आना शुरू हो जाते हैं और फल लगने के 30-35 दिनों बाद वे तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट की बेल दिखने में कैक्टस जैसी होती है, जिसे सहारा देने के लिए खंभों का उपयोग किया जाता है, ताकि फलों की बेलें फैल सकें।

ड्रैगन फ्रूट की हिरेहल्ली व्हाइट किस्म के प्रत्येक खंभे पर 51 फलों से लेकर अंडमान रेड में 96 तक फल होते हैं। अंडमान रेड की प्रति खंबे पर लगभग 10 किलो उपज मिली है, जबकि हिरियूर राउंड रेड की पैदावार 30 किलो से अधिक थी। हिरियूर राउंड रेड की प्रति हेक्टेयर उपज अंडमान रेड की तुलना में दोगुने से अधिक थी। फलों के स्वाद और पोषण गुण इन कारकों को प्रभावित करते हैं। लाल किस्मों के गूदे में फेनोलिक एसिड की मात्रा अधिक होती है। यह बीटासायनिन के अलावा विटामिन-सी, विटामिनके से भी भरपूर होता है-ई और विटामिन-, जिसे कई स्वास्थ्य लाभ के लिए जाना जाता है।

घुलित शर्करा और कार्बनिक अम्ल सहित कुल घुलनशील ठोस पदार्थ भी इसमें भरपूर मात्रा में पाये गए हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि जब किसान खेती के लिए क्लोन चुनते हैं, तो विभिन्न किस्मों के दाम किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए, विभिन्न किस्मों के गुणों का पता लगाना आवश्यक होता है। शोधकर्ताओं में शामिल जी करुणाकरण कहते हैं .– 'कुल घुलनशील ठोस और अम्लता का संयोजन इसे बेहतर स्वाद देता है।' सफेद गूदे वाले फलों में उच्च फाइबर और शर्करा कम होती है। शोधकर्ता कहते हैं, 'वजन घटाने में यह मददगार हो सकता है।

इसके साथ ही, मधुमेह रोगियों के लिए यह आदर्श फल हो सकता है। उपज और जैवरासायनिक दोनों मापदंडों के-मामले में फलों की गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए, सफेद गूदे वाले हिरेहल्ली व्हाइट ड्रैगन फ्रूट क्लोन और लाल क्लोनों में हिरियूर राउंड रेड बेहतर पाए गए हैं। दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और एशियाई मूल का फल डैगन फ्रूट को पिताया या पितहाया के नाम से भी जाना जाता है।

ड्रैगन फ्रूट की खेती दक्षिणपूर्व एशिया-, अमेरिका, कैरिबियाई क्षेत्र और ऑस्ट्रेलिया समेत दुनिया के उष्णकटिबंधीय और - कटिबंधीय क्षेत्रों में मुख्य रूप से की जाती है। इस अध्ययन में-उपोष्ण, आईसीएआरभारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान-, बेंगलूरू के शोधकर्ता एमअरिवलगन ., जीणाकरु .करण, टीरॉय .के., एमदिन्शा ., बीसिंधु .सी., वीशिल्पाश्री .एम., जी .सी. शिवशंकर शामिल हैं। यह अध्ययन शोध पत्रिका फूड केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। .एस.सतीश और के

IndiaKnown

शोधकर्ताओं ने ड्रैगन फ्रूट को बताया 'सुपर-फूड'

National Hindi News in IndiaKnown
13th Sep, 2021 18:00 PM

ड्रैगन फ्रूट के प्रचलन के साथ साथ इसकी खेती हाल के वर्षों में भारत में बढ़ी है। इसके स्वास्थ्यवर्द्धक-गुणों को देखते हुए इस पर देशविदेश में शोध हो रहे हैं।-

Last Updated: सोमवार, 13 सितम्बर 2021 (18:48 IST) नई दिल्ली, कैक्टस कुल को आमतौर पर कांटेदार

Last Updated: सोमवार, 13 सितम्बर 2021 (18:48 IST)

नई दिल्ली, कैक्टस कुल को आमतौर पर कांटेदार पौधों के लिए जाना जाता है। ऐसे में, यह जानकर हैरानी हो सकती है कि कैक्टस परिवार से संबंधित फल ड्रैगन फ्रूट दुनियाभर में तेजी से लोकप्रिय हो रहा है।

ड्रैगन फ्रूट के प्रचलन के साथसाथ इसकी खेती हाल के वर्षों में भारत में बढ़ी है। इसके स्वास्थ्यवर्द्धक गुणों को देखते ह-ुए इस पर देशविदेश में शोध हो रहे हैं।-

भारतीय शोधकर्ताओं के ऐसे ही एक अध्ययन में ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus species) में पाए जाने वाले पोषक तत्वों की पड़ताल की है। ड्रैगन फ्रूट की कम कैलोरी और पोषक गुणों के कारण इसे सुपरफूड की संज्ञा दी जा रही है।-

ड्रैगन फ्रूट को यह नाम उसकी बाहरी त्वचा और पपड़ीदार स्पाइक्स के कारण दिया गया है। हालांकि नाम सुनने में भले ही लगे, लेकिन ड्रैगन फ्रूट में विभिन्न पोषक तत्वों के साथ भरपूर मात्रा में पानी और अन्य महत्वपूर्ण खनिज होते हैं।

इसका स्वाद हल्का मीठा होता है और इसकी कीवी और सेब की मिलीजुली बनावट होती है। इस फल का रसदार गूदा बेहद स्वादिष्ट होता है। कैक्टस कुल में इसके फूल बेहद सुंदर माने जाते हैं। इसीलिए, इसे ‘नोबेल वुमन’ या ‘क्वीन ऑफ द नाइट’ के नाम से भी जाना जाता है।

इस फल के उच्च पोषण मूल्य की जानकारी तो पहले से उपलब्ध है। लेकिन, फल की किस किस्म में बेहतर पोषण होता है और अच्छी उपज के लिए किसान को किस पर विचार करना चाहिए, इसके बारे में बहुत अधिक जानकारी नहीं है।

इसी बात को ध्यान में रखकर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद भारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान-(आईसीएआर), बेंगलुरु के शोधकर्ताओं की एक टीम ने भारत में उगायी जाने वाली ड्रैगन फ्रूट के सात लोकप्रिय क्लोनों की जाँच की है, जिनमें दो में सफेद गूदे वाले फल और पाँच में लाल गूदे वाले फल शामिल हैं।

अध्ययन में, ड्रैगन फ्रूट)Hylocereus) प्रजाति एचसफेद गूदे एवं गुलाब) अनडेटस .ी त्वचा वाले फल(, और एच . रासायनिक संरचना की जाँच ड्रैगन फ्रूट संबंधित -के पोषण और जैव (लाल गूदे एवं गुलाबी त्वचा वाले फल) पॉलिराइजस पोषण संरचना डेटा विकसित करने और उनकी तुलना के लिए की गई है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि सफेद गूदे वाले ड्रैगन फ्रूट लाल गूदे वाले फलों के मुकाबले उपज और शर्करा की मात्रा के मामले में बेहतर होते हैं। वहीं, लाल गूदे वाले फल फाइबर, फेनोलिक्स और एंटीऑक्सिडेंट के मामले में बेहतर पाए गए हैं।-

अमीनो एसिड से भरपूर ड्रैगन फ्रूट में हिस्टिडीन, लाइसिन, मेथियोनीन, और फेनिलएलनिन जैसे तत्व पाए जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट में कैफिक एसिड, फेरुलिक एसिड, विटामिनसी-, विटामिन K1, पोटेशियम और आयरन भी पाया जाता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि दोनों प्रकार के फल अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए आदर्श हैं, क्योंकि इनमें कैलोरी कम होती है।

ड्रैगन फ्रूट को स्टेम कटिंग के माध्यम से संवर्द्धित किया जाता है। अध्ययन के दौरान, आईसीएआरभारतीय बागवानी - अनुसंधान संस्थान के प्रायोगिक फार्मयार्ड में क्लोन लगाए थे।12 से 15 महीनों में इसमें फूल आना शुरू हो जाते हैं और फल लगने के 30-35 दिनों बाद वे तोड़ने के लिए तैयार हो जाते हैं। ड्रैगन फ्रूट की बेल दिखने में कैक्टस जैसी होती है, जिसे सहारा देने के लिए खंभों का उपयोग किया जाता है, ताकि फलों की बेलें फैल सकें।

ड्रैगन फ्रूट की हिरेहल्ली व्हाइट किस्म के प्रत्येक खंभे पर 51 फलों से लेकर अंडमान रेड में 96 तक फल होते हैं। अंडमान रेड की प्रति खंबे पर लगभग 10 किलो उपज मिली है, जबकि हिरियूर राउंड रेड की पैदावार 30 किलो से अधिक थी। हिरियूर राउंड रेड की प्रति हेक्टेयर उपज अंडमान रेड की तुलना में दोगुने से अधिक थी। फलों के स्वाद और पोषण गुण इन कारकों को प्रभावित करते हैं।

लाल किस्मों के गूदे में फेनोलिक एसिड की मात्रा अधिक होती है। यह बीटासायनिन के अलावा विटामिनसी-, विटामिन-के से भी भरपूर होता है-ई और विटामिन, जिसे कई स्वास्थ्य लाभ के लिए जाना जाता है। घुलित शर्करा और कार्बनिक

अम्ल सहित कुल घुलनशील ठोस पदार्थ भी इसमें भरपूर मात्रा में पाये गए हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि जब किसान खेती के लिए क्लोन चुनते हैं, तो विभिन्न किस्मों के दाम किसानों के लिए एक महत्वपूर्ण कारक होते हैं। इसलिए, विभिन्न किस्मों के गुणों का पता लगाना आवश्यक होता है।

शोधकर्ताओं में शामिल जी - करुणाकरण कहते हैं .'कुल घुलनशील ठोस और अम्लता का संयोजन इसे बेहतर स्वाद देता है।' सफेद गूदे वाले फलों में उच्च फाइबर और शर्करा कम होती है। शोधकर्ता कहते हैं, 'वजन घटाने में यह मददगार हो सकता है। इसके साथ ही, मधुमेह रोगियों के लिए यह आदर्श फल हो सकता है। उपज और जैव रासायनिक दोनों-मापदंडों के मामले में फलों की गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए, सफेद गूदे वाले हिरेहल्ली व्हाइट ड्रैगन फ्रूट क्लोन और लाल क्लोनों में हिरियूर राउंड रेड बेहतर पाए गए हैं।

दक्षिण अमेरिका, मध्य अमेरिका और एशियाई मूल का फल डैगन फ्रूट को पिताया या पितहाया के नाम से भी जाना जाता है। ड्रैगन फ्रूट की खेती दक्षिणपूर्व एशिया-, अमेरिका, कैरिबियाई क्षेत्र और ऑस्ट्रेलिया समेत दुनिया के उष्ण-कटिबंधीय क्षेत्रों में मुख्य रूप से की जाती है।-कटिबंधीय और उपोष्ण

इस अध्ययन में, आईसीएआरभारतीय बागवानी अनुसंधान संस्थान-, बेंगलूरू के शोधकर्ता

एमअरिवलगन ., जीकरुणाकरण ., टीरॉय .के., एमदिन्शा ., बीसिंधु .सी., वीशिल्पाश्री .एम., जी .एस.सतीश और के .सी. शिवशंकर शामिल हैं। यह अध्ययन शोध पत्रिका फूड केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। ***(इंडिया साइंस वायर(***

Republic NewsIndia

India’s space sector offers huge scope for foreign companies to tie up with Indian companies: Dr. K. Sivan

By **Rupesh Dharmik** - September 14, 2021

Dr. K Sivan, Chairman, ISRO and Secretary, Department of Space

New Delhi: Dr. K Sivan, Chairman, ISRO, who is also the Secretary, Department of Space, has said that India’s growing space sector has immense opportunities for industry and start-up companies, and the Indian industry will continue to play an important role in the changing global space landscape. He was speaking in the three-day International Conference &

Exhibition on Space-2021 being hosted on the Confederation of Indian Industry (CII) Hive virtual platform, on Monday.

"Industry including start-ups will have a gamut of new opportunities in areas like building and launching launch vehicles and satellites, developing satellite-based services and ground-level systems, undertaking R&D, and supporting mission services", ISRO chairman said. Highlighting the importance of cooperation and collaboration in the Indian space sector that has been significantly opened up by the Government of India since 2020, Dr. Sivan said that industry will be called upon to play a critical role in dealing with various issues like congestion in space, using scarce frequency, mobilisation and utilisation of technological and financial resources, among others.

Underlining the growing importance of space technology and applications in diverse streams, Dr Sivan said that wide-scale use of mobile applications and IoT, along with broadcasting and remote sensing activities have spurred the demand for space tech and applications, which are also needed for furthering sustainable development. He said the Department of Space is deeply committed to ensuring a level playing field for industry and said the Indian National Space and Authorization Center (IN-SPACe) will play a pioneering role in furthering the joint efforts of ISRO and Indian industry and start-ups to leverage the emerging commercial opportunities in the space sector.

Underscoring the new opportunities for foreign companies to invest in the Indian space sector, Dr Sivan said that the FDI norms about the space sector are being reviewed by the Government. International Conference & Exhibition on Space 2021 is being organised by the Confederation of Indian Industry (CII) in association with Antrix Corporation, Indian Space Research Organisation (ISRO) and NewSpace India Limited (NSIL).

Dr Pawan Goenka, Chairman Designate, IN-SPACe; Dr R Umamaheshwaran, Scientific Secretary, ISRO and Incharge (IN-SPACe activities); Nico van Putten, Deputy Director, Netherland Space Office (NSO); Anthony Murfett, Deputy Head, Australia Space Agency; Dr D.Radhakrishnan, Chairman and Managing Director, NewSpace India Limited (NSIL); RajanNavani, Chairman, CII India@75 Council; Rakesh Sasibhushan, Chairman, CII National Committee on Space, and CMD, Antrix Corporation Limited; and A Arunachalam, Director, NSIL were also present during the programme.

"While India has been at the forefront of space technology, the country has less than two percent share of the global space industry that is estimated to be of the size of USD440 billion. Today, as the space sector opens up,

several startups are coming up in the area, some of which could even go on to become unicorns", said DrPawanGoenka, Chairman Designate, IN-SPACe.He further said that IN-SPACe will be focused upon providing greater policy and regulatory clarity to industry, promoting private investment opportunities, identifying new space technology applications, ensuring seamless coordination between the different space agencies, opening up overseas markets for domestic suppliers, facilitating cross-deployment of technologies, among others.

Dr R Umamaheshwaran, Scientific Secretary, ISRO and Incharge (IN-SPACe activities), said that IN-SPACe will be playing a catalytic role in promoting, handholding, monitoring and authorising private players operating in the domestic space sector. He also mentioned that the industry has submitted various proposals for upstream and downstream activities that are being reviewed and will be acted upon. The Space Bill is also under consideration. Looking ahead, he said, a thriving space sector is taking shape in India.

Nico van Putten, Deputy Director, Netherland Space Office (NSO)said that the Netherlands and India are furthering bilateral cooperation for space technology application in areas like monitoring of air quality and climate, earth observation in the realms of water resources and agriculture, miniaturisation and development of nano-satellites, and manufacturing of components and sub-systems.

Applauding India for its milestone Gaganyaanprogramme, Anthony Murfett, Deputy Head, Australia Space Agency, said: "There is immense scope for deep collaboration between Australian and Indian companies engaged in space technology and applications." He pointed out that the Australian Government is aiming to triple the size of its space industry from A$4 billion currently to A$12 billion by 2030. The global space industry size is expected to reach $1 trillion by 2040.

"Space missions are now moving towards a demand-driven model. That would also call for the investment opportunities to be made attractive for private players", said Dr D.Radhakrishnan, Chairman and Managing Director, NewSpace India Limited (NSIL). Alluding to the space reforms undertaken by the Government of India, he said, NSIL will play a major role in facilitating the transfer of technology to the private sector.

Rakesh Sasibhushan, Chairman, CII National Committee on Space, and CMD, Antrix Corporation Limited said that foray of private companies in the commercial services segments of space will lend great vibrancy to the whole industry, which in turn will contribute significantly to the national GDP. (India Science Wire)

मधुमक्खी के छत्ते की अनुकृति आधारित ध्वनि-अवशोषक तकनीक विकसित

14/09/2021 V3news India

Natural honeybee hive

Tubular Polypropylene

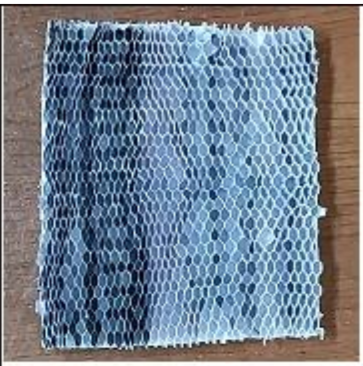

Paper honeycomb

Engineered acoustic panels

नई दिल्ली, 14 सितंबर अनेक प्रकार की :(इंडिया साइंस वायर)स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों के पीछे ध्वनि प्रदूषण को जिम्मेदार कारक के रूप में देखा जा रहा है। वातावरण में बढ़ते शोर के विरुद्ध भारतीय शोधकर्ताओं ने पेपर और पॉलीमर से बने ध्वनि को अवशोषित करने वाले पैनल विकसित किए हैं, जिनकी संरचना मधुमक्खी के छत्ते से मिलती है। यह ध्वनिक ऊर्जा को कमआवृत्ति रेंज में ही नष्ट करने में सक्षम है।-

इसका ध्वनि विज्ञान से जुड़े विभिन्न अनुप्रयोगों में उपयोग के साथ ही इससे ध्वनि प्रदूषण पर अंकुश लगाने में मदद मिल सकती है। यह देखा गया है कि ध्वनि की उच्च आवृत्ति के नियंत्रण में कई पारंपरिक और प्राकृतिक संरचनाएं उपयोगी सिद्ध हुई हैं। मधुमक्खी के छत्तों को उनकी ज्यामितीय संरचना के कारण उच्च और निम्न आवृत्तियों को कुशलतापूर्वक नियंत्रित करने में काफी मददगार पाया गया है। सैद्धांतिक विश्लेषणों और अनुभवजन्य पड़ताल में ध्वनिक ऊर्जा के कंपन ऊर्जा में रूपांतरण के संकेत मिले हैं।

यह कंपन ऊर्जा दीवार में नमी वाले गुण के कारण ऊष्मा के रूप में नष्ट हो जाती है। इस विशिष्टता का अनुकरण ध्वनि प्रदूषण के लिए एक कारगर एवं किफायती समाधान प्रस्तुत करता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान हैदराबाद में (आईआईटी) मैकेनिकल एंड एयरोस्पेस इंजीनियरिंग विभाग में कार्यरत डासूर्या ने बायोमीट्रिक डिजाइन प्रविधि के .बी वेंकटेशम और डा . व्यय की -प्रयोग से इस विशिष्टता को भुनाने में सफलता प्राप्त की है। इस पद्धति में मधुमक्खी के छत्ते के नमूने की ध्वनिक ऊर्जा भौतिकी को समझकर फ िर उसी अनुरूप डिजाइन विकसित किया गया।

टीम ने एक गणितीय मॉडल विकसित किया और अनुकूलित मापदंडों की गणना की और व्यवस्थित, नियंत्रित मापदंडों का उपयोग करके परीक्षण के नमूने तैयार किए। इसके बाद एक बड़े नमूने का निर्माण किया गया। उन्होंने दो अलगअलग प्रकार की - सामग्रियों के साथ दो विभिन्न तरीकों और उनसे संबंधित प्रोटोटाइप मशीनों का उपयोग किया है। एक प्रोटोटाइप पेपर हनीकॉम्ब के लिए इनडेक्स्ड) हनीकॉम्ब बिफोर एक्सपेंशन-(अनुक्रमित)HOBE) प्रक्रिया पर आधारित है और दूसरी प्रोटोटाइप मशीन हॉट वायर तकनीक पर आधारित पॉलीमर हनीकॉम्ब संरचना के लिए है।

पैनलों को स्टैक्ड एक्सट्रूडेड पॉलीप्रोपीन स्ट्रॉ को काटकर तैयार किया गया। गर्म तार की मदद से स्लाइसिंग प्रक्रिया कर स्ट्रॉ को भी आपस में बांधा जाता है। कम मोटाई और ध्वनिक पैनलों की उच्च विशिष्ट शक्ति के साथ विकसित की गई नई तकनीक ध्वनिक ऊर्जा अपव्यय का एक तंत्र प्रदान करती है। इस कार्य के हिस्से के रूप में बड़े नमूनों के अवशोषण गुणांक को मापने के लिए एक परीक्षण सुविधा भी स्थापित की गई है।

डॉवेंकटेशम का कहना है कि यह तकनीक ., कम आवृत्ति अनुप्रयोगों पर आधारित पारंपरिक ध्वनिअवशोषित करन-े वाली सामग्रियों के बाजार के 15% हिस्से पर पैठ बनाने का अवसर पैदा कर सकती है। यह तकनीक भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एडवांस्ड मैन्युफैक्चरिंग टेक्नोलॉजी प्रोग्राम के समर्थन से तैयार हुई है। अभी यह (डीएसटी) तकनीकी रेडीनेस लेवल केछठे स्तर पर है। वहीं डॉबी वेंकटेशम ने ईटोन प्राइवेट लिमिटेड और महाराष्ट्र औद्योगिक विकास . निगम खराड़ी नॉलेज पार्क, पुणे के साथ इसमें सहयोग के लिए अनुबंध भी किया है।

भारतीय वैज्ञानिकों ने विकसित की मधुमक्खी के छत्ते की अनुकृति आधारित ध्वनिअवशोषक तकनीक-

Health problems caused by noise pollution. भारतीय वैज्ञानिकों ने विकसित की मधुमक्खी के छत्ते की अनुकृति आधारित ध्वनि.अवशोषक तकनीक-

By amalendu upadhyay | Tue, 14 Sep 2021

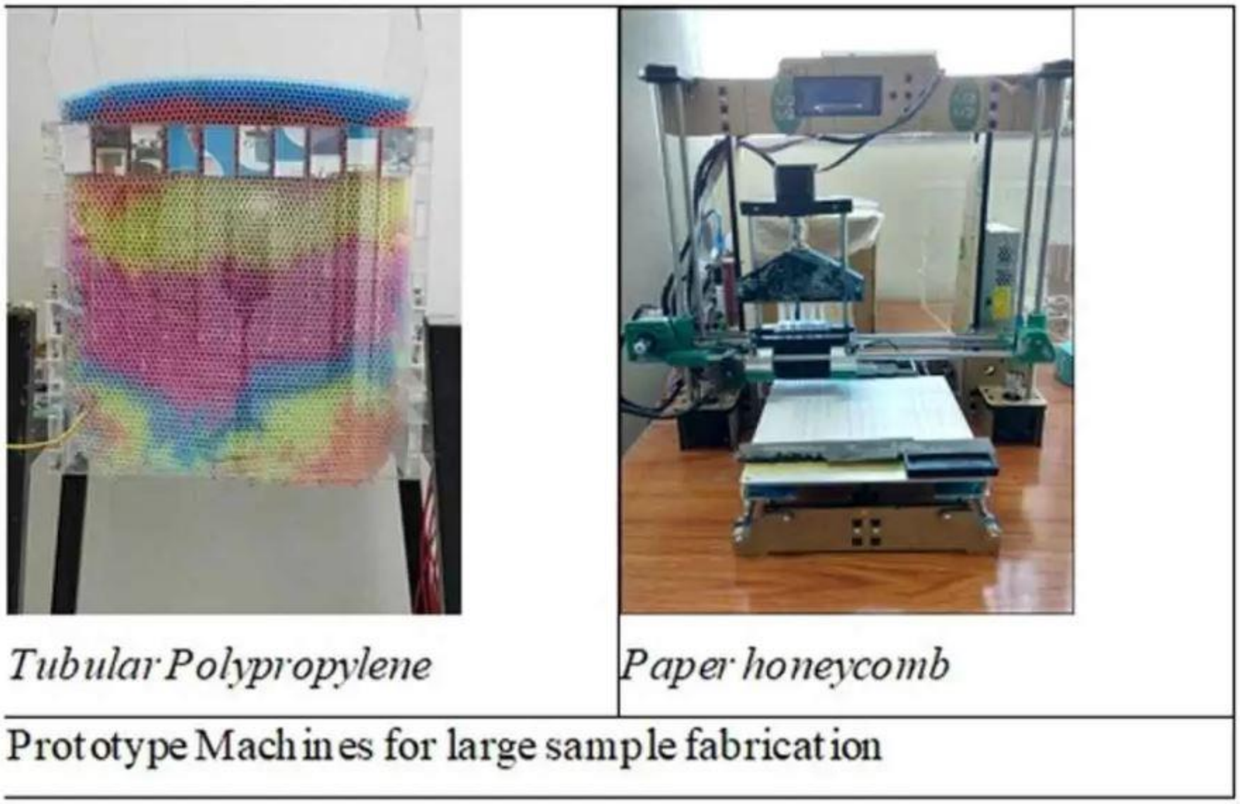

ध्वनि प्रदूषण से होती हैं स्वास्थ्य संबंधी परेशानियां | मधुमक्खी के छत्ते का प्रयोग

Developed sound-absorbing technology based on imitation of the beehive.

Health problems caused by noise pollution

नई दिल्ली, 14 सितंबर, 2021: अनेक प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों के पीछे ध्वनि प्रदूषण को जिम्मेदार कारक के रूप में देखा जा रहा है। वातावरण में बढ़ते शोर के विरुद्ध भारतीय शोधकर्ताओं ने पेपर और पॉलीमर से बने ध्वनि को

अवशोषित करने वाले पैनल विकसित किए हैं, जिनकी संरचना **मधुमक्खी के छत्ते (bee hives)** से मिलती है। यह ध्वनिक ऊर्जा को कमआवृत्ति रेंज में ही नष्ट करने में सक्षम है। इसका ध्वनि विज्ञान से जुड़े विभिन्न अनुप्रयोगों में उपयोग के साथ - ही इससे **ध्वनि प्रदूषण पर अंकुश** लगाने में मदद मिल सकती है।

यह देखा गया है कि ध्वनि की उच्च आवृत्ति के नियंत्रण में कई पारंपरिक और प्राकृतिक संरचनाएं उपयोगी सिद्ध हुई हैं। मधुमक्खी के छत्तों को उनकी ज्यामितीय संरचना के कारण उच्च और निम्न आवृत्तियों को कुशलतापूर्वक नियंत्रित करने में काफी मददगार पाया गया है।

सैद्धांतिक विश्लेषणों और अनुभवजन्य पड़ताल में ध्वनिक ऊर्जा के कंपन ऊर्जा में रूपांतरण के संकेत मिले हैं। यह कंपन ऊर्जा दीवार में नमी वाले गुण के कारण ऊष्मा के रूप में नष्ट हो जाती है। इस विशिष्टता का अनुकरण ध्वनि प्रदूषण के लिए एक कारगर एवं किफायती समाधान प्रस्तुत करता है।

Scientists of Indian Institute of Technology (IIT) Hyderabad have developed technology

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानहैदराबाद में मैकेनिकल एंड एयरोस्पेस (आईआईटी) इंजीनियरिंग विभाग में कार्यरत डाबी . सूर्या ने बायोमीट्रिक डिजाइन प्रविधि के प्रयोग से इस विशिष्टता को भुनाने में सफलता प्राप्त की है। इस .वेंकटेशम और डा व्यय की भौतिकी को समझकर फिर उसी अनुरूप डिजाइन -पद्धति में मधुमक्खी के छत्ते के नमूने की ध्वनिक ऊर्जा वि‍िकसित किया गया।

कैसे विकसित किया गणितीय मॉडल

टीम ने एक गणितीय मॉडल विकसित किया और अनुकूलित मापदंडों की गणना की औरव्यवस्थित, नियंत्रित मापदंडों का उपयोग करके परीक्षण के नमूने तैयार किए। इसके बाद एक बड़े नमूने का निर्माण किया गया। उन्होंने दो अलगअलग - प्रकारकी सामग्रियों के साथ दो विभिन्न तरीकों और उनसे संबंधित प्रोटोटाइप मशीनों का उपयोग किया है। एक **प्रोटोटाइप पेपर हनीकॉम्ब** के लिए इनडेक्स्ड -(अनुक्रमित)**हनीकॉम्ब बिफोर एक्सपेंशन** (HOBE) प्रक्रिया पर आधारित है और दूसरी प्रोटोटाइप मशीन हॉट वायर तकनीक पर आधारित पॉलीमर हनीकॉम्ब संरचना के लिए है।

पैनलों को स्टैक्ड एक्सट्रूडेड पॉलीप्रोपीन स्ट्रॉ को काटकर तैयार किया गया। गर्म तार की मदद से स्लाइसिंग प्रक्रिया कर स्ट्रॉ को भी आपस में बांधा जाता है। कम मोटाई और ध्वनिक पैनलों की उच्च विशिष्ट शक्ति के साथ विकसित की गई नई तकनीक ध्वनिक ऊर्जा अपव्यय का एक तंत्र प्रदान करती है। इस कार्य के हिस्से के रूप में बड़े नमूनों के अवशोषण गुणांक को मापने के लिए एक परीक्षण सुविधा भी स्थापित की गई है।

डॉवेंकटेशम का कहना है कि यह तकनीक ., कम आवृत्ति अनुप्रयोगों पर आधारित पारंपरिक ध्वनिअवशोष-ित करने वाली सामग्रियों के बाजार के 15% हिस्से पर पैठ बनाने का अवसर पैदा कर सकती है।

यह तकनीक भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एडवांस्ड मैन्युफैक्चरिंग टेक्नोलॉजी (डीएसटी) प्रोग्राम के समर्थन से तैयार हुई है। अभी यह तकनीकी रेडीनेस लेवल के छठे स्तर पर है। वहीं डॉबी वेंकटेशम ने ईटोन . प्राइवेट लिमिटेड और महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम खराड़ी नॉलेज पार्क, पुणे के साथ इसमें सहयोग के लिए अनुबंध भी किया है।

(इंडिया साइंस वायर)

Topics: Science, technology, IIT Hyderabad, Research, Honeycomb, Pollution, Noise Pollution, Honeybee, beehives, Department of Science & Technology (DST), Government of India, Honeycomb

भारत हेराल्ड

मधुमक्खी के छत्ते की अनुकृति आधारित ध्वनिअवशोषक तकनीक विकसित-

1 week ago

Tubular Polypropylene

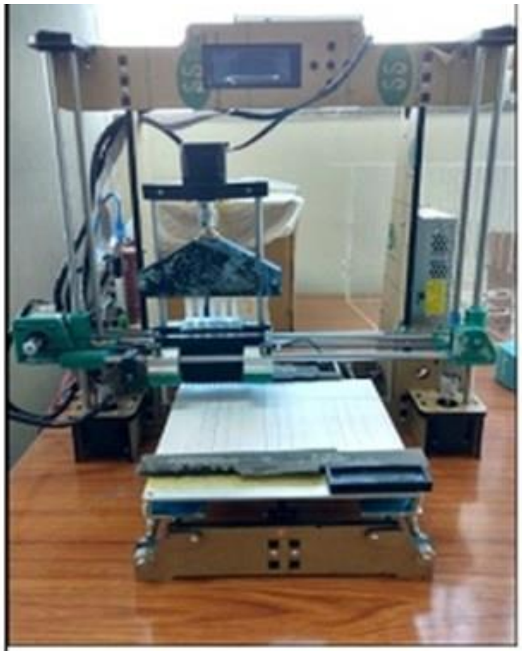

Paper honeycomb

Prototype Machines for large sample fabrication

नई दिल्ली: अनेक प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों के पीछे ध्वनि प्रदूषण को जिम्मेदार कारक के रूपमें देखा जा रहा है। वातावरण में बढ़ते शोर के विरुद्ध भारतीय शोधकर्ताओं ने पेपर और पॉलीमर से बने ध्वनि को अवशोषित करने वाले पैनल विकसित किए हैं, जिनकी संरचना मधुमक्खी के छत्ते से मिलती है।यह ध्वनिक ऊर्जा को कम में अनुप्रयोगों विभिन्न जुड़े से विज्ञान ध्वनि इसका है। सक्षम में करने नष्ट ही में रेंज आवृत्ति-उपयोग के साथ ही इससे ध्वनि प्रदूषण पर अंकुश लगाने में मदद मिल सकती है।

यह देखा गया है कि ध्वनि की उच्च आवृत्ति के नियंत्रण में कई पारंपरिक और प्राकृतिक संरचनाएंउपयोगी सिद्ध हुई हैं। मधुमक्खी के छत्तों को उनकी ज्यामितीय संरचना के कारण उच्च और निम्न आवृत्तियों को कुशलतापूर्वक

नियंत्रित करने में काफी मददगार पाया गया है। सैद्धांतिक विश्लेषणों और अनुभवजन्य पड़ताल में ध्वनिक ऊर्जा के कंपन ऊर्जा में रूपांतरण के संकेत मिले हैं। यह कंपन ऊर्जा दीवार में नमी वाले गुण के कारण ऊष्मा के रूप में नष्ट हो जाती है। इस विशिष्टता का अनुकरण ध्वनि प्रदूषण के लिए एक कारगर एवंकिफायतीसमाधान प्रस्तुत करता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में विभाग इंजीनियरिंग एयरोस्पेस एंड मैकेनिकल में हैदराबाद (आईआईटी) इस से प्रयोग के प्रविधि डिजाइन बायोमीट्रिक ने सूर्या .डा और वेंकटेशम बी .डा कार्यरतविशिष्टता को भुनाने में सफलता प्राप्त की है। इस पद्धति में मधुमक्खी के छत्ते के नमूने की ध्वनिक ऊर्जा को भौतिकी की व्यय-गया। किया विकसित डिजाइन अनुरूप उसी फिर समझकर

टीम ने एक गणितीय मॉडल विकसित किया और अनुकूलित मापदंडों की गणना की औरव्यवस्थित, नियंत्रित मापदंडों का उपयोग करके परीक्षण के नमूने तैयार किए। इसके बाद एक बड़े नमूने का निर्माण किया गया। उन्होंने दो अलग मशीनों प्रोटोटाइप संबंधित उनसे और तरीकों विभिन्न दो साथ के सामग्रियों की प्रकार अलग-बिफोर हनीकॉम्ब-(अनुक्रमित) इनडेक्स्ड लिए के हनीकॉम्ब पेपर प्रोटोटाइप एक है। किया उपयोग का) एक्सपेंशनHOBE) प्रक्रिया पर आधारित है और दूसरी प्रोटोटाइप मशीन हॉट वायर तकनीक पर आधारित पॉलीमर हनीकॉम्ब संरचना के लिए है।

पैनलों को स्टैक्ड एक्सट्रूडेड पॉलीप्रोपीन स्ट्रॉ को काटकर तैयार किया गया। गर्म तार की मदद से स्लाइसिंग प्रक्रिया कर स्ट्रॉ को भी आपस में बांधा जाता है। कम मोटाई और ध्वनिक पैनलों की उच्च विशिष्ट शक्ति के साथ विकसित की गई नई तकनीक ध्वनिक ऊर्जा अपव्यय का एक तंत्र प्रदान करती है। इस कार्य के हिस्से के रूप में बड़े नमूनों के अवशोषण गुणांक को मापने के लिए एक परीक्षण सुविधा भी स्थापित की गई है।

डॉतकनीक यह कि है कहना का वेंकटेशम ., कम आवृत्ति अनुप्रयोगों पर आधारित पारंपरिक ध्वनि अवशोषित-के बाजार के सामग्रियों वाली करने15% हिस्से पर पैठ बनाने का अवसर पैदा कर सकती है।

यह तकनीक भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग मैन्युफैक्चरिंग एडवांस्ड अंतर्गत के (डीएसटी) बी .डॉ वहीं है। पर स्तर छठे के लेवल रेडीनेस तकनीकी यह अभी है। हुई तैयार से समर्थन के प्रोग्राम टेक्नोलॉजी पार्क नॉलेज खराड़ी निगम विकास औद्योगिक महाराष्ट्र और लिमिटेड प्राइवेट ईटोन ने वेंकटेशम, पुणे के साथ इसमें सहयोग के लिए अनुबंध भी किया है।(वायर साइंस इंडिया)

मधुमक्खी के छत्ते की अनुकृति आधारित ध्वनि-अवशोषक तकनीक विकसित

By Ram Bharose

सितम्बर 14, 2021 IIT Hyderabad, science

ध्वनि प्रदूषण से होती हैं स्वास्थ्य संबंधी परेशानियां

नई दिल्ली, 14 सितंबर, 2021: अनेक प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों के पीछे **ध्वनि प्रदूषण** को जिम्मेदार कारक के रूप में देखा जा रहा है। वातावरण में बढ़ते शोर के विरुद्ध भारतीय शोधकर्ताओं ने पेपर और पॉलीमर से बने ध्वनि को अवशोषित करने वाले पैनल विकसित किए हैं, जिनकी संरचना **मधुमक्खी** के छत्ते से मिलती है। यह ध्वनिक ऊर्जा को कम-आवृत्ति रेंज में ही नष्ट करने में सक्षम है। इसका ध्वनि विज्ञान से जुड़े विभिन्न अनुप्रयोगों में उपयोग के साथ ही इससे ध्वनि प्रदूषण पर अंकुश लगाने में मदद मिल सकती है।

यह देखा गया है कि ध्वनि की उच्च आवृत्ति के नियंत्रण में कई पारंपरिक और प्राकृतिक संरचनाएं उपयोगी सिद्ध हुई हैं। मधुमक्खी के छत्तों को उनकी ज्यामितीय संरचना के कारण उच्च और निम्न आवृत्तियों को कुशलतापूर्वक नियंत्रित करने में काफी मददगार पाया गया है।

सैद्धांतिक विश्लेषणों और अनुभवजन्य पड़ताल में ध्वनिक ऊर्जा के कंपन ऊर्जा में रूपांतरण के संकेत मिले हैं। यह कंपन ऊर्जा दीवार में नमी वाले गुण के कारण ऊष्मा के रूप में नष्ट हो जाती है। इस विशिष्टता का अनुकरण ध्वनि प्रदूषण के लिए एक कारगर एवं किफायती समाधान प्रस्तुत करता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानहैदराबाद में मैकेनिकल एंड एयरोस्पेस इंजीनि (आईआईटी)यरिंग विभाग में कार्यरत डासूर्या ने बायोमीट्रिक डिजाइन प्रविधि के प्रयोग से इस विशिष्टता को भुनाने .बी वेंकटेशम और डा . व्यय की भौतिकी को -में सफलता प्राप्त की है। इस पद्धति में मधुमक्खी के छत्ते के नमूने की ध्वनिक ऊर्जा क समझकर फिर उसी अनुरूप डिजाइन विकसितिया गया।

कैसे विकसित किया गणितीय मॉडल

टीम ने एक गणितीय मॉडल विकसित किया और अनुकूलित मापदंडों की गणना की औरव्यवस्थित, नियंत्रित मापदंडों का उपयोग करके परीक्षण के नमूने तैयार किए। इसके बाद एक बड़े नमूने का निर्माण किया गया। उन्होंने दो अलग अलग प्रकार की-सामग्रियों के साथ दो विभिन्न तरीकों और उनसे संबंधित प्रोटोटाइप मशीनों का उपयोग किया है। एक प्रोटोटाइप पेपर हनीकॉम्ब के लिए इनडेक्स्ड हनीकॉम्ब बिफोर -(अनुक्रमित)) एक्सपेंशनHOBE) प्रक्रिया पर आधारित है और दूसरी प्रोटोटाइप मशीन हॉट वायर तकनीक पर आधारित पॉलीमर हनीकॉम्ब संरचना के लिए है।

पैनलों को स्टैक्ड एक्सट्रूडेड पॉलीप्रोपीन स्ट्रॉ को काटकर तैयार किया गया। गर्म तार की मदद से स्लाइसिंग प्रक्रिया कर स्ट्रॉ को भी आपस में बांधा जाता है। कम मोटाई और ध्वनिक पैनलों की उच्च विशिष्ट शक्ति के साथ विकसित की गई नई तकनीक ध्वनिक ऊर्जा अपव्यय का एक तंत्र प्रदान करती है। इस कार्य के हिस्से के रूप में बड़े नमूनों के अवशोषण गुणांक को मापने के लिए एक परीक्षण सुविधा भी स्थापित की गई है।

डॉवेंकटेशम का कहना है कि यह तकनीक ., कम आवृत्ति अनुप्रयोगों पर आधारित पारंपरिक ध्वनि अवशोषित करने वाली सामग्रियों के बाजार के-15% हिस्से पर पैठ बनाने का अवसर पैदा कर सकती है।

यह तकनीक भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एडवांस्ड मैन्युफैक्चरिंग (डीएसटी) टेक्नोलॉजी प्रोग्राम के समर्थन से तैयार हुई है। अभी यह तकनीकी रेडीनेस लेवल के छठे स्तर पर है। वहीं डॉबी . वेंकटेशम ने ईटोन प्राइवेट लिमिटेड और महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम खराड़ी नॉलेज पार्क, पुणे के साथ इसमें सहयोग के लिए अनुबंध भी किया है। (इंडिया साइंस वायर)

RD TIMES.in हिंदी

मधुमक्खी के छत्ते की अनुकृति आधारित ध्वनि-विकसित अवशोषक तकनीक

By RD Times Hindi | September 14, 2021

Tubular Polypropylene

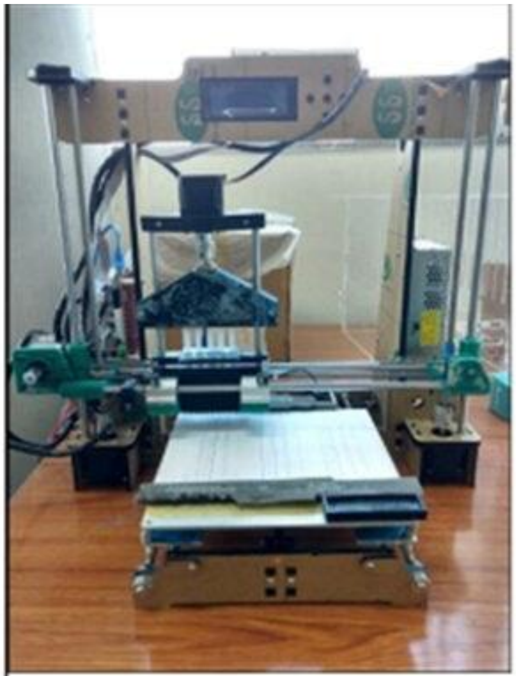

Paper honeycomb

Prototype Machines for large sample fabrication

नई दिल्ली: अनेक प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों के पीछे ध्वनि प्रदूषण को जिम्मेदार कारक के रूपमें देखा जा रहा है। वातावरण में बढ़ते शोर के विरुद्ध भारतीय शोधकर्ताओं ने पेपर और पॉलीमर से बने ध्वनि को अवशोषित करने वाले पैनल विकसित किए हैं, जिनकी संरचना मधुमक्खी के छत्ते से मिलती है।यह ध्वनिक ऊर्जा को कमआवृत्ति रेंज में ही नष्ट करने में सक्षम है।- इसका ध्वनि विज्ञान से जुड़े विभिन्न अनुप्रयोगों में उपयोग के साथ ही इससे ध्वनि प्रदूषण पर अंकुश लगाने में मदद मिल सकती है।

यह देखा गया है कि ध्वनि की उच्च आवृत्ति के नियंत्रण में कई पारंपरिक और प्राकृतिक संरचनाएंउपयोगी सिद्ध हुई हैं। मधुमक्खी के छत्तों को उनकी ज्यामितीय संरचना के कारण उच्च और निम्न आवृत्तियों को कुशलतापूर्वक नियंत्रित करने में काफी मददगार पाया गया है। सैद्धांतिक विश्लेषणों और अनुभवजन्य पड़ताल में ध्वनिक ऊर्जा

के कंपन ऊर्जा में रूपांतरण के संकेत मिले हैं। यह कंपन ऊर्जा दीवार में नमी वाले गुण के कारण ऊष्मा के रूप में नष्ट हो जाती है। इस विशिष्टता का अनुकरण ध्वनि प्रदूषण के लिए एक कारगर एवंकिफायतीसमाधान प्रस्तुत करता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानहैदराबाद में मैकेनिकल एंड एयरोस्पेस इंजीनियरिंग विभाग में (आईआईटी) .बी वेंकटेशम और डा .कार्यरत डा सूर्या ने बायोमीट्रिक डिजाइन प्रविधि के प्रयोग से इस विशिष्टता को भुनाने में सफलता प्राप्त की है। इस पद्धति में मधुमक्खी के छत्ते के नमूने की ध्वनिक ऊर्जाव्यय की भौतिकी को - समझकर फिर उसी अनुरूप डिजाइन विकसित किया गया।

टीम ने एक गणितीय मॉडल विकसित किया और अनुकूलित मापदंडों की गणना की औरव्यवस्थित, नियंत्रित मापदंडों का उपयोग करके परीक्षण के नमूने तैयार किए। इसके बाद एक बड़े नमूने का निर्माण किया गया। उन्होंने दो अलगअलग प्रकार की सामग्रियों के साथ दो विभिन्न तरीकों और उनसे संबंधित प्रोटोटाइप मशीनों - का उपयोगकिया है। एक प्रोटोटाइप पेपर हनीकॉम्ब के लिए इनडेक्स्ड हनीकॉम्ब बिफोर -(अनुक्रमित)) एक्सपेंशनHOBE) प्रक्रिया पर आधारित है और दूसरी प्रोटोटाइप मशीन हॉट वायर तकनीक पर आधारित पॉलीमर हनीकॉम्ब संरचना के लिए है।

पैनलों को स्टैक्ड एक्सट्रूडेड पॉलीप्रोपीन स्ट्रॉ को काटकर तैयार किया गया। गर्म तार की मदद से स्लाइसिंग प्रक्रिया कर स्ट्रॉ को भी आपस में बांधा जाता है। कम मोटाई और ध्वनिक पैनलों की उच्च विशिष्ट शक्ति के साथ विकसित की गई नई तकनीक ध्वनिक ऊर्जा अपव्यय का एक तंत्र प्रदान करती है। इस कार्य के हिस्से के रूप में बड़े नमूनों के अवशोषण गुणांक को मापने के लिए एक परीक्षण सुविधा भी स्थापित की गई है।

डॉवेंकटेशम का कहना है कि यह तकनीक ., कम आवृत्ति अनुप्रयोगों पर आधारित पारंपरिक ध्वनिअवशोषित - करने वाली सामग्रियों के बाजार के15% हिस्से पर पैठ बनाने का अवसर पैदा कर सकती है।

यह तकनीक भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एडवांस्ड मैन्युफैक्चरिंग (डीएसटी) बी .टेक्नोलॉजी प्रोग्राम के समर्थन से तैयार हुई है। अभी यह तकनीकी रेडीनेस लेवल के छठे स्तर पर है। वहीं डॉ वेंकटेशम ने ईटोन प्राइवेट लिमिटेड और महाराष्ट्रऔद्योगिक विकास निगम खराड़ी नॉलेज पार्क, पुणे के साथ इसमें सहयोग के लिए अनुबंध भी किया है।(इंडिया साइंस वायर)

दी इंडियनबुलेटिन

मधुमक्खी के छत्ते की अनुकृति आधारित ध्वनिअवशोषक तकनीक विकसित-

1 week ago

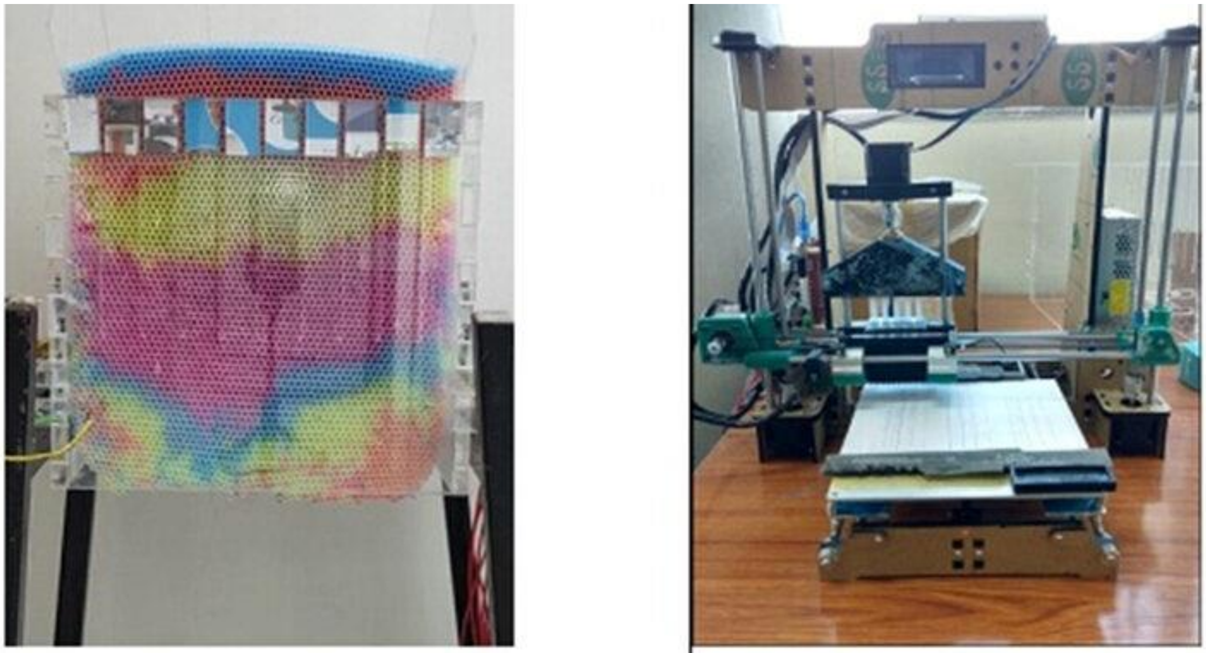

Tubular Polypropylene *Paper honeycomb*

Prototype Machines for large sample fabrication

नई दिल्ली: अनेक प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों के पीछे ध्वनि प्रदूषण को जिम्मेदार कारक के रूपमें देखा जा रहा है। वातावरण में बढ़ते शोर के विरुद्ध भारतीय शोधकर्ताओं ने पेपर और पॉलीमर से बने ध्वनि को अवशोषित करने वाले पैनल विकसित किए हैं, जिनकी संरचना मधुमक्खी के छत्ते से मिलती है।यह ध्वनिक ऊर्जा को कममे रेंज आवृत्ति-ं ही नष्ट करने में सक्षम है। इसका ध्वनि विज्ञान से जुड़े विभिन्न अनुप्रयोगों में उपयोग के साथ ही इससे ध्वनि प्रदूषण पर अंकुश लगाने में मदद मिल सकती है।

यह देखा गया है कि ध्वनि की उच्च आवृत्ति के नियंत्रण में कई पारंपरिक और प्राकृतिक संरचनाएंउपयोगी सिद्ध हुई हैं। मधुमक्खी के छत्तों को उनकी ज्यामितीय संरचना के कारण उच्च और निम्न आवृत्तियों को कुशलतापूर्वक नियंत्रित करने में काफी मददगार पाया गया है। सैद्धांतिक विश्लेषणों और अनुभवजन्य पड़ताल में ध्वनिक ऊर्जा के कंपन ऊर्जा में रूपांतरण के संकेत मिले हैं। यह कंपन ऊर्जा दीवार में नमी वाले गुण के कारण ऊष्मा के रूप में

नष्ट हो जाती है। इस विशिष्टता का अनुकरण ध्वनि प्रदूषण के लिए एक कारगर एवंकिफायतीसमाधान प्रस्तुत करता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में विभाग इंजीनियरिंग एयरोस्पेस एंड मैकेनिकल में हैदराबाद (आईआईटी) कार्यरत डा भुनाने को विशिष्टता इस से प्रयोग के प्रविधि डिजाइन योमीट्रिकबा ने सूर्या .डा और वेंकटेशम बी . को भौतिकी की व्यय-ऊर्जा ध्वनिक की नमूने के छत्ते के मधुमक्खी में पद्धति इस है। की प्राप्त सफलता में गया। किया विकसित डिजाइन अनुरूप उसी फिर समझकर

Tubular Polypropylene | Paper honeycomb

Natural honeybee hive | Engineered acoustic panels

टीम ने एक गणितीय मॉडल विकसित किया और अनुकूलित मापदंडों की गणना की औरव्यवस्थित, नियंत्रित मापदंडों का उपयोग करके परीक्षण के नमूने तैयार किए। इसके बाद एक बड़े नमूने का निर्माण किया गया। उन्होंने दो अलगसंबंध उनसे और तरीकों विभिन्न दो साथ के सामग्रियों की प्रकार अलग-ित प्रोटोटाइप मशीनों का उपयोग किया है। एक प्रोटोटाइप पेपर हनीकॉम्ब के लिए इनडेक्स्ड बिफोर हनीकॉम्ब-(अनुक्रमित)) एक्सपेंशनHOBE) प्रक्रिया पर आधारित है और दूसरी प्रोटोटाइप मशीन हॉट वायर तकनीक पर आधारित पॉलीमर हनीकॉम्ब संरचना के लिए है।

पैनलों को स्टैक्ड एक्सट्रूडेड पॉलीप्रोपीन स्ट्रॉ को काटकर तैयार किया गया। गर्म तार की मदद से स्लाइसिंग प्रक्रिया कर स्ट्रॉ को भी आपस में बांधा जाता है। कम मोटाई और ध्वनिक पैनलों की उच्च विशिष्ट शक्ति के साथ विकसित की गई नई तकनीक ध्वनिक ऊर्जा अपव्यय का एक तंत्र प्रदान करती है। इस कार्य के हिस्से के रूप में बड़े नमूनों के अवशोषण गुणांक को मापने के लिए एक परीक्षण सुविधा भी स्थापित की गई है।

डॉतकनीक यह कि है कहना का वेंकटेशम ., कम आवृत्ति अनुप्रयोगों पर आधारित पारंपरिक ध्वनि अवशोषित- के बाजार के सामग्रियों वाली करने15% हिस्से पर पैठ बनाने का अवसर पैदा कर सकती है।

यह तकनीक भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग मैन्युफैक्चरिंग एडवांस्ड अंतर्गत के (डीएसटी) बी .डॉ वहीं है। पर स्तर छठे के लेवल रेडीनेस तकनीकी यह अभी है। हुई तैयार से समर्थन के प्रोग्राम टेक्नोलॉजी प ईटोन ने वेंकटेशम्राइवेट लिमिटेड और महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम खराड़ी नॉलेज पार्क, पुणे के साथ इसमें सहयोग के लिए अनुबंध भी किया है।(वायर साइंस इंडिया)

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

मधुमक्खी के छत्ते की अनुकृति आधारित ध्वनिअवशोषक तकनीक विकसित-

By **Rupesh Dharmik** - September 14, 2021

Tubular Polypropylene *Paper honeycomb*

Prototype Machines for large sample fabrication

नई दिल्ली: अनेक प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी परेशानियों के पीछे ध्वनि प्रदूषण को जिम्मेदार कारक के रूपमें देखा जा रहा है। वातावरण में बढ़ते शोर के विरुद्ध भारतीय शोधकर्ताओं ने पेपर और पॉलीमर से बने ध्वनि को अवशोषित करने वाले पैनल विकसित किए हैं, जिनकी संरचना मधुमक्खी के छत्ते से मिलती है।यह ध्वनिक ऊर्जा को कम आवृत्ति रेंज में ही नष्ट करने में सक्षम है। इसका ध्वनि विज्ञान से जुड़े विभिन्न अनुप्रयोगों-में उपयोग के साथ ही इससे ध्वनि प्रदूषण पर अंकुश लगाने में मदद मिल सकती है।

यह देखा गया है कि ध्वनि की उच्च आवृत्ति के नियंत्रण में कई पारंपरिक और प्राकृतिक संरचनाएंउपयोगी सिद्ध हुई हैं। मधुमक्खी के छत्तों को उनकी ज्यामितीय संरचना के कारण उच्च और निम्न आवृत्तियों को कुशलतापूर्वक नियंत्रित करने में काफी मददगार पाया गया है। सैद्धांतिक विश्लेषणों और अनुभवजन्य पड़ताल में ध्वनिक ऊर्जा के कंपन ऊर्जा में रूपांतरण के संकेत मिले हैं। यह कंपन ऊर्जा दीवार में नमी वाले गुण के कारण ऊष्मा के रूप में

नष्ट हो जाती है। इस विशिष्टता का अनुकरण ध्वनि प्रदूषण के लिए एक कारगर एवंकिफायतीसमाधान प्रस्तुत करता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानहैदराबाद में मैकेनिकल एंड एयरोस्पेस इंजीनियरिंग विभाग में (आईआईटी) सूर्या ने बायोमीट्रिक डिजाइन प्रविधि के प्रयोग स .बी वेंकटेशम और डा .कार्यरत डा े इस विशिष्टता को भुनाने में सफलता प्राप्त की है। इस पद्धति में मधुमक्खी के छत्ते के नमूने की ध्वनिक ऊर्जाव्यय की भौतिकी को - समझकर फिर उसी अनुरूप डिजाइन विकसित किया गया।

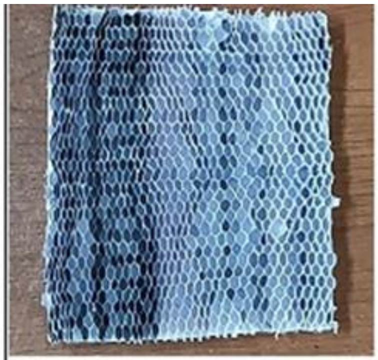

Tubular Polypropylene | *Paper honeycomb*

Natural honeybee hive | Engineered acoustic panels

टीम ने एक गणितीय मॉडल विकसित किया और अनुकूलित मापदंडों की गणना की औरव्यवस्थित, नियंत्रित मापदंडों का उपयोग करके परीक्षण के नमूने तैयार किए। इसके बाद एक बड़े नमूने का निर्माण किया गया। उन्होंने दो अलगअलग प्रकार की सामग्रियों के साथ दो विभिन्न तरीकों और उनसे संबंधित प्रोटोटाइप मशीनों - का उपयोग किया है। एक प्रोटोटाइप पेपर हनीकॉम्ब के लिए इनड ेक्स्ड हनीकॉम्ब बिफोर -(अनुक्रमित)) एक्सपेंशनHOBE) प्रक्रिया पर आधारित है और दूसरी प्रोटोटाइप मशीन हॉट वायर तकनीक पर आधारित पॉलीमर हनीकॉम्ब संरचना के लिए है।

पैनलों को स्टैक्ड एक्सट्रूडेड पॉलीप्रोपीन स्ट्रॉ को काटकर तैयार किया गया। गर्म तार की मदद से स्लाइसिंग प्रक्रिया कर स्ट्रॉ को भी आपस में बांधा जाता है। कम मोटाई और ध्वनिक पैनलों की उच्च विशिष्ट शक्ति के साथ विकसित की गई नई तकनीक ध्वनिक ऊर्जा अपव्यय का एक तंत्र प्रदान करती है। इस कार्य के हिस्से के रूप में बड़े नमूनों के अवशोषण गुणांक को मापने के लिए एक परीक्षण सुविधा भी स्थापित की गई है।

डॉवेंकटेशम का कहना है कि यह तकनीक ., कम आवृत्ति अनुप्रयोगों पर आधारित पारंपरिक ध्वनिअवशोषित - करने वाली सामग्रियों के बाजार के15% हिस्से पर पैठ बनाने का अवसर पैदा कर सकती है।

यह तकनीक भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के अंतर्गत एडवांस्ड मैन्युफैक्चरिंग (डीएसटी) बी .समर्थन से तैयार हुई है। अभी यह तकनीकी रेडीनेस लेवल के छठे स्तर पर है। वहीं डॉ टेक्नोलॉजी प्रोग्राम के वेंकटेशम ने ईटोन प्राइवेट लिमिटेड और महाराष्ट्र औद्योगिक विकास निगम खराड़ी नॉलेज पार्क, पुणे के साथ इसमें सहयोग के लिए अनुबंध भी किया है।(इंडिया साइंस वायर)

V3 NEWS इण्डिया

स्कूली छात्रों में रचनात्मकता और मौलिकता के विकास के लिए 'एकलव्य'

14/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 14 सितंबर -(एनईपी) शिक्षा में सकारात्मक परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति :(इंडिया साइंस वायर)2020 में कई ऐसे प्रावधान किए गए हैं, जो छात्रों में नवोन्मेषी दृष्टिकोण के विकास, उनकी रचनात्मकता, लीक से हटकर सोचने की क्षमता का विकास और अवधारणात्मक समझ विकसित करने के लिए सीखने के सरल तरीकों के उपयोग को प्रोत्साहित करने पर जोर देते हैं। इसी उद्देश्य से केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (आईआईटी) और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (सीबीएसई) गांधीनगर ने ऑनलाइन'एकलव्य सीरीज' शुरू की है।

बताया जा रहा है कि 'एकलव्य सीरीज' से कक्षा VI से XII के लिए गणित और विज्ञान पाठ्यक्रम से विभिन्न विषयों की अवधारणात्मक समझ विकसित करने में मदद मदद मिल सकती है। एकलव्य एक इंटरैक्टिव ऑनलाइन शैक्षिक कार्यक्रम है, जिसमें कई व्यावहारिक गतिविधियाँ, परियोजनाएँ शामिल होंगे, जो विषयों को गंभीरता से, लेकिन सरल अंदाज में सिखाने, समझाने का काम करेंगे। इसके अंतर्गत छात्रों को ऐसे टास्क दिए जाएंगे, जिसके जरिये छात्र लीक से हटकर सोच पाने में समर्थ होंगे।

आगामी 26 सितंबर को शुरू होने वाली इस सीरीज के पहले एपिसोड में नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक पर चर्चा शामिल होगी। टोक्यो ओलंपिक में स्वर्ण पदक प्राप्त करने वाले नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक से जुड़ा सवाल कि आखिर उन्होंने 36 डिग्री पर ही भाला क्यों फेंका?, छात्रों की 'आउट ऑफ द बॉक्स' सोच का एक उदाहरण है। इस श्रृंखला का

उद्देश्य यह प्रदर्शित करना है कि कक्षाओं में अवधारणात्मक शिक्षण कैसे लागू किया जा सकता है। लाइव सेशन 4 बजे से 5 बजे तक प्रत्येक रविवार को आयोजित किए जाएंगे।

पहले सत्र में न्यूटन के गति के नियमों पर भी चर्चा की जाएगी। एकलव्य सीरीज में रजिस्ट्रेशन 10 सितंबर से शुरू कर दिए गए हैं। सीरीज के तहत DIY (Do It Yourself -इसे स्वयं करेंको भी प्रोत्साहित किया जाएगा (, जिसकी मदद से छात्र अपने आसपास मौजूद चीजों का इस्तेमाल कर प्रोजेक्ट तैयार करेंगे। इसका उद्देश्य पाठ्यक्रम को दैनिक जीवन से जोड़ना है।

इन सभी टास्क के स्तर आसान से मुश्किल होंगे, जिसमें कक्षा VI-XII के विज्ञान और गणित के विषयों को शामिल किया जाएगा। इसलिए, इन इन कक्षाओं के छात्रों को संबंधित विषयों से जुड़ी स्पष्टता के लिए इन कोर्सेज में पंजीकरण जरूर करना चाहिए। आईआईटी गाँधीनगर की वेबसाइट के वेब लिंक - https://eklavya.iitgandhinagar.ac.in/home/course/eklavya/1 पर पंजीकरण किया जा सकता है।

भारत हेराल्ड

स्कूली छात्रों में रचनात्मकता और मौलिकता के विकास के लिए 'एकलव्य'

2 weeks ago

नई दिल्ली: शिक्षा में सकारात्मक परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति -(एनईपी)2020 में कई ऐसे प्रावधान किए गए हैं, जो छात्रों में नवोन्मेषी दृष्टिकोण के विकास, उनकी रचनात्मकता, लीक से हटकर सोचने की क्षमता का विकास औरअवधारणात्मक समझ विकसित करने के लिए सीखने के सरल तरीकों के उपयोग को प्रोत्साहित करने पर जोर देते हैं। इसी उद्देश्य से केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (सीबीएसई)और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानऑनलाइन ने गांधीनगर (आईआईटी)'एकलव्य सीरीज' शुरू की है। बताया जा रहा है कि 'एकलव्य सीरीज'से कक्षा VI से XII के लिए गणित और विज्ञान पाठ्यक्रम से विभिन्न विषयों की अवधारणात्मक समझ विकसित करने में मदद मदद मिल सकती है।

एकलव्य एक इंटरैक्टिव ऑनलाइन शैक्षिक कार्यक्रम है, जिसमें कई व्यावहारिक गतिविधियाँ, परियोजनाएँ शामिल होंगे, जो विषयों को गंभीरता से, लेकिन सरल अंदाज में सिखाने, समझाने का काम करेंगे। इसके अंतर्गत छात्रों को ऐसे टास्क दिए जाएंगे, जिसके जरिये छात्र लीक से हटकर सोच पाने में समर्थ होंगे।

आगामी 26 सितंबर को शुरू होने वालीइस सीरीज केपहले एपिसोड में नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक पर चर्चा शामिल होगी। टोक्यो ओलंपिक में स्वर्ण पदक प्राप्त करने वाले नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक से जुड़ा सवाल कि आखिर उन्होंने 36 डिग्री पर ही भाला क्यों फेंका?, छात्रों की 'आउट ऑफ द बॉक्स' सोच का एक उदाहरण है। इस श्रृंखला का उद्देश्य यह प्रदर्शित करना है कि कक्षाओं में अवधारणात्मक शिक्षण कैसे लागू किया जा सकता है। लाइव सेशन 4 बजे से 5 बजे तक प्रत्येक रविवार को आयोजित किए जाएंगे। पहले सत्र में न्यूटन के गति के नियमों पर भी चर्चा की जाएगी।

एकलव्य सीरीज में रजिस्ट्रेशन 10 सितंबर से शुरू कर दिए गए हैं। सीरीज के तहत DIY (Do It Yourself - इसे स्वयं करेंजाएगा किया प्रोत्साहित भी को (, जिसकी मदद से छात्र अपने आसपास मौजूद चीजों का इस्तेमाल कर प्रोजेक्ट तैयार करेंगे। इसका उद्देश्य पाठ्यक्रम कोदैनिक जीवनसे जोड़ना है। इन सभी टास्क के स्तर आसान से मुश्किलहोंगे, जिसमें कक्षा VI-XII के विज्ञान और गणित के विषयों को शामिल किया जाएगा। इसलिए, इन इन कक्षाओंके छात्रों को संबंधित विषयों से जुड़ी स्पष्टता के लिए इन कोर्सेज में पंजीकरण जरूर करना चाहिए। आईआईटी गाँधीनगर की वेबसाइट के वेब लिंक-– https://eklavya.iitgandhinagar.ac.in/home/course/eklavya/1 पर पंजीकरण किया जा सकता है। साइंस इंडिया) वायर(

फाड़ डालो डॉट कॉम

धाँसू ख़बरें और ख़बरों की चीर-फाड़

स्कूली छात्रों में रचनात्मकता और मौलिकता के विकास के लिए ‘एकलव्य’

By Ram Bharose

सितम्बर 14, 2021 IIT, राष्ट्रीय शिक्षा नीति

जानिए क्या है भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) गांधीनगर की ऑनलाइन‘एकलव्य सीरीज’

Know what is the online ‘Eklavya Series’ of Indian Institute of Technology (IIT) Gandhinagar

नई दिल्ली, 14 सितंबर, 2021: शिक्षा में सकारात्मक परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी-(2020 में कई ऐसे प्रावधान किए गए हैं, जो छात्रों में नवोन्मेषी दृष्टिकोण के विकास, उनकी रचनात्मकता, लीक से हटकर सोचने की क्षमता का विकास और अवधारणात्मक समझ विकसित करने के लिए सीखने के सरल तरीकों के उपयोग को प्रोत्साहित करने पर जोर देते हैं। इसी उद्देश्य से केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और (सीबीएसई) भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान ऑनलाइन गांधीनगर ने (आईआईटी)'एकलव्य सीरीज' शुरू की है।

बताया जा रहा है कि **'एकलव्य सीरीज'** से कक्षा VI से XII के लिए गणित और विज्ञान पाठ्यक्रम से विभिन्न विषयों की अवधारणात्मक समझ विकसित करने में मदद मदद मिल सकती है।

Eklavya is an interactive online educational program

एकलव्य एक इंटरैक्टिव ऑनलाइन शैक्षिक कार्यक्रम है, जिसमें कई व्यावहारिक गतिविधियाँ, परियोजनाएँ शामिल होंगे, जो विषयों को गंभीरता से, लेकिन सरल अंदाज में सिखाने, समझाने का काम करेंगे। इसके अंतर्गत छात्रों को ऐसे टास्क दिए जाएंगे, जिसके जरिये छात्र लीक से हटकर सोच पाने में समर्थ होंगे।

आगामी 26 सितंबर को शुरू होने वाली इस सीरीज के पहले एपिसोड में नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक पर चर्चा शामिल होगी। टोक्यो ओलंपिक में स्वर्ण पदक प्राप्त करने वाले नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक से जुड़ा सवाल कि आखिर उन्होंने 36 डिग्री पर ही भाला क्यों फेंका?, छात्रों की 'आउट ऑफ द बॉक्स' सोच का एक उदाहरण है।

'एकलव्य सीरीज' का उद्देश्य क्या है? What is the purpose of 'Eklavya Series'?

इस श्रृंखला का उद्देश्य यह प्रदर्शित करना है कि कक्षाओं में अवधारणात्मक शिक्षण कैसे लागू किया जा सकता है। लाइव सेशन 4 बजे से 5 बजे तक प्रत्येक रविवार को आयोजित किए जाएंगे। पहले सत्र में न्यूटन के गति के नियमों पर भी चर्चा की जाएगी।

एकलव्य सीरीज में रजिस्ट्रेशन कैसे होता है?

एकलव्य सीरीज में रजिस्ट्रेशन 10 सितंबर से शुरू कर दिए गए हैं। सीरीज के तहत DIY (Do It Yourself -इसे स्वयं करेंको भी प्रोत्साहित किया जाएगा (, जिसकी मदद से छात्र अपने आसपास मौजूद चीजों का इस्तेमाल कर प्रोजेक्ट तैयार करेंगे। इसका उद्देश्य पाठ्यक्रम को दैनिक जीवन से जोड़ना है। इन सभी टास्क के स्तर आसान से मुश्किल होंगे, जिसमें कक्षा VI-XII के विज्ञान और गणित के विषयों को शामिल किया जाएगा। इसलिए, इन इन कक्षाओं के छात्रों को संबंधित विषयों से जुड़ी स्पष्टता के लिए इन कोर्सेज में पंजीकरण जरूर करना चाहिए। आईआईटी गाँधीनगर की वेबसाइट के वेब लिंक-– https://eklavya.iitgandhinagar.ac.in/home/course/eklavya/1 पर पंजीकरण किया जा सकता है।

(इंडिया साइंस वायर(

स्कूली छात्रों में रचनात्मकता और मौलिकता के विकास के लिए 'एकलव्य'

By RD Times Hindi | September 14, 2021

नई दिल्ली: शिक्षा में सकारात्मक परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति -(एनईपी)2020 में कई ऐसे प्रावधान किए गए हैं, जो छात्रों में नवोन्मेषी दृष्टिकोण के विकास, उनकी रचनात्मकता, लीक से हटकर सोचने की क्षमता का विकास औरअवधारणात्मक समझ विकसित करने के लिए सीखने के सरल तरीकों के उपयोग को प्रोत्साहित करने पर जोर देते हैं। इसी उद्देश्य से केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्डऔर भारतीय प्रौद्योगिकी (सीबीएसई) धीनगर ने ऑनलाइनगां (आईआईटी)संस्थान'एकलव्य सीरीज' शुरू की है। बताया जा रहा है कि 'एकलव्य सीरीज'से कक्षा VI से XII के लिए गणित और विज्ञान पाठ्यक्रम से विभिन्न विषयों की अवधारणात्मक समझ विकसित करने में मदद मदद मिल सकती है।

एकलव्य एक इंटरैक्टिव ऑनलाइन शैक्षिक कार्यक्रम है, जिसमें कई व्यावहारिक गतिविधियाँ, परियोजनाएँ शामिल होंगे, जो विषयों को गंभीरता से, लेकिन सरल अंदाज में सिखाने, समझाने का काम करेंगे। इसके अंतर्गत छात्रों को ऐसे टास्क दिए जाएंगे, जिसके जरिये छात्र लीक से हटकर सोच पाने में समर्थ होंगे।

आगामी 26 सितंबर को शुरू होने वालीइस सीरीज केपहले एपिसोड में नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक पर चर्चा शामिल होगी। टोक्यो ओलंपिक में स्वर्ण पदक प्राप्त करने वाले नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक से जुड़ा सवाल कि आखिर उन्होंने 36 डिग्री पर ही भाला क्यों फेंका?, छात्रों की 'आउट ऑफ द बॉक्स' सोच का एक उदाहरण है। इस श्रृंखला का उद्देश्य यह प्रदर्शित करना है कि कक्षाओं में अवधारणात्मक शिक्षण कैसे लागू किया जा सकता है। लाइव सेशन 4 बजे से 5 बजे तक प्रत्येक रविवार को आयोजित किए जाएंगे। पहले सत्र में न्यूटन के गति के नियमों पर भी चर्चा की जाएगी।

एकलव्य सीरीज में रजिस्ट्रेशन 10 सितंबर से शुरू कर दिए गए हैं। सीरीज के तहत DIY (Do It Yourself -इसे स्वयं करेंको भी प्रोत्साहित किया जाएगा (, जिसकी मदद से छात्र अपने आसपास मौजूद चीजों का इस्तेमाल कर प्रोजेक्ट तैयार करेंगे। इसका उद्देश्य पाठ्यक्रम कोदैनिक जीवनसे जोड़ना है। इन सभी टास्क के स्तर आसान से मुश्किलहोंगे, जिसमें कक्षा VI-XII के विज्ञान और गणित के विषयों को शामिल किया जाएगा। इसलिए, इन इन कक्षाओंके छात्रों को संबंधित विषयों से जुड़ी स्पष्टता के लिए इन कोर्सेज में पंजीकरण जरूर करना चाहिए। आईआईटी गाँधीनगर की वेबसाइट के वेब लिंक-–
https://eklavya.iitgandhinagar.ac.in/home/course/eklavya/1 पर पंजीकरण किया जा सकता है। इंडिया) (साइंस वायर

दी इंडियनबुलेटिन

स्कूली छात्रों में रचनात्मकता और मौलिकता के विकास के लिए 'एकलव्य'

2 weeks ago

नई दिल्ली: शिक्षा में सकारात्मक परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति -(एनईपी)2020 में कई ऐसे प्रावधान किए गए हैं, जो छात्रों में नवोन्मेषी दृष्टिकोण के विकास, उनकी रचनात्मकता, लीक से हटकर सोचने की क्षमता का विकास औरअवधारणात्मक समझ विकसित करने के लिए सीखने के सरल तरीकों के उपयोग को प्रोत्साहित करने पर जोर देते हैं। इसी उद्देश्य से केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्डप्र भारतीय और (सीबीएसई)ौद्योगिकी संस्थानऑनलाइन ने गांधीनगर (आईआईटी)'एकलव्य सीरीज' शुरू की है। बताया जा रहा है कि 'एकलव्य सीरीज'से कक्षा VI से XII के लिए गणित और विज्ञान पाठ्यक्रम से विभिन्न विषयों की अवधारणात्मक समझ विकसित करने में मदद मदद मिल सकती है।

एकलव्य एक इंटरैक्टिव ऑनलाइन शैक्षिक कार्यक्रम है, जिसमें कई व्यावहारिक गतिविधियाँ, परियोजनाएँ शामिल होंगे, जो विषयों को गंभीरता से, लेकिन सरल अंदाज में सिखाने, समझाने का काम करेंगे। इसके अंतर्गत छात्रों को ऐसे टास्क दिए जाएंगे, जिसके जरिये छात्र लीक से हटकर सोच पाने में समर्थ होंगे।

आगामी 26 सितंबर को शुरू होने वालीइस सीरीज केपहले एपिसोड में नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक पर चर्चा शामिल होगी। टोक्यो ओलंपिक में स्वर्ण पदक प्राप्त करने वाले नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक से जुड़ा सवाल कि आखिर उन्होंने 36 डिग्री पर ही भाला क्यों फेंका?, छात्रों की 'आउट ऑफ द बॉक्स' सोच का एक उदाहरण है। इस श्रृंखला का उद्देश्य यह प्रदर्शित करना है कि कक्षाओं में अवधारणात्मक शिक्षण कैसे लागू किया जा सकता है। लाइव सेशन 4 बजे से 5 बजे तक प्रत्येक रविवार को आयोजित किए जाएंगे। पहले सत्र में न्यूटन के गति के नियमों पर भी चर्चा की जाएगी।

एकलव्य सीरीज में रजिस्ट्रेशन 10 सितंबर से शुरू कर दिए गए हैं। सीरीज के तहत DIY (Do It Yourself - इसे स्वयं करेंजाएगा किया प्रोत्साहित भी को (, जिसकी मदद से छात्र अपने आसपास मौजूद चीजों का इस्तेमाल कर प्रोजेक्ट तैयार करेंगे। इसका उद्देश्य पाठ्यक्रम कोदैनिक जीवनसे जोड़ना है। इन सभी टास्क के स्तर आसान से मुश्किलहोंगे, जिसमें कक्षा VI-XII के विज्ञान और गणित के विषयों को शामिल किया जाएगा। इसलिए, इन इन कक्षाओंके छात्रों को संबंधित विषयों से जुड़ी स्पष्टता के लिए इन कोर्सेज में पंजीकरण जरूर करना चाहिए। आईआईटी गाँधीनगर की वेबसाइट के वेब लिंक-– https://eklavya.iitgandhinagar.ac.in/home/course/eklavya/1 पर पंजीकरण किया जा सकता है। (वायर साइंस इंडिया)

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

स्कूली छात्रों में रचनात्मकता और मौलिकता के विकास के लिए 'एकलव्य'

By **Rupesh Dharmik** - September 14, 2021

नई दिल्ली: शिक्षा में सकारात्मक परिवर्तन के लिए राष्ट्रीय शिक्षा नीति -(एनईपी)2020 में कई ऐसे प्रावधान किए गए हैं, जो छात्रों में नवोन्मेषी दृष्टिकोण के विकास, उनकी रचनात्मकता, लीक से हटकर सोचने की क्षमता का विकास औरअवधारणात्मक समझ विकसित करने के लिए सीखने के सरल तरीकों के उपयोग को प्रोत्साहित करने पर जोर देते हैं। इसी उद्देश्य से केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड और भारतीय प्रौद्योगिकी (सीबीएसई) गांधीनगर ने ऑनलाइन (आईआईटी)संस्थान'एकलव्य सीरीज' शुरू की है। बताया जा रहा है कि 'एकलव्य सीरीज'से कक्षा VI से XII के लिए गणित और विज्ञान पाठ्यक्रम से विभिन्न विषयों की अवधारणात्मक समझ विकसित करने में मदद मदद मिल सकती है।

एकलव्य एक इंटरैक्टिव ऑनलाइन शैक्षिक कार्यक्रम है, जिसमें कई व्यावहारिक गतिविधियाँ, परियोजनाएँ शामिल होंगे, जो विषयों को गंभीरता से, लेकिन सरल अंदाज में सिखाने, समझाने का काम करेंगे। इसके अंतर्गत छात्रों को ऐसे टास्क दिए जाएंगे, जिसके जरिये छात्र लीक से हटकर सोच पाने में समर्थ होंगे।

आगामी 26 सितंबर को शुरू होने वालीइस सीरीज केपहले एपिसोड में नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक पर चर्चा शामिल होगी। टोक्यो ओलंपिक में स्वर्ण पदक प्राप्त करने वाले नीरज चोपड़ा के भाला फेंकने की तकनीक से जुड़ा सवाल कि आखिर उन्होंने 36 डिग्री पर ही भाला क्यों फेंका?, छात्रों की 'आउट ऑफ द बॉक्स' सोच का एक उदाहरण है। इस श्रृंखला का उद्देश्य यह प्रदर्शित करना है कि कक्षाओं में अवधारणात्मक शिक्षण कैसे लागू किया जा सकता है। लाइव सेशन 4 बजे से 5 बजे तक प्रत्येक रविवार को आयोजित किए जाएंगे। पहले सत्र में न्यूटन के गति के नियमों पर भी चर्चा की जाएगी।

एकलव्य सीरीज में रजिस्ट्रेशन 10 सितंबर से शुरू कर दिए गए हैं। सीरीज के तहत DIY (Do It Yourself - इसे स्वयं करेंको भी प्रोत्साहित किया जाएगा (, जिसकी मदद से छात्र अपने आसपास मौजूद चीजों का इस्तेमाल कर प्रोजेक्ट तैयार करेंगे। इसका उद्देश्य पाठ्यक्रम कोदैनिक जीवनसे जोड़ना है। इन सभी टास्क के स्तर आसान से मुश्किलहोंगे, जिसमें कक्षा VI-XII के विज्ञान और गणित के विषयों को शामिल किया जाएगा। इसलिए, इन इन कक्षाओंके छात्रों को संबंधित विषयों से जुडी स्पष्टता के लिए इन कोर्सेज में पंजीकरण जरूर करना चाहिए। आईआईटी गाँधीनगर की वेबसाइट के वेब लिंक-–
https://eklavya.iitgandhinagar.ac.in/home/course/eklavya/1 पर पंजीकरण किया जा सकता है।
(इंडिया साइंस वायर)

फलों को खराब होने से बचाएगा मिश्रित कागज से बना रैपर

Complete information about the maintenance of fruits and vegetables. फलों को परिरक्षित करने की डिपिंग तकनीक - फल परिरक्षण संबंधित जानकारी -Fruit Preservation Information.

By Guest Writer | Wed, 15 Sep 2021

फलों को खराब होने से बचाने की तकनीक | फल एवं सब्जियों के रख रखाव की सम्पूर्ण जानकारी | Complete information about the maintenance of fruits and vegetables.

Wrapper made of composite paper to protect the fruit from spoilage

नई दिल्ली, 15 सितंबर (इंडिया साइंस वायर): इंस्टीट्यूट ऑफ नैनो साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी (आईएनएसटी), मोहाली के शोधकर्ताओं ने कार्बन पेपर विकसित किया है। फलों को खराब होने (कम्पोजिट) से बना एक मिश्रित (ग्राफीन ऑक्साइड) से बचाने के लिए इस पेपर को प्रिजर्वेटिव्स पर विकसित करने वाले से लैस किया गया है। कम्पोजिट पे (परिरक्षकों) शोधकर्ताओं का कहना है कि फलों की शेल्फ लाइफ बढ़ाने के लिए रैपर के रूप में इसका उपयोग किया जा सकता है।

फलों को परिरक्षित करने की डिपिंग तकनीक फल परि -रक्षण संबंधित जानकारी - Fruit Preservation Information

फलों को परीरक्षित करने की मौजूदा डिपिंग तकनीक में परिरक्षक, फल द्वारा सोख लिये जाते हैं, जिससे फलों के विषाक्त होने का खतरा रहता है। इसके विपरीतनया विकसित किया गया रैपर सिर्फ जरूरत पड़ने पर ही प्रिजर्वेटिव रिलीज करता है। इस रैपर की एक खासियत यह भी है कि इसका दोबारा उपयोग किया जा सकता है, जो फलों के परिरक्षण के लिए वर्तमान में प्रचलित तकनीक के साथ संभव नहीं है।

इस गैर-विषैले और पुन प्रयोग योग्य रैपिंग पेपर को विकसित करने के लिए शोधकर्ताओं ने कार्बन :मैट्रिक्स को परिरक्षक के साथ इनक्यूबेट किया है।

कमरे के तापमान में 24 घंटे के ऊष्मायन के बाद प्राप्त उत्पाद सेअतिरिक्त परिरक्षकों को हटाने के लिए उसे कई बार धोया गया, और अंत में, इस कार्बनपरिरक्षक कम्पोजिट को कागज में ढाला गया है।-

इस पेपर को विकसित करने वाले शोधकर्ताओं का कहना है कि यह नया उत्पाद फलों की शेल्फ लाइफ बढ़ाकर किसानों और खाद्य उद्योग को लाभ पहुँचा सकता है। उनका कहना है कि नये रैपर के उपयोग से फिनोल सामग्री में सुधार देखा गया है। फिनोल, कोल टार से प्राप्त होने वाला हल्का अम्लीय विषाक्त सफेद क्रिस्टलीय ठोस पदार्थ है, जिसका उपयोग रासायन निर्माण और घुलित रूप में एक कीटाणुनाशक के रूप में होता है। (तकार्बोलिक नाम के तह)

भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग से सम्बद्ध स्वायत्त संस्थान इंस्टीट्यूट ऑफ नैनो साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी के शोधक (आईएनएसटी)र्ताओं ने डॉविजयकुमार के नेतृत्व में यह अध्ययन किया है। शोधकर्ताओं की कोशिश .एस.पी . ऐसा विकल्प तलाश करने की थी एक, जो अपशिष्ट से विकसित हो सके, और जिससे फलों में परिरक्षकों के सोखने की समस्या न हो।

इस ग्राफीन फ्रूट रैपर के उत्पादन के लिए केवल बायोमास के ताप से उत्पादित कार्बन की आवश्यकता होती है।डॉ विजयकुमार ने कहा है कि प्त कार्बन सामग्री को भारी मात्रा में कार्बनिक अणुओं को धारण करने के लिए अपशिष्टों से प्रा" जाना जाता है, और इस तरह परिरक्षक भारित कार्बन तैयार किया गया है, और फलों के संरक्षण के लिए उसे कागज में ढाला गया है। कार्बनिक अणुओं को धारण करने के लिए कार्बन की क्षमता बढ़ाने से हमें इस उत्पाद को विकसित करने में मदद मिली है।"

फल जल्दी खराब हो जाते हैं; इसलिए उत्पादित होने वाले लगभग 50 प्रतिशत फल बर्बाद हो जाते हैं, जिससे भारी नुकसान होता है। पारंपरिक रूप से; फलों का संरक्षण राल, मोम, या खाद्य पॉलिमर के साथ परिरक्षकों की कोटिंग पर निर्भर करता है, जिससे स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं। शोधकर्ताओं का दावा है कि फलों के लिए इस रैपर का उपयोग करने से यह सुनिश्चित किया जा सकेगा कि ग्राहकों को बेहतर गुणवत्ता के फल मिल सकें।

केंद्रीय राज्य मंत्री त्रालय तथा पृथ्वी विज्ञान मंत्रालयविज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मं (स्वतंत्र प्रभार), राज्य मंत्री प्रधानमंत्री कार्यालय, कार्मिक, लोक शिकायत, पेंशन मंत्रालय, परमाणु ऊर्जा एवं अंतरिक्ष विभाग डॉ जितेंद्र सिंह ने अपने एक ट्वीट में कहा है कि कार्बन साथ फूड इंडस्ट्री -किसानों के साथ से बने मिश्रित कागज का लाभ बड़े पैमाने पर (ग्राफीन ऑक्साइड) (इंडिया साइंस वायर) को भी हो सकता है।

Topics: INST Mohali, Ministry of Science & Technology, DST, composite paper, carbon, graphene oxide, preservatives, shelf life, fruits, farmers, food industry, toxic

फलों को खराब होने से बचाएगा मिश्रित कागज से बना रैपर

16/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 16 सितंबर इंडिया)साइंस वायर(आईएनएसटी) इंस्टीट्यूट ऑफ नैनो साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी :(, मोहाली के शोधकर्ताओं ने कार्बन पेपर विकसित किया है। फलों को खराब होने से (कम्पोजिट) से बना एक मिश्रित (ग्राफीन ऑक्साइड) से लैस किया गया है (परिरक्षकों) बचाने के लिए इस पेपर को प्रिजर्वेटिव्स। कम्पोजिट पेपर विकसित करने वाले शोधकर्ताओं का कहना है कि फलों की शेल्फ लाइफ बढ़ाने के लिए रैपर के रूप में इसका उपयोग किया जा सकता है।

फलों को परीरक्षित करने की मौजूदा डिपिंग तकनीक में परिरक्षक, फल द्वारा सोख लिये जाते हैं, जिससे फलों के विषाक्त होने का खतरा रहता है। इसके विपरीत नया विकसित किया गया रैपर सिर्फ जरूरत पड़ने पर ही प्रिजर्वेटिव रिलीज करता है। इस

रैपर की एक खासियत यह भी है कि इसका दोबारा उपयोग किया जा सकता है, जो फलों के परिरक्षण के लिए वर्तमान में प्रचलित तकनीक के साथ संभव नहीं है।

इस गैरविषैले- और पुनने कार्बन मैट्रिक्स को परिरक्षक के प्रयोग योग्य रैपिंग पेपर को विकसित करने के लिए शोधकर्ताओं : साथ इनक्यूबेट किया है। कमरे के तापमान में24 घंटे के ऊष्मायन के बाद प्राप्त उत्पाद से अतिरिक्त परिरक्षकों को हटाने के लिए उसे कई बार धोया गया, और अंत में, इस कार्बनकसित परिरक्षक कम्पोजिट को कागज में ढाला गया है। इस पेपर को वि-करने वाले शोधकर्ताओं का कहना है कि यह नया उत्पाद फलों की शेल्फ लाइफ बढ़ाकर किसानों और खाद्य उद्योग को लाभ पहुँचा सकता है।

उनका कहना है कि नये रैपर के उपयोग से फिनोल सामग्री में सुधार देखा गया है। फिनोल, कोल टार से प्राप्त होने वाला हल्का अम्लीय विषाक्त सफेद क्रिस्टलीय ठोस पदार्थ है, जिसका उपयोग रासायन निर्माण और घुलित रूप में कार्बोलिक नाम के) एक कीटाणुनाशक के रूप में होता है। भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग से सम्बद्ध (तहत स्वायत्त संस्थान इंस्टीट्यूट ऑफ नैनो साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी विजयकुमार के नेतृत्व में यह अध्ययन .एस.पी .के शोधकर्ताओं ने डॉ (टीआईएनएस) किया है।

शोधकर्ताओं की कोशिश एक ऐसा विकल्प तलाश करने की थी, जो अपशिष्ट से विकसित हो सके, और जिससे फलों में परिरक्षकों के सोखने की समस्या न हो। इस ग्राफीन फ्रूट रैपर के उत्पादन के लिए केवल बायोमास के ताप से उत्पादित कार्बन की आवश्यकता होती है। डॉ विजयकुमार ने कहा है कि "अपशिष्टों से प्राप्त कार्बन सामग्री को भारी मात्रा में कार्बनिक अणुओं को धारण करने के लिए जाना जाता है, और इस तरह परिरक्षक भारित कार्बन तैयार किया गया है, और फलों के संरक्षण के लिए उसे कागज में ढाला गया है।

कार्बनिक अणुओं को धारण करने के लिए कार्बन की क्षमता बढ़ाने से हमें इस उत्पाद को विकसित करने में मदद मिली है।" फल जल्दी खराब हो जाते हैं; इसलिए उत्पादित होने वाले लगभग 50 प्रतिशत फल बर्बाद हो जाते हैं, जिससे भारी नुकसान होता है। पारंपरिक रूप से; फलों का संरक्षण राल, मोम, या खाद्य पॉलिमर के साथ परिरक्षकों की कोटिंग पर निर्भर करता है, जिससे स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं।

शोधकर्ताओं का दावा है कि फलों के लिए इस रैपर का उपयोग करने से यह सुनिश्चित किया जा सकेगा कि ग्राहकों को बेहतर गुणवत्ता के फल मिल सकें। केंद्रीय राज्य मंत्री विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय तथा पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय (स्वतंत्र प्रभार), राज्य मंत्री प्रधानमंत्री कार्यालय, कार्मिक, लोक शिकायत, पेंशन मंत्रालय, परमाणु ऊर्जा एवं अंतरिक्ष विभाग डॉ जितेंद्र सिंह ने अपने एक ट्वीट में कहा है कि कार्बन -से बने मिश्रित कागज का लाभ बड़े पैमाने पर किसानों के साथ (ग्राफीन ऑक्साइड) साथ फूड इंडस्ट्री को भी हो सकता है।

हेडेरा की गवर्निंग काउंसिल में शामिल हुआ आईआईटी मद्रास

16/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 16 सितंबर क्षेत्र में शोध एवं (डीएलटी) ब्लॉकचेन से जुड़ी डिस्ट्रिब्यूटेड लेजर तकनीक :(इंडिया साइंस वायर) अनुसंधानको बढ़ावा देने के उद्देश्य से भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास ने हेडेरा हैशग्राफ के साथ अपनी कड़ी (आईआईटी) जोड़ी है। हेडेरा हैशग्राफ को इस प्रकार की तकनीकों में महारत हासिल है और वह अपनी इस विशेषज्ञता के कारण वैश्विक स्तर प्रतिष्ठित है। उसके अनुभव से पर डीएलटी के मोर्चे पर आईआईटी मद्रास की राह और सुगम होगी।

हेडेरा हैशग्राफ की संचालन परिषद में कई विश्वविख्यात संस्थान जुड़े हुए हैं और अब इनमें आईआईटी (गवर्निंग काउंसिल) अपनी तकनीकी शिक्षा में हेडेर मद्रास का नाम भी शामिल हो गया है। इसके द्वारा आईआईटी मद्रासा के ईकोसिस्टम का लाभ उठाएगी। हेडेरा हैशग्राफ काउंसिल में अपने कार्यकाल का इस्तेमाल आईआईटी मद्रास डीएलटी क्षेत्र में शोध एवं विकास गतिविधियों को बढ़ावा देने में करेगी। विशेषकर हेडेरा कंसेंसस सर्विसेज और हेडेरा टोकन (आरएंडडी) जेस जैसी सेवाओं के माध्यमसर्विसे स्वयं को समुन्नत करेगी।

इस साझेदारी पर आईआईटी मद्रास में मैकेनिकल इंजीनियरिंग विभाग के प्रोफेसर प्रभु राजगोपाल बताते हैं -'हमने हेडेरा हैशग्राफ में व्याप्त विपुल संभावनाओं को चिन्हित किया है। यह पहले से बाजार में व्यापक रूप से मौजूद है और हम इस

साझेदारी से नए आयाम गढ़ने के लिए प्रतिबद्ध हैं। आईआईटी मद्रास अक्षय ऊर्जा, दूरसंचार, गैरविध्वंसक परीक्षण-, बायोमीट्रिक, स्वास्थ्य सेवाओं और सूचना एवं संचार तकनीकों के क्षेत्र में अग्रणी होने के साथ ही अपने प्रतिष्ठित अल्मुनाई समुदाय की वजह से विश्व स्तर पर जाना जाता है।’

प्रोमें रिमोट डायग्नोस्टिक्स के भी प्रमुख (सीएनडीई) राजगोपाल आईआईटी मद्रास में सेंटर फॉर नॉन डिस्ट्रक्टिव इवॉल्यूशन . -राजगोपाल ने आगे बताया .हैं। हेडेरा हैशग्राफ के साथ साझेदारी पर प्रो'कांउसिल के अन्य सदस्यों के लिए हम अपने व्यावहारिक एवं नवाचार तकनीकी समाधानों की विशेषज्ञता से अपना योगदान करेंगे। मैं खासतौर से हेल्थकेयर, उद्योग एवं डिजिटल मीडिया में अपनी ब्लॉकचेन आधारित तकनीकों के उपयोग के परीक्षण को लेकर उत्साहित हूं।’
प्रोस्केल डिजिट- होने वाले लार्जराजगोपाल के समूह की सेंसर लॉग्स से उत्पन्न .ल डेटासेट्स के सुरक्षाकरण में रुचि है।-

ब्रिटेन के प्रतिष्ठित लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एंड पॉलिटिकल साइंस की हेडेरा काउंसिल से जुड़ाव के कुछ दिन (एलएसई) बाद ही आईआईटी मद्रास भी काउंसिल का हिस्सा बना है। हेडेरा हैशग्राफ विकेंद्रीकृत अर्थव्यवस्था निर्माण केलिए सर्वाधिक उपयोग किया जाने वाला नेटवर्क है। बोइंग, एलजी, नोमुरा होल्डिंग्स, विप्रो, जईन ग्रुप, लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स, ड्यूश टेलीकॉम और टाटा कम्युनिकेशंस जैसे कई दिग्गज इस नेटवर्क के साथ जुड़े हैं। ये सभी संस्थान अपने अनुभवों और विशेषज्ञता से हेडेरा हैशग्राफ को समृद्ध करते हैं, जो डिस्ट्रब्यूटेड लेजर तकनीक में सक्रिय एक प्रमुख नेटवर्क है। यही तकनीक ब्लॉकचेन जैसे नवाचारों को आधार प्रदान करती है।

Voice of the Nation

ORGANISER

Antiretroviral Therapy effectively reduces HIV deaths: Study

WEBDESKSep 17, 2021, 08:39 AM IST

Key findings of the study demonstrated the high impact of antiretroviral therapy and showed that the chance of death was halved among people on ART after 5 Years of treatment.

New Delhi: HIV (Human Immunodeficiency Virus) is a virus that attacks the body's immune system. HIV causes AIDS (Acquired Immune Deficiency Syndrome) and interferes with the body's ability to fight infections. About HIV AIDS, it is believed that treatment can provide relief, but this condition cannot be cured. The treatment for HIV is called antiretroviral therapy (ART). ART involves taking a combination of HIV medicines (called an HIV treatment regimen) every day.

Antiretroviral Therapy (ART), the multidrug treatment for HIV infection, is provided free to adults and children living with HIV across India by the National AIDS Control Organisation (NACO), Government of India. A study by the Indian Council of Medical Research (ICMR) and NACO has found the Government of India's free ART program under the National AIDS Control Program to effectively reduce death and increase survival of patients living with HIV. It is revealed in a statement released by ICMR on Wednesday.

Key findings of the study demonstrated the high impact of antiretroviral therapy and showed that the chance of death was halved among people on ART after 5 Years of treatment. The

probability of tuberculosis was lower among persons on ART as compared to those not on ART. Cohorts of people who had initiated ART in 2012 and 2016 and continued taking treatment underwent viral load testing, and over 90% showed that the virus in their blood was adequately suppressed. Over 70% of beneficiaries of ART reported a 'good' or 'very good' quality of life overall, and 82% were productively employed.

This report presents the first national-level ART impact evaluation (ART-IE) of the Government of India's free ART programme under the National AIDS Control Programme (NACP), which was found to be very cost effective. This NACO-commissioned study evaluated the impact of NACP's ART programme on various parameters at 396 ART centres (ARTCs) across the country for the period 2012-2017.

Prof. Dr. Balram Bhargava; Secretary, Department of Health Research (Ministry of Health and Family Welfare), Govt. of India and Director General, ICMR, and Alok Saxena, Additional Secretary & Director General, NACO, released the report titled "Impact Evaluation of Antiretroviral Treatment, under the National AIDS Control Programme in India".

This nation-wide study was spearheaded by the ICMR-National AIDS Research Institute (ICMR-NARI) and was implemented through collaboration with five other institutes of the Indian Council of Medical Research (ICMR-National Institute of Epidemiology, ICMR-National Institute for Research in Tuberculosis, ICMR- National Institute of Cholera and Enteric Diseases, ICMR- National Institute Of Medical Statistics, ICMR- National Institute for Research in Environmental Health) and the Institute of Economic Growth, New Delhi.

The report provides programmatic directions to improve access to care and enhance prevention efforts. It helps guide research for future interventions needs, especially in emerging pockets of HIV infection in different parts of India.

Courtesy: India Science Wire

Antiretroviral therapy effectively reduces HIV deaths: Study

Key findings of the study demonstrated the high impact of antiretroviral therapy and showed that the chance of death was halved among people on ART after 5 Years of treatment

By **BioVoice News Desk** - September 17, 2021

New Delhi: HIV (Human Immunodeficiency Virus) is a virus that attacks the body's immune system. HIV causes AIDS (Acquired Immune Deficiency Syndrome) and interferes with the body's ability to fight infections. About HIV AIDS, it is believed that treatment can provide relief, but this condition cannot be cured. The treatment for HIV is called antiretroviral therapy (ART). ART involves taking a combination of HIV medicines (called an HIV treatment regimen) every day.

Antiretroviral Therapy (ART), the multidrug treatment for HIV infection, is provided free to adults and children living with HIV across India by the National AIDS Control Organisation (NACO), Government of India. A study by the Indian Council of Medical Research (ICMR) and NACO has found the Government of India's free ART program under the National AIDS Control Program to be effective in reducing death and increased survival of patients living with HIV. It is revealed in a statement released by ICMR on Wednesday.

Key findings of the study demonstrated the high impact of antiretroviral therapy and showed that the chance of death was halved among people on ART after 5 Years of treatment. The probability of Tuberculosis was lower among persons on ART as compared to those not on ART. Cohorts of people who had initiated ART in 2012 and 2016 and continued taking treatment, underwent viral load testing and over 90% showed that the virus in their blood was adequately suppressed. Over 70% of beneficiaries of ART reported a 'good' or 'very good' quality of life overall and 82% were productively employed.

This report presents the first national-level ART impact evaluation (ART-IE) of the Government of India's free ART programme under the National AIDS Control Programme (NACP) which was found to be very cost-effective. This NACO-commissioned study evaluated the impact of NACP's ART programme on various parameters at 396 ART centres (ARTCs) across the country for the period 2012-2017.

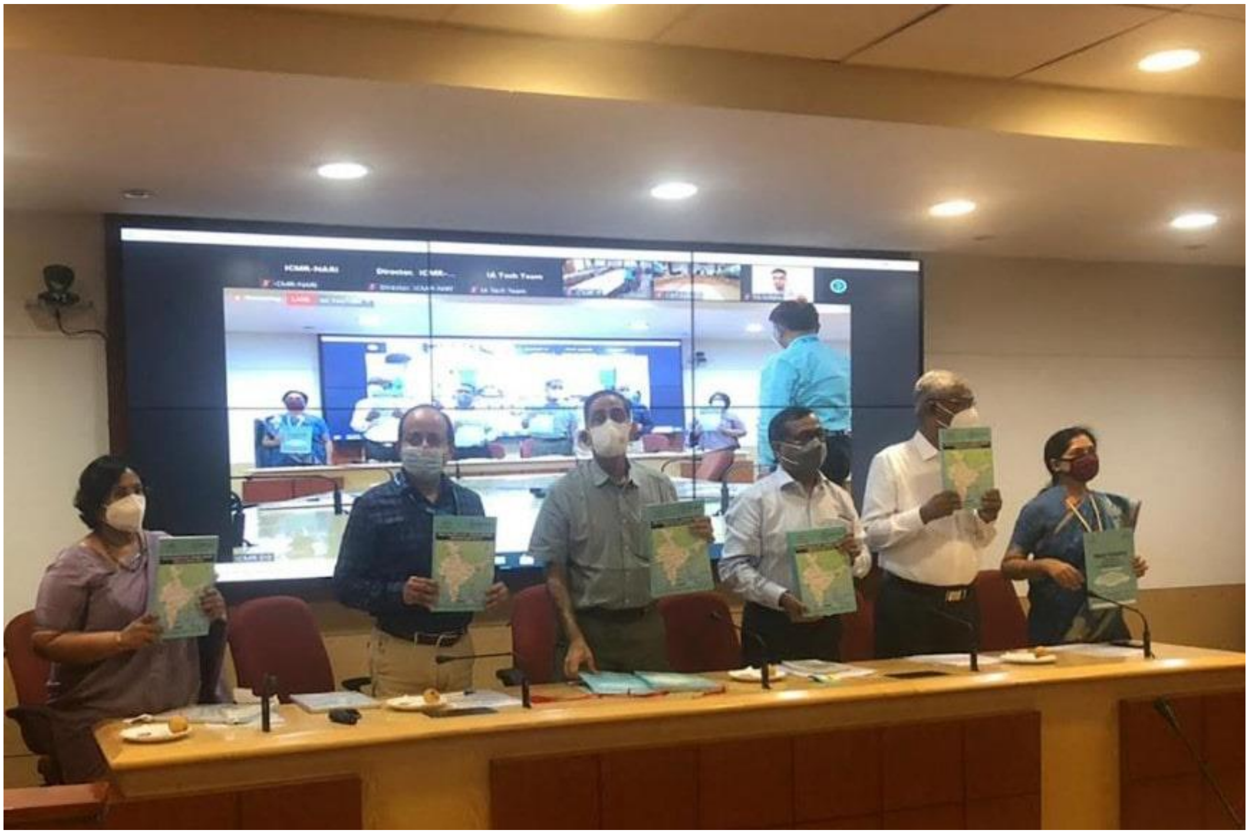

Report on Antiretroviral Treatment (ART) in HIV patients under NACO programme, released by ICMR on Wednesday (Photo: ICMR)

Prof. Dr. Balram Bhargava; Secretary, Department of Health Research (Ministry of Health and Family Welfare), Govt. of India and Director General, ICMR, and Alok Saxena, Additional Secretary & Director General, NACO released the report titled “Impact Evaluation of Antiretroviral Treatment, under the National AIDS Control Programme in India”.

This nation-wide study was spearheaded by the ICMR-National AIDS Research Institute (ICMR-NARI) and was implemented through collaboration with five other institutes of the Indian Council of Medical Research (ICMR-National Institute of Epidemiology, ICMR- National Institute for Research in Tuberculosis, ICMR- National Institute of Cholera and Enteric Diseases, ICMR- National Institute Of Medical Statistics, ICMR- National Institute for Research in Environmental Health) and the Institute of Economic Growth, New Delhi.

The report provides programmatic directions to improve access to care and enhance prevention efforts. It helps guide research for future interventions needs especially in emerging pockets of HIV infection in different parts of India.

(India Science Wire)

Antiretroviral Therapy effectively reduces HIV deaths: Study

RD Times Health | 2 weeks ago

Report on Antiretroviral Treatment (ART) in HIV patients under NACO programme, released by ICMR on Wednesday (Photo: ICMR)

New Delhi: HIV (Human Immunodeficiency Virus) is a virus that attacks the body's immune system. HIV causes AIDS (Acquired Immune Deficiency Syndrome) and interferes with the body's ability to fight infections. About HIV AIDS, it is believed that treatment can provide relief, but this condition cannot be cured. The treatment for HIV is called antiretroviral therapy (ART). ART involves taking a combination of HIV medicines (called an HIV treatment regimen) every day.

Antiretroviral Therapy (ART), the multidrug treatment for HIV infection, is provided free to adults and children living with HIV across India by the National AIDS Control

Organisation (NACO), Government of India. A study by the Indian Council of Medical Research (ICMR) and NACO has found the Government of India's free ART program under the National AIDS Control Program to be effective in reducing death and increased survival of patients living with HIV. It is revealed in a statement released by ICMR on Wednesday.

Key findings of the study demonstrated the high impact of antiretroviral therapy and showed that the chance of death was halved among people on ART after 5 Years of treatment. The probability of Tuberculosis was lower among persons on ART as compared to those not on ART. Cohorts of people who had initiated ART in 2012 and 2016 and continued taking treatment, underwent viral load testing and over 90% showed that the virus in their blood was adequately suppressed. Over 70% of beneficiaries of ART reported a 'good' or 'very good' quality of life overall and 82% were productively employed.

This report presents the first national-level ART impact evaluation (ART-IE) of the Government of India's free ART programme under the National AIDS Control Programme (NACP) which was found to be very cost-effective. This NACO-commissioned study evaluated the impact of NACP's ART programme on various parameters at 396 ART centres (ARTCs) across the country for the period 2012-2017.

Prof. Dr. Balram Bhargava; Secretary, Department of Health Research (Ministry of Health and Family Welfare), Govt. of India and Director General, ICMR, and Alok Saxena, Additional Secretary & Director General, NACO released the report titled "Impact Evaluation of Antiretroviral Treatment, under the National AIDS Control Programme in India".

This nation-wide study was spearheaded by the ICMR-National AIDS Research Institute (ICMR-NARI) and was implemented through collaboration with five other institutes of the Indian Council of Medical Research (ICMR-National Institute of Epidemiology, ICMR-National Institute for Research in Tuberculosis, ICMR- National Institute of Cholera and Enteric Diseases, ICMR- National Institute Of Medical Statistics, ICMR- National Institute for Research in Environmental Health) and the Institute of Economic Growth, New Delhi.

The report provides programmatic directions to improve access to care and enhance prevention efforts. It helps guide research for future interventions needs especially in emerging pockets of HIV infection in different parts of India. (India Science Wire)

Antiretroviral Therapy effectively reduces HIV deaths: Study

By **Rupesh Dharmik** - September 16, 2021

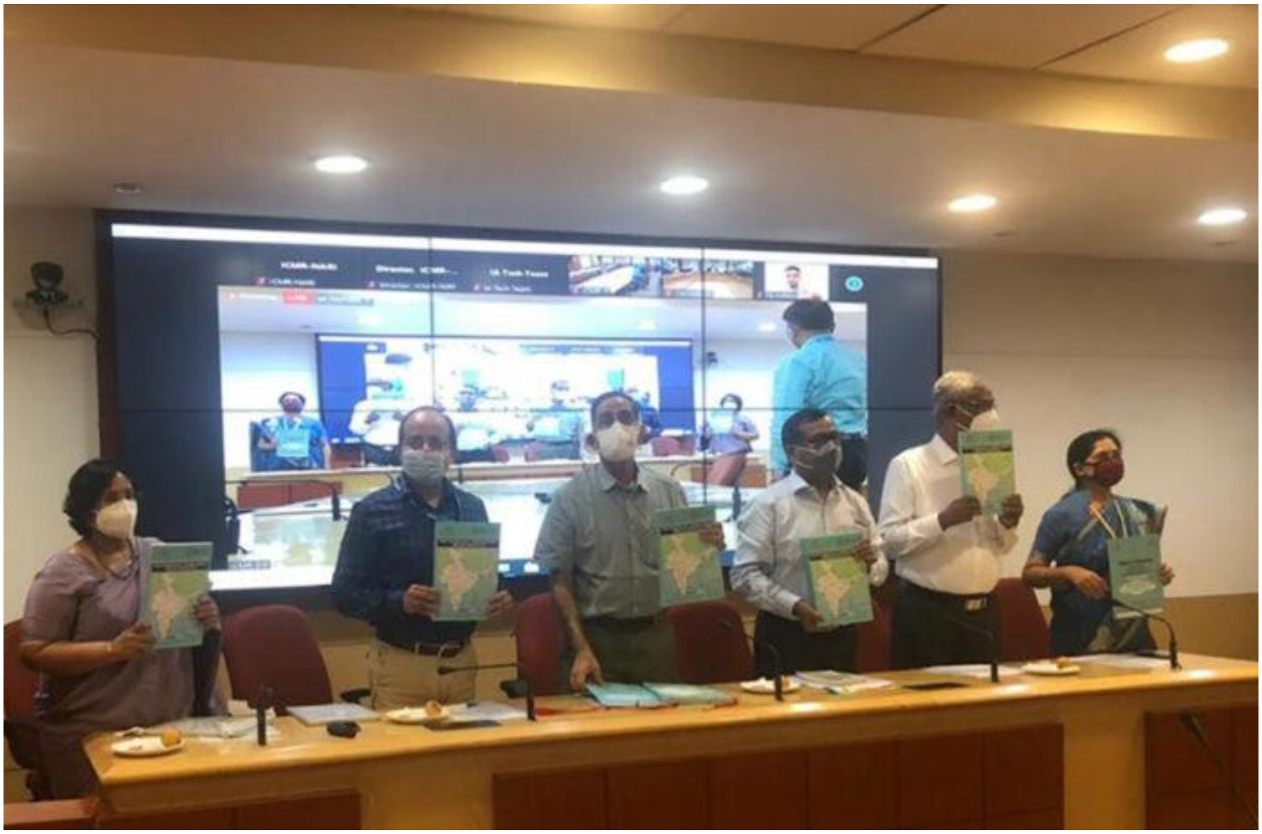

Report on Antiretroviral Treatment (ART) in HIV patients under NACO programme, released by ICMR on Wednesday (Photo: ICMR)

New Delhi: HIV (Human Immunodeficiency Virus) is a virus that attacks the body's immune system. HIV causes AIDS (Acquired Immune Deficiency Syndrome) and interferes with the body's ability to fight infections. About HIV AIDS, it is believed that treatment can provide relief, but this condition cannot be cured. The treatment for HIV is called antiretroviral therapy (ART). ART involves taking a combination of HIV medicines (called an HIV treatment regimen) every day.

Antiretroviral Therapy (ART), the multidrug treatment for HIV infection, is provided free to adults and children living with HIV across India by the

National AIDS Control Organisation (NACO), Government of India. A study by the Indian Council of Medical Research (ICMR) and NACO has found the Government of India's free ART program under the National AIDS Control Program to be effective in reducing death and increased survival of patients living with HIV. It is revealed in a statement released by ICMR on Wednesday.

Key findings of the study demonstrated the high impact of antiretroviral therapy and showed that the chance of death was halved among people on ART after 5 Years of treatment. The probability of Tuberculosis was lower among persons on ART as compared to those not on ART. Cohorts of people who had initiated ART in 2012 and 2016 and continued taking treatment, underwent viral load testing and over 90% showed that the virus in their blood was adequately suppressed. Over 70% of beneficiaries of ART reported a 'good' or 'very good' quality of life overall and 82% were productively employed.

This report presents the first national-level ART impact evaluation (ART-IE) of the Government of India's free ART programme under the National AIDS Control Programme (NACP) which was found to be very cost-effective. This NACO-commissioned study evaluated the impact of NACP's ART programme on various parameters at 396 ART centres (ARTCs) across the country for the period 2012-2017.

Prof. Dr. Balram Bhargava; Secretary, Department of Health Research (Ministry of Health and Family Welfare), Govt. of India and Director General, ICMR, and Alok Saxena, Additional Secretary & Director General, NACO released the report titled "Impact Evaluation of Antiretroviral Treatment, under the National AIDS Control Programme in India".

This nation-wide study was spearheaded by the ICMR-National AIDS Research Institute (ICMR-NARI) and was implemented through collaboration with five other institutes of the Indian Council of Medical Research (ICMR-National Institute of Epidemiology, ICMR- National Institute for Research in Tuberculosis, ICMR- National Institute of Cholera and Enteric Diseases, ICMR- National Institute Of Medical Statistics, ICMR- National Institute for Research in Environmental Health) and the Institute of Economic Growth, New Delhi.

The report provides programmatic directions to improve access to care and enhance prevention efforts. It helps guide research for future interventions needs especially in emerging pockets of HIV infection in different parts of India. (India Science Wire)

indianScoops

Antiretroviral Therapy effectively reduces HIV deaths: Study

September 16, 2021

Report on Antiretroviral Treatment (ART) in HIV patients under NACO programme, released by ICMR on Wednesday (Photo: ICMR)

New Delhi: HIV (Human Immunodeficiency Virus) is a virus that attacks the body's immune system. HIV causes AIDS (Acquired Immune Deficiency Syndrome) and interferes with the body's ability to fight infections. About HIV AIDS, it is believed that treatment can provide relief, but this condition cannot be cured. The treatment for HIV is called antiretroviral therapy (ART). ART involves taking a combination of HIV medicines (called an HIV treatment regimen) every day.

Antiretroviral Therapy (ART), the multidrug treatment for HIV infection, is provided free to adults and children living with HIV across India by the National AIDS Control

Organisation (NACO), Government of India. A study by the Indian Council of Medical Research (ICMR) and NACO has found the Government of India's free ART program under the National AIDS Control Program to be effective in reducing death and increased survival of patients living with HIV. It is revealed in a statement released by ICMR on Wednesday.

Key findings of the study demonstrated the high impact of antiretroviral therapy and showed that the chance of death was halved among people on ART after 5 Years of treatment. The probability of Tuberculosis was lower among persons on ART as compared to those not on ART. Cohorts of people who had initiated ART in 2012 and 2016 and continued taking treatment, underwent viral load testing and over 90% showed that the virus in their blood was adequately suppressed. Over 70% of beneficiaries of ART reported a 'good' or 'very good' quality of life overall and 82% were productively employed.

This report presents the first national-level ART impact evaluation (ART-IE) of the Government of India's free ART programme under the National AIDS Control Programme (NACP) which was found to be very cost-effective. This NACO-commissioned study evaluated the impact of NACP's ART programme on various parameters at 396 ART centres (ARTCs) across the country for the period 2012-2017.

Prof. Dr. Balram Bhargava; Secretary, Department of Health Research (Ministry of Health and Family Welfare), Govt. of India and Director General, ICMR, and Alok Saxena, Additional Secretary & Director General, NACO released the report titled "Impact Evaluation of Antiretroviral Treatment, under the National AIDS Control Programme in India".

This nation-wide study was spearheaded by the ICMR-National AIDS Research Institute (ICMR-NARI) and was implemented through collaboration with five other institutes of the Indian Council of Medical Research (ICMR-National Institute of Epidemiology, ICMR-National Institute for Research in Tuberculosis, ICMR- National Institute of Cholera and Enteric Diseases, ICMR- National Institute Of Medical Statistics, ICMR- National Institute for Research in Environmental Health) and the Institute of Economic Growth, New Delhi.

The report provides programmatic directions to improve access to care and enhance prevention efforts. It helps guide research for future interventions needs especially in emerging pockets of HIV infection in different parts of India. (India Science Wire)

RD TIMES Lifestyle

Antiretroviral Therapy effectively reduces HIV deaths: Study

RD Times Lifestyle | 2 weeks ago

Report on Antiretroviral Treatment (ART) in HIV patients under NACO programme, released by ICMR on Wednesday (Photo: ICMR)

New Delhi: HIV (Human Immunodeficiency Virus) is a virus that attacks the body's immune system. HIV causes AIDS (Acquired Immune Deficiency Syndrome) and interferes with the body's ability to fight infections. About HIV AIDS, it is believed that treatment can provide relief, but this condition cannot be cured. The treatment for HIV is called antiretroviral therapy (ART). ART involves taking a combination of HIV medicines (called an HIV treatment regimen) every day.

Antiretroviral Therapy (ART), the multidrug treatment for HIV infection, is provided free to adults and children living with HIV across India by the National AIDS Control Organisation (NACO), Government of India. A study by the Indian Council of Medical

Research (ICMR) and NACO has found the Government of India's free ART program under the National AIDS Control Program to be effective in reducing death and increased survival of patients living with HIV. It is revealed in a statement released by ICMR on Wednesday.

Key findings of the study demonstrated the high impact of antiretroviral therapy and showed that the chance of death was halved among people on ART after 5 Years of treatment. The probability of Tuberculosis was lower among persons on ART as compared to those not on ART. Cohorts of people who had initiated ART in 2012 and 2016 and continued taking treatment, underwent viral load testing and over 90% showed that the virus in their blood was adequately suppressed. Over 70% of beneficiaries of ART reported a 'good' or 'very good' quality of life overall and 82% were productively employed.

This report presents the first national-level ART impact evaluation (ART-IE) of the Government of India's free ART programme under the National AIDS Control Programme (NACP) which was found to be very cost-effective. This NACO-commissioned study evaluated the impact of NACP's ART programme on various parameters at 396 ART centres (ARTCs) across the country for the period 2012-2017.

Prof. Dr. Balram Bhargava; Secretary, Department of Health Research (Ministry of Health and Family Welfare), Govt. of India and Director General, ICMR, and Alok Saxena, Additional Secretary & Director General, NACO released the report titled "Impact Evaluation of Antiretroviral Treatment, under the National AIDS Control Programme in India".

This nation-wide study was spearheaded by the ICMR-National AIDS Research Institute (ICMR-NARI) and was implemented through collaboration with five other institutes of the Indian Council of Medical Research (ICMR-National Institute of Epidemiology, ICMR-National Institute for Research in Tuberculosis, ICMR- National Institute of Cholera and Enteric Diseases, ICMR- National Institute Of Medical Statistics, ICMR- National Institute for Research in Environmental Health) and the Institute of Economic Growth, New Delhi.

The report provides programmatic directions to improve access to care and enhance prevention efforts. It helps guide research for future interventions needs especially in emerging pockets of HIV infection in different parts of India. (India Science Wire)

Voice of the Nation
ORGANISER

Researchers develop low-carbon bricks for energy-efficient buildings

WEBDESK Sep 17, 2021, 07:46 AM IST

IISc researchers have devised a method for producing alkali-activated bricks/blocks by utilising fly ash and furnace slag.

New Delhi: Energy efficiency brings various benefits, including reducing greenhouse gas emissions, reducing demand for energy imports, and lowering costs on a household and economy-wide level. Emphasis is placed on energy-efficient design and construction of energy-efficient buildings without compromising the comfort of the occupants of such buildings. However, developing effective materials is needed for this purpose.

Researchers at the Indian Institute of Science (IISc), Bangalore, have developed a technology to produce energy-efficient walling materials using construction and demolition waste and alkali-activated binders. These are called low carbon bricks, do not require high-temperature firing, and avoid using high-energy materials such as Portland cement. The technology will also solve the

disposal problems associated with C&D waste mitigation, said the Ministry of Science & Technology statement, released on Thursday (September 16).

IISc researchers have devised a method for producing alkali-activated bricks/blocks by utilising fly ash and furnace slag. They developed low embodied carbon bricks from construction and demolition waste through an alkali activation process using fly ash and ground slag and characterising the thermal, structural, and durability characteristics of Low carbon bricks and their masonry.

After ascertaining the Physico-chemical and compaction characteristics of the construction and demolition waste, the optimum mix ratios of the materials were obtained. Then the production process was evolved to produce low carbon bricks. Based on the optimum binder proportions, the compressed bricks were manufactured. The bricks were examined for engineering characteristics.

The masonry units are manufactured either through the process of firing or using high-energy/embodied carbon binders, such as Portland cement. The annual consumption of bricks and blocks in India is about 900 million tonnes. Besides, the construction industry generates vast amounts (70–100 million tonnes per annum) of construction and demolition waste.

“To promote sustainable construction, two important issues need to be addressed while manufacturing the masonry units–conserving mined raw material resources and emission reduction, researchers,” said researchers.

“A start-up has been registered which will be functional within 6-9 months to manufacture low carbon bricks and blocks with the technical support from IISc. The start-up unit will act as a technology dissemination unit through training, capacity building, and providing technical know-how for establishing such commercial units across India,” remarked Prof. B V Venkatarama Reddy, IISc Bangalore.

Conventionally, building envelopes consist of masonry walls built with burnt clay bricks, concrete blocks, hollow clay blocks, fly ash bricks, lightweight blocks, and so on. The envelopes spend energy during their production, thus incurring carbon emission (i.e., possess embodied carbon) consume mined raw material resources which lead to unsustainable constructions.

The major beneficiary of this development undertaken by IISc, Bangalore, with funding from the Department of Science and Technology (DST), Govt. of India, is the construction industry in general and the building sector in particular. This technology will also mitigate the disposal problems associated with construction and demolition wastes.

Courtesy: India Science Wire

RDTIMES.in हिंदी

भवन निर्माण से जुड़े कचरे के निस्तारण की नई तकनीक

By RD Times Hindi | September 16, 2021

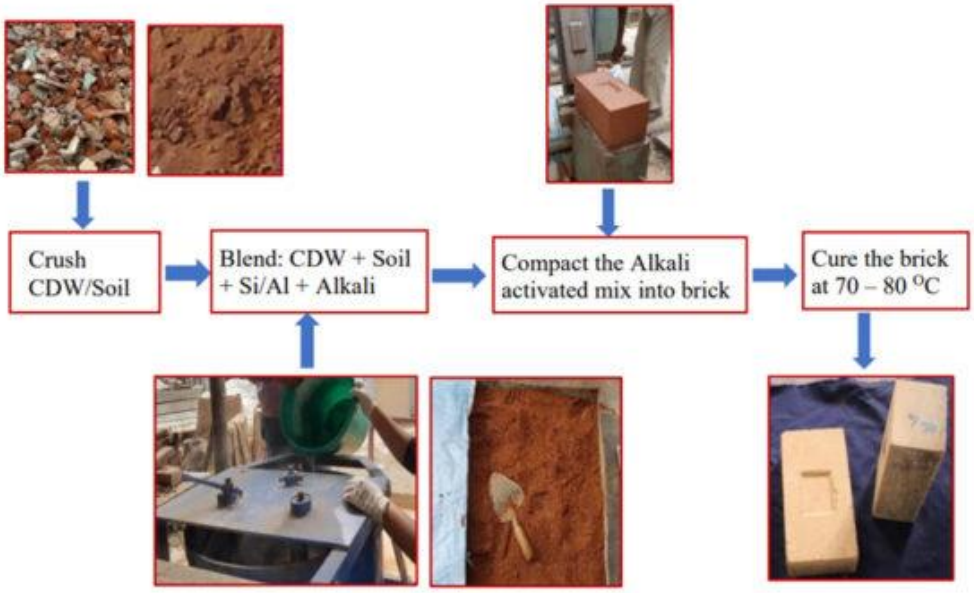

Low-C brick production

नई दिल्ली: भारतीय विज्ञान संस्थान के शोधकर्ताओं नेइमारत निर्माण के लिए एक अत्यंत सक्षम तकनीक विकसित की है। उन्होंने भवन निर्माण एवं भवनों को ढहाए जाने से मिलने वाली सामग्री और (सीएंडडी वेस्ट) एक्टिवेटेड बाइंडर्स से ईंट बनाने में सफलता प्राप्त की है।-एल्केलाई इन ईंटों का निर्माण ऊर्जा खपत के लिहाज से भी काफी किफायती है। इन्हें लोसी ब्रिक्स नाम दिया गया है-, जिन्हें पकाने के लिए उच्च तापमान वाली ऊष्मा की आवश्यकता नहीं। साथ ही इससे पोर्टलैंड सीमेंट जैसे हाईएनर्जी मैटीरियल पर पर निर्भरता घटेगी। - इस प्रकार यह तकनीक न केवल पर्यावरण के लिए अनुकूल है, बल्कि इससे भवन निर्माण में प्रयुक्त सामग्री अवशेष के निपटारे की समस्या से भी मुक्ति मिलेगी।

पारंपरिक रूप से भवन निर्माण में मिट्टी से बनी और चिमनी में पकाई गई ईंटों का प्रयोग होता है। इसमें किस्म-किस्म की ईंटों का चलन है। इस प्रकार की ईंटों के निर्माण में न केवल अधिक ऊर्जा लगती है, अपितु उनसे भारी मात्रा में कार्बन उत्सर्जन भी होता है। इस समूची प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर उत्खनन और कच्ची सामग्री का भी प्रयोग होता है, जिसके अपने दुष्प्रभाव होते हैं। उनसे होने वाले निर्माण में निरंतरता की अपनी एक समस्या होती है। भारत में ईंटों और ब्लॉकों की 90 करोड़ टन की वार्षिक खपत है। इसके अतिरिक्त भवन निर्माण उद्योग हर साल करीब 7 से 10 टन के दायरे में निर्माण के दौरान निकलने वालाकचरा शेष छोड़ता है। (सीडीडब्ल्यू) ऐसे में इस नई तकनीकसे जहा ं कच्चे माल के संरक्षण को बल मिलेगा, साथ ही कार्बन उत्सर्जन में भी कमी आएगी।

ऐसी सामग्री के विकास की राह आसान नहीं थी। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए आईआईएससी के वैज्ञानिकों ने फ्लाई ऐश और फर्नेस स्लैग का उपयोग कर एल्केलाईएक्टिवेटेड ईंट और ब्लॉक बनाने वाली तक-नीक विकसित की। शोधकर्ताओं ने एल्केलाई एक्टिवेशन प्रक्रिया के माध्यम से फ्लाई ऐश और ग्राउंड स्लैग की तापीय, ढांचागत और उनके टिकाऊपन से जुड़ी विशिष्टताओं को परखकर सीडीडब्ल्यू वेस्ट से कम कार्बन वाली ईंटें बनाने में सफलता प्राप्त की। सीडीडब्ल्यू की भौतिकरासा-यनिक एवं संघनन की विशिष्टताओं का आकलन कर अपेक्षित मिश्रण का आवश्यक अनुपात हासिल किया गया। इसके उपरांत कमकार्बन वाली ईंटों के निर्माण की -प्रक्रिया का पूरा खाका तैयार हुआ। इसी मिश्रण के आधार पर ईंटें बनाई गईं। तत्पश्चात ईंटों की आभियांत्रिकी व (इंजीनियरिंग)िशिष्टताएं परखी गईं।

आईआईएससी के इस प्रयास को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से वित्तीय मदद प्राप्त हुई। इस नवाचार को स्वच्छ ऊर्जा शोध पहल के अंतर्गत मूर्त रूप दिया गया है। देश में वन निर्माण उद्योग को इससे बड़ा लाभ मिलने की उम्मीद है वहीं इससे भवन निर्माण से जुड़े कचरे के निस्तारण की समस्या का समाधान भी हो जाएगा।

आईआईएससी के प्रोफेसर बीवी वेंकटरामा ने कहा, ‘इसके लिए एक स्टार्ट अप पंजीकृत कराया गया है, जिससे अगले छह से नौ महीनों में इन लो कार्बन ईंटों का उत्पादन शुरू हो जाएगा।’ (इंडिया साइंस वायर(

भारत हेराल्ड

भवन निर्माण से जुड़े कचरे के निस्तारण की नई तकनीक

2 weeks ago

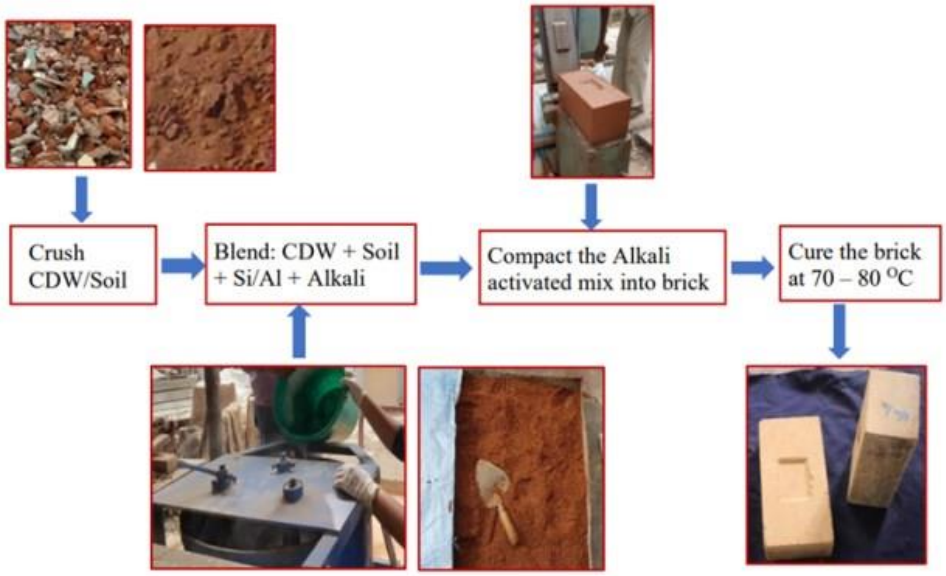

Low-C brick production

नई दिल्ली: भारतीय विज्ञान संस्थान के शोधकर्ताओं नेइमारत निर्माण के लिए एक अत्यंत सक्षम तकनीक विकसित की है। उन्होंने भवन निर्माण एवं भवनों को ढहाए जाने से मिलने वाली सामग्री और (वेस्ट सीएंडडी) लिहाज के खपत ऊर्जा निर्माण का ईंटों इन है। की प्राप्त सफलता में बनाने ईंट से बाइंडर्स एक्टिवेटेड-एल्केलाई है गया दिया नाम ब्रिक्स सी-लो इन्हें है। किफायती काफी भी से, जिन्हें पकाने के लिए उच्च तापमान वाली ऊष्मा की आवश्यकता नहीं। साथ ही इससे पोर्टलैंड सीमेंट जैसे हाई घटेगी। निर्भरता पर पर मैटीरियल एनर्जी- है अनुकूल लिए के पर्यावरण केवल न तकनीक यह प्रकार इस, बल्कि इससे भवन निर्माण में प्रयुक्त सामग्री अवशेष के निपटारे की समस्या से भी मुक्ति मिलेगी।

पारंपरिक रूप से भवन निर्माण में मिट्टी से बनी और चिमनी में पकाई गई ईंटों का प्रयोग होता है। इसमें किस्म- है लगती ऊर्जा अधिक केवल न में निर्माण के ईंटों की प्रकार इस है। चलन का ईंटों की किस्म, अपितु उनसे भारी मात्रा में कार्बन उत्सर्जन भी होता है। इस समूची प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर उत्खनन और कच्ची सामग्री का भी

प्रयोग होता है, जिसके अपने दुष्प्रभाव होते हैं। उनसे होने वाले निर्माण में निरंतरता की अपनी एक समस्या होती है। भारत में ईंटों और ब्लॉकों की 90 करोड़ टन की वार्षिक खपत है। इसके अतिरिक्त भवन निर्माण उद्योग हर साल करीब 7 से 10 टन के दायरे में निर्माण के दौरान निकलने वालाकचरा है। छोड़ता शेष(सीडीडब्ल्यू) के माल कच्चे जहां तकनीकसे नई इस में ऐसे संरक्षण को बल मिलेगा, साथ ही कार्बन उत्सर्जन में भी कमी आएगी।

ऐसी सामग्री के विकास की राह आसान नहीं थी। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए आईआईएससी के वैज्ञानिकों ने फ्लाई ऐश और फर्नेस स्लैग का उपयोग कर एल्केलाई विकसित तकनीक वाली बनाने ब्लॉक और ईंट एक्टिवेटेड-तापीय की स्लैग ग्राउंड और ऐश फ्लाई से माध्यम के प्रक्रिया एक्टिवेशन एल्केलाई ने शोधकर्ताओं की।, ढांचागत और उनके टिकाऊपन से जुड़ी विशिष्टताओं को परखकर सीडीडब्ल्यू वेस्ट से कम कार्बन वाली ईंटें बनाने में सफलता प्राप्त की। सीडीडब्ल्यू की भौतिक कर आकलन का विशिष्टताओं की संघनन एवं रासायनिक-की निर्माण के ईंटों वाली कार्बन-कम उपरांत इसके गया। किया हासिल अनुपात आवश्यक का मिश्रण अपेक्षित हुआ। तैयार खाका पूरा का प्रक्रिया इसी मिश्रण के आधार पर ईंटें बनाई गईं। तत्पश्चात ईंटों की आभियांत्रिकी गईं। परखी विशिष्टताएं (इंजीनियरिंग)

आईआईएससी के इस प्रयास को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से वित्तीय मदद प्राप्त हुई। इस नवाचार को स्वच्छ ऊर्जा शोध पहल के अंतर्गत मूर्त रूप दिया गया है। देश में वन निर्माण उद्योग को इससे बड़ा लाभ मिलने की उम्मीद है वहीं इससे भवन निर्माण से जुड़े कचरे के निस्तारण की समस्या का समाधान भी हो जाएगा।

आईआईएससी के प्रोफेसर बीवी वेंकटरामा ने कहा, 'इसके लिए एक स्टार्ट अप पंजीकृत कराया गया है, जिससे अगले छह से नौ महीनों में इन लो कार्बन ईंटों का उत्पादन शुरू हो जाएगा।' (इंडिया साइंस वायर(

दी इंडियनबुलेटिन

भवन निर्माण से जुड़े कचरे के निस्तारण की नई तकनीक

1 week ago

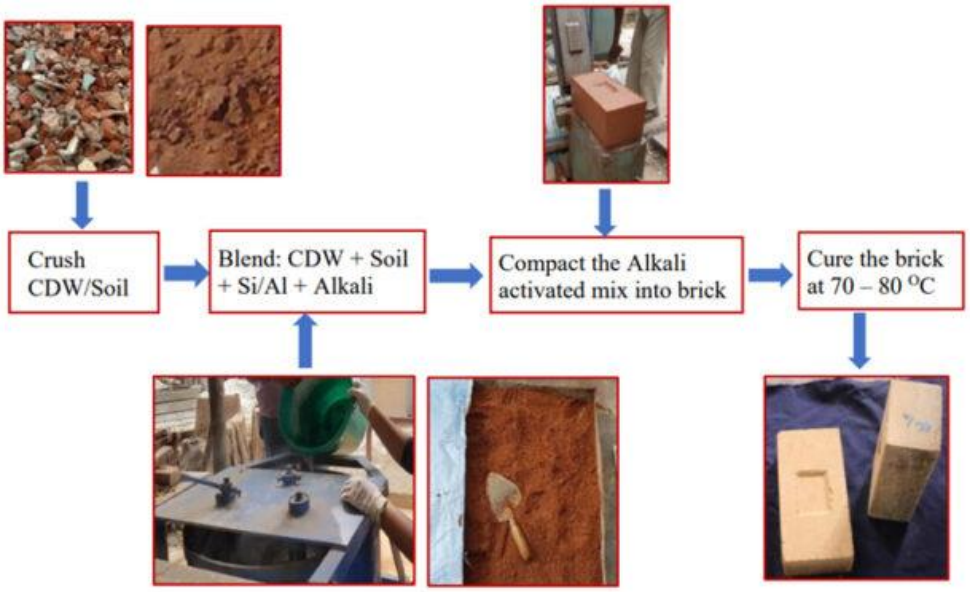

Low-C brick production

नई दिल्ली: भारतीय विज्ञान संस्थान के शोधकर्ताओं नेइमारत निर्माण के लिए एक अत्यंत सक्षम तकनीक विकसित की है। उन्होंने भवन निर्माण एवं भवनों को ढहाए जाने से मिलने वाली सामग्री और (वेस्ट सीएंडडी) लिहाज के खपत ऊर्जा निर्माण का ईंटों इन है। की प्राप्त सफलता में बनाने ईंट से बाइंडर्स एक्टिवेटेड-एल्केलाई दि नाम ब्रिक्स सी-लो इन्हें है। किफायती काफी भी सेया गया है, जिन्हें पकाने के लिए उच्च तापमान वाली ऊष्मा की आवश्यकता नहीं। साथ ही इससे पोर्टलैंड सीमेंट जैसे हाई घटेगी। निर्भरता पर पर मैटीरियल एनर्जी-है अनुकूल लिए के पर्यावरण केवल न तकनीक यह प्रकार इस, बल्कि इससे भवन निर्माण में प्रयुक्त सामग्री अवशेष के निपटारे की समस्या से भी मुक्ति मिलेगी।

पारंपरिक रूप से भवन निर्माण में मिट्टी से बनी और चिमनी में पकाई गई ईंटों का प्रयोग होता है। इसमें किस्म-है लगती ऊर्जा अधिक केवल न में निर्माण के ईंटों की रप्रका इस है। चलन का ईंटों की किस्म, अपितु उनसे भारी

मात्रा में कार्बन उत्सर्जन भी होता है। इस समूची प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर उत्खनन और कच्ची सामग्री का भी प्रयोग होता है, जिसके अपने दुष्प्रभाव होते हैं। उनसे होने वाले निर्माण में निरंतरता की अपनी एक समस्या होती है। भारत में ईंटों और ब्लॉकों की 90 करोड़ टन की वार्षिक खपत है। इसके अतिरिक्त भवन निर्माण उद्योग हर साल करीब 7 से 10 टन के दायरे में निर्माण के दौरान निकलने वालाकचरा है। छोड़ता शेष(सीडीडब्ल्यू) मिलेगा बल को संरक्षण के लमा कच्चे जहां तकनीकसे नई इस में ऐसे, साथ ही कार्बन उत्सर्जन में भी कमी आएगी।

ऐसी सामग्री के विकास की राह आसान नहीं थी। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए आईआईएससी के वैज्ञानिकों ने फ्लाई ऐश और फर्नेस स्लैग का उपयोग कर एल्केलाई तविकसि तकनीक वाली बनाने ब्लॉक और ईंट एक्टिवेटेड-ग्राउंड और ऐश फ्लाई से माध्यम के प्रक्रिया एक्टिवेशन एल्केलाई ने शोधकर्ताओं की। स्लैग की तापीय, ढांचागत और उनके टिकाऊपन से जुड़ी विशिष्टताओं को परखकर सीडीडब्ल्यू वेस्ट से कम कार्बन वाली ईंटें बनाने में सफलता प्राप्त की। सीडीडब्ल्यू की भौतिक कर आकलन का विशिष्टताओं की संघनन एवं रासायनिक- गया। किया हासिल अनुपात आवश्यक का मिश्रण अपेक्षितइसके उपरांत कम की निर्माण के ईंटों वाली कार्बन-आभियांत्रिकी की ईंटों तत्पश्चात गईं। बनाई ईंटें पर आधार के मिश्रण इसी हुआ। तैयार खाका पूरा का प्रक्रिया गईं। परखी विशिष्टताएं (इंजीनियरिंग)

आईआईएससी के इस प्रयास को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से वित्तीय मदद प्राप्त हुई। इस नवाचार को स्वच्छ ऊर्जा शोध पहल के अंतर्गत मूर्त रूप दिया गया है। देश में वन निर्माण उद्योग को इससे बड़ा लाभ मिलने की उम्मीद है वहीं इससे भवन निर्माण से जुड़े कचरे के निस्तारण की समस्या का समाधान भी हो जाएगा।

आईआईएससी के प्रोफेसर बीवी वेंकटरामा ने कहा, 'इसके लिए एक स्टार्ट अप पंजीकृत कराया गया है, जिससे अगले छह से नौ महीनों में इन लो कार्बन ईंटों का उत्पादन शुरू हो जाएगा।' (इंडिया साइंस वायर(

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

भवन निर्माण से जुड़े कचरे के निस्तारण की नई तकनीक

By **Rupesh Dharmik** - September 16, 2021

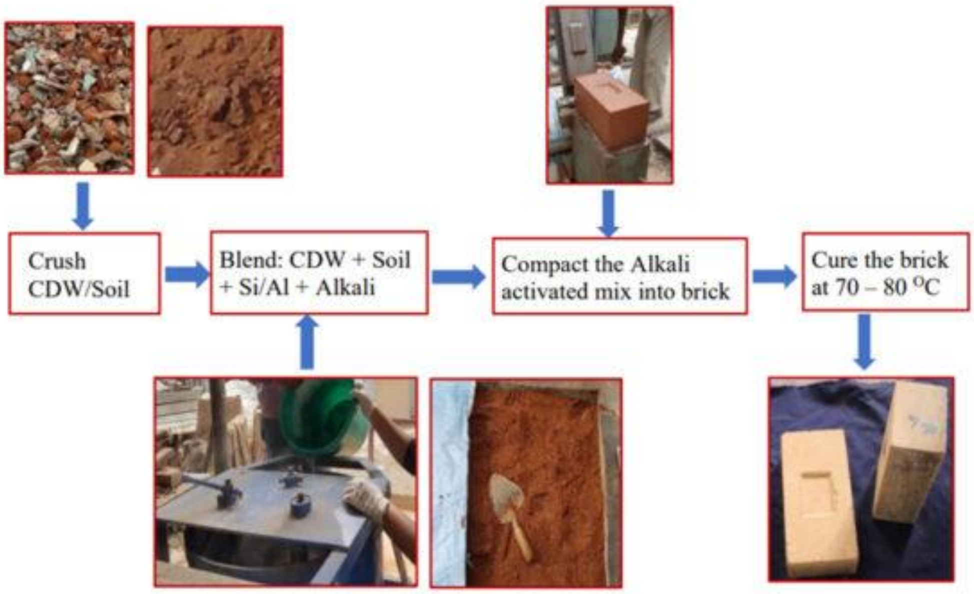

Low-C brick production

नई दिल्ली: भारतीय विज्ञान संस्थान के शोधकर्ताओं नेइमारत निर्माण के लिए एक अत्यंत सक्षम तकनीक विकसित की है। उन्होंने भवन निर्माण एवं भवनों को ढहाए जाने से मिलने वाली सामग्री और (सीएंडडी वेस्ट) का निर्माण ऊर्जा खपत के लिहाज एक्टिवेटेड बाइंडर्स से ईंट बनाने में सफलता प्राप्त की है। इन ईंटों-एल्केलाई सी ब्रिक्स नाम दिया गया है-से भी काफी किफायती है। इन्हें लो, जिन्हें पकाने के लिए उच्च तापमान वाली ऊष्मा की आवश्यकता नहीं। साथ ही इससे पोर्टलैंड सीमेंट जैसे हाईएनर्जी मैटीरियल पर पर निर्भरता घटेगी। -पर्यावरण के लिए अनुकूल है इस प्रकार यह तकनीक न केवल, बल्कि इससे भवन निर्माण में प्रयुक्त सामग्री अवशेष के निपटारे की समस्या से भी मुक्ति मिलेगी।

पारंपरिक रूप से भवन निर्माण में मिट्टी से बनी और चिमनी में पकाई गई ईंटों का प्रयोग होता है। इसमें किस्म-र की ईंटों के निर्माण में न केवल अधिक ऊर्जा लगती हैकिस्म की ईंटों का चलन है। इस प्रका, अपितु उनसे भारी मात्रा में कार्बन उत्सर्जन भी होता है। इस समूची प्रक्रिया में बड़े पैमाने पर उत्खनन और कच्ची सामग्री का भी प्रयोग होता है, जिसके अपने दुष्प्रभाव होते हैं। उनसे होने वाले निर्माण में निरंतरता की अपनी एक समस्या होती है। भारत में ईंटों और ब्लॉकों की 90 करोड़ टन की वार्षिक खपत है। इसके अतिरिक्त भवन निर्माण उद्योग हर साल करीब 7 से 10 टन के दायरे में निर्माण के दौरान निकलने वालाकचरा शेष छोड़ता है। (सीडीडब्ल्यू) ल के संरक्षण को बल मिलेगाऐसे में इस नई तकनीकसे जहां कच्चे मा, साथ ही कार्बन उत्सर्जन में भी कमी आएगी।

ऐसी सामग्री के विकास की राह आसान नहीं थी। इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए आईआईएससी के वैज्ञानिकों ने फ्लाई ऐश और फर्नेस स्लैग का उपयोग कर एल्केलाईत एक्टिवेटेड ईंट और ब्लॉक बनाने वाली तकनीक विकसि-की। शोधकर्ताओं ने एल्केलाई एक्टिवेशन प्रक्रिया के माध्यम से फ्लाई ऐश और ग्राउंड स्लैग की तापीय, ढांचागत और उनके टिकाऊपन से जुड़ी विशिष्टताओं को परखकर सीडीडब्ल्यू वेस्ट से कम कार्बन वाली ईंटें बनाने में सफलता प्राप्त की। सीडीडब्ल्यू की भौतिकसंघनन की विशिष्टताओं का आकलन कर रासायनिक एवं-कार्बन वाली ईंटों के निर्माण की -अपेक्षित मिश्रण का आवश्यक अनुपात हासिल किया गया। इसके उपरांत कम प्रक्रिया का पूरा खाका तैयार हुआ। इसी मिश्रण के आधार पर ईंटें बनाई गईं। तत्पश्चात ईंटों की आभियांत्रिकी परखी गईं। विशिष्टताएं (इंजीनियरिंग)

आईआईएससी के इस प्रयास को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की ओर से वित्तीय मदद प्राप्त हुई। इस नवाचार को स्वच्छ ऊर्जा शोध पहल के अंतर्गत मूर्त रूप दिया गया है। देश में वन निर्माण उद्योग को इससे बड़ा लाभ मिलने की उम्मीद है वहीं इससे भवन निर्माण से जुड़े कचरे के निस्तारण की समस्या का समाधान भी हो जाएगा।

आईआईएससी के प्रोफेसर बीवी वेंकटरामा ने कहा, 'इसके लिए एक स्टार्ट अप पंजीकृत कराया गया है, जिससे अगले छह से नौ महीनों में इन लो कार्बन ईंटों का उत्पादन शुरू हो जाएगा।' (इंडिया साइंस वायर(

Voice of the Nation
ORGANISER

Call for reforms in ease of doing science

WEBDESK Sep 18, 2021, 08:48 AM IST

CII launched a report titled "Taking India's Life Sciences to the Global Stage- "Make in India" to fuel 4x growth in Biosimilars and Vaccines by 2026."

New Delhi: Principal Scientific Adviser, Government of India, Prof. K Vijay Raghavan, has called for reforms in the space of ease of doing science, regulation, university functioning in research, and industry-academia linkages and stressed the need to connect the lab ecosystem to industry and bring research into the broader ecosystem.

Inaugurating the third edition of `Life Sciences Conclave' organised by the Confederation of Indian Industry (CII), he expressed confidence that India's population, its network of labs, and the fundamental simplicity of research that is undertaken in the country will help it grow as compared to similarly placed countries. "There is an extraordinary desire to do high-end research that is globally competitive, and the industry has no shortage of capital but a shortage of risk capital", he added.

Secretary, Department of Biotechnology & Department of Science and Technology, Ministry of Science & Technology, Dr. Renu Swarup, said that India has been able to see breakthroughs in silos, and the boundaries have gotten blurred between academia, industry, and startups. "Moving

ahead, India will not just be the pharmacy of the world but also the research lab of the world," said Dr. Swarup.

She called for creating an industry strategised research partnership platform intending to encourage new IP generation and new innovative research and for greater industry collaborations with academia and startups. She noted that the bio-strategy document was in place that will lead India to become a USD 150 billion market by 2025. "Our focus should be on achieving scalability that is matched with sustainability," she added.

On the occasion, CII launched a report titled "Taking India's Life Sciences to the Global Stage- "Make in India" to fuel 4x growth in Biosimilars and Vaccines by 2026." The report maps out the measures needed to grow the biosimilars market from USD 550 million to USD 5-6 billion and accelerate vaccines from USD 2 billion to USD 4-5 billion.

Executive Chairperson & Founder Biocon, Dr. Kiran Mazumdar Shaw, called for building a biotech sector that is truly vertically integrated and said that access to the supply chain for reusables, reagents in biologics and manufacturing was imperative, and India needed to indigenise a lot of these requirements so that there were no supply chain disruptions.

Chairman & Managing Director, Bharat Biotech International Limited, Dr. Krishna Ella, emphasised the need for clinical trial centres across the country and to forge partnerships with countries worldwide, especially in South East Asia, Africa, and Latin America.
Chairman, CII National Biotechnology Committee and Managing Director, Panacea Biotec, Dr. Rajesh Jain, and Vice Chairman, CII National Committee on Pharmaceuticals and Managing Director & GM EPD – Abbott Specialty Care, Abbott Healthcare Private Limited, Mr. Vivek Kamath, called for greater support to the biotech industry in the country.

Courtesy: India Science Wire

Call for reforms in ease of doing science

by India Science Wire September 18, 2021 in Indian Sciences

Principal Scientific Adviser, Government of India, Prof. K Vijay Raghavan has called for reforms in the space of ease of doing science, regulation, university functioning in research, and industry-academia linkages and stressed the need to connect the lab ecosystem to industry and bring research into the broader ecosystem.

Inaugurating the third edition of `Life Sciences Conclave' organised by the Confederation of Indian Industry (CII), he expressed confidence that India's population, its network of labs, and the fundamental simplicity of research that is undertaken in the country will help it grow as compared to similarly placed countries. "There is an extraordinary desire to do high-end research that is globally competitive, and the industry has no shortage of capital but a shortage of risk capital", he added.

Secretary, Department of Biotechnology & Department of Science and Technology, Ministry of Science & Technology, Dr. Renu Swarup, said that India has been able to see breakthroughs in silos and the boundaries have gotten

blurred between academia, industry, and startups. “Moving ahead, India will not just be the pharmacy of the world but also the research lab of the world,” said Dr. Swarup.

She called for the creation of an industry strategized research partnership platform intending to encourage new IP generation and new innovative research and for greater industry collaborations with both academia and startups. She noted that the bio-strategy document was in place that will lead India to become a USD 150 billion market by 2025. “Our focus should be on achieving scalability that is matched with sustainability”, she added.

On the occasion, CII launched a report titled “Taking India’s Life Sciences to the Global Stage – “Make in India” to fuel 4x growth in Biosimilars and Vaccines by 2026.” The report maps out the measures needed for growing the biosimilars market from USD 550 million to USD 5-6 billion, and accelerating vaccines from USD 2 billion to USD 4-5 billion.

Executive Chairperson & Founder Biocon, Dr. Kiran Mazumdar Shaw, called for building a biotech sector that is truly vertically integrated and said that access to the supply chain for reusables, reagents in biologics and manufacturing was imperative, and India needed to indigenize a lot of these requirements, so that there were no supply chain disruptions.

Chairman & Managing Director, Bharat Biotech International Limited, Dr. Krishna Ella, emphasised the need for clinical trial centers across the country and to forge partnerships with countries all over the world especially in South East Asia, Africa, and Latin America.

Chairman, CII National Biotechnology Committee and Managing Director, Panacea Biotec, Dr. Rajesh Jain, and Vice Chairman, CII National Committee on Pharmaceuticals and Managing Director & GM EPD – Abbott Specialty Care, Abbott Healthcare Private Limited, Mr. Vivek Kamath, called for greater support to the biotech industry in the country.

Republic NewsIndia

Jurassic-age shark's teeth discovered from Jaisalmer basin

By **Rupesh Dharmik** - September 17, 2021

Hybodont shark teeth (Strophodusjaisalmerensis), from Jaisalmer Formation, Jaisalmer, Rajasthan.

New Delhi: In a rare discovery, researchers have found evidence of a new species of an extinct group of sharks called hybodont from the deserts of Jaisalmer in Rajasthan. They found the teeth of the shark species in ancient rocks that were dated between 160 and 168 million years ago.

Hybodont was a dominant group of fishes in both marine and fluvial environments during the Triassic period and early Jurassic times (252-174 million years ago). They, however, started to decline in marine environments from the Middle Jurassic period (174-163 million years ago) onwards until they formed a relatively minor component of open-marine shark assemblages. They finally became extinct at the end of the Cretaceous time 65 million years ago.

Significantly, the newly discovered fossil was found to belong to the genus Strophodus. It is the first time a species belonging to the genus Strophodus has been identified from the Indian subcontinent. Further, it is only the third such record from Asia – the other two being from Japan and Thailand.

The research team has named it *Strophodusjaisalmerensis after the location where it was found*. It has recently been included in the Shark references.com, an international platform operating in association with several global organisations including the International Union for Conservation of Nature (IUCN), and Species Survival Commission (SSC).

This discovery marks an important milestone in the study of Jurassic vertebrate fossils in the Jaisalmer region of Rajasthan, and it opens a new window for further research in the domain of vertebrate fossils.

The fossil, which is of crushing teeth, was found by a team of officers of the Jaipur-based Western Region office of the Geological Survey of India (GSI). It comprised Krishna Kumar, Pragya Pandey, Triparna Ghosh, and Debasish Bhattacharya. They have published a report on their finding in Historical Biology, a Journal of Palaeontology of International repute, in its August 2021 issue. Dr Sunil Bajpai, Head of the Department, Department of Earth Sciences, Indian Institute of Technology-Roorkee, who is a co-author of this publication, played a significant role in the identification and documentation of this important discovery.

The Geological Survey of India was set up in 1851 primarily to find coal deposits for the Railways. Over the years, it has not only grown into a repository of geo-science information required in various fields in the country but has also attained the status of a geo-scientific organisation of international repute. Its main functions relate to creating and updating national geoscientific information and mineral resource assessment. These objectives are achieved through ground surveys, air-borne and marine surveys, mineral prospecting and investigations, multi-disciplinary geoscientific, geo-technical, geo-environmental and natural hazards studies, glaciology, seismic tectonic study, and carrying out fundamental research.

GSI’s core competence in survey and mapping is continuously enhanced through accretion, management, coordination and utilization of spatial databases (including those acquired through remote sensing). GSI uses the latest computer-based technologies for the dissemination of geoscientific information and spatial data, through cooperation and collaboration with other stakeholders in the Geo-informatics sector. (India Science Wire)

RD TIMES.in

Jurassic-age shark's teeth discovered from Jaisalmer basin

By **RD Times Online** - September 17, 2021

Hybodont shark teeth (Strophodusjaisalmerensis), from Jaisalmer Formation, Jaisalmer, Rajasthan.

New Delhi: In a rare discovery, researchers have found evidence of a new species of an extinct group of sharks called hybodont from the deserts of Jaisalmer in Rajasthan. They found the teeth of the shark species in ancient rocks that were dated between 160 and 168 million years ago.

Hybodont was a dominant group of fishes in both marine and fluvial environments during the Triassic period and early Jurassic times (252-174 million years ago). They, however, started to decline in marine environments from the Middle Jurassic period (174-163 million years ago) onwards until they formed a relatively minor component of open-marine shark assemblages. They finally became extinct at the end of the Cretaceous time 65 million years ago.

Significantly, the newly discovered fossil was found to belong to the genus Strophodus. It is the first time a species belonging to the genus Strophodus has been identified from the Indian subcontinent. Further, it is only the third such record from Asia – the other two being from Japan and Thailand.

The research team has named it *Strophodusjaisalmerensis after the location where it was found*. It has recently been included in the Shark references.com, an international platform operating in association with several global organisations including the International Union for Conservation of Nature (IUCN), and Species Survival Commission (SSC).

This discovery marks an important milestone in the study of Jurassic vertebrate fossils in the Jaisalmer region of Rajasthan, and it opens a new window for further research in the domain of vertebrate fossils.

The fossil, which is of crushing teeth, was found by a team of officers of the Jaipur-based Western Region office of the Geological Survey of India (GSI). It comprised Krishna Kumar, Pragya Pandey, Triparna Ghosh, and Debasish Bhattacharya. They have published a report on their finding in Historical Biology, a Journal of Palaeontology of International repute, in its August 2021 issue. Dr Sunil Bajpai, Head of the Department, Department of Earth Sciences, Indian Institute of Technology-Roorkee, who is a co-author of this publication, played a significant role in the identification and documentation of this important discovery.

The Geological Survey of India was set up in 1851 primarily to find coal deposits for the Railways. Over the years, it has not only grown into a repository of geo-science information required in various fields in the country but has also attained the status of a geo-scientific organisation of international repute. Its main functions relate to creating and updating national geoscientific information and mineral resource assessment. These objectives are achieved through ground surveys, air-borne and marine surveys, mineral prospecting and investigations, multi-disciplinary geoscientific, geo-technical, geo-environmental and natural hazards studies, glaciology, seismic tectonic study, and carrying out fundamental research.

GSI’s core competence in survey and mapping is continuously enhanced through accretion, management, coordination and utilization of spatial databases (including those acquired through remote sensing). GSI uses the latest computer-based technologies for the dissemination of geoscientific information and spatial data, through cooperation and collaboration with other stakeholders in the Geo-informatics sector. (India Science Wire)

Voice of the Nation
ORGANISER

Jurassic-age shark's teeth discovered from Jaisalmer basin

WEBDESK Sep 18, 2021, 08:15 AM IST

Hybodont shark teeth (Strophodusjaisalmerensis), from Jaisalmer Formation, Jaisalmer, Rajasthan

It is the first time a species belonging to the genus Strophodus has been identified from the Indian subcontinent, only the third such record from Asia - the other two being from Japan and Thailand.

New Delhi, Sep 17 (): In a rare discovery, researchers have found evidence of a new species of an extinct group of sharks called hybodont from the deserts of Jaisalmer in Rajasthan. They found the shark species' teeth in ancient rocks dated between 160 and 168 million years ago.

Hybodont was a dominant group of fishes in both marine and fluvial environments during the Triassic period and early Jurassic times (252-174 million years ago). However, they started to decline in marine environments from the Middle Jurassic period (174-163 million years ago) until they formed a relatively minor component of open-marine shark assemblages. They finally became extinct at the end of the Cretaceous time 65 million years ago.

Significantly, the newly discovered fossil was found to belong to the genus Strophodus. It is the first time a species belonging to the genus Strophodus has been identified from the Indian subcontinent. Further, it is only the third such record from Asia - the other two being from Japan and Thailand.

The research team has named it Strophodusjaisalmerensis after the location where it was found. It has recently been included in the Shark references.com, an international platform operating in association with several global organisations, including the International Union for Conservation of Nature (IUCN) and Species Survival Commission (SSC).

This discovery marks an important milestone in the study of Jurassic vertebrate fossils in the Jaisalmer region of Rajasthan, and it opens a new window for further research in the domain of vertebrate fossils.

The fossil, which is of crushing teeth, was found by a team of officers of the Jaipur-based Western Region office of the Geological Survey of India (GSI). It comprised Krishna Kumar, Pragya Pandey, Triparna Ghosh, and Debasish Bhattacharya. They have published a report on their finding in Historical Biology, a Journal of Palaeontology of International repute, in its August 2021 issue. Dr Sunil Bajpai, Head of the Department, Department of Earth Sciences, Indian Institute of Technology-Roorkee, a co-author of this publication, played a significant role in identifying and documenting this important discovery.

The Geological Survey of India was set up in 1851 primarily to find coal deposits for the Railways. Over the years, it has not only grown into a repository of geo-science information required in various fields in the country but has also attained the status of a geo-scientific organisation of international repute. Its main functions relate to creating and updating national geoscientific information and mineral resource assessment. These objectives are achieved through ground surveys, air-borne and marine surveys, mineral prospecting and investigations, multi-disciplinary geoscientific, geo-technical, geo-environmental and natural hazards studies, glaciology, seismic tectonic study, and carrying out fundamental research.

GSI's core competence in survey and mapping is continuously enhanced through accretion, management, coordination and utilization of spatial databases (including those acquired through remote sensing). GSI uses the latest computer-based technologies for the dissemination of geoscientific information and spatial data through cooperation and collaboration with other stakeholders in the Geo-informatics sector.

Courtesy: India Science Wire

Indus Scrolls
Indian to the core

Jurassic-age shark's teeth discovered from Jaisalmer basin

by India Science Wire September 18, 2021 in Indian Sciences

In a rare discovery, researchers have found evidence of a new species of an extinct group of sharks called hybodont from the deserts of Jaisalmer in Rajasthan. They found the teeth of the shark species in ancient rocks that were dated between 160 and 168 million years ago.

Hybodont was a dominant group of fishes in both marine and fluvial environments during the Triassic period and early Jurassic times (252-174 million years ago). They, however, started to decline in marine environments from the Middle Jurassic period (174-163 million years ago) onwards until they formed a relatively minor component of open-marine shark assemblages. They finally became extinct at the end of the Cretaceous time 65 million years ago.

Significantly, the newly discovered fossil was found to belong to the genus Strophodus. It is the first time a species belonging to the genus Strophodus has been identified from the Indian subcontinent. Further, it is only the third such record from Asia – the other two being from Japan and Thailand.

The research team has named it *Strophodusjaisalmerensis after the location where it was found*. It has recently been included in the Shark references.com, an international platform operating in association with several global organisations including the International Union for Conservation of Nature (IUCN), and Species Survival Commission (SSC).

This discovery marks an important milestone in the study of Jurassic vertebrate fossils in the Jaisalmer region of Rajasthan, and it opens a new window for further research in the domain of vertebrate fossils.

The fossil, which is of crushing teeth, was found by a team of officers of the Jaipur-based Western Region office of the Geological Survey of India (GSI). It comprised Krishna Kumar, Pragya Pandey, Triparna Ghosh, and Debasish Bhattacharya. They have published a report on their finding in Historical Biology, a Journal of Palaeontology of International repute, in its August 2021 issue. Dr Sunil Bajpai, Head of the Department, Department of Earth Sciences, Indian Institute of Technology-Roorkee, who is a co-author of this publication, played a significant role in the identification and documentation of this important discovery.

The Geological Survey of India was set up in 1851 primarily to find coal deposits for the Railways. Over the years, it has not only grown into a repository of geo-science information required in various fields in the country but has also attained the status of a geo-scientific organisation of international repute. Its main functions relate to creating and updating national geoscientific information and mineral resource assessment. These objectives are achieved through ground surveys, air-borne and marine surveys, mineral prospecting and investigations, multi-disciplinary geoscientific, geo-technical, geo-environmental and natural hazards studies, glaciology, seismic tectonic study, and carrying out fundamental research.

GSI's core competence in survey and mapping is continuously enhanced through accretion, management, coordination and utilization of spatial databases (including those acquired through remote sensing). GSI uses the latest computer-based technologies for the dissemination of geoscientific information and spatial data, through cooperation and collaboration with other stakeholders in the Geo-informatics sector.

NATIONALAGE

Jurassic-age shark's teeth discovered from Jaisalmer basin

National Age September 17, 2021

Hybodont shark teeth (Strophodusjaisalmerensis), from Jaisalmer Formation, Jaisalmer, Rajasthan.

New Delhi: In a rare discovery, researchers have found evidence of a new species of an extinct group of sharks called hybodont from the deserts of Jaisalmer in Rajasthan. They found the teeth of the shark species in ancient rocks that were dated between 160 and 168 million years ago.

Hybodont was a dominant group of fishes in both marine and fluvial environments during the Triassic period and early Jurassic times (252-174 million years ago). They, however, started to decline in marine environments from the Middle Jurassic period (174-163 million years ago) onwards until they formed a relatively minor component of open-marine shark assemblages. They finally became extinct at the end of the Cretaceous time 65 million years ago.

Significantly, the newly discovered fossil was found to belong to the genus Strophodus. It is the first time a species belonging to the genus Strophodus has been identified from

the Indian subcontinent. Further, it is only the third such record from Asia – the other two being from Japan and Thailand.

The research team has named it *Strophodusjaisalmerensis after the location where it was found*. It has recently been included in the Shark references.com, an international platform operating in association with several global organisations including the International Union for Conservation of Nature (IUCN), and Species Survival Commission (SSC).

This discovery marks an important milestone in the study of Jurassic vertebrate fossils in the Jaisalmer region of Rajasthan, and it opens a new window for further research in the domain of vertebrate fossils.

The fossil, which is of crushing teeth, was found by a team of officers of the Jaipur-based Western Region office of the Geological Survey of India (GSI). It comprised Krishna Kumar, Pragya Pandey, Triparna Ghosh, and Debasish Bhattacharya. They have published a report on their finding in Historical Biology, a Journal of Palaeontology of International repute, in its August 2021 issue. Dr Sunil Bajpai, Head of the Department, Department of Earth Sciences, Indian Institute of Technology-Roorkee, who is a co-author of this publication, played a significant role in the identification and documentation of this important discovery.

The Geological Survey of India was set up in 1851 primarily to find coal deposits for the Railways. Over the years, it has not only grown into a repository of geo-science information required in various fields in the country but has also attained the status of a geo-scientific organisation of international repute. Its main functions relate to creating and updating national geoscientific information and mineral resource assessment. These objectives are achieved through ground surveys, air-borne and marine surveys, mineral prospecting and investigations, multi-disciplinary geoscientific, geo-technical, geo-environmental and natural hazards studies, glaciology, seismic tectonic study, and carrying out fundamental research.

GSI's core competence in survey and mapping is continuously enhanced through accretion, management, coordination and utilization of spatial databases (including those acquired through remote sensing). GSI uses the latest computer-based technologies for the dissemination of geoscientific information and spatial data, through cooperation and collaboration with other stakeholders in the Geo-informatics sector. (India Science Wire)

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

Jurassic-age shark’s teeth discovered from Jaisalmer basin

जैसलमेर, राजस्थान से मिले हायबोडोंट शार्क के दाँत

(स्ट्रोफोडसजैसलमेरेनसिस)

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 18TH SEPTEMBER 2021

Teeth of shark species found in ancient rocks

New Delhi, Sep 18: In a rare discovery, researchers have found evidence of a new species of an extinct group of ***sharks called hybodont from the deserts of Jaisalmer in Rajasthan***. They found the **teeth of the shark species** in ancient rocks that were dated between 160 and 168 million years ago.

Hybodont was a dominant group of fishes in both marine and fluvial environments during the Triassic period and early Jurassic times (252-174 million years ago). They, however, started to decline in marine environments from the Middle Jurassic period (174-163 million years ago) onwards until they formed a relatively minor component of open-marine shark assemblages. They finally became extinct at the end of the Cretaceous time 65 million years ago.

Hybodont shark teeth (Strophodusjaisalmerensis), from Jaisalmer Formation, Jaisalmer, Rajasthan.

Study of Jurassic vertebrate fossils in Jaisalmer region of Rajasthan

Significantly, the newly discovered fossil was found to belong to the **genus Strophodus**. It is the first time a species belonging to the genus Strophodus has been identified from the Indian subcontinent. Further, it is only the third such record from Asia – the other two being from Japan and Thailand.

The research team has named it ***Strophodusjaisalmerensis*** *after the location where it was found*. It has recently been included in the Shark references.com, an international platform operating in association with several global organisations including the International Union for Conservation of Nature (IUCN), and Species Survival Commission (SSC).

This discovery marks an important milestone in the study of Jurassic vertebrate fossils in the Jaisalmer region of Rajasthan, and it opens a new window for further research in the domain of vertebrate fossils.

The fossil, which is of crushing teeth, was found by a team of officers of the Jaipur-based Western Region office of the Geological Survey of India (GSI). It comprised Krishna Kumar, Pragya Pandey, Triparna Ghosh, and Debasish Bhattacharya. They have published a report on their finding in Historical Biology, a Journal of Palaeontology of International repute, in its August 2021 issue. Dr Sunil Bajpai, Head of the Department, Department of Earth Sciences, Indian Institute of Technology-Roorkee, who is a co-author of this publication, played a significant role in the identification and documentation of this important discovery.

When was the Geological Survey of India established, what was its purpose?

The Geological Survey of India was set up in 1851 primarily to find coal deposits for the Railways. Over the years, it has not only grown into a repository of geo-science information required in various fields in the country but has also attained the status of a geo-scientific organisation of international repute. Its main functions relate to creating and updating national geoscientific information and mineral resource assessment. These objectives are achieved through ground surveys, air-borne and marine surveys, mineral prospecting and investigations, multi-disciplinary geoscientific, geo-technical, geo-environmental and natural hazards studies, glaciology, seismic tectonic study, and carrying out fundamental research.

GSI's core competence in survey and mapping is continuously enhanced through accretion, management, coordination and utilization of spatial databases (including those acquired through remote sensing). GSI uses the latest computer-based technologies for the dissemination of geoscientific information and spatial data, through cooperation and collaboration with other stakeholders in the Geo-informatics sector.

(India Science Wire)

WEBDUNIA
हिंदी

जैसलमेर के रेगिस्तान में मिले जुरासिक युगीन शार्क के-दांत

जैसलमेर, राजस्थान से मिले हायबोडोंट शार्क के दाँत (स्ट्रोफोडसजैसलमेरेनसिस)

Last Updated: शनिवार, 18 सितम्बर 2021 (12:03 IST)

नई दिल्ली, एक दुर्लभ खोज में, भारतीय शोधकर्ताओं को एक विलुप्त शार्क समूह, जिसे हायबोडोंट कहा जाता है, की एक प्रजाति के प्रमाण राजस्थान के जैसलमेर के रेगिस्तान से मिले हैं। शोधकर्ताओं को शार्क प्रजातियों के दांत प्राचीन चट्टानों में मिले हैं, जिनकी आयु 160 से 168 मिलियन वर्ष आंकी गई है।

ट्राइऐसिक काल और प्रारंभिक जुरासिक काल)252-174 मिलियन वर्ष पूर्वके दौरान समुद्री और नदी दोनों (वातावरणों में हायबोडोंट मछलियों का एक प्रमुख समूह था। हालांकि, मध्य जुरासिक काल)174-163 मिलियन वर्ष पूर्वसंख्या में गिरावट होने लगी से समुद्री वातावरण में रहने वाली इन मछलियों की (, जब तक कि वे खुले समुद्री शार्क संयोजन का अपेक्षाकृत अल्पवयस्क घटक नहीं बन गईं। माना जाता है कि मछलियों की यह प्रजाति अंततः 65 मिलियन वर्ष पहले क्रेटेशियस काल के अंत में विलुप्त हो गई थी।

शार्क का नया खोजा गया जीवाश्म स्ट्रोफोडस वंश से संबंधित बताया जा रहा है। यह पहली बार है जब भारतीय उपमहाद्वीप से स्ट्रोफोडस वंश से संबंधित किसी प्रजाति की पहचान की गई है। इसके अलावा, यह एशिया का केवल तीसरा ऐसा रिकॉर्ड है, जबकि अन्य दो रिकॉर्ड जापान और थाईलैंड से हैं।

शोध दल को जिस स्थान पर यह जीवाश्म मिला है, उसके नाम पर ही इसका नाम स्ट्रोफोडसजैसलमेरेनसिस रखा गया है। इसे हाल ही में शार्क रेफरेंस डॉट कॉम में शामिल किया गया है, जो एक अंतरराष्ट्रीय मंच है, जो इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर (एसएससी) और स्पीशीज सर्वाइवल कमीशन (आईयूसीएन) ई वैश्विक संगठनों के सहयोग से काम कर रहा है।सहित क

यह खोज राजस्थान के जैसलमेर क्षेत्र में जुरासिक कशेरुकी जीवाश्मों के अध्ययन में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर मानी जा रही है, और यह कशेरुकी जीवाश्मों के क्षेत्र में आगे के शोध के लिए एक नये द्वार खोलती है। दांतों के इस जीवाश्म को भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण के जयपुर स्थित पश्चिमी क्षेत्रीय कार्यालय (जीएसआई) के अधिकारियों की एक टीम ने खोजा है।

इस टीम में कृष्ण कुमार, प्रज्ञा पांडे, त्रिपर्णा घोष और देबाशीष भट्टाचार्य शामिल हैं। उन्होंने हिस्टोरिकल बायोलॉजी, जर्नल ऑफ पैलियोन्टोलॉजी में अपनी खोज पर एक रिपोर्ट प्रकाशित की है।

डॉ सुनील बाजपेयी, विभागाध्यक्ष, पृथ्वी विज्ञान विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की, जो इस अध्ययन के सहलेखक हैं-, ने इस महत्वपूर्ण खोज की पहचान और प्रस्तुति में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण की स्थापना 1851 में मुख्य रूप से रेलवे के लिए कोयले के भंडार का पता लगाने के लिए की गई थी। इन वर्षों में, यह न केवल देश में विभिन्न क्षेत्रों में आवश्यक भूविज्ञान की जानकारी के - भंडार के रूप में विकसित हुआ है, बल्कि इसने अंतरराष्ट्रीय ख्याति के भूवैज्ञानिक संगठन का दर्जा भी प्राप्त - किया है।
इसका मुख्य कार्य राष्ट्रीय भूवैज्ञानिक जानकारी और खनिज संसाधन के मूल्यांकन से संबंधित है।-

इन उद्देश्यों को भूमि सर्वेक्षण, हवाई एवं समुद्री सर्वेक्षण, खनिजों की खोज एवं परीक्षण, बहुक विषय- भूवैज्ञानिक, भूतकनीकी-, भूपर्यावरण तथा प्राकृतिक खतरों के अध्ययन-, हिमनद विज्ञान, भूकंपीय विवर्तनिक अध्ययन और मौलिक अनुसंधान के माध्यम से प्राप्त किया जाता है।

सर्वेक्षण और मानचित्रण में जीएसआई की क्षमता में, प्रबंधन, समन्वय और स्थानिक डेटाबेस सिंग के रिमोट सें) सूचना विज्ञान क्षेत्र में -के उपयोग के माध्यम से निरंतर वृद्धि हुई है। जीएसआई भू (माध्यम से प्राप्त डेटा सहित अन्य हितधारकों के साथ सहयोग और सहयोग के माध्यम से भूवैज्ञानिक सूचना और स्थानिक डेटा के प्रसार के - योग करता है।आधारित तकनीकों का उप-लिए नवीनतम कंप्यूटर ***(इंडिया साइंस वायर(***

फाड़ डालो डॉट कॉम

धाँसू ख़बरें और ख़बरों की चीर-फाड़

जैसलमेर के रेगिस्तान में मिले जुरासिकयुगीन - शार्क के दाँत

हस्तक्षेप.com उनकी खबरें जो खबर नहीं बनते

By Ram Bharose

सितम्बर 18, 2021

जैसलमेर, राजस्थान से मिले हायबोडोंट शार्क के दाँत

(स्ट्रोफोडसजैसलमेरेनसिस)

प्राचीन चट्टानों में मिले हैं शार्क प्रजातियों के दाँत

नई दिल्ली, 18 सितंबरएक दुर्लभ खोज में :, भारतीय शोधकर्ताओं को एक विलुप्त शार्क समूह, जिसे **हायबोडोंट** कहा जाता है, की एक प्रजाति के प्रमाण राजस्थान के जैसलमेर के रेगिस्तान से मिले हैं।

शोधकर्ताओं को शार्क प्रजातियों के दाँत प्राचीन चट्टानों में मिले हैं, जिनकी आयु 160 से 168 मिलियन वर्ष आंकी गई है।

ट्राइऐसिक काल और प्रारंभिक जुरासिक काल)252-174 मिलियन वर्ष पूर्वके दौरान समुद्री और नदी (; दोनों वातावरणों में हायबोडोंट मछलियों का एक प्रमुख समूह था। हालांकि, मध्य जुरासिक काल)174-163 मिलियन वर्ष पूर्वसे समुद्री (वातावरण में रहने वाली इन मछलियों की संख्या में गिरावट होने लगी, जब तक कि वे खुले समुद्री शार्क संयोजन का अपेक्षाकृत अल्पवयस्क घटक नहीं बन गईं। माना जाता है कि मछलियों की यह प्रजाति अंततः 65 मिलियन वर्ष पहले क्रेटेशियस काल के अंत में विलुप्त हो गई थी।

शार्क का नया खोजा गया जीवाश्म स्ट्रोफोडस वंश से संबंधित बताया जा रहा है। यह पहली बार है जब भारतीय उपमहाद्वीप से स्ट्रोफोडस वंश से संबंधित किसी प्रजाति की पहचान की गई है। इसके अलावा, यह एशिया का केवल तीसरा ऐसा रिकॉर्ड है, जबकि अन्य दो रिकॉर्ड जापान और थाईलैंड से हैं। शोध दल को जिस स्थान पर यह जीवाश्म मिला है, उसके नाम पर ही इसका नाम *स्ट्रोफोडसजैसलमेरेनसिस* रखा गया है। इसे हाल ही में शार्क रेफरेंस डॉट कॉम में शामिल किया गया है, जो एक अंतरराष्ट्रीय मंच है, जो इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर और (आईयूसीएन) सहित कई वैश्विक संगठनों के सहयोग से (एसएससी) स्पीशीज सर्वाइवल कमीशनकाम कर रहा है।

यह खोज राजस्थान के जैसलमेर क्षेत्र में जुरासिक कशेरुकी जीवाश्मों के अध्ययन में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर मानी जा रही है, और यह कशेरुकी जीवाश्मों के क्षेत्र में आगे के शोध के लिए एक नये द्वार खोलती है।

दाँतों के इस जीवाश्म को भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण के जयपुर स्थित पश्चिमी क्षेत्रीय कार्यालय के (जीएसआई) अधिकारियों की एक टीम ने खोजा है। इस टीम में कृष्ण कुमार, प्रज्ञा पांडे, त्रिपर्णा घोष और देबाशीष भट्टाचार्य शामिल हैं। उन्होंने हिस्टोरिकल बायोलॉजी, जर्नल ऑफ पैलियोन्टोलॉजी में अपनी खोज पर एक रिपोर्ट प्रकाशित की है। डॉ सुनील बाजपेयी, विभागाध्यक्ष, पृथ्वी विज्ञान विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की, जो इस अध्ययन के सह-लेखक हैं, ने इस महत्वपूर्ण खोज की पहचान और प्रस्तुति में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण की स्थापना 1851 में मुख्य रूप से रेलवे के लिए कोयले के भंडार का पता लगाने के लिए की गई थी। इन वर्षों में, यह न केवल देश में विभिन्न क्षेत्रों में आवश्यक भूविज्ञान की जानकारी के भंडार के रूप में विकसित - हुआ है, बल्कि इसने अंतरराष्ट्रीय ख्याति के भूवैज्ञानिक स-ंगठन का दर्जा भी प्राप्त किया है। इसका मुख्य कार्य राष्ट्रीय भू-को भूमि सर्वेक्षण वैज्ञानिक जानकारी और खनिज संसाधन के मूल्यांकन से संबंधित है। इन उद्देश्यों, हवाई एवं समुद्री सर्वेक्षण, खनिजों की खोज एवं परीक्षण, बहुविषयक भूवैज्ञानिक-, भूतकनीकी-, भूपर्याव-रण तथा प्राकृतिक खतरों के अध्ययन, हिमनद विज्ञान, भूकंपीय विवर्तनिक अध्ययन और मौलिक अनुसंधान के माध्यम से प्राप्त किया जाता है।

सर्वेक्षण और मानचित्रण में जीएसआई की क्षमता में, प्रबंधन, समन्वय और स्थानिक डेटाबेस रिमोट सेंसिंग के माध्यम से) सूचना विज्ञान क्षेत्र में अन्य हितधारकों के -के उपयोग के माध्यम से निरंतर वृद्धि हुई है। जीएसआई भू (प्राप्त डेटा सहित -निक सूचना और स्थानिक डेटा के प्रसार के लिए नवीनतम कंप्यूटरवैज्ञा-साथ सहयोग और सहयोग के माध्यम से भू आधारित तकनीकों का उपयोग करता है।

(इंडिया साइंस वायर(

हस्तक्षेप.com

उनकी खबरें जो खबर नहीं बनतीं

जैसलमेर के रेगिस्तान में मिले जुरासिकयुगीन शार्क के दाँत-

एक दुर्लभ खोज में, भारतीय शोधकर्ताओं को एक विलुप्त शार्क समूह, जिसे हायबोडोंट कहा जाता है)**hybodus shark fossil),** की एक प्रजाति के प्रमाण राजस्थान के जैसलमेर के रेगिस्तान से मिले हैं। **Jurassic-age shark's teeth discovered from Jaisalmer basin.**

By amalendu upadhyay | Sat, 18 Sep 2021

Jurassic-age shark's teeth discovered from Jaisalmer basin

प्राचीन चट्टानों में मिले हैं शार्क प्रजातियों के दाँत | **Teeth of shark species found in ancient rocks**

नई दिल्ली, 18 सितंबरएक दुर्लभ खोज में :, भारतीय शोधकर्ताओं को एक **विलुप्त शार्क समूह, जिसे हायबोडोंट कहा जाता है (hybodus shark fossil),** की एक प्रजाति के प्रमाण राजस्थान के **जैसलमेर के रेगिस्तान** से मिले हैं।

शोधकर्ताओं को **शार्क** प्रजातियों के दाँत प्राचीन चट्टानों में मिले हैं, जिनकी आयु 160 से 168 मिलियन वर्ष आंकी गई है।

ट्राइऐसिक काल और प्रारंभिक जुरासिक काल)252-174 मिलियन वर्ष पूर्वके दौरान समुद्री और नदी (; दोनों वातावरणों में हायबोडोंट मछलियों का एक प्रमुख समूह था। हालांकि, मध्य जुरासिक काल)174-163 मिलियन वर्ष पूर्वसे समुद्री वातावरण में रहने वाली इन मछलियों की संख्या में गिरावट होने लगी (, जब तक कि वे खुले समुद्री शार्क संयोजन का अपेक्षाकृत अल्पवयस्क घटक नहीं बन गईं।

This species of fish, the Hybodus, became extinct at the end of the Cretaceous period 65 million years ago.

माना जाता है कि मछलियों की यह प्रजाति अंततः 65 मिलियन वर्ष पहले क्रेटेशियस काल के अंत में विलुप्त हो गई थी।

शार्क का नया खोजा गया जीवाश्म स्ट्रोफोडस वंश से संबंधित बताया जा रहा है।

यह पहली बार है जब भारतीय उपमहाद्वीप से स्ट्रोफोडस वंश से संबंधित किसी प्रजाति की पहचान की गई है।

इसके अलावा, यह एशिया का केवल तीसरा ऐसा रिकॉर्ड है, जबकि अन्य दो रिकॉर्ड जापान और थाईलैंड से हैं। शोध दल को जिस स्थान पर यह जीवाश्म मिला है, उसके नाम पर ही इसका नाम ***स्ट्रोफोडसजैसलमेरेनसिस*** रखा गया है। इसे हाल ही में शार्क रेफरेंस डॉट कॉम में शामिल किया गया है, जो एक अंतरराष्ट्रीय मंच है, जो इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर और स्पीशीज (आईयूसीएन) सहित कई वैश्विक संगठनों के सहयोग से काम कर रहा है। (एसएससी) सर्वाइवल कमीशन

Study of Jurassic vertebrate fossils in Jaisalmer region of Rajasthan

यह खोज **राजस्थान के जैसलमेर क्षेत्र में जुरासिक कशेरुकी जीवाश्मों के अध्ययन** में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर मानी जा रही है, और यह कशेरुकी जीवाश्मों के क्षेत्र में आगे के शोध के लिए एक नये द्वार खोलती है।

दाँतों के इस जीवाश्म को भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण के जयपुर स्थित पश्चिमी क्षेत्रीय कार्यालय (जीएसआई) के अधिकारियों की एक टीम ने खोजा है।

इस टीम में कृष्ण कुमार, प्रज्ञा पांडे, त्रिपर्णा घोष और देबाशीष भट्टाचार्य शामिल हैं। उन्होंने हिस्टोरिकल बायोलॉजी, जर्नल ऑफ पैलियोन्टोलॉजी में अपनी खोज पर एक रिपोर्ट प्रकाशित की है। डॉ सुनील बाजपेयी, विभागाध्यक्ष, पृथ्वी विज्ञान विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की, जो इस अध्ययन के सह-लेखक हैं, ने इस महत्वपूर्ण खोज की पहचान और प्रस्तुति में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण की स्थापना कब हुई, इसका उद्देश्य क्या था ? | When was the Geological Survey of India established, what was its purpose?

भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण की स्थापना 1851 में मुख्य रूप से रेलवे के लिए कोयले के भंडार का पता लगाने के लिए की गई थी। इन वर्षों में, यह न केवल देश में विभिन्न क्षेत्रों में आवश्यक भूविज्ञान की जानकारी के - भंडार के रूप में विकसित हुआ है, बल्कि इसने अंतरराष्ट्रीय ख्याति के भूवैज्ञानिक संगठन का दर्जा भी प्राप्त - संसाधन के मूल्यांकन से संबंधित है। वैज्ञानिक जानकारी और खनिज-किया है। इसका मुख्य कार्य राष्ट्रीय भू

इन उद्देश्यों को भूमि सर्वेक्षण, हवाई एवं समुद्री सर्वेक्षण, खनिजों की खोज एवं परीक्षण, बहुविषयक - भूवैज्ञानिक, भूतकनीकी-, भूपर्यावरण तथा प्राकृतिक खतरों के अध्ययन-, हिमनद विज्ञान, भूकंपीय विवर्तनिक अध्ययन और मौलिक अनुसंधान के माध्यम से प्राप्त किया जाता है।

सर्वेक्षण और मानचित्रण में जीएसआई की क्षमता में, प्रबंधन, समन्वय और स्थानिक डेटाबेस रिमोट सेंसिंग के) के उपयोग के माध्यम से निरंतर वृद्धि हुई है। (माध्यम से प्राप्त डेटा सहित

जीएसआई भूवैज्ञानिक -न्य हितधारकों के साथ सहयोग और सहयोग के माध्यम से भूसूचना विज्ञान क्षेत्र में अ- -सूचना और स्थानिक डेटा के प्रसार के लिए नवीनतम कंप्यूटरआधारित तकनीकों का उपयोग करता है।

(इंडिया साइंस वायर(

Topics: discovery, species, extinct, hypsodont, desert, marine, fluvial Triassic, Jurassic, Cretaceous, genus, Strophodus, International Union for Conservation of Nature, IUCN, Species Survival Commission, SSC, vertebrate, fossils, Geological Survey of India, GSI, Indian Institute of Technology, Roorkee, geo-science

राष्ट्रीय रक्षक

जैसलमेर के रेगिस्तान में मिले जुरासिकयुगीन शार्क के दाँत-

लेखक: Snigdha Verma - सितंबर 17, 2021

जैसलमेर, राजस्थान से मिले हायबोडॉंट शार्क के दाँत (स्ट्रोफोडसजैसलमेरेनसिस)

नई दिल्ली एक दुर्लभ खोज में :, भारतीय शोधकर्ताओं को एक विलुप्त शार्क समूह, जिसे हायबोडोंट कहा जाता है, की एक प्रजाति के प्रमाण राजस्थान के जैसलमेर के रेगिस्तान से मिले हैं। शोधकर्ताओं को शार्क प्रजातियों के दाँत प्राचीन चट्टानों में मिले हैं, जिनकी आयु 160 से 168 मिलियन वर्ष आंकी गई है।

ट्राइऐसिक काल और प्रारंभिक जुरासिक काल)252-174 मिलियन वर्ष पूर्व के दौरान समुद्री और (नदी; दोनों वातावरणों में हायबोडोंट मछलियों का एक प्रमुख समूह था। हालांकि, मध्य जुरासिक काल)174-163 मिलियन वर्ष पूर्ववातावरण में रहने वाली इन मछलियों की संख्या में गिरावट होने लगी से समुद्री (, जब तक कि वे खुले समुद्री शार्क संयोजन का अपेक्षाकृत अल्पवयस्क घटक नहीं बन गईं। माना जाता है कि मछलियों की यह प्रजाति अंततः 65 मिलियन वर्ष पहले क्रेटेशियस काल के अंत में विलुप्त हो गई थी।

शार्क का नया खोजा गया जीवाश्म स्ट्रोफोडस वंश से संबंधित बताया जा रहा है। यह पहली बार है जब भारतीय उपमहाद्वीप से स्ट्रोफोडस वंश से संबंधित किसी प्रजाति की पहचान की गई है। इसके अलावा, यह एशिया का केवल तीसरा ऐसा रिकॉर्ड है, जबकि अन्य दो रिकॉर्ड जापान और थाईलैंड से हैं। शोध दल को जिस स्थान पर यह जीवाश्म मिला है, उसके नाम पर ही इसका नाम स्ट्रोफोडसजैसलमेरेनसिस रखा गया है। इसे हाल ही में शार्क रेफरेंस डॉट कॉम में शामिल किया गया है, जो एक अंतरराष्ट्रीय मंच है, जो इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर सहित कई वैश्विक संगठनों के सहयोग से काम कर रहा (एसएससी) शीज सर्वाइवल कमीशनऔर स्पी (आईयूसीएन) है।

यह खोज राजस्थान के जैसलमेर क्षेत्र में जुरासिक कशेरुकी जीवाश्मों के अध्ययन में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर मानी जा रही है, और यह कशेरुकी जीवाश्मों के क्षेत्र में आगे के शोध के लिए एक नये द्वार खोलती है।

दाँतों के इस जीवाश्म को भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण के जयपुर स्थित पश्चिमी क्षेत्रीय कार्य (जीएसआई)ालय के अधिकारियों की एक टीम ने खोजा है। इस टीम में कृष्ण कुमार, प्रज्ञा पांडे, त्रिपर्णा घोष और देबाशीष भट्टाचार्य शामिल हैं। उन्होंने हिस्टोरिकल बायोलॉजी, जर्नल ऑफ पैलियोन्टोलॉजी में अपनी खोज पर एक रिपोर्ट प्रकाशित की है। डॉ सुनील बाजपेयी, विभागाध्यक्ष, पृथ्वी विज्ञान विभाग, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, रुड़की, जो इस अध्ययन के सहलेखक हैं-, ने इस महत्वपूर्ण खोज की पहचान और प्रस्तुति में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है।

भारतीय भूवैज्ञानिक सर्वेक्षण की स्थापना 1851 में मुख्य रूप से रेलवे के लिए कोयले के भंडार का पता लगाने के लिए की गई थी। इन वर्षों में, यह न केवल देश में विभिन्न क्षेत्रों में आवश्यक भूविज्ञान की जानकारी के भंडार के - विकसित हुआ है रूप में, बल्कि इसने अंतरराष्ट्रीय ख्याति के भूवैज्ञानिक संगठन का दर्जा भी प्राप्त किया है। इसका - मुख्य कार्य राष्ट्रीयभूवैज्ञानिक जानकारी और खनिज संसाधन के मूल्यांकन से संबंधित है। इन उद्देश्यों को भूमि - सर्वेक्षण, हवाई एवं समुद्री सर्वेक्षण, खनिजों की खोज एवं परीक्षण, बहुविषयक भूवैज्ञानिक-, भूतकनीकी-, भू-पर्यावरण तथा प्राकृतिक खतरों के अध्ययन, हिमनद विज्ञान, भूकंपीय विवर्तनिक अध्ययन और मौलिक अनुसंधान के माध्यम से प्राप्त किया जाता है।

सर्वेक्षण और मानचित्रण में जीएसआई की क्षमता में, प्रबंधन, समन्वय और स्थानिक डेटाबेस रिमोट सेंसिंग के) सूचना-के उपयोग के माध्यम से निरंतर वृद्धि हुई है। जीएसआई भू (माध्यम से प्राप्त डेटा सहित विज्ञान क्षेत्र में अन्य हितधारकों के साथ सहयोग और सहयोग के माध्यम से भूवैज्ञानिक सूचना और स्थानिक डेटा के प्रसार के लिए - आधारित तकनीकों का उपयोग करता है।-कंप्यूटर नवीनतम

RD TIMES.in हिंदी

शोधकर्ताओं ने विकसित किया गुणवत्ता वाला पारदर्शी सेरेमिक

By RD Times Hindi | September 17, 2021

पारदर्शी सिरेमिक के नमूने

नई दिल्ली, 17 सितंबर: भारतीय शोधकर्ताओं को एक पारदर्शी सेरेमिक विकसित करने में सफलता मिली है। यह खोज थर्मल इमेजिंग अनुप्रयोगों और हेलमेट, फेस शील्ड्स और गोगल्स जैसे निजी सुरक्षा उपकरणों के लिए फरयोगी सिद्ध हो सकती है। शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रोसेसिंग नामक तकनीक से सैद्धांतिक पारदर्शिता के साथसाथ ताप एवं दबाव के अनुप्रयोगों से अपेक्षित लक्ष्य को प्राप्त किया है। भारत में पहली बार ऐसी कोई - तकनीक विकसित हुई है।

पारदर्शी सेरेमिक्स एक अत्याधुनिक सामग्री है। इसमें अद्वितीय पारदर्शिता एवं उत्कृष्ट मैकेनिकल (मैटीरियल) वेश है। वैश्विक स्तर पर कई देश पारदर्शी सेरेमिक्स का उत्पादन करते हैंविशिष्टताओं का समा, लेकिन इनका उपयोग रणनीतिक हितों की पूर्ति के लिए भी होता है ऐसे में उनकी आपूर्ति बहुत सीमित और कई मायनों में प्रतिबंधित है। भारत में पारदर्शी सेरेमिक्स बनाने के प्रयास काफी समय से चल रहे थे, किंतु वे या तो प्रयोगशाला तक ही सिमटे रहे या फिर उनकी पारदर्शिता क्षमता बहुत निम्न स्तर की थी। वर्तमान में जिस प्रक्रिया के तहत इसे विकसित किया गया है, उसका कई तरह से प्रयोग किया जा सकता है। अभी यह प्रायोगिक दायरे में ही है।

पारदर्शी सेरेमिक सैंपल को क्रिटिकली इंजीनियर्ड प्रोसेसिंग पद्धति के जरिये उच्च शुद्धता वाले पाउडर से बनाया गया है। पारदर्शी सेरेमिक्स के लिए ऐसी तैयारी प्रक्रिया आवश्यक है जो अशुद्धियों को बाहर कर सैद्धांतिक पारदर्शिता के स्तर को प्राप्त करने में सहायक हो। इसमें रासायनिक वाष्प जमाव जिसमें ऊंचे (सीवीडी) तापमान पर वाष्प चरण में अग्रमामियों की प्रतिक्रियाएं शामिल होती हैं और हॉट आइसोस्टैटिक प्रेसिंग ज (एचआईपी)िसमें तापमान और दबाव का एक साथ अनुप्रयोग शामिल होता है, ऐसी कुछ उन्नत प्रसंस्करण तकनीक हैं, जिन्हें प्रायः उपरोक्त चुनौतियों का समाधान करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। दबाव द्वारा उच्च तापमान पर एक परिष्कृत विसरण प्रक्रिया संभावित समाधान में अशुद्धियों को दूर करने के लिए के लिए अपनाई जाती है।

एआरसीआई में एचआईपी तकनीक के बाद सिरेमिक

इंटरनेशनल एडवांस रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटेरियल्स (एआरसीआई), गुरुग्राम के शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रसंस्करण के माध्मय से मैग्नीशियम एल्यूमिनेट स्पिनल सिरेमिक को विकसित किया है। यह शोध हाल में 'मैटीरियल्स केमिस्ट्री एंड फिजिक्स' में प्रकाशित भी हुआ है।

वर्तमान में स्पाइनेल उत्कृष्ट ऑप्टिकल विशिष्टताओं के साथ एक पारदर्शी सेरेमिक के रूप में उभर रहा है। इसकी क्षमता दृश्यमान अवस्था में 75 प्रतिशत और अवरक्त रेंज में (इन्फ्रा रेड)80 प्रतिशत से अधिक है। साथ ही इसमें 200 मेगापास्कल से अधिक की उच्चतर क्षमता और 13 गीगापास्कल की कठोरता होती है। (हार्डनेस) (इंडिया साइंस वायर) जानकार इस खोज को आत्मनिर्भर भारत की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम मान रहे हैं।

फाड़ डालो डॉट कॉम

धाँसू ख़बरें और ख़बरों की चीर-फाड़

भारतीय शोधकर्ताओं ने विकसित किया गुणवत्ता वाला पारदर्शी सेरेमिक

हस्तक्षेप.com उनकी खबरें जो खबर नहीं बनते

By Ram Bharose

सितम्बर 18, 2021 तकनीक

नई दिल्ली, 18 सितंबर भारतीय शोधकर्ताओं को एक पारदर्शी सेरेमिक विकसित :करने में सफलता मिली है। यह खोज थर्मल इमेजिंग अनुप्रयोगों और हेलमेट, फेस शील्ड्स और गोगल्स जैसे निजी सुरक्षा उपकरणों के लिए फरयोगी सिद्ध हो सकती है। शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रोसेसिंग नामक तकनीक से सैद्धांतिक पारदर्शिता के साथ साथ ताप एवं दबाव के अनुप्रयोगों-से अपेक्षित लक्ष्य को प्राप्त किया है।

भारत में पहली बार ऐसी कोई तकनीक विकसित हुई है।

पारदर्शी सेरेमिक्स एक अत्याधुनिक सामग्री है। इसमें अद्वितीय पारदर्शिता एवं उत्कृष्ट मैकेनिकल (मैटीरियल) विशिष्टताओं का समावेश है। वैश्विक स्तर पर कई देश पारदर्शी सेरेमिक्स का उत्पादन करते हैं, लेकिन इनका उपयोग रणनीतिक हितों की पूर्ति के लिए भी होता है ऐसे में उनकी आपूर्ति बहुत सीमित और कई मायनों में प्रतिबंधित है।

भारत में पारदर्शी सेरेमिक्स बनाने के प्रयास काफी समय से चल रहे थे, किंतु वे या तो प्रयोगशाला तक ही सिमटे रहे या फिर उनकी पारदर्शिता क्षमता बहुत निम्न स्तर की थी। वर्तमान में जिस प्रक्रिया के तहत इसे विकसित किया गया है, उसका कई तरह से प्रयोग किया जा सकता है। अभी यह प्रायोगिक दायरे में ही है।

पारदर्शी सेरेमिक सैंपल को क्रिटिकली इंजीनियर्ड प्रोसेसिंग पद्धति के जरिये उच्च शुद्धता वाले पाउडर से बनाया गया है। पारदर्शी सेरेमिक्स के लिए ऐसी तैयारी प्रक्रिया आवश्यक है जो अशुद्धियों को बाहर कर सैद्धांतिक पारद्शिता के स्तर को प्राप्त करने में सहायक हो। इसमें रासायनिक वाष्प जमाव जिसमें ऊंचे (सीवीडी) तापमान पर वाष्प चरण में अग्रमामियों की प्रतिक्रियाएं शामिल होती हैं और हॉट आइसोस्टैटिक प्रेसिंग जिसमें तापमान और दबाव का एक साथ अनुप्रयोग शामिल होता है (एचआईपी), ऐसी कुछ उन्नत प्रसंस्करण तकनीक हैं, जिन्हें प्रायः उपरोक्त चुनौतियों का समाधान करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। दबाव द्वारा उच्च तापमान पर एक परिष्कृत विसरण प्रक्रिया संभावित समाधान में अशुद्धियों को दूर करने के लिए के लिए अपनाई जाती है।

इंटरनेशनल एडवांस रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटेरियल्स (एआरसीआई), गुरुग्राम के शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रसंस्करण के माध्मय से मैग्नीशियम एल्यूमिनेट स्पिनल सिरेमिक को विकसित किया है।

यह शोध हाल में 'मैटीरियल्स केमिस्ट्री एंड फिजिक्स' में प्रकाशित भी हुआ है।

वर्तमान में स्पाइनेल उत्कृष्ट ऑप्टिकल विशिष्टताओं के साथ एक पारदर्शी सेरेमिक के रूप में उभर रहा है। इसकी क्षमता दृश्यमान अवस्था में 75 प्रतिशत और अवरक्त रेंज में (इन्फ्रा रेड)80 प्रतिशत से अधिक है। साथ ही इसमें 200 मेगापास्कल से अधिक की उच्चतर क्षमता और 13 गीगापास्कल की कठोरता होती है। (हार्डनेस) जानकार इस खोज को आत्मनिर्भर भारत की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम मान रहे हैं।

(इंडिया साइंस वायर(

दी इंडियन बुलेटिन

शोधकर्ताओं ने विकसित किया गुणवत्ता वाला पारदर्शी सेरेमिक

1 week ago

पारदर्शी सिरेमिक के नमूने

नई दिल्ली, 17 सितंबर: भारतीय शोधकर्ताओं को एक पारदर्शी सेरेमिक विकसित करने में सफलता मिली है। यह खोज थर्मल इमेजिंग अनुप्रयोगों और हेलमेट, फेस शील्ड्स और गोगल्स जैसे निजी सुरक्षा उपकरणों के लिए फरयोगी सिद्ध हो सकती है। शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रोसेसिंग नामक तकनीक से सैद्धांतिक पारदर्शिता के साथ कोई ऐसी बार पहली में भारत है। किया प्राप्त को लक्ष्य अपेक्षित से अनुप्रयोगों के दबाव एवं ताप साथ-है। हुई विकसित तकनीक

पारदर्शी सेरेमिक्स एक अत्याधुनिक सामग्री मैकेनिकल उत्कृष्ट एवं पारदर्शिता अद्वितीय इसमें है। (मैटीरियल) ताओविशिष्टं का समावेश है। वैश्विक स्तर पर कई देश पारदर्शी सेरेमिक्स का उत्पादन करते हैं, लेकिन इनका उपयोग रणनीतिक हितों की पूर्ति के लिए भी होता है ऐसे में उनकी आपूर्ति बहुत सीमित और कई मायनों में प्रतिबंधित है। भारत में पारदर्शी सेरेमिक्स बनाने के प्रयास काफी समय से चल रहे थे, किंतु वे या तो

प्रयोगशाला तक ही सिमटे रहे या फिर उनकी पारदर्शिता क्षमता बहुत निम्न स्तर की थी। वर्तमान में जिस प्रक्रिया के तहत इसे विकसित किया गया है, उसका कई तरह से प्रयोग किया जा सकता है। अभी यह प्रायोगिक दायरे में ही है।

पारदर्शी सेरेमिक सैंपल को क्रिटिकली इंजीनियर्ड प्रोसेसिंग पद्धति के जरिये उच्च शुद्धता वाले पाउडर से बनाया गया है। पारदर्शी सेरेमिक्स के लिए ऐसी तैयारी प्रक्रिया आवश्यक है जो अशुद्धियों को बाहर कर सैद्धांतिक पारद्शिता के स्तर को प्राप्त करने में सहायक हो। इसमें रासायनिक वाष्प जमाव ऊंचे जिसमें (सीवीडी) प्रेसिंग आइसोस्टैटिक हॉट और हैं होती शामिल प्रतिक्रियाएं की अग्रमामियों में चरण वाष्प पर तापमान है होता शामिल अनुप्रयोग साथ एक का दबाव और तापमान जिसमें (एचआईपी), ऐसी कुछ उन्नत प्रसंस्करण तकनीक हैं, जिन्हें प्रायः उपरोक्त चुनौतियों का समाधान करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। दबाव द्वारा उच्च तापमान पर एक परिष्कृत विसरण प्रक्रिया संभावित समाधान में अशुद्धियों को दूर करने के लिए के लिए अपनाई जाती है।

एआरसीआई में एचआईपी तकनीक के बाद सिरेमिक

इंटरनेशनल एडवांस रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटेरियल्स (एआरसीआई), गुरुग्राम के शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रसंस्करण के माध्मय से मैग्नीशियम एल्यूमिनेट स्पिनल सिरेमिक को विकसित किया है। यह शोध हाल में 'मैटीरियल्स केमिस्ट्री एंड फिजिक्स' में प्रकाशित भी हुआ है।

वर्तमान में स्पाइनेल उत्कृष्ट ऑप्टिकल विशिष्टताओं के साथ एक पारदर्शी सेरेमिक के रूप में उभर रहा है। इसकी क्षमता दृश्यमान अवस्था में 75 प्रतिशत और अवरक्त में रेंज (रेड इन्फ्रा)80 प्रतिशत से अधिक है। साथ ही इसमें 200 मेगापास्कल से अधिक की उच्चतर क्षमता और 13 गीगापास्कल की कठोरता है। होती (हार्डनेस) (वायर साइंस इंडिया) हैं। रहे मान कदम महत्वपूर्ण एक में दिशा की भारत आत्मनिर्भर को खोज इस जानकार

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

शोधकर्ताओं ने विकसित किया गुणवत्ता वाला पारदर्शी सेरेमिक

By **Rupesh Dharmik** - September 17, 2021

पारदर्शी सिरेमिक के नमूने

नई दिल्ली, 17 सितंबर: भारतीय शोधकर्ताओं को एक पारदर्शी सेरेमिक विकसित करने में सफलता मिली है। यह खोज थर्मल इमेजिंग अनुप्रयोगों और हेलमेट, फेस शील्ड्स और गोगल्स जैसे निजी सुरक्षा उपकरणों के लिए फरयोगी सिद्ध हो सकती है। शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रोसेसिंग नामक तकनीक से सैद्धांतिक पारदर्शिता के साथसाथ ताप एवं दबाव के अनुप्रयोगों से अपेक्षित लक्ष्य को प्राप्त किया है। भारत म-ें पहली बार ऐसी कोई तकनीक विकसित हुई है।

पारदर्शी सेरेमिक्स एक अत्याधुनिक सामग्री है। इसमें अद्वितीय पारदर्शिता एवं उत्कृष्ट मैकेनिकल (मैटीरियल) विशिष्टताओं का समावेश है। वैश्विक स्तर पर कई देश पारदर्शी सेरेमिक्स का उत्पादन करते हैं, लेकिन इनका उपयोग रणनीतिक हितों की पूर्ति के लिए भी होता है ऐसे में उनकी आपूर्ति बहुत सीमित और कई मायनों में प्रतिबंधित है। भारत में पारदर्शी सेरेमिक्स बनाने के प्रयास काफी समय से चल रहे थे, किंतु वे या तो प्रयोगशाला तक ही सिमटे रहे या फिर उनकी पारदर्शिता क्षमता बहुत निम्न स्तर की थी। वर्तमान में जिस

प्रक्रिया के तहत इसे विकसित किया गया है, उसका कई तरह से प्रयोग किया जा सकता है। अभी यह प्रायोगिक दायरे में ही है।

पारदर्शी सेरेमिक सैंपल को क्रिटिकली इंजीनियर्ड प्रोसेसिंग पद्धति के जरिये उच्च शुद्धता वाले पाउडर से बनाया गया है। पारदर्शी सेरेमिक्स के लिए ऐसी तैयारी प्रक्रिया आवश्यक है जो अशुद्धियों को बाहर कर सैद्धांतिक पारदि्शता के स्तर को प्राप्त करने में सहायक हो। इसमें रासायनिक वाष्प जमाव जिसमें ऊंचे (सीवीडी) तापमान पर वाष्प चरण में अग्रमामियों की प्रतिक्रियाएं शामिल होती हैं और हॉट आइसोस्टैटिक प्रेसिंग जिसमें तापमान और दबाव का एक साथ अनुप्रयोग शामिल होता है (एचआईपी), ऐसी कुछ उन्नत प्रसंस्करण तकनीक हैं, जिन्हें प्रायः उपरोक्त चुनौतियों का समाधान करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। दबाव द्वारा उच्च तापमान पर एक परिष्कृत विसरण प्रक्रिया संभावित समाधान में अशुद्धियों को दूर करने के लिए के लिए अपनाई जाती है।

एआरसीआई में एचआईपी तकनीक के बाद सिरेमिक

इंटरनेशनल एडवांस रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटेरियल्स (एआरसीआई), गुरुग्राम के शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रसंस्करण के माध्मय से मैग्नीशियम एल्यूमिनेट स्पिनल सिरेमिक को विकसित किया है। यह शोध हाल में 'मैटीरियल्स केमिस्ट्री एंड फिजिक्स' में प्रकाशित भी हुआ है।

वर्तमान में स्पाइनेल उत्कृष्ट ऑप्टिकल विशिष्टताओं के साथ एक पारदर्शी सेरेमिक के रूप में उभर रहा है। इसकी क्षमता दृश्यमान अवस्था में 75 प्रतिशत और अवरक्त रेंज में (इन्फ्रा रेड)80 प्रतिशत से अधिक है। साथ ही इसमें 200 मेगापास्कल से अधिक की उच्चतर क्षमता और 13 गीगापास्कल की कठोरता होती है। (हार्डनेस) (इंडिया साइंस वायर) र्भर भारत की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम मान रहे हैं।जानकार इस खोज को आत्मनि

भारत हेराल्ड

शोधकर्ताओं ने विकसित किया गुणवत्ता वाला पारदर्शी सेरेमिक

1 week ago

पारदर्शी सिरेमिक के नमूने

नई दिल्ली, 17 सितंबर: भारतीय शोधकर्ताओं को एक पारदर्शी सेरेमिक विकसित करने में सफलता मिली है। यह खोज थर्मल इमेजिंग अनुप्रयोगों और हेलमेट, फेस शील्ड्स और गोगल्स जैसे निजी सुरक्षा उपकरणों के लिए फरयोगी सिद्ध हो सकती है। शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रोसेसिंग नामक तकनीक से सैद्धांतिक पारदर्शिता के साथ कोई ऐसी बार पहली में भारत है। किया प्राप्त को लक्ष्य तअपेक्षि से अनुप्रयोगों के दबाव एवं ताप साथ-तकनीक विकसित हुई है।

पारदर्शी सेरेमिक्स एक अत्याधुनिक सामग्री मैकेनिकल उत्कृष्ट एवं पारदर्शिता अद्वितीय इसमें है। (मैटीरियल) हैं करते दनउत्पा का सेरेमिक्स पारदर्शी देश कई पर स्तर वैश्विक है। समावेश का विशिष्टताओं, लेकिन इनका उपयोग रणनीतिक हितों की पूर्ति के लिए भी होता है ऐसे में उनकी आपूर्ति बहुत सीमित और कई मायनों में प्रतिबंधित है। भारत में पारदर्शी सेरेमिक्स बनाने के प्रयास काफी समय से चल रहे थे, किंतु वे या तो

प्रयोगशाला तक ही सिमटे रहे या फिर उनकी पारदर्शिता क्षमता बहुत निम्न स्तर की थी। वर्तमान में जिस प्रक्रिया के तहत इसे विकसित किया गया है, उसका कई तरह से प्रयोग किया जा सकता है। अभी यह प्रायोगिक दायरे में ही है।

पारदर्शी सेरेमिक सैंपल को क्रिटिकली इंजीनियर्ड प्रोसेसिंग पद्धति के जरिये उच्च शुद्धता वाले पाउडर से बनाया गया है। पारदर्शी सेरेमिक्स के लिए ऐसी तैयारी प्रक्रिया आवश्यक है जो अशुद्धियों को बाहर कर सैद्धांतिक पारदि्शता के स्तर को प्राप्त करने में सहायक हो। इसमें रासायनिक वाष्प जमाव ऊंचे जिसमें (सीवीडी) प्रेसि आइसोस्टैटिक हॉट और हैं होती शामिल प्रतिक्रियाएं की अग्रमामियों में चरण वाष्प पर तापमानंग है होता शामिल अनुप्रयोग साथ एक का दबाव और तापमान जिसमें (एचआईपी), ऐसी कुछ उन्नत प्रसंस्करण तकनीक हैं, जिन्हें प्रायः उपरोक्त चुनौतियों का समाधान करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। दबाव द्वारा उच्च तापमान पर एक परिष्कृत विसरण प्रक्रिया संभावित समाधान में अशुद्धियों को दूर करने के लिए के लिए अपनाई जाती है।

एआरसीआई में एचआईपी तकनीक के बाद सिरेमिक

इंटरनेशनल एडवांस रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटेरियल्स (एआरसीआई), गुरुग्राम के शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रसंस्करण के माध्मय से मैग्नीशियम एल्यूमिनेट स्पिनल सिरेमिक को विकसित किया है। यह शोध हाल में 'मैटीरियल्स केमिस्ट्री एंड फिजिक्स' में प्रकाशित भी हुआ है।

वर्तमान में स्पाइनेल उत्कृष्ट ऑप्टिकल विशिष्टताओं के साथ एक पारदर्शी सेरेमिक के रूप में उभर रहा है। इसकी क्षमता दृश्यमान अवस्था में 75 प्रतिशत और अवरक्त में रेंज (रेड इन्फ्रा)80 प्रतिशत से अधिक है। साथ ही इसमें 200 मेगापास्कल से अधिक की उच्चतर क्षमता और 13 गीगापास्कल की कठोरता है। होती (हार्डनेस) वा साइंस इंडिया) हैं। रहे मान कदम महत्वपूर्ण एक में दिशा की भारत आत्मनिर्भर को खोज इस जानकारयर(

हस्तक्षेप.com

उनकी खबरें जो खबर नहीं बनतीं

भारतीय शोधकर्ताओं ने विकसित किया गुणवत्ता वाला पारदर्शी सिरेमिक

Researchers from International Advanced Research Center for Powder Metallurgy and New Materials (ARCI), Gurugram have developed magnesium aluminate spinel ceramics through colloidal processing.... Read more

By Guest Writer | Sat, 18 Sep 2021

Researchers from International Advanced Research Center for Powder Metallurgy and New Materials (ARCI), Gurugram have developed magnesium aluminate spinel ceramics through colloidal processing.

पारदर्शी सिरेमिक क्या है? कोलाइडल प्रोसेसिंग तकनीक क्या है? What is transparent ceramic? What is colloidal processing technology?

नई दिल्ली, 18 सितंबर, 2021: भारतीय शोधकर्ताओं को एक **पारदर्शी सिरेमिक (transparent ceramic)** विकसित करने में सफलता मिली है। यह खोज **थर्मल इमेजिंग** अनुप्रयोगों और हेलमेट, फेस शील्ड्स और गोगल्स जैसे निजी सुरक्षा उपकरणों के लिए फरयोगी सिद्ध हो सकती है। शोधकर्ताओं ने **कोलाइडल प्रोसेसिंग नामक तकनीक (technology called colloidal processing)** से सैद्धांतिक पारदर्शिता के साथसाथ - ताप एवं दबाव के अनुप्रयोगों से अपेक्षित लक्ष्य को प्राप्त किया है।

भारत में पहली बार ऐसी कोई तकनीक विकसित हुई है।

पारदर्शी सेरेमिक्स एक अत्याधुनिक सामग्री है। इसमें अद्वितीय पारदर्शिता एवं उत्कृष्ट मैकेनिकल (मैटीरियल) मावेश है। वैश्विक स्तर पर कई देश पारदर्शी सेरेमिक्स का उत्पादन करते हैंविशिष्टताओं का स, लेकिन इनका उपयोग रणनीतिक हितों की पूर्ति के लिए भी होता है ऐसे में उनकी आपूर्ति बहुत सीमित और कई मायनों में प्रतिबंधित है।

भारत में पारदर्शी सेरेमिक्स बनाने के प्रयास काफी समय से चल रहे थे, किंतु वे या तो प्रयोगशाला तक ही सिमटे रहे या फिर उनकी पारदर्शिता क्षमता बहुत निम्न स्तर की थी। वर्तमान में जिस प्रक्रिया के तहत इसे विकसित किया गया है, उसका कई तरह से प्रयोग किया जा सकता है। अभी यह प्रायोगिक दायरे में ही है।

कैसे तैयार हुआ पारदर्शी सेरेमिक सैंपल

पारदर्शी सेरेमिक सैंपल को ***क्रिटिकली इंजीनियर्ड प्रोसेसिंग पद्धति)critically engineered processing method)*** के जरिये उच्च शुद्धता वाले पाउडर से बनाया गया है।

पारदर्शी सेरेमिक्स के लिए ऐसी तैयारी प्रक्रिया आवश्यक है जो अशुद्धियों को बाहर कर सैद्धांतिक पारद्शिता के स्तर को प्राप्त करने में सहायक हो। इसमें रासायनिक वाष्प जमाव जिसमें (सीवीडी)ऊंचे तापमान पर वाष्प चरण में अग्रमामियों की प्रतिक्रियाएं शामिल होती हैं और हॉट आइसोस्टैटिक प्रेसिंग जिसमें (एचआईपी) होता है तापमान और दबाव का एक साथ अनुप्रयोग शामिल, ऐसी कुछ उन्नत प्रसंस्करण तकनीक हैं, जिन्हें प्रायः उपरोक्त चुनौतियों का समाधान करने के लिए प्रयोग में लाया जाता है। दबाव द्वारा उच्च तापमान पर एक परिष्कृत विसरण प्रक्रिया संभावित समाधान में अशुद्धियों को दूर करने के लिए के लिए अपनाई जाती है।

इंटरनेशनल एडवांस रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटेरियल्स (एआरसीआई), गुरुग्राम के शोधकर्ताओं ने कोलाइडल प्रसंस्करण के माध्मय से मैग्नीशियम एल्यूमिनेट स्पिनल सिरेमिक को विकसित किया है।

यह शोध हाल में 'मैटीरियल्स केमिस्ट्री एंड फिजिक्स' में प्रकाशित भी हुआ है।

वर्तमान में स्पाइनेल उत्कृष्ट ऑप्टिकल विशिष्टताओं के साथ एक पारदर्शी सेरेमिक के रूप में उभर रहा है। इसकी क्षमता दृश्यमान अवस्था में 75 प्रतिशत और अवरक्त रेंज में (इन्फ्रा रेड)80 प्रतिशत से अधिक है। साथ ही इसमें 200 मेगापास्कल से अधिक की उच्चतर क्षमता और 13 गीगापास्कल की कठोरता होती है। (हार्डनेस) जानकार इस खोज को आत्मनिर्भर भारत की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम मान रहे हैं।

(इंडिया साइंस वायर(

Topics: Science, technology, research, scientists, ARCI, ceramics, thermal imaging, helmets, face shields, and goggles, transparency, ultraviolet (UV), Infrared (IR), and Radiofrequency (RF), Chemical Vapour Deposition, Atmanirbhar Bharat, India, the temperature under pressure, HotIsostatic Pressing.

DownToEarth | डाउन टू अर्थ

Researchers develop super-hydrophobic cotton for oil-spill cleanup

Both heavy and light oils can be effectively absorbed by a super-hydrophobic Cotton, developed by IIT-Guwahati, which is easy to prepare, cost-effective and recyclable

By India Science Wire
Published: Monday 20 September 2021

Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT), Guwahati, have developed a new class of super-hydrophobic cotton composite with Metal-Organic Framework (MOF) that promise marine oil-spill clean-up in near future.

This is a novel, highly porous and water-repellent super-hydrophobic cotton composite material containing MOF, which can absorb oil selectively from an oil-water mixture, researchers said, in a statement released by IIT, Guwahati, September 20, 2021.

The MOF composite has great capability for selective separation of the oils from oil / water mixtures and the separation efficiency lies between 95 per cent and 98 per cent, irrespective of the chemical composition and density of the oils.

Besides, the MOF composite is also able to absorb large volumes of oils and can be reused for a minimum of 10 times so that the sorbents can provide more recovery of the spilled oil.

The practical applications of this research include cleaning the spilled oil from environmental water (river, sea or ocean water) during oil transportation with high efficiency and large absorption capacity, thus reducing environmental water pollution.

Both heavy and light oils can be effectively absorbed by the material, which is easy to prepare, cost-effective and recyclable, IIT, Guwahati said.

The research team was led by Shyam P Biswas, associate professor, Department of Chemistry, IIT Guwahati. The results of this study have recently been published in the journal *ACS Applied Materials and Interfaces*, belonging to American Chemical Society.

“Our goal was to develop a new material which could be synthesised easily and should be cost-effective. We have grown a new MOF material on the

surface of medical cotton, which is environmentally friendly and cost effective. Such low-cost material will reduce the production cost of the material for large-scale synthesis for real applications, compared to currently available materials," Shyam P Biswas said.

"In a country like India where petroleum hydrocarbons are the major sources of fuel, accidental oil spills occur frequently during the oil transportation and its storage. The material developed in our laboratory will certainly be beneficial to reduce the environmental water pollution by efficiently absorbing the spilled oil from environmental water," Biswas added.

MOFs are a class of compounds containing metal ions coordinated to organic ligands to form 3D structures, with the special feature that they are often highly porous materials that act like a sponge.

The team led by Biswas initially developed a super-hydrophobic MOF which can repel the water and float on the water surface. Then, they grew the same MOF on the surface of medical cotton.

It was observed that the medical cotton changes from hydrophilic to super-hydrophobic material and can float on the water surface. The MOF-coated cotton fibre composite showed water repellence with a water contact angle of 163°.

The flexible super-hydrophobic MOF composite showed an oil absorption capacity of more than 2500 wt per cent. Motor oil, kerosene and gasoline were used by the team in this study to investigate the real-life potential of the material for oil-spill clean-up.

The research team has also demonstrated the separation of oil from oil / water mixture by simple gravity-directed filtration and also a collection of underwater oil against gravity. (**India Science Wire**)

Indus Scrolls
Indian to the core

Researchers develop super-hydrophobic Cotton for oil-spill cleanup

by **India Science Wire** September 20, 2021 in **Indian Sciences**

Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT), Guwahati, have developed a new class of super-hydrophobic cotton composite with Metal-Organic Framework (MOF) that promise marine oil-spill clean-up in near future.

This is a novel, highly porous, and water-repellent super-hydrophobic cotton composite material containing Metal-Organic Framework (MOF), which can absorb oil selectively from an oil-water mixture, researchers said, in a statement released by IIT, Guwahati, on Monday.

The MOF composite has great capability for selective separation of the oils from oil/water mixtures, and the separation efficiency lies between 95% and 98%, irrespective of the chemical composition and density of the oils. Besides, the MOF composite is also able to absorb large volumes of oils and can be reused for a minimum of 10 times so that the sorbents can provide more recovery of the spilled oil.

The practical applications of this research include cleaning the spilled oil from environmental water (river, sea or ocean water) during oil transportation with high efficiency and large absorption capacity, thus reducing environmental water pollution. Both heavy and light oils can be effectively absorbed by the material, which is easy to prepare, cost-effective and recyclable, IIT, Guwahati said.

The research team was led by Dr. Shyam P. Biswas, Associate Professor, Department of Chemistry, IIT Guwahati. The results of this study have recently

been published in the journal ACS Applied Materials and Interfaces, belonging to American Chemical Society.

“Our goal was to develop a new material which could be synthesized easily and should be cost-effective. We have grown a new MOF material on the surface of medical cotton, which is environmentally friendly and cost effective. Such low-cost material will reduce the production cost of the material for large-scale synthesis for real applications, compared to currently available materials”, said Dr. Shyam P. Biswas.

“In a country like India where petroleum hydrocarbons are the major sources of fuel, accidental oil spills occur frequently during the oil transportation and its storage. The material developed in our laboratory will certainly be beneficial to reduce the environmental water pollution by efficiently absorbing the spilled oil from environmental water” Dr. Biswas added.

MOFs are a class of compounds containing metal ions coordinated to organic ligands to form 3D structures, with the special feature that they are often highly porous materials that act like a sponge. The team led by Dr. Biswas initially developed a super-hydrophobic MOF which can repel the water and float on the water surface. Then, they grew the same MOF on the surface of medical cotton. It was observed that the medical cotton changes from hydrophilic to super-hydrophobic material and can float on the water surface. The MOF-coated cotton fiber composite showed water repellence with a water contact angle (WCA) of 163°.

The flexible super-hydrophobic MOF composite showed an oil absorption capacity of more than 2500 wt%. motor oil, kerosene and gasoline were used by the team in this study to investigate the real-life potential of the material for oil-spill clean-up. The research team has also demonstrated the separation of oil from oil/water mixture by simple gravity-directed filtration and also a collection of underwater oil against gravity. (India Science Wire)

Indian Science Journal
ISSN 2348-4500

Indian researchers develop super-hydrophobic cotton for oil-spill cleanup

by admin September 20, 2021

Guwahati (*ISJ*): Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT), Guwahati, have developed a new class of super-hydrophobic cotton composite with Metal-Organic Framework (MOF) that promises marine oil-spill clean-up in near future.

This is a novel, highly porous, and water-repellent super-hydrophobic cotton composite material containing MOF, which can absorb oil selectively from an oil-water mixture, researchers said.

The MOF composite has great capability for selective separation of the oils from oil/water mixtures, and the separation efficiency lies between 95 percent and 98 percent, irrespective of the chemical composition and density of the oils. Besides, the MOF composite is also able to absorb large volumes of oils and can be reused for a minimum of 10 times so that the sorbents can provide more recovery of the spilled oil.

The practical applications of this research include cleaning the spilled oil from environmental water (river or ocean water) during oil transportation with high efficiency and large absorption capacity, thus reducing environmental water pollution. Both heavy and light oils can be effectively absorbed by the material, which is easy to prepare, cost-effective and recyclable, IIT, Guwahati said.

> ***"Our goal was to develop a new material which could be synthesized easily and should be cost-effective. We have grown a new MOF material on the surface of medical cotton, which is environmentally friendly and cost effective. Such low-cost material will reduce the production cost of the***

material for large-scale synthesis for real applications, compared to currently available materials," said Dr. Shyam P. Biswas, Associate Professor in the Department of Chemistry, IIT Guwahati.

The results of this study have recently been published in the American Chemical Society's journal *Applied Materials and Interfaces.*

"In a country like India where petroleum hydrocarbons are the major sources of fuel, accidental oil spills occur frequently during transportation and its storage. The material developed in our laboratory will certainly be beneficial to reduce the environmental water pollution by efficiently absorbing the spilled oil from environmental water," Dr. Biswas added.

MOFs are a class of compounds containing metal ions coordinated to organic ligands to form 3D structures. With the special feature of highly porous materials it acts like a sponge. The team led by Dr. Biswas initially developed a super-hydrophobic MOF which can repel the water and float on the water surface. Then, they grew the same MOF on the surface of medical cotton. It was observed that the medical cotton changes from hydrophilic to super-hydrophobic material and can float on the water surface. The MOF-coated cotton fiber composite showed water repellence with a water contact angle (WCA) of 163°.

The flexible super-hydrophobic MOF composite showed an oil absorption capacity of more than 2500 weight percent. Motor oil, kerosene and gasoline were used by the team in this study to investigate the real-life potential of the material for oil-spill clean-up.

Source: *India Science Wire*

Image: *Representative*

GS Times

Researchers develop super-hydrophobic Cotton for oil-spill cleanup

September 20, 2021

India Science Wire

Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT), Guwahati, have developed a new class of super-hydrophobic cotton composite with Metal-Organic Framework (MOF) that promise marine oil-spill clean-up in near future.

This is a novel, highly porous, and water-repellent super-hydrophobic cotton composite material containing c, which can absorb oil selectively from an oil-water mixture, researchers said, in a statement released by IIT, Guwahati, on Monday.

The MOF composite has great capability for selective separation of the oils from oil/water mixtures, and the separation efficiency lies between 95% and 98%, irrespective of the chemical composition and density of the oils.Besides, the MOF composite is also able to absorb large volumes of oils and can be reused for a minimum of 10 times so that the sorbents can provide more recovery of the spilled oil.

The practical applications of this research include cleaning the spilled oil from environmental water (river, sea or ocean water) during oil transportation with high efficiency and large absorption capacity, thus reducing environmental water pollution. Both heavy and light oils can be effectively absorbed by the material, which is easy to prepare, cost-effective and recyclable, IIT, Guwahati said.

The research team was led by Dr. Shyam P. Biswas, Associate Professor, Department of Chemistry,IIT Guwahati. The results of this study have recently been published in the journal ACS Applied Materials and Interfaces, belonging to American Chemical Society.

“Our goal was to develop a new material which could be synthesized easily and should be cost-effective. We have grown a new MOF material on the surface of medical cotton, which is environmentally friendly and cost effective. Such low-cost material will reduce the production cost of the material for large-scale synthesis for real applications, compared to currently available materials”, said Dr. Shyam P. Biswas.

“In a country like India where petroleum hydrocarbons are the major sources of fuel, accidental oil spills occur frequently during the oil transportation and its storage. The material developed in our laboratory will certainly be beneficial to reduce the environmental water pollution by efficiently absorbing the spilled oil from environmental water” Dr. Biswas added.

MOFs are a class of compounds containing metal ions coordinated to organic ligands to form 3D structures, with the special feature that they are often highly porous materials that act like a sponge. The team led by Dr. Biswas initially developed a super-hydrophobic MOF which can repel the water and float on the water surface. Then, they grew the same MOF on the surface of medical cotton. It was observed that the medical cotton changes from hydrophilic to super-hydrophobic material and can float on the water surface. The MOF-coated cotton fiber composite showed water repellence with a water contact angle (WCA) of 163°. The flexible super-hydrophobic MOF composite showed an oil absorption capacity of more than 2500 wt%. motor oil, kerosene and gasoline were used by the team in this study to investigate the real-life potential of the material for oil-spill clean-up. The research team has also demonstrated the separation of oil from oil/water mixture by simple gravity-directed filtration and also a collection of underwater oil against gravity.

Republic NewsIndia

Researchers develop super-hydrophobic Cotton for oil-spill cleanup

By **Rupesh Dharmik** - September 20, 2021

Team of IIT Guwahati researchers

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT), Guwahati, have developed a new class of super-hydrophobic cotton composite with Metal-Organic Framework (MOF) that promise marine oil-spill clean-up in near future.

This is a novel, highly porous, and water-repellent super-hydrophobic cotton composite material containing Metal-Organic Framework (MOF), which can absorb oil selectively from an oil-water mixture, researchers said, in a statement released by IIT, Guwahati, on Monday.

The MOF composite has great capability for selective separation of the oils from oil/water mixtures, and the separation efficiency lies between 95% and 98%, irrespective of the chemical composition and density of the oils. Besides, the MOF

composite is also able to absorb large volumes of oils and can be reused for a minimum of 10 times so that the sorbents can provide more recovery of the spilled oil.

The practical applications of this research include cleaning the spilled oil from environmental water (river, sea or ocean water) during oil transportation with high efficiency and large absorption capacity, thus reducing environmental water pollution. Both heavy and light oils can be effectively absorbed by the material, which is easy to prepare, cost-effective and recyclable, IIT, Guwahati said.

The research team was led by Dr. Shyam P. Biswas, Associate Professor, Department of Chemistry,IIT Guwahati. The results of this study have recently been published in the journal ACS Applied Materials and Interfaces, belonging to American Chemical Society.

“Our goal was to develop a new material which could be synthesized easily and should be cost-effective. We have grown a new MOF material on the surface of medical cotton, which is environmentally friendly and cost effective. Such low-cost material will reduce the production cost of the material for large-scale synthesis for real applications, compared to currently available materials”, said Dr. Shyam P. Biswas.

“In a country like India where petroleum hydrocarbons are the major sources of fuel, accidental oil spills occur frequently during the oil transportation and its storage. The material developed in our laboratory will certainly be beneficial to reduce the environmental water pollution by efficiently absorbing the spilled oil from environmental water” Dr. Biswas added.

MOFs are a class of compounds containing metal ions coordinated to organic ligands to form 3D structures, with the special feature that they are often highly porous materials that act like a sponge. The team led by Dr. Biswas initially developed a super-hydrophobic MOF which can repel the water and float on the water surface. Then, they grew the same MOF on the surface of medical cotton. It was observed that the medical cotton changes from hydrophilic to super-hydrophobic material and can float on the water surface. The MOF-coated cotton fiber composite showed water repellence with a water contact angle (WCA) of 163°.

The flexible super-hydrophobic MOF composite showed an oil absorption capacity of more than 2500 wt%. motor oil, kerosene and gasoline were used by the team in this study to investigate the real-life potential of the material for oil-spill clean-up. The research team has also demonstrated the separation of oil from oil/water mixture by simple gravity-directed filtration and also a collection of underwater oil against gravity. (India Science Wire)

IndianSentinel
www.indiansentinel.in

Researchers develop super-hydrophobic Cotton for oil-spill cleanup

7 days ago

Team of IIT Guwahati researchers

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT), Guwahati, have developed a new class of super-hydrophobic cotton composite with Metal-Organic Framework (MOF) that promise marine oil-spill clean-up in near future.

This is a novel, highly porous, and water-repellent super-hydrophobic cotton composite material containing Metal-Organic Framework (MOF), which can absorb oil selectively from an oil-water mixture, researchers said, in a statement released by IIT, Guwahati, on Monday.

The MOF composite has great capability for selective separation of the oils from oil/water mixtures, and the separation efficiency lies between 95% and 98%, irrespective of the chemical composition and density of the oils. Besides, the MOF composite is also able to absorb large volumes of oils and can be reused for a minimum of 10 times so that the sorbents can provide more recovery of the spilled oil.

The practical applications of this research include cleaning the spilled oil from environmental water (river, sea or ocean water) during oil transportation with high efficiency and large absorption capacity, thus reducing environmental water pollution.

Both heavy and light oils can be effectively absorbed by the material, which is easy to prepare, cost-effective and recyclable, IIT, Guwahati said.

The research team was led by Dr. Shyam P. Biswas, Associate Professor, Department of Chemistry,IIT Guwahati. The results of this study have recently been published in the journal ACS Applied Materials and Interfaces, belonging to American Chemical Society.

"Our goal was to develop a new material which could be synthesized easily and should be cost-effective. We have grown a new MOF material on the surface of medical cotton, which is environmentally friendly and cost effective. Such low-cost material will reduce the production cost of the material for large-scale synthesis for real applications, compared to currently available materials", said Dr. Shyam P. Biswas.

"In a country like India where petroleum hydrocarbons are the major sources of fuel, accidental oil spills occur frequently during the oil transportation and its storage. The material developed in our laboratory will certainly be beneficial to reduce the environmental water pollution by efficiently absorbing the spilled oil from environmental water" Dr. Biswas added.

MOFs are a class of compounds containing metal ions coordinated to organic ligands to form 3D structures, with the special feature that they are often highly porous materials that act like a sponge. The team led by Dr. Biswas initially developed a super-hydrophobic MOF which can repel the water and float on the water surface. Then, they grew the same MOF on the surface of medical cotton. It was observed that the medical cotton changes from hydrophilic to super-hydrophobic material and can float on the water surface. The MOF-coated cotton fiber composite showed water repellence with a water contact angle (WCA) of 163°.

The flexible super-hydrophobic MOF composite showed an oil absorption capacity of more than 2500 wt%. motor oil, kerosene and gasoline were used by the team in this study to investigate the real-life potential of the material for oil-spill clean-up. The research team has also demonstrated the separation of oil from oil/water mixture by simple gravity-directed filtration and also a collection of underwater oil against gravity. (India Science Wire)

Hindustan Saga

Researchers develop super-hydrophobic Cotton for oil-spill cleanup

HS **Hindustan Saga** | 7 days ago

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT), Guwahati, have developed a new class of super-hydrophobic cotton composite with Metal-Organic Framework (MOF) that promise marine oil-spill clean-up in near future.

This is a novel, highly porous, and water-repellent super-hydrophobic cotton composite material containing Metal-Organic Framework (MOF), which can absorb oil selectively from an oil-water mixture, researchers said, in a statement released by IIT, Guwahati, on Monday.

The MOF composite has great capability for selective separation of the oils from oil/water mixtures, and the separation efficiency lies between 95% and 98%, irrespective of the chemical composition and density of the oils. Besides, the MOF composite is also able to absorb large volumes of oils and can be reused for a minimum of 10 times so that the sorbents can provide more recovery of the spilled oil.

The practical applications of this research include cleaning the spilled oil from environmental water (river, sea or ocean water) during oil transportation with high efficiency and large absorption capacity, thus reducing environmental water pollution. Both heavy and light oils can be effectively absorbed by the material, which is easy to prepare, cost-effective and recyclable, IIT, Guwahati said.

The research team was led by Dr. Shyam P. Biswas, Associate Professor, Department of Chemistry,IIT Guwahati. The results of this study have recently been published in the journal ACS Applied Materials and Interfaces, belonging to American Chemical Society.

“Our goal was to develop a new material which could be synthesized easily and should be cost-effective. We have grown a new MOF material on the surface of medical cotton,

which is environmentally friendly and cost effective. Such low-cost material will reduce the production cost of the material for large-scale synthesis for real applications, compared to currently available materials", said Dr. Shyam P. Biswas.

"In a country like India where petroleum hydrocarbons are the major sources of fuel, accidental oil spills occur frequently during the oil transportation and its storage. The material developed in our laboratory will certainly be beneficial to reduce the environmental water pollution by efficiently absorbing the spilled oil from environmental water" Dr. Biswas added.

MOFs are a class of compounds containing metal ions coordinated to organic ligands to form 3D structures, with the special feature that they are often highly porous materials that act like a sponge. The team led by Dr. Biswas initially developed a super-hydrophobic MOF which can repel the water and float on the water surface. Then, they grew the same MOF on the surface of medical cotton. It was observed that the medical cotton changes from hydrophilic to super-hydrophobic material and can float on the water surface. The MOF-coated cotton fiber composite showed water repellence with a water contact angle (WCA) of 163°.

The flexible super-hydrophobic MOF composite showed an oil absorption capacity of more than 2500 wt%. motor oil, kerosene and gasoline were used by the team in this study to investigate the real-life potential of the material for oil-spill clean-up. The research team has also demonstrated the separation of oil from oil/water mixture by simple gravity-directed filtration and also a collection of underwater oil against gravity. (India Science Wire)

The Indian Bulletin
www.theindianbulletin.com

Researchers develop super-hydrophobic Cotton for oil-spill cleanup

By **The Indian Bulletin Online** - September 20, 2021

Team of IIT Guwahati researchers

New Delhi: Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT), Guwahati, have developed a new class of super-hydrophobic cotton composite with Metal-Organic Framework (MOF) that promise marine oil-spill clean-up in near future.

This is a novel, highly porous, and water-repellent super-hydrophobic cotton composite material containing Metal-Organic Framework (MOF), which can absorb oil selectively from an oil-water mixture, researchers said, in a statement released by IIT, Guwahati, on Monday.

The MOF composite has great capability for selective separation of the oils from oil/water mixtures, and the separation efficiency lies between 95% and 98%, irrespective of the chemical composition and density of the oils. Besides, the MOF composite is also able to absorb large volumes of oils and can be reused for a minimum of 10 times so that the sorbents can provide more recovery of the spilled oil.

The practical applications of this research include cleaning the spilled oil from environmental water (river, sea or ocean water) during oil

transportation with high efficiency and large absorption capacity, thus reducing environmental water pollution. Both heavy and light oils can be effectively absorbed by the material, which is easy to prepare, cost-effective and recyclable, IIT, Guwahati said.

The research team was led by Dr. Shyam P. Biswas, Associate Professor, Department of Chemistry,IIT Guwahati. The results of this study have recently been published in the journal ACS Applied Materials and Interfaces, belonging to American Chemical Society.

"Our goal was to develop a new material which could be synthesized easily and should be cost-effective. We have grown a new MOF material on the surface of medical cotton, which is environmentally friendly and cost effective. Such low-cost material will reduce the production cost of the material for large-scale synthesis for real applications, compared to currently available materials", said Dr. Shyam P. Biswas.

"In a country like India where petroleum hydrocarbons are the major sources of fuel, accidental oil spills occur frequently during the oil transportation and its storage. The material developed in our laboratory will certainly be beneficial to reduce the environmental water pollution by efficiently absorbing the spilled oil from environmental water" Dr. Biswas added.

MOFs are a class of compounds containing metal ions coordinated to organic ligands to form 3D structures, with the special feature that they are often highly porous materials that act like a sponge. The team led by Dr. Biswas initially developed a super-hydrophobic MOF which can repel the water and float on the water surface. Then, they grew the same MOF on the surface of medical cotton. It was observed that the medical cotton changes from hydrophilic to super-hydrophobic material and can float on the water surface. The MOF-coated cotton fiber composite showed water repellence with a water contact angle (WCA) of 163°.

The flexible super-hydrophobic MOF composite showed an oil absorption capacity of more than 2500 wt%. motor oil, kerosene and gasoline were used by the team in this study to investigate the real-life potential of the material for oil-spill clean-up. The research team has also demonstrated the separation of oil from oil/water mixture by simple gravity-directed filtration and also a collection of underwater oil against gravity. (India Science Wire)

अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के परीक्षण के लिए स्थापित हुई नई प्रयोगशाला यह प्रयोगशाला

उन उपकरणों और सर्किटों के विद्युत प्रदर्शन को मापने में सक्षम बनाएगी, जिनका उपयोग इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में किया जाता है, जैसे कि मोबाइल फोन, अंतरिक्ष उपग्रह और क्वांटम कंप्यूटर।

India Science Wire   20 Sep 2021

आईआईटी, दिल्ली में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के लिए उन्नत परीक्षण सुविधा

इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के बिना विज्ञान व प्रौद्योगिकी के वर्तमान युग की कल्पना संभव नहीं है। इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की प्रभावी परफॉर्मेंस को सुनिश्चित करने के लिए उनका परीक्षण एक अनिवार्य आवश्यकता है। इन उपकरणों में प्रयुक्त होने वाले कलपुर्जों और सर्किटों के इलेक्ट्रिकल प्रदर्शन के मापन को सुनिश्चित करने के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), दिल्ली में एक प्रयोगशाला स्थापित की गई है।

इस उन्नत परीक्षण सुविधा को अत्याधुनिक तकनीक से लैस किया गया है, जहाँ मोबाइल फोन से लेकर क्वांटम कम्प्यूटिंग और अंतरिक्ष उपकरणों का परीक्षण करके उनकी गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सकेगी। आईआईटी, दिल्ली द्वारा इस प्रयोगशाला की स्थापना को एकीकृत इलेक्ट्रॉनिक सर्किट और उपकरणों के क्षेत्र में भारत के बेहतरीन अनुसंधान संस्थानों में अपनी स्थिति को अधिक मजबूत करने की दिशा में एक और कदम माना जा रहा है।

करीब 17 करोड़ रुपये की लागत के साथ स्थापित यह प्रयोगशाला उन उपकरणों और सर्किटों के विद्युत प्रदर्शन को मापने में सक्षम बनाएगी, जिनका उपयोग इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में किया जाता है, जैसे कि मोबाइल फोन, अंतरिक्ष उपग्रह और क्वांटम कंप्यूटर इत्यादि। यह सुविधा आईआईटी, दिल्ली के शोधकर्ताओं के साथसाथ अन्य - संस्थानों के शोधकर्ताओं के लिए भी उपलब्ध होगी। आईआईटी, दिल्ली ने प्रयोगशाला की कोब्रांडिंग के लिए - कीसाइट टेक्नोलॉजीस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के साथ करार किया है।

इलेक्ट्रॉनिक उपकरण परीक्षण प्रयोगशाला का निरीक्षण करते हुए आईआईटी, दिल्ली के निदेशक प्रोफेसर वीरामगोपाल राव .

इस अवसर पर बोलते हुए, आईआईटी दिल्ली के निदेशक, प्रोरामगोपाल राव ने कहा .वी ., "आईआईटी दिल्ली ने पिछले कुछ वर्षों में नैनो फैब्रिकेशन, मैटेरियल्स के मूल्यांकन एवं लक्षण वर्णन, परीक्षण और प्रोटोटाइप निर्माण के क्षेत्रों में अपने अनुसंधान ढांचे को काफी बढ़ाया है। कीसाइट टेक्नोलॉजीस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के आंशिक समर्थन से स्थापित यह नई प्रयोगशाला इस क्षेत्र में मौजूदा सुविधाओं की सूची में महत्वपूर्ण है। आईआईटी, दिल्ली इस क्षेत्र में अनुसंधान गतिविधियों को मजबूत करने के लिए उद्योगों के साथ मिलकर काम करने के लिए तैयार है।"

इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग विभाग, आईआईटी, दिल्ली के प्रयोगशाला प्रभारी, प्रोफेसर अभिषेक दीक्षित ने कहा, "अब हम, 4.2K से +300 डिग्री सेल्सियस तक तापमान की एक विस्तृत श्रृंखला के साथ विभिन्न प्रकार के पैकेज्ड और ऑनवेफर उपकरणों पर विभिन्न प्रकार के विद्युतीय मापन करने की तकनीक से लैस हैं-।"

कीसाइट टेक्नोलॉजीस के वाइस प्रेसिडेंट और भारत में कंपनी के कंट्री जनरल मैनेजर, सुधीर तंगरी ने कहा, "यह उन्नत विद्युतीय लक्षण वर्णन सुविधा है, जो शोध की अनिश्चितताओं को कम करने के लिए उच्चतम सटीकता के साथ जटिल इलेक्ट्रॉनिक माप करने में सक्षम बनाती है। इस सुविधा केंद्र से, सेमीकंडक्टर्स, डीसीआरएफ-, और शोर संबंधी लक्षणों के मूल्यांकन में अनुसंधान को गति मिल सकेगी। उन्होंने कहा कि "कीसाइट इस नवोन्मेषी यात्रा का हिस्सा बनने को लेकर उत्साहित है।

अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के परीक्षण के लिए नई प्रयोगशाला स्थापित

20/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 20 सितंबर :(इंडिया साइंस वायर)इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के बिना विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के वर्तमान युग की कल्पना संभव नहीं है। इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की प्रभावी परफॉर्मेंस को सुनिश्चित करने के लिए उनका परीक्षण एक अनिवार्य आवश्यकता है। इन उपकरणों में प्रयुक्त होने वाले कलपुर्जों और सर्किटों के इलेक्ट्रिकल प्रदर्शन के मापन को सुनिश्चित करने के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), दिल्ली में एक प्रयोगशाला स्थापित की गई है।

इस उन्नत परीक्षण सुविधा को अत्याधुनिक तकनीक से लैस किया गया है, जहाँ मोबाइल फोन से लेकर क्वांटम कम्प्यूटिंग और अंतरिक्ष उपकरणों का परीक्षण करके उनकी गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सकेगी। आईआईटी, दिल्ली द्वारा इस प्रयोगशाला की स्थापना को एकीकृत इलेक्ट्रॉनिक सर्किट और उपकरणों के क्षेत्र में भारत के बेहतरीन अनुसंधान संस्थानों में अपनी स्थिति को अधिक मजबूत करने की दिशा में एक और कदम माना जा रहा है।

करीब 17 करोड़ रुपये की लागत के साथ स्थापित यह प्रयोगशाला उन उपकरणों और सर्किटों के विद्युत प्रदर्शन को मापने में सक्षम बनाएगी, जिनका उपयोग इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में किया जाता है, जैसे कि मोबाइल फोन, अंतरिक्ष उपग्रह और क्वांटम कंप्यूटर इत्यादि। यह सुविधा आईआईटी, दिल्ली के शोधकर्ताओं के साथसाथ अन्य-

संस्थानों के शोधकर्ताओं के लिए भी उपलब्ध होगी। आईआईटी, दिल्ली ने प्रयोगशाला की कोब्रांडिंग के लिए-कीसाइट टेक्नोलॉजीस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के साथ करार किया है।

इस अवसर पर बोलते हुए, आईआईटी दिल्ली के निदेशक, प्रोरामगोपाल राव ने कहा .वी ., "आईआईटी दिल्ली ने पिछले कुछ वर्षों में नैनो फैब्रिकेशन, मैटेरियल्स के मूल्यांकन एवं लक्षण वर्णन, परीक्षण और प्रोटोटाइप निर्माण के क्षेत्रों में अपने अनुसंधान ढांचे को काफी बढ़ाया है। कीसाइट टेक्नोलॉजीस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के आंशिक समर्थन से स्थापित यह नई प्रयोगशाला इस क्षेत्र में मौजूदा सुविधाओं की सूची में महत्वपूर्ण है। आईआईटी, दिल्ली इस क्षेत्र में अनुसंधान गतिविधियों को मजबूत करने के लिए उद्योगों के साथ मिलकर काम करने के लिए तैयार है।"

इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग विभाग, आईआईटी, दिल्ली के प्रयोगशाला प्रभारी, प्रोफेसर अभिषेक दीक्षित ने कहा, "अब हम, 4.2K से +300 डिग्री सेल्सियस तक तापमान की एक विस्तृत श्रृंखला के साथ विभिन्न प्रकार के पैकेज्ड और ऑन कवेफर उपकरणों पर विभिन्न प्रकार के विद्युतीय मापन करने की तकनी-से लैस हैं।" की साइट टेक्नोलॉजीस के वाइस प्रेसिडेंट और भारत में कंपनी के कंट्री जनरल मैनेजर, सुधीर तंगरी ने कहा,

"यह उन्नत विद्युतीय लक्षण वर्णन सुविधा है, जो शोध की अनिश्चितताओं को कम करने के लिए उच्चतम सटीकता के साथ जटिल इलेक्ट्रॉनिक माप करने में सक्षम बनाती है। इस सुविधा केंद्र से, सेमीकंडक्टर्स, डीसीआरएफ-, और शोर संबंधी लक्षणों के मूल्यांकन में अनुसंधान को गति मिल सकेगी।" उन्होंने कहा कि कीसाइट इस नवोन्मेषी यात्रा का हिस्सा बनने को लेकर उत्साहित है।

भारत हेराल्ड

अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के परीक्षण के लिए नई प्रयोगशाला स्थापित

1 week ago

नई दिल्ली, 20 सितंबर: इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के बिना विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के वर्तमान युग की कल्पना संभव नहीं है। इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की प्रभावी परफॉर्मेंस को सुनिश्चित करने के लिए उनका परीक्षण एक अनिवार्य आवश्यकता है। इन उपकरणों में प्रयुक्त होने वाले कलपुर्जों और सर्किटों के इलेक्ट्रिकल प्रदर्शन के मापन को सुनिश्चित करने के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), दिल्ली में एक प्रयोगशाला स्थापित की गई है।

इस उन्नत परीक्षण सुविधा को अत्याधुनिक तकनीक से लैस किया गया है, जहाँ मोबाइल फोन से लेकर क्वांटम कम्प्यूटिंग और अंतरिक्ष उपकरणों का परीक्षण करके उनकी गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सकेगी। आईआईटी, दिल्ली द्वारा इस प्रयोगशाला की स्थापना को एकीकृत इलेक्ट्रॉनिक सर्किट और उपकरणों के क्षेत्र में भारत के बेहतरीन अनुसंधान संस्थानों में अपनी स्थिति को अधिक मजबूत करने की दिशा में एक और कदम माना जा रहा है।

करीब 17 करोड़ रुपये की लागत के साथ स्थापित यह प्रयोगशाला उन उपकरणों और सर्किटों के विद्युत प्रदर्शन को मापने में सक्षम बनाएगी, जिनका उपयोग इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में किया जाता है, जैसे कि मोबाइल फोन, अंतरिक्ष उपग्रह और क्वांटम कंप्यूटर इत्यादि। यह सुविधा आईआईटी, दिल्ली के शोधकर्ताओं के साथ के शोधकर्ताओं के संस्थानों अन्य साथ-

आईआईटी होगी। उपलब्ध भी लिए, दिल्ली ने प्रयोगशाला की को प्राइवेट इंडिया टेक्नोलॉजीस कीसाइट लिए के ब्रांडिंग-लिमिटेड के साथ करार किया है।

आईआईटी, दिल्ली में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के लिए उन्नत परीक्षण सुविधा

इस अवसर पर बोलते हुए, आईआईटी दिल्ली के निदेशक, प्रोकहा ने राव रामगोपाल .वी ., “आईआईटी दिल्ली ने पिछले कुछ वर्षों में नैनो फैब्रिकेशन, मैटेरियल्स के मूल्यांकन एवं लक्षण वर्णन, परीक्षण और प्रोटोटाइप निर्माण के क्षेत्रों में अपने अनुसंधान ढांचे को काफी बढ़ाया है। कीसाइट टेक्नोलॉजीस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के आंशिक समर्थन से स्थापित यह नई प्रयोगशाला इस क्षेत्र में मौजूदा सुविधाओं की सूची में महत्वपूर्ण है। आईआईटी, दिल्ली इस क्षेत्र में अनुसंधान गतिविधियों को मजबूत करने के लिए उद्योगों के साथ मिलकर काम करने के लिए तैयार है।”

इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग विभाग, आईआईटी, दिल्ली के प्रयोगशाला प्रभारी, प्रोफेसर अभिषेक दीक्षित ने कहा, “अब हम, 4.2K से +300 डिग्री सेल्सियस तक तापमान की एक विस्तृत श्रृंखला के साथ विभिन्न प्रकार के पैकेज्ड और ऑन वेफर-हैं। लैस से तकनीक की करने मापन विद्युतीय के प्रकार विभिन्न पर उपकरणों”

कीसाइट टेक्नोलॉजीस के वाइस प्रेसिडेंट और भारत में कंपनी के कंट्री जनरल मैनेजर, सुधीर तंगरी ने कहा, “यह उन्नत विद्युतीय लक्षण वर्णन सुविधा है, जो शोध की अनिश्चितताओं को कम करने के लिए उच्चतम सटीकता के साथ जटिल इलेक्ट्रॉनिक माप करने में सक्षम बनाती है। इस सुविधा केंद्र से, सेमीकंडक्टर्स, डीसीआरएफ-, और शोर संबंधी लक्षणों के मूल्यांकन में अनुसंधान को गति मिल सकेगी।” उन्होंने कहा कि कीसाइट इस नवोन्मेषी यात्रा का हिस्सा बनने को लेकर उत्साहित है। (वायर साइंस इंडिया)

दी इंडियन बुलेटिन

अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के परीक्षण के लिए नई प्रयोगशाला स्थापित

1 week ago

नई दिल्ली, 20 सितंबर: इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के बिना विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के वर्तमान युग की कल्पना संभव नहीं है। इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की प्रभावी परफॉर्मेंस को सुनिश्चित करने के लिए उनका परीक्षण एक अनिवार्य आवश्यकता है। इन उपकरणों में प्रयुक्त होने वाले कलपुर्जों और सर्किटों के इलेक्ट्रिकल प्रदर्शन के मापन को सुनिश्चित करने के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), दिल्ली में एक प्रयोगशाला स्थापित की गई है।

इस उन्नत परीक्षण सुविधा को अत्याधुनिक तकनीक से लैस किया गया है, जहाँ मोबाइल फोन से लेकर क्वांटम कम्प्यूटिंग और अंतरिक्ष उपकरणों का परीक्षण करके उनकी गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सकेगी। आईआईटी, दिल्ली द्वारा इस प्रयोगशाला की स्थापना को एकीकृत इलेक्ट्रॉनिक सर्किट और उपकरणों के क्षेत्र में भारत के बेहतरीन अनुसंधान संस्थानों में अपनी स्थिति को अधिक मजबूत करने की दिशा में एक और कदम माना जा रहा है।

करीब 17 करोड़ रुपये की लागत के साथ स्थापित यह प्रयोगशाला उन उपकरणों और सर्किटों के विद्युत प्रदर्शन को मापने में सक्षम बनाएगी, जिनका उपयोग इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में किया जाता है, जैसे कि मोबाइल फोन, अंतरिक्ष उपग्रह और क्वांटम कंप्यूटर इत्यादि। यह सुविधा आईआईटी, दिल्ली के शोधकर्ताओं के साथसा-थ अन्य संस्थानों के शोधकर्ताओं के

लिए भी उपलब्ध होगी। आईआईटी, दिल्ली ने प्रयोगशाला की को प्राइवेट इंडिया टेक्नोलॉजीस कीसाइट लिए के ब्रांडिंग-है। किया करार साथ के लिमिटेड

आईआईटी, दिल्ली में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के लिए उन्नत परीक्षण सुविधा

इस अवसर पर बोलते हुए, आईआईटी दिल्ली के निदेशक, प्रोकहा ने राव रामगोपाल .वी ., "आईआईटी दिल्ली ने पिछले कुछ वर्षों में नैनो फैब्रिकेशन, मैटेरियल्स के मूल्यांकन एवं लक्षण वर्णन, परीक्षण और प्रोटोटाइप निर्माण के क्षेत्रों में अपने अनुसंधान ढांचे को काफी बढ़ाया है। कीसाइट टेक्नोलॉजीस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के आंशिक समर्थन से स्थापित यह नई प्रयोगशाला इस क्षेत्र में मौजूदा सुविधाओं की सूची में महत्वपूर्ण है। आईआईटी, दिल्ली इस क्षेत्र में अनुसंधान गतिविधियों को मजबूत करने के लिए उद्योगों के साथ मिलकर काम करने के लिए तैयार है।"

इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग विभाग, आईआईटी, दिल्ली के प्रयोगशाला प्रभारी, प्रोफेसर अभिषेक दीक्षित ने कहा, "अब हम, 4.2K से +300 डिग्री सेल्सियस तक तापमान की एक विस्तृत श्रृंखला के साथ विभिन्न प्रकार के पैकेज्ड और ऑन वेफर- मापन विद्युतीय के प्रकार विभिन्न पर उपकरणोंकरने की तकनीक से लैस हैं।"

कीसाइट टेक्नोलॉजीस के वाइस प्रेसिडेंट और भारत में कंपनी के कंट्री जनरल मैनेजर, सुधीर तंगरी ने कहा, "यह उन्नत विद्युतीय लक्षण वर्णन सुविधा है, जो शोध की अनिश्चितताओं को कम करने के लिए उच्चतम सटीकता के साथ जटिल इलेक्ट्रॉनिक माप करने में सक्षम बनाती है। इस सुविधा केंद्र से, सेमीकंडक्टर्स, डीसीआरएफ-, और शोर संबंधी लक्षणों के मूल्यांकन में अनुसंधान को गति मिल सकेगी।" उन्होंने कहा कि कीसाइट इस नवोन्मेषी यात्रा का हिस्सा बनने को लेकर उत्साहित है। (वायर साइंस इंडिया)

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

अत्याधुनिक इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के परीक्षण के लिए नई प्रयोगशाला स्थापित

By **Rupesh Dharmik** - September 20, 2021

नई दिल्ली, 20 सितंबर: इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के बिना विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के वर्तमान युग की कल्पना संभव नहीं है। इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की प्रभावी परफॉर्मेंस को सुनिश्चित करने के लिए उनका परीक्षण एक अनिवार्य आवश्यकता है। इन उपकरणों में प्रयुक्त होने वाले कलपुर्जों और सर्किटों के इलेक्ट्रिकल प्रदर्शन के मापन को सुनिश्चित करने के लिए भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), दिल्ली में एक प्रयोगशाला स्थापित की गई है।

इस उन्नत परीक्षण सुविधा को अत्याधुनिक तकनीक से लैस किया गया है, जहाँ मोबाइल फोन से लेकर क्वांटम कम्प्यूटिंग और अंतरिक्ष उपकरणों का परीक्षण करके उनकी गुणवत्ता सुनिश्चित की जा सकेगी। आईआईटी, दिल्ली द्वारा इस प्रयोगशाला की स्थापना को एकीकृत इलेक्ट्रॉनिक सर्किट और उपकरणों के क्षेत्र में भारत के बेहतरीन अनुसंधान संस्थानों में अपनी स्थिति को अधिक मजबूत करने की दिशा में एक और कदम माना जा रहा है।

करीब 17 करोड़ रुपये की लागत के साथ स्थापित यह प्रयोगशाला उन उपकरणों और सर्किटों के विद्युत प्रदर्शन को मापने में सक्षम बनाएगी, जिनका उपयोग इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों में किया जाता है, जैसे कि मोबाइल फोन, अंतरिक्ष उपग्रह और क्वांटम कंप्यूटर

इत्यादि। यह सुविधा आईआईटी, दिल्ली के शोधकर्ताओं के साथ साथ-अन्य संस्थानों के शोधकर्ताओं के लिए भी उपलब्ध होगी। आईआईटी, दिल्ली ने प्रयोगशाला की कोब्रांडिंग के लिए कीसाइट टेक्नोलॉजीस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के साथ करार किया है।-

आईआईटी, दिल्ली में इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के लिए उन्नत परीक्षण सुविधा

इस अवसर पर बोलते हुए, आईआईटी दिल्ली के निदेशक, प्रोरामगोपाल राव ने कहा .वी ., "आईआईटी दिल्ली ने पिछले कुछ वर्षों में नैनो फैब्रिकेशन, मैटेरियल्स के मूल्यांकन एवं लक्षण वर्णन, परीक्षण और प्रोटोटाइप निर्माण के क्षेत्रों में अपने अनुसंधान ढांचे को काफी बढ़ाया है। कीसाइट टेक्नोलॉजीस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड के आंशिक समर्थन से स्थापित यह नई प्रयोगशाला इस क्षेत्र में मौजूदा सुविधाओं की सूची में महत्वपूर्ण है। आईआईटी, दिल्ली इस क्षेत्र में अनुसंधान गतिविधियों को मजबूत करने के लिए उद्योगों के साथ मिलकर काम करने के लिए तैयार है।"

इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग विभाग, आईआईटी, दिल्ली के प्रयोगशाला प्रभारी, प्रोफेसर अभिषेक दीक्षित ने कहा, "अब हम, 4.2K से +300 डिग्री सेल्सियस तक तापमान की एक विस्तृत श्रृंखला के साथ विभिन्न प्रकार के पैकेज्ड और ऑनवेफर उपकरणों पर विभिन्न - प्रकार के विद्युतीय मापनकरने की तकनीक से लैस हैं।"

कीसाइट टेक्नोलॉजीस के वाइस प्रेसिडेंट और भारत में कंपनी के कंट्री जनरल मैनेजर, सुधीर तंगरी ने कहा, "यह उन्नत विद्युतीय लक्षण वर्णन सुविधा है, जो शोध की अनिश्चितताओं को कम करने के लिए उच्चतम सटीकता के साथ जटिल इलेक्ट्रॉनिक माप करने में सक्षम बनाती है। इस सुविधा केंद्र से, सेमीकंडक्टर्स, डीसीआरएफ-, और शोर संबंधी लक्षणों के मूल्यांकन में अनुसंधान को गति मिल सकेगी।" उन्होंने कहा कि कीसाइट इस नवोन्मेषी यात्रा का हिस्सा बनने को लेकर उत्साहित है। (इंडिया साइंस वायर)

Hindustan Saga

New data processing technique to accurately measure soot

Hindustan Saga | 7 days ago

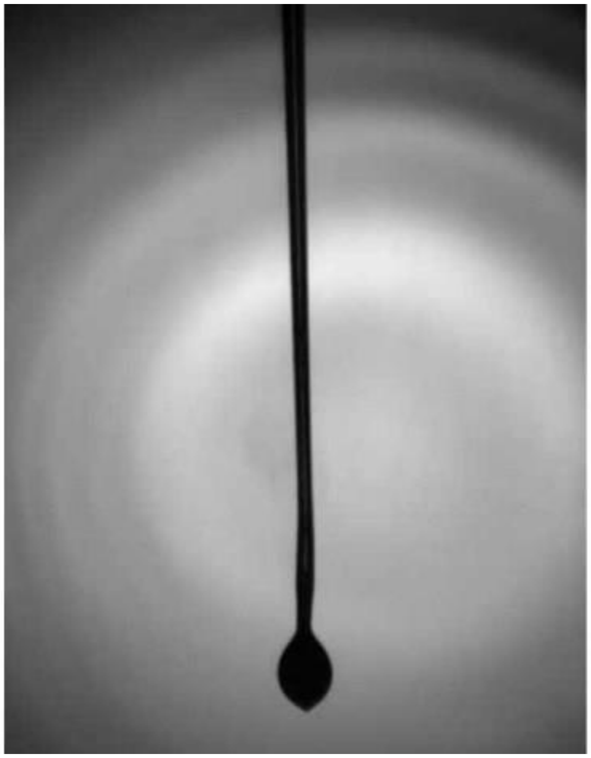

Image from toluene droplet combustion process (Photo: Sankaranarayanan et al.)

New Delhi, Sep 21: Tiny black particles that rise from a campfire flame, called soot, are formed when the fuel doesn't burn entirely. When fuel burns properly, a blue flame is seen, whereas the flame is yellow when the soot is formed during burning and it becomes hot. Soot can cause cancer and respiratory and cardiac disorders. Soot can also reduce the life of machine parts.

Led by Prof Neeraj Kumbhakarna, researchers from the IIT, Bombay, have demonstrated a new technique to effectively reduce measurement errors when soot is present in low amounts. This study shows how soot is formed and measures the quantity of soot under various conditions, such as varying amounts of air for different fuels. The data helps designers minimise soot and design better combustion-based devices such as internal combustion engines, like the ones used in automobiles. Even small amounts of soot can cause damage, but it is difficult to measure small soot volumes accurately.

Researchers use digital images of burning fuel to guess its temperature and use the information to estimate the soot volume. Collecting and weighing the soot and studying a light beam shone on soot

particles are some other methods to measure the amount of soot. The current study uses the last method. The researchers passed a beam of red laser light of a specific frequency, through a droplet of burning fuel and took images as it burnt. The light falling on the camera also contains the light from the burning fuel. The researchers used a narrow band filter to let only the laser light pass and filter out the light emitted by the burning fuel, IIT, Bombay statement said.

"When a flame having soot particles is shone with light, called background light, the particles absorb and scatter some of this light, so light reaching the camera is less bright," explains Dr Anand Sankaranarayanan from IIT Bombay, who is a co-author of the study.

The researchers used the relation between the initial brightness of the laser light, the brightness of the light falling on the camera and the soot volume to calculate the amount of soot. A data-processing technique was used to compute the values of brightness from their images. Their challenge was to estimate the initial brightness of background light falling on soot particles, since it isn't directly captured in the images.

In previous studies, scientists calculated the average brightness of background light from some additional images taken before burning the fuel. They used the average as an estimate of the actual brightness of background light. But a laser light flickers every few milliseconds. In the current study, the researchers predicted the brightness of background light at every moment instead of using an average. They observed the flickers in background light at areas present outside the flame of the burning fuel, where there is no soot. They used it to estimate the background light falling on the soot particles.

"Using our new data processing technique, we got lower errors, especially when the amount of soot produced is low. Our technique does not require any additional equipment or extra expenditure, which is an added advantage," says Dr Sankaranarayanan.

To further reduce errors in the experiment, the researchers passed the laser light beam through a fixed and a rotating diffuser- a glass sheet that scatters light, before the light was incident on the burning fuel. A diffuser gives an evenly bright light and avoids the many speckles in the camera image.

A fuel that usually produces low amounts of soot, when burnt incompletely without sufficient oxygen and air or with little time to burn, can give high amounts of soot.

"For practical combustion devices, there is a range of operating conditions where soot is not formed and a range where soot formation suddenly starts happening. So if we were to use a similar setup for analysing the conditions in which there is a transition from no soot to very low soot to high soot, this study could be useful," feels DrSankaranarayanan. "This is useful to design better devices and identify the right operating conditions so that formation of soot is minimal," he adds.

The study has been published in the Journal of Aerosol Science and was jointly funded by the Industrial Research & Consultancy Centre, IIT, Bombay, and the Indian Space Research Organization (ISRO). (India Science Wire)

Study to help develop better treatment for blood-related disorders

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 22ND SEPTEMBER 2021

New Delhi, Sep 22: Newer and better treatments could soon be on the anvil for **leukemia** and other blood-related disorders with researchers developing a new model that could give a better insight into the molecular mechanism behind their development.

Every cell in the human body, and that of other mammals, originates from stem cells and progenitor cells.

Studies have established *Drosophila* or fruit fly as the ideal model system to study how blood cells develop in human beings.

What is lymph gland?

The blood-forming organ of the fruit fly larvae is a specialized multi-lobed system called the **lymph gland**. Spanning from the thoracic to the abdominal segment of the larvae, this organ comprises a pair of primary, secondary, and tertiary lobes.

Studies so far have mainly been confined to understanding the happenings in the primary lobe. Secondary and tertiary lobes have remained mostly unexplored. Some studies have inferred that they are composed of progenitor cells that differentiate during pupation.

However, the mechanistic basis of this extended progenitor state has remained unclear.

The new study conducted by researchers at the Indian Institutes of Science Education and Research (IISER) – Mohali, has now filled the gap. It has shown that a local signaling system defined by two genes called Ultrabithorax (Ubx) and Collier in the tertiary lobe regulated the activities of the progenitors in the tertiary as also secondary lobes and that the system shared several biomarkers with the local environment of the primary lobe.

Speaking to India Science Wire, the leader of the study team, Professor Lolitika Mandal, said,

"Our study establishes the lymph gland as a model to tease out how the progenitors interface with the dual niches within an organ during development and disorders. Our work provides a model that can be used to understand how multiple niches interact with progenitors during development and disease. This will be particularly important since the blood stem cell "niche" in mammalian bone marrow has multiple niches. How diverse signals coming from multiple niches interact during development and blood-related disorders could be addressed in this testable model".

Who is included in the study team?

The study team included Aditya Kanwal, Pranav Vijay Joshi, and Sudip Mandal. They have published a report on their findings in the journal `PLOS Genetics'.

What diseases are included in common blood disorders?

Common blood disorders include **anemia**, bleeding disorders such as hemophilia, blood clots, and blood cancers such as **leukemia**, lymphoma, and myeloma. The new study would particularly help in dealing with blood cancers.

(India Science News)

WEBDUNIA हिंदी

‘अपशिष्ट जल से ऊर्जा बनाने में अधिक सक्षम है पौधा-आधारित माइक्रोबियल फ्यूल सेल’

Last Updated: मंगलवार, 21 सितम्बर 2021 (19:03 IST)

नई दिल्ली, जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बहुत अधिक ऊर्जा अंतर्निहित होती है। कचरे के उपचार के साथ उससे ऊर्जा उत्पन्न करने में पूरी दुनिया में रुचि बढ़ रही है, क्योंकि इससे 'एक पंथ, दो काज' सिद्ध हो सकते हैं।

माइक्रोबियल फ्यूल सेल एक ऐसी ही बायोइलेक्ट्रोकेमिकल प्रक्रिया है (एफसीएम), जिसमें बैक्टीरिया द्वारा उत्प्रेरित जैव रासायनिक प्रतिक्रिया से प्राप्त-इलेक्ट्रॉनों का उपयोग करके ऊर्जा का उत्पादन किया जाता है।

एक नये अध्ययन में यह पता चला है कि पादपआधारित माइक्रोबियल फ्यूल सेल-, शैवाल)Algae) आधारित तंत्र की तुलना में अपशिष्ट जल से बिजली उत्पादन में कहीं अधिक सक्षम हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान आईआईटी)ी(, जोधपुर के जैव विज्ञान एवं जैव आभियांत्रिकी विभाग में (बायोसाइंस ऐंड बायोइंजीनियरिंग)

में यह अध्ययन किया गया है।एसोसिएट प्रोफेसर डॉ मनु छाबड़ा के नेतृत्व

अपशिष्ट जल का शोधन आज के दौर की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जल की उत्तरोत्तर बढ़ती खपत के साथ घरेलू अपशिष्ट जल की मात्रा में बढ़ोतरी हो रही है।ऐसे में उसके निपटान एवं शोधन के लिए नई तकनीकों का विकास आवश्यक है।

आईआईटी, जोधपुर द्वारा विकसित तकनीक इस दिशा में महत्वपूर्ण साबित हो सकती है। जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बड़ी मात्रा में गुप्त ऊर्जा समाहित रहती है। वहीं सामान्य घरेलू कचरे के समाधान में करीब नौ गुना अधिक ऊर्जा की खपत होती है। यही कारण है कि आज जल शोधन की प्रक्रिया में निकले कचरे से ऊर्जा उत्पादन में पूरे विश्व की रुचि है।

माइक्रोबायल फ्यूल सेल ऐसा डिवाइस है (एमएफसी), जो अपशिष्ट जल में कार्बनिक पदार्थ को विद्युत ऊर्जा में रूपांतरित करता है। हालांकि माइक्रोब्स से ऊर्जा उत्पादन का विचार एकदम नया नहीं है। वर्ष 1911 में डरहम विश्वविद्यालय में वनस्पतिशास्त्र के प्रोफेसर माइकल पॉटर ने इस आशय का विचार प्रस्तुत किया था।

प्रोफेसर छाबड़ा ने बताया है कि हालिया शोध में जिस फ्यूल सेल्स का इस्तेमाल हुआ है वह दो समस्याओं का एक साथ समाधान करता है। इससे जहां कचरे के निपटान की समस्या सुलझ जाती है, वहीं इससे ऊर्जा भी प्राप्त होती है।

वास्तव में एमएफसी में जीवित सूक्ष्मजीवी अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थों पर सक्रिय रहते हैं और बाहरी भार से निकाले गए इलेक्ट्रॉनों को मुक्त करते हैं, जिससे बिजली उत्पन्न होती है।

प्रकाश संश्लेषक एमएफसी, ईंधन सेल के कैथोड पर अपशिष्ट से ऑक्सीजन उत्पन्न करने के लिए शैवाल या पौधे का उपयोग करते हैं। हाल के वर्षों में एलेगी आधारित तंत्रों पर व्यापक रूप से अध्ययन हुआ है, क्योंकि शैवाल बहुत तेजी से वृद्धि करते हैं, परंतु उत्पादन की स्थिति के दृष्टिकोण से संवेदनशील हैं। वहीं पादपधीमे -तंत्र धीमे - विकसित होते हैं और एलेगी आधारित आधारित एमएफसी की तुलना में कम क्षमता वाले लेकिन उनसे अधिक मजबूत होते हैं।

इस अध्ययन का दौरान शोधकर्ताओं ने शैवाल और पादप आधारित एमएफसी के प्रदर्शन की प्रयोगात्मक तुलना की है।' दोनों की तुलना प्रदूषक हटाने की दक्षता और विद्युत ऊर्जा उत्पादन की दक्षता के संदर्भ में भी की गई है। शोधकर्ताओं ने पादप आधारित एमएफसी के लिए कैन इंडिका और शैवालआधारित एफएमसी के लिए - क्लोरेला वल्गारिस का प्रयोग किया है। अध्ययन के क्रम में, आईआईटी जोधपुर के विकेन्द्रीकृत अपशिष्ट जल उपचार संयंत्र से प्राप्त प्राकृतिक अपशिष्ट जल का उपयोग किया गया।-“हमने पाया कि पादप आधारित एमएफसी बेहतर अनुकूल हैं क्योंकि वे मजबूत, स्थिर हैं और बिजली उत्पादन के दृष्टिकोण से भी बेहतर हैं,’ प्रोफेसर छाबड़ा बताते हैं।

भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की सहायता से पूर्ण हुआ यह शोध बायोरिसोर्स (डीएसटी) टेक्नोलॉजी नाम के जर्नल में भी प्रकाशित हुआ है। प्रोफेसर छाबड़ा के साथआरती शर्मा, संजना गजभिये और श्वेता चौहान इस शोध की सहलेखिका हैं।- ***(इंडिया साइंस वायर(***

‘अपशिष्ट जल से ऊर्जा बनाने में अधिक सक्षम है पौधा-आधारित माइक्रोबियल फ्यूल सेल’: अध्ययन

21/09/2021 V3news India

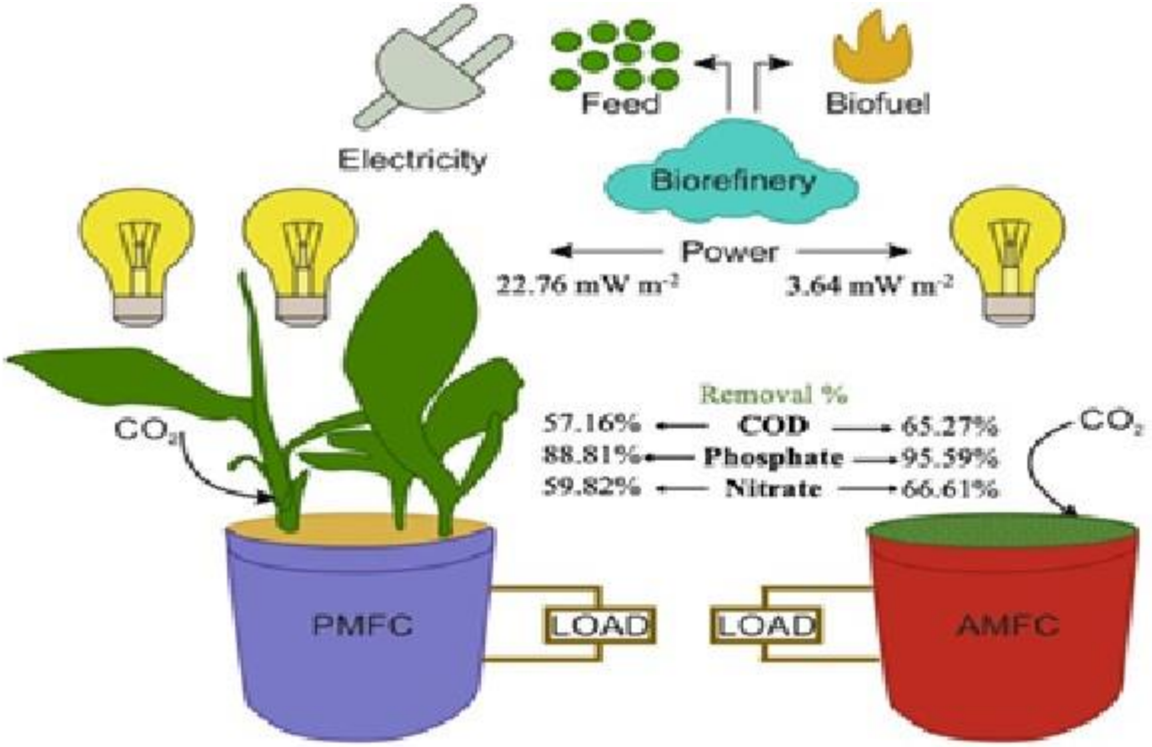

नई दिल्ली, 21 सितंबर के जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बहुत अधिक ऊर्जा अंतर्निहित होती है। कचरे :(इंडिया साइंस वायर) उपचार के साथ उससे ऊर्जा उत्पन्न करने में पूरी दुनिया में रुचि बढ़ रही है, क्योंकि इससे ‘एक पंथ, दो काज’ सिद्ध हो सकते हैं। माइक्रोबियल फ्यूल सेल एक ऐसी ही बायोइलेक्ट्रोकेमिकल प्रक्रिया है (एमएफसी), जिसमें बैक्टीरिया द्वारा उत्प्रेरित जैव-या से प्राप्त इलेक्ट्रॉनों का उपयोग करके ऊर्जा का उत्पादन किया जाता है।रासायनिक प्रतिक्रि

एक नये अध्ययन में यह पता चला है कि पादपआधारित माइक-्रोबियल फ्यूल सेल, शैवाल)Algae) आधारित तंत्र की तुलना में अपशिष्ट जल से बिजली उत्पादन में कहीं अधिक सक्षम हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), जोधपुर के जैव विज्ञान एवं जैव आभियांत्रिकी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डॉ म (बायोसाइंस ऐंड बायोइंजीनियरिंग)नु छाबड़ा के नेतृत्व में यह अध्ययन किया गया है।

अपशिष्ट जल का शोधन आज के दौर की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जल की उत्तरोत्तर बढ़ती खपत के साथ घरेलू अपशिष्ट जल की मात्रा में बढ़ोतरी हो रही है।ऐसे में उसके निपटान एवं शोधन के लिए नई तकनीकों का विकास आवश्यक है।

आईआईटी, जोधपुर द्वारा विकसित तकनीक इस दिशा में महत्वपूर्ण साबित हो सकती है। जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बड़ी मात्रा में गुप्त ऊर्जा समाहित रहती है। वहीं सामान्य घरेलू कचरे के समाधान में करीब नौ गुना अधिक ऊर्जा की खपत होती है।

यही कारण है कि आज जल शोधन की प्रक्रिया में निकले कचरे से ऊर्जा उत्पादन में पूरे विश्व की रुचि है। माइक्रोबायल फ्यूल सेल ऐसा डिवाइस है (एमएफसी), जो अपशिष्ट जल में कार्बनिक पदार्थ को विद्युत ऊर्जा में रूपांतरित करता है।हालांकि माइक्रोब्स से ऊर्जा उत्पादन का विचार एकदम नया नहीं है। वर्ष 1911 में डरहम विश्वविद्यालय में वनस्पतिशास्त्र के प्रोफेसर माइकल पॉटर ने इस आशय का विचार प्रस्तुत किया था।

प्रोफेसर छाबड़ा ने बताया है कि हालिया शोध में जिस फ्यूल सेल्स का इस्तेमाल हुआ है वह दो समस्याओं का एक साथ समाधान करता है। इससे जहां कचरे के निपटान की समस्या सुलझ जाती है, वहीं इससे ऊर्जा भी प्राप्त होती है। वास्तव में एमएफसी में जीवित सूक्ष्मजीवी अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थों पर सक्रिय रहते हैं और बाहरी भार से निकाले गए इलेक्ट्रॉनों को मुक्त करते हैं, जिससे बिजली उत्पन्न होती है।

प्रकाश संश्लेषक एमएफसी, ईंधन सेल के कैथोड पर अपशिष्ट से ऑक्सीजन उत्पन्न करने के लिए शैवाल या पौधे का उपयोग करते हैं। हाल के वर्षों में एलेगी आधारित तंत्रों पर व्यापक रूप से अध्ययन हुआ है, क्योंकि शैवाल बहुत तेजी से वृद्धि करते हैं, परंतु उत्पादन की स्थिति के दृष्टिकोण से संवेदनशील हैं। वहीं पादपधीमे विकसित होते हैं और एलेगी -तंत्र धीमे -ते हैं।आधारित आधारित एमएफसी की तुलना में कम क्षमता वाले लेकिन उनसे अधिक मजबूत हो

इस अध्ययन का दौरान शोधकर्ताओं ने शैवाल और पादप आधारित एमएफसी के प्रदर्शन की प्रयोगात्मक तुलना की है।' दोनों की तुलना प्रदूषक हटाने की दक्षता और विद्युत ऊर्जा उत्पादन की दक्षता के संदर्भ में भी की गई है। शोधकर्ताओं ने पादप आधारित एमएफसी के लिए कैन इंडिका और शैवालआधा-रित एफएमसी के लिए क्लोरेला वल्गारिस का प्रयोग किया है।

अध्ययन के क्रम में, आईआईटी जोधपुर के विकेन्द्रीकृत अपशिष्ट जल उपचार संयंत्र से प्राप्त प्राकृतिक अपशिष्टजल का उपयोग - किया गया।"हमने पाया कि पादप आधारित एमएफसी बेहतर अनुकूल हैं क्योंकि वे मजबूत, स्थिर हैं और बिजली उत्पादन के दृष्टिकोण से भी बेहतर हैं,' प्रोफेसर छाबड़ा बताते हैं। भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की सहायता (डीएसटी) के साथ आरती शर्मा से पूर्ण हुआ यह शोध बायोरिसोर्स टेक्नोलॉजी नाम के जर्नल में भी प्रकाशित हुआ है। प्रोफेसर छाबड़ा ा, संजना गजभिये और श्वेता चौहान इस शोध की सहलेखिका हैं।-

India हिन्दी waterportal

'अपशिष्ट जल से ऊर्जा बनाने में अधिक सक्षम है पौधा-आधारित माइक्रोबियल फ्यूल सेल': अध्ययन

Source: इंडिया साइंस वायर Submitted by Editorial Team on Wed, 09/22/2021 - 09:54

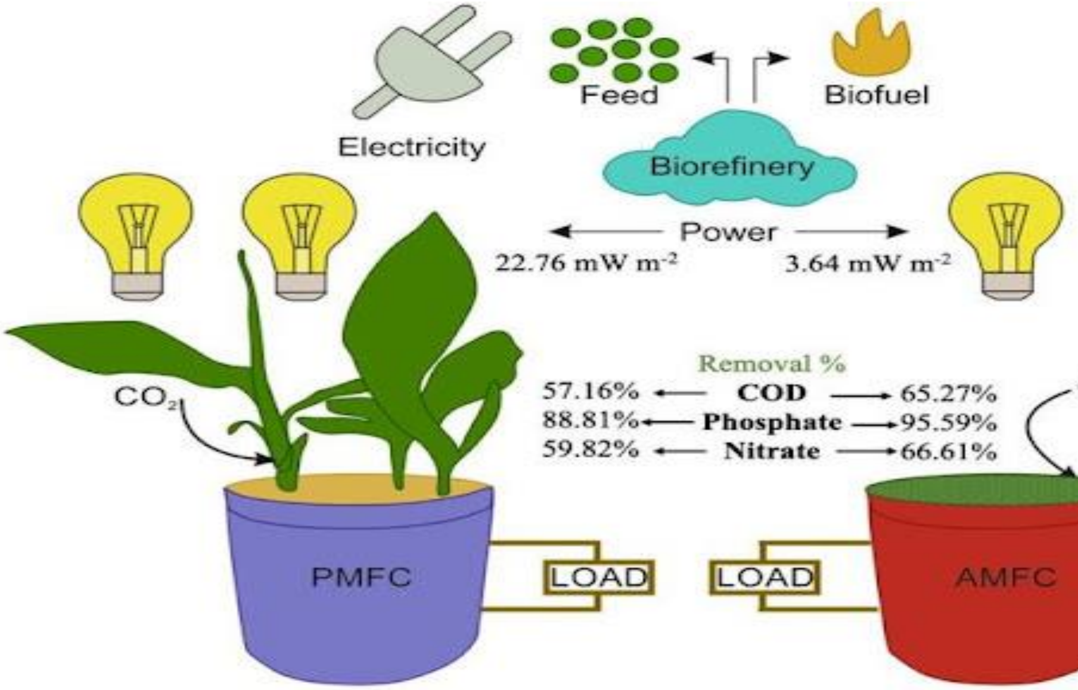

बायोफ्यूल रिसर्च का चित्रण

नई दिल्ली, 21 सितंबर (इंडिया साइंस वायर): जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बहुत अधिक ऊर्जा अंतर्निहित होती है। कचरे के उपचार के साथ उससे ऊर्जा उत्पन्न करने में पूरी दुनिया में रुचि बढ़ रही है, क्योंकि इससे 'एक पंथ, दो काज' सिद्ध हो सकते हैं। माइक्रोबियल फ्यूल सेल (एमएफसी) एक ऐसी ही बायोइलेक्ट्रोकेमिकल प्रक्रिया है, जिसमें बैक्टीरिया द्वारा उत्प्रेरित जैव-रासायनिक प्रतिक्रिया से प्राप्त इलेक्ट्रॉनों का उपयोग करके ऊर्जा का उत्पादन किया जाता है।

एक नये अध्ययन में यह पता चला है कि पादप-आधारित माइक्रोबियल फ्यूल सेल, शैवाल (Algae) आधारित तंत्र की तुलना में अपशिष्ट जल से बिजली उत्पादन में कहीं अधिक सक्षम हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), जोधपुर के जैव विज्ञान एवं जैव आभियांत्रिकी (बायोसाइंस ऐंड बायोइंजीनियरिंग) विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डॉ मनु छाबड़ा के नेतृत्व में यह अध्ययन किया गया है।

अपशिष्ट जल का शोधन आज के दौर की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जल की उत्तरोत्तर बढ़ती खपत के साथ घरेलू अपशिष्ट जल की मात्रा में बढ़ोतरी हो रही है।ऐसे में उसके निपटान एवं शोधन के लिए नई तकनीकों का विकास आवश्यक है। आईआईटी, जोधपुर द्वारा विकसित तकनीक इस दिशा में महत्वपूर्ण साबित हो सकती है।

जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बड़ी मात्रा में गुप्त ऊर्जा समाहित रहती है। वहीं सामान्य घरेलू कचरे के समाधान में करीब नौ गुना अधिक ऊर्जा की खपत होती है। यही कारण है कि आज जल शोधन की प्रक्रिया में निकले कचरे से ऊर्जा उत्पादन में पूरे विश्व की रुचि है।

माइक्रोबायल फ्यूल सेल (एमएफसी) ऐसा डिवाइस है, जो अपशिष्ट जल में कार्बनिक पदार्थ को विद्युत ऊर्जा में रूपांतरित करता है।हालांकि माइक्रोब्स से ऊर्जा उत्पादन का विचार एकदम नया नहीं है। वर्ष 1911 में डरहम विश्वविद्यालय में वनस्पतिशास्त्र के प्रोफेसर माइकल पॉटर ने इस आशय का विचार प्रस्तुत किया था।

प्रोफेसर छाबड़ा ने बताया है कि हालिया शोध में जिस फ्यूल सेल्स का इस्तेमाल हुआ है वह दो समस्याओं का एक साथ समाधान करता है। इससे जहां कचरे के निपटान की समस्या सुलझ जाती है, वहीं इससे ऊर्जा भी प्राप्त होती है। वास्तव में एमएफसी में जीवित सूक्ष्मजीवी अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थों पर सक्रिय रहते हैं और बाहरी भार से निकाले गए इलेक्ट्रॉनों को मुक्त करते हैं, जिससे बिजली उत्पन्न होती है।

प्रकाश संश्लेषक एमएफसी, ईंधन सेल के कैथोड पर अपशिष्ट से ऑक्सीजन उत्पन्न करने के लिए शैवाल या पौधे का उपयोग करते हैं। हाल के वर्षों में एलेगी आधारित तंत्रों पर व्यापक रूप से अध्ययन हुआ है, क्योंकि शैवाल बहुत तेजी से वृद्धि करते हैं, परंतु उत्पादन की स्थिति के दृष्टिकोण से संवेदनशील हैं। वहीं पादप- तंत्र धीमे-धीमे विकसित होते हैं और एलेगी आधारित आधारित एमएफसी की तुलना में कम क्षमता वाले लेकिन उनसे अधिक मजबूत होते हैं।

इस अध्ययन का दौरान शोधकर्ताओं ने शैवाल और पादप आधारित एमएफसी के प्रदर्शन की प्रयोगात्मक तुलना की है।' दोनों की तुलना प्रदूषक हटाने की दक्षता और विद्युत ऊर्जा उत्पादन की दक्षता के संदर्भ में भी की गई है। शोधकर्ताओं ने पादप आधारित एमएफसी के लिए कैन इंडिका और शैवाल-आधारित एफएमसी के लिए क्लोरेला वल्गारिस का प्रयोग किया है। अध्ययन के क्रम में, आईआईटी जोधपुर के विकेन्द्रीकृत अपशिष्ट जल उपचार संयंत्र से प्राप्त प्राकृतिक अपशिष्ट-जल का उपयोग किया गया। "हमने पाया कि पादप आधारित एमएफसी बेहतर अनुकूल हैं क्योंकि वे मजबूत, स्थिर हैं और बिजली उत्पादन के दृष्टिकोण से भी बेहतर हैं,' प्रोफेसर छाबड़ा बताते हैं।

भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी (डीएसटी) विभाग की सहायता से पूर्ण हुआ यह शोध बायोरिसोर्स टेक्नोलॉजी नाम के जर्नल में भी प्रकाशित हुआ है। प्रोफेसर छाबड़ा के साथ आरती शर्मा, संजना गजभिये और श्वेता चौहान इस शोध की सह-लेखिका हैं। (इंडिया साइंस वायर)

आईआईटी जोधपुर की बायोफ्यूल रिसर्च ग्रुप

ISW/RM/HIN/21/09/2021

Keywords: Science, Technology, plant, algae, IIT Jodhpur, electricity, MFC, research, scientists, wastewater, microbial fuel cells, Organic waste materials, water treatment plant, Department of Bioscience & Bioengineering, Environmental Biotechnology, India.

फाड़ डालो डॉट कॉम

धाँसू ख़बरें और ख़बरों की चीर-फाड़

‘अपशिष्ट जल से ऊर्जा बनाने में अधिक सक्षम है पौधाआधारित माइक्रोबियल फ्यूल सेल-’: अध्ययन

By Ram Bharose

सितम्बर 21, 2021 science, Science News, water

नई दिल्ली, 21 सितंबर 2021: जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बहुत अधिक ऊर्जा अंतर्निहित होती है। कचरे के उपचार के साथ उससे ऊर्जा उत्पन्न करने में पूरी दुनिया में रुचि बढ़ रही है, क्योंकि इससे ‘एक पंथ, दो काज’ सिद्ध हो सकते हैं। माइक्रोबियल फ्यूल सेल एक ऐसी ही बायोइलेक्ट्रोकेमिकल प्रक्रिया है (एमएफसी), जिसमें बैक्टीरिया द्वारा उत्प्रेरित जैवरासायनिक प्रतिक्रिया से प्राप्त - इलेक्ट्रॉनों का उपयोग करके ऊर्जा का उत्पादन किया जाता है।

एक नये अध्ययन में यह पता चला है कि पादपआधारित - माइक्रोबियल फ्यूल सेल, शैवाल)Algae) आधारित तंत्र की तुलना में अपशिष्ट जल से बिजली उत्पादन में कहीं अधिक सक्षम हैं।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), जोधपुर के जैव विज्ञान एवं जैव आभियांत्रिकी (बायोसाइंस ऐंड बायोइंजीनियरिंग) विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डॉ मनु छाबड़ा के नेतृत्व में यह अध्ययन किया गया है।

अपशिष्ट जल का शोधन आज के दौर की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जल की उत्तरोत्तर बढ़ती खपत के साथ घरेलू अपशिष्ट जल की मात्रा में बढ़ोतरी हो रही है।ऐसे में उसके निपटान एवं शोधन के लिए नई तकनीकों का विकास आवश्यक है। आईआईटी, जोधपुर द्वारा विकसित तकनीक इस दिशा में महत्वपूर्ण साबित हो सकती है। जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बड़ी मात्रा में गुप्त ऊर्जा समाहित रहती है। वहीं सामान्य घरेलू कचरे के समाधान में करीब नौ गुना अधिक ऊर्जा की खपत होती है। यही कारण है कि आज जल शोधन की प्रक्रिया में निकले कचरे से ऊर्जा उत्पादन में पूरे विश्व की रुचि है।

माइक्रोबायल फ्यूल सेल ऐसा (एमएफसी)डिवाइस है, जो अपशिष्ट जल में कार्बनिक पदार्थ को विद्युत ऊर्जा में रूपांतरित करता है।

हालांकि माइक्रोब्स से ऊर्जा उत्पादन का विचार एकदम नया नहीं है। वर्ष 1911 में डरहम विश्वविद्यालय में वनस्पतिशास्त्र के प्रोफेसर माइकल पॉटर ने इस आशय का विचार प्रस्तुत किया था।

प्रोफेसर छाबड़ा ने बताया है कि हालिया शोध में जिस फ्यूल सेल्स का इस्तेमाल हुआ है वह दो समस्याओं का एक साथ समाधान करता है। इससे जहां कचरे के निपटान की समस्या सुलझ जाती है, वहीं इससे ऊर्जा भी प्राप्त होती है। वास्तव में एमएफसी में जीवित सूक्ष्मजीवी अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थों पर सक्रिय रहते हैं और बाहरी भार से निकाले गए इलेक्ट्रॉनों को मुक्त करते हैं, जिससे बिजली उत्पन्न होती है।

प्रकाश संश्लेषक एमएफसी, ईंधन सेल के कैथोड पर अपशिष्ट से ऑक्सीजन उत्पन्न करने के लिए शैवाल या पौधे का उपयोग करते हैं।

हाल के वर्षों में एलेगी आधारित तंत्रों पर व्यापक रूप से अध्ययन हुआ है, क्योंकि शैवाल बहुत तेजी से वृद्धि करते हैं, परंतु उत्पादन की स्थिति के दृष्टिकोण से संवेदनशील हैं। वहीं पादपधीमे विकसित होते हैं और एलेगी आधारित आधारित एमएफसी की -तंत्र धीमे - तुलना में कम क्षमता वाले लेकिन उनसे अधिक मजबूत होते हैं।

इस अध्ययन का दौरान शोधकर्ताओं ने शैवाल और पादप आधारित एमएफसी के प्रदर्शन की प्रयोगात्मक तुलना की है।’ दोनों की तुलना प्रदूषक हटाने की दक्षता और विद्युत ऊर्जा उत्पादन की दक्षता के संदर्भ में भी की गई है। शोधकर्ताओं ने पादप आधारित एमएफसी के लिए कैन इंडिका और शैवालआधारित एफएमसी के लिए क्लोरेला वल्गारिस का प्रयोग किया है। अध्ययन के क्रम में-, आईआईटी जोधपुर के विकेन्द्रीकृत अपशिष्ट जल उपचार संयंत्र से प्राप्त प्राकृतिक अपशिष्ट जल का उपयोग किया गया।-“हमने पाया कि पादप आधारित एमएफसी बेहतर अनुकूल हैं क्योंकि वे मजबूत, स्थिर हैं और बिजली उत्पादन के दृष्टिकोण से भी बेहतर हैं,’ प्रोफेसर छाबड़ा बताते हैं।

भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की सहायता से पूर्ण हुआ यह शोध बायोरिसोर्स टेक्नोलॉजी नाम के जर्नल (डीएसटी) में भीप्रकाशित हुआ है। प्रोफेसर छाबड़ा के साथ आरती शर्मा, संजना गजभिये और श्वेता चौहान इस शोध की सहलेखिका हैं।-

(इंडिया साइंस वायर(

दी इंडियन बुलेटिन

‘अपशिष्ट जल से ऊर्जा बनाने में अधिक सक्षम है पौधाआधारित माइक्रोबियल - फ्यूल सेल’: अध्ययन

7 days ago

आईआईटी जोधपुर की बायोफ्यूल रिसर्च ग्रुप

नई दिल्ली, 21 सितंबर: जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बहुत अधिक ऊर्जा अंतर्निहित होती है। कचरे के उपचार के साथ उससे ऊर्जा उत्पन्न करने में पूरी दुनिया में रुचि बढ़ रही है, क्योंकि इससे ‘एक पंथ, दो काज’ सिद्ध हो सकते हैं।माइक्रोबियल फ्यूल सेल एमएफस)ीहै प्रक्रिया बायोइलेक्ट्रोकेमिकल ही ऐसी एक (, जिसमें बैक्टीरिया द्वारा उत्प्रेरित जैव जाता किया उत्पादन का ऊर्जा करके उपयोग का इलेक्ट्रॉनों प्राप्त से प्रतिक्रिया रासायनिक-है।

एक नये अध्ययन में यह पता चला है कि पादपसेल माइक्रोबियलफ्यूल आधारित-, शैवाल)Algae) आधारित तंत्र की तुलना में अपशिष्ट जल से बिजली उत्पादन में कहीं अधिक सक्षम हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी

संस्थान(आईआईटी), जोधपुर के जैव विज्ञान एवं जैव आभियांत्रिकी (बायोइंजीनियरिंग ऐंड बायोसाइंस) अध यह में नेतृत्व के छाबड़ा मनु डॉ प्रोफेसर एसोसिएट में विभाग्ययन किया गया है।

अपशिष्ट जल का शोधन आज के दौर की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जल की उत्तरोत्तर बढ़ती खपत के साथ घरेलू अपशिष्ट जल की मात्रा में बढ़ोतरी हो रही है।ऐसे में उसके निपटान एवं शोधन के लिए नई तकनीकों का विकास आवश्यक है। आईआईटी, जोधपुर द्वारा विकसित तकनीक इस दिशा में महत्वपूर्ण साबित हो सकतीहै। जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बड़ी मात्रा में गुप्त ऊर्जा समाहित रहती है। वहीं सामान्य घरेलू कचरे के समाधान में करीब नौ गुना अधिक ऊर्जा की खपत होती है। यही कारण है कि आज जल शोधन की प्रक्रिया में निकले कचरे से ऊर्जा उत्पादन में पूरे विश्व की रुचि है।

माइक्रोबायल फ्यूल सेल है डिवाइस ऐसा (एमएफसी), जो अपशिष्ट जल में कार्बनिक पदार्थ को विद्युत ऊर्जा में रूपांतरित करता है।हालांकि माइक्रोब्स से ऊर्जा उत्पादन का विचार एकदम नया नहीं है। वर्ष 1911 में डरहम विश्वविद्यालय में वनस्पतिशास्त्र के प्रोफेसर माइकल पॉटर ने इस आशय का विचार प्रस्तुत किया था।

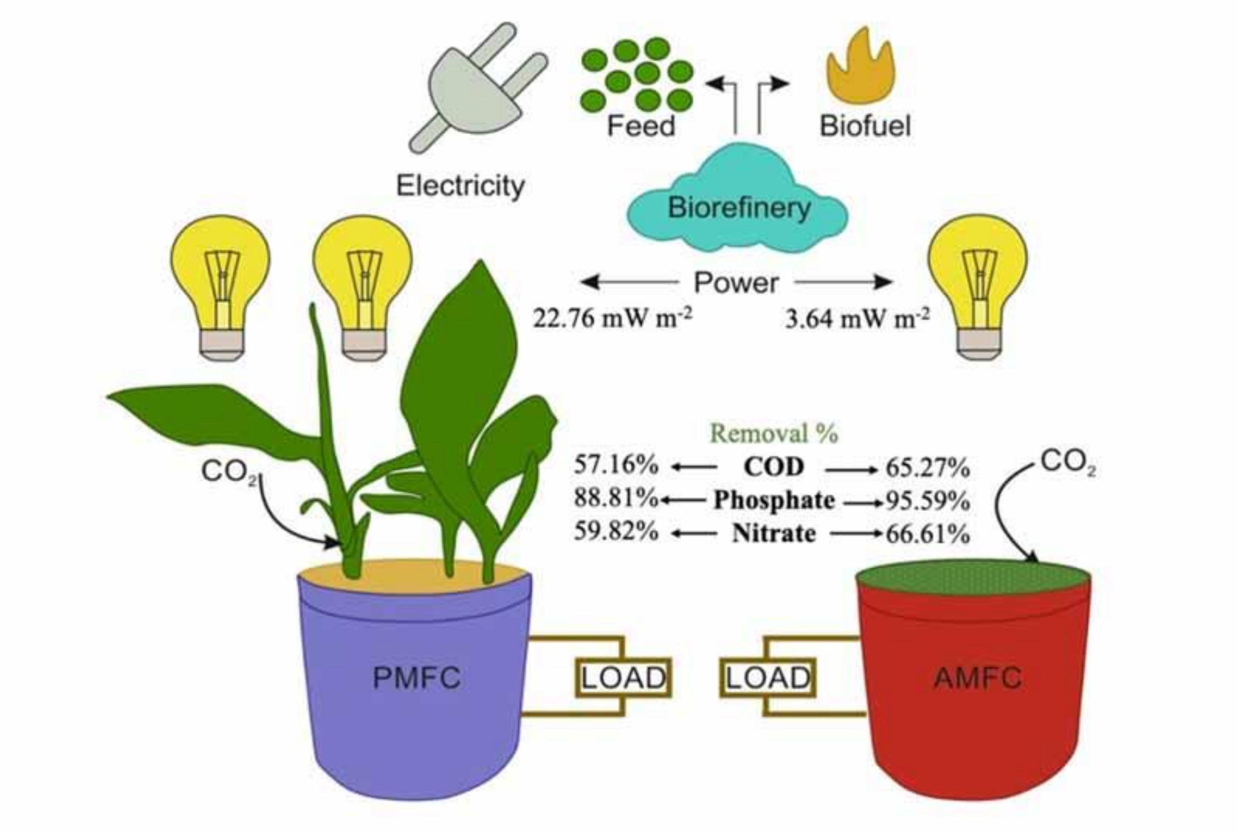

बायोफ्यूल रिसर्च का चित्रण

प्रोफेसरछाबड़ा ने बताया है कि हालिया शोध में जिस फ्यूल सेल्स का इस्तेमाल हुआ है वह दो समस्याओं का एक साथ समाधान करता है। इससे जहां कचरे के निपटान की समस्या सुलझ जाती है, वहीं इससे ऊर्जा भी प्राप्त होती है। वास्तव में एमएफसी में जीवित सूक्ष्मजीवी अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थों पर सक्रिय रहते हैं और बाहरी भार से निकाले गए इलेक्ट्रॉनों को मुक्त करते हैं, जिससे बिजली उत्पन्न होती है।

प्रकाश संश्लेषक एमएफसी, ईंधन सेल के कैथोड पर अपशिष्ट से ऑक्सीजन उत्पन्न करने के लिए शैवाल या पौधे का उपयोग करते हैं। हाल के वर्षों में एलेगी आधारित तंत्रों पर व्यापक रूप से अध्ययन हुआ है, क्योंकि शैवाल बहुत तेजी से वृद्धि करते हैं, परंतु उत्पादन की स्थिति के दृष्टिकोण से संवेदनशील हैं। वहीं पादप धीमे-धीमे तंत्र - अधिक उनसे वालेलेकिन क्षमता कम में तुलना की एमएफसी आधारित आधारित एलेगी और हैं होते विकसित हैं। होते मजबूत

इस अध्ययन का दौरान शोधकर्ताओं नेशैवाल और पादप आधारित एमएफसी के प्रदर्शन की प्रयोगात्मक तुलना की है।' दोनों की तुलना प्रदूषक हटाने की दक्षता और विद्युत ऊर्जा उत्पादन की दक्षता के संदर्भ में भी की गई है। शोधकर्ताओं नेपादप आधारित एमएफसी के लिए कैन इंडिका और शैवाल लिए के एफएमसी आधारित- में क्रम के है।अध्ययन किया प्रयोग का वल्गारिस क्लोरेला,आईआईटी जोधपुर के विकेन्द्रीकृत अपशिष्ट जल उपचार संयंत्र से प्राप्त प्राकृतिक अपशिष्ट गया। किया उपयोग का जल-"हमने पाया कि पादप आधारित एमएफसी बेहतर अनुकूल हैं क्योंकि वे मजबूत, स्थिर हैं और बिजली उत्पादन के दृष्टिकोण से भी बेहतर हैं,'प्रोफेसरछाबड़ा बताते हैं।

भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ड)ीएसटी बायोरिसोर्स शोध यह हुआ पूर्ण से सहायता की विभाग (शर्मा आरती साथ के छाबड़ा प्रोफेसर है। हुआ प्रकाशित भी में जर्नल के नाम टेक्नोलॉजी, संजना गजभिये और श्वेता चौहान इस शोध की सह(वायर साइंस इंडिया) हैं। लेखिका-

'अपशिष्ट जल से ऊर्जा बनाने में अधिक सक्षम है पौधा-आधारित माइक्रोबियल फ्यूल सेल': अध्ययन

21/09/2021 V3news India

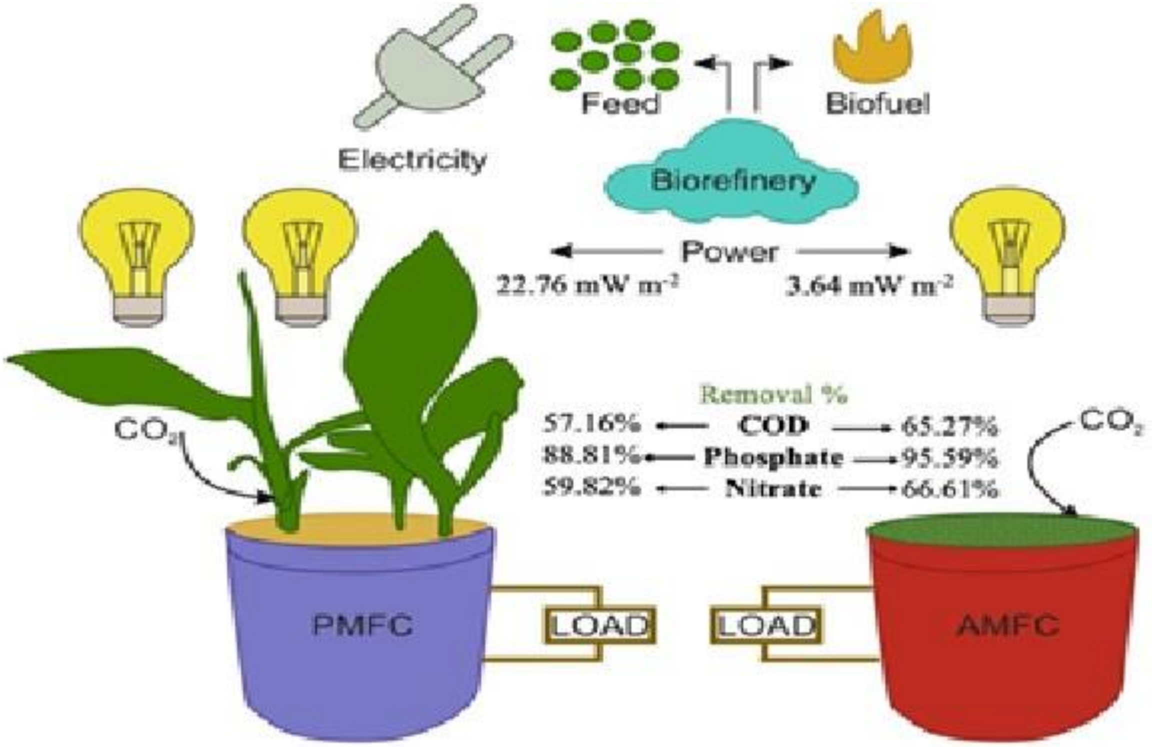

नई दिल्ली, 21 सितंबर जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बहुत अधिक ऊर्जा अंतर्निहित होती है। कचरे :(इंडिया साइंस वायर)के उपचार के साथ उससे ऊर्जा उत्पन्न करने में पूरी दुनिया में रुचि बढ़ रही है, क्योंकि इससे 'एक पंथ, दो काज' सिद्ध हो सकते हैं। माइक्रोबियल फ्यूल सेल एक ऐसी ही बायोइलेक्ट्रोकेमिकल प्रक्रिया है (एमएफसी), जिसमें बैक्टीरिया द्वारा उत्प्रेरित जैव-रासायनिक प्रतिक्रिया से प्राप्त इलेक्ट्रॉनों का उपयोग करके ऊर्जा का उत्पादन किया जाता है।

एक नये अध्ययन में यह पता चला है कि पादपआधारित माइक्रोबियल फ्यूल सेल-, शैवाल)Algae) आधारित तंत्र की तुलना में अपशिष्ट जल से बिजली उत्पादन में कहीं अधिक सक्षम हैं। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), जोधपुर के जैव विज्ञान एवं जैव आभियांत्रिकी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डॉ मनु छाबड़ा के नेतृत्व में (बायोसाइंस ऐंड बायोइंजीनियरिंग) यह अध्ययन किया गया है।

अपशिष्ट जल का शोधन आज के दौर की एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जल की उत्तरोत्तर बढ़ती खपत के साथ घरेलू अपशिष्ट जल की मात्रा में बढ़ोतरी हो रही है।ऐसे में उसके निपटान एवं शोधन के लिए नई तकनीकों का विकास आवश्यक है।

आईआईटी, जोधपुर द्वारा विकसित तकनीक इस दिशा में महत्वपूर्ण साबित हो सकती है। जैविक अपशिष्ट पदार्थों में बड़ी मात्रा में गुप्त ऊर्जा समाहित रहती है। वहीं सामान्य घरेलू कचरे के समाधान में करीब नौ गुना अधिक ऊर्जा की खपत होती है।

यही कारण है कि आज जल शोधन की प्रक्रिया में निकले कचरे से ऊर्जा उत्पादन में पूरे विश्व की रुचि है। माइक्रोबायल फ्यूल सेल ऐसा डिवाइस है (एमएफसी), जो अपशिष्ट जल में कार्बनिक पदार्थ को विद्युत ऊर्जा में रूपांतरित करता है।हालांकि माइक्रोब्स से ऊर्जा उत्पादन का विचार एकदम नया नहीं है। वर्ष 1911 में डरहम विश्वविद्यालय में वनस्पतिशास्त्र के प्रोफेसर माइकल पॉटर ने इस आशय का विचार प्रस्तुत किया था।

प्रोफेसर छाबड़ा ने बताया है कि हालिया शोध में जिस फ्यूल सेल्स का इस्तेमाल हुआ है वह दो समस्याओं का एक साथ समाधान करता है। इससे जहां कचरे के निपटान की समस्या सुलझ जाती है, वहीं इससे ऊर्जा भी प्राप्त होती है। वास्तव में एमएफसी में जीवित सूक्ष्मजीवी अपशिष्ट कार्बनिक पदार्थों पर सक्रिय रहते हैं और बाहरी भार से निकाले गए इलेक्ट्रॉनों को मुक्त करते हैं, जिससे बिजली उत्पन्न होती है।

प्रकाश संश्लेषक एमएफसी, ईंधन सेल के कैथोड पर अपशिष्ट से ऑक्सीजन उत्पन्न करने के लिए शैवाल या पौधे का उपयोग करते हैं। हाल के वर्षों में एलेगी आधारित तंत्रों पर व्यापक रूप से अध्ययन हुआ है, क्योंकि शैवाल बहुत तेजी से वृद्धि करते हैं, परंतु उत्पादन की स्थिति के दृष्टिकोण से संवेदनशील हैं। वहीं पादपधीमे विकसित होते हैं और एलेगी -तंत्र धीमे - आधारित आधारित एमएफसी की तुलना में कम क्षमता वाले लेकिन उनसे अधिक मजबूत होते हैं।

इस अध्ययन का दौरान शोधकर्ताओं ने शैवाल और पादप आधारित एमएफसी के प्रदर्शन की प्रयोगात्मक तुलना की है।' दोनों की तुलना प्रदूषक हटाने की दक्षता और विद्युत ऊर्जा उत्पादन की दक्षता के संदर्भ में भी की गई है। शोधकर्ताओं ने पादप आधारित एमएफसी के लिए कैन इंडिका और शैवालआधारित एफएमसी के लिए क्लोरेला वल्गारिस का प्रयोग किया है।-

अध्ययन के क्रम में, आईआईटी जोधपुर के विकेन्द्रीकृत अपशिष्ट जल उपचार संयंत्र से प्राप्त प्राकृतिक अपशिष्टजल का उपयोग - किया गया।"हमने पाया कि पादप आधारित एमएफसी बेहतर अनुकूल हैं क्योंकि वे मजबूत, स्थिर हैं और बिजली उत्पादन के दृष्टिकोण से भी बेहतर हैं,' प्रोफेसर छाबड़ा बताते हैं। भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग की सहायता (डीएसटी) से पूर्ण हुआ यह शोध बायोरिसोर्स टेक्नोलॉजी नाम के जर्नल में भी प्रकाशित हुआ है। प्रोफेसर छाबड़ा के साथ आरती शर्मा, संजना गजभिये और श्वेता चौहान इस शोध की सहलेखिका हैं।-

लिंग निर्धारण तक ही सीमित नहीं है 'वाई क्रोमोसोम' की भूमिका

Last Updated: गुरुवार, 23 सितम्बर 2021 (13:20 IST)

नई दिल्ली, स्तनधारी जीवों, जिसमें मनुष्य भी शामिल हैं, में लिंग निर्धारण करने वाले दो गुणसूत्रों) एक्स -X) गुण सूत्र और वाई)Y) गुणसूत्र की भूमिका होती है।

पुरुषों में एक Y और एक X गुण सूत्र होता है, जबकि महिलाओं में दो X गुणसूत्र होते हैं। किसी पिता का Y गुणसूत्र बिना किसी बदलाव के उसके पुत्रों में जाता है। इसलिए, Y गुणसूत्र के अध्ययन से किसी भी पुरुष के पितृवंश समूह का पता लगाया जा सकता है।

एक नये अध्ययन में, भारतीय वैज्ञानिकों ने Y क्रोमोसोम के बारे में चौंकाने वाला खुलासा किया है, जो बताता है कि लिंग निर्धारण के अलावा कुछ अन्य प्रक्रियाओं में भी Y क्रोमोसोम की भूमिका हो सकती है।

इस अध्ययन में वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि वाई गुणसूत्र पुरुष प्रजनन में शामिल अन्य गुणसूत्रों पर जीन को नियंत्रित

करता है। यह अध्ययन, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद की हैदराबाद स्थित घटक (सीएसआईआर) के वैज्ञानिकों द्वारा किया गया है। (सीसीएमबी) शिकीय एवं आणविक जीवविज्ञान केन्द्रको-प्रयोगशाला सीएसआईआर

गुणसूत्र या क्रोमोसोम)Chromosome) सभी वनस्पतियों व जीवों की कोशिकाओं में पाये जाने वाले तंतु रूपी पिंड होते हैं, जो आनुवांशिक गुणों को निर्धारित व संचारित करने के लिए जाने जाते हैं। Y गुणसूत्र को पुरुष निर्धारण गुणसूत्र के रूप में जाना जाता है।

यह अपने साथी X की तुलना में एक छोटा गुणसूत्र है। सीएसआईआर कोशिकीय एवं आणविक जीवविज्ञान केन्द्र- से संबंधित जारी बयान में बताया गया है कि पहले यह ज्ञात नह द्वारा इस अध्ययन (सीसीएमबी)ीं था कि लिंग निर्धारण के अलावा इसका कोई अन्य कार्य भी होता है।

Y गुणसूत्र पर डीएनए अनुक्रम कई प्रतियों में मौजूद होते हैं और उनमें से बहुत कम प्रोटीन के लिए कोडिंग का काम करते हैं। अब तक यह समझा जाता था कि वे Y गुणसूत्रों पर कुछ प्रोटीन कोडिंग जीन्स के लिए पैकिंग सामग्री के रूप में कार्य करते हैं। कोई स्पष्ट कार्य नहीं होने के कारण, Y गुणसूत्र के डीएनए के अधिकांश भाग को व्यर्थ माना जाता था।

सीएसआईआरवैज्ञानिक प्रोफेसर राशेल जेसुदासन के नेतृत्व के (सीसीएमबी) कोशिकीय एवं आणविक जीवविज्ञान केन्द्र- में किए गए इस अध्ययन में Y गुणसूत्र डीएनए के आश्चर्यजनक अभिनव नियामक कार्यों के बारे खुलासा किया गया है।

चूहों के Y क्रोमोसम पर किए गए इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने पाया है कि डीएनए के एक गुच्छे का चूहे के वाई गुणसूत्र पर दोहराव होता है, जो वृषण या शुक्रगन्थि में-, विशेष रूप से प्रजनन के लिए आवश्यक अन्य गुणसूत्रों से व्यक्त जीन को नियंत्रित करता है। उन्होंने यह भी दिखाया है कि ये दोहराव प्रजातिविशिष्ट हैं-, यानी वे अन्य प्रजातियों में मौजूद नहीं हैं। शोधकर्ताओं का कहना यह भी है कि ये दोहराव छोटे आरएनए)RNA) के एक वर्ग को जन्म देते हैं, जिन्हें पीआईआरएनए)piRNA) कहा जाता है।

प्रोफेसर जेसुदासन कहते हैं – “मानव Y गुणसूत्र पर हमारे पहले के अध्ययनों में देखा गया है कि Y गुणसूत्र पर लिंग और प्रजाति-प्रजनन के लिए महत्वपूर्ण गुणसूत्र संख्या विशिष्ट दोहराव-1 से संचरित प्रोटीनकोडिंग- RNA को नियंत्रित करता है। इस अध्ययन में, Y गुणसूत्र और अन्य गुणसूत्रों के बीच परस्पर क्रिया की यह पहली रिपोर्ट है। इस प्रकार, दो अध्ययनों को समेकित करते हुए, हम Y गुणसूत्र द्वारा प्रजनन से जुड़े जीनों का अधिक व्यापक विनियमन देख सकते हैं।"

वे कहते हैं विकसित होती हैं जैसे प्रजातियां-जैसे" -, ये दोहराव भी साथ साथ विकसित होते-रहते हैं, और धीरेधीरे - प्रजातियों के प्रजनन को नियंत्रित करने में सक्षम नहीं रहते हैं। इस प्रकार, ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोहराव प्रजातियों की पहचान और विकासक्रम का आधार हैं।-”

प्रोफेसर जेसुदासन वर्तमान में आनुवंशिकी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद में सलाहकार और (अनुसंधान) इंटर यूनिवर्सिटी सेंटर फॉर जीनोमिक्स ऐंड जीन टेक्नोलॉजी, कार्यवत्तम कैंपस, केरल विश्वविद्यालय, त्रिवेंद्रम में एक एमेरिटस वैज्ञानिक उनके नेतृत्व में किया गया यह अध्ययन शोध पत्रिका के रूप में कार्यरत हैं। (केएससीएसटीई) बीएमसी बायोलॉजी में प्रकाशित किया गया है। ***(इंडिया साइंस वायर(***

"लिंग निर्धारण तक ही सीमित नहीं है 'वाई क्रोमोसोम' की भूमिका"

23/09/2021 V3news India

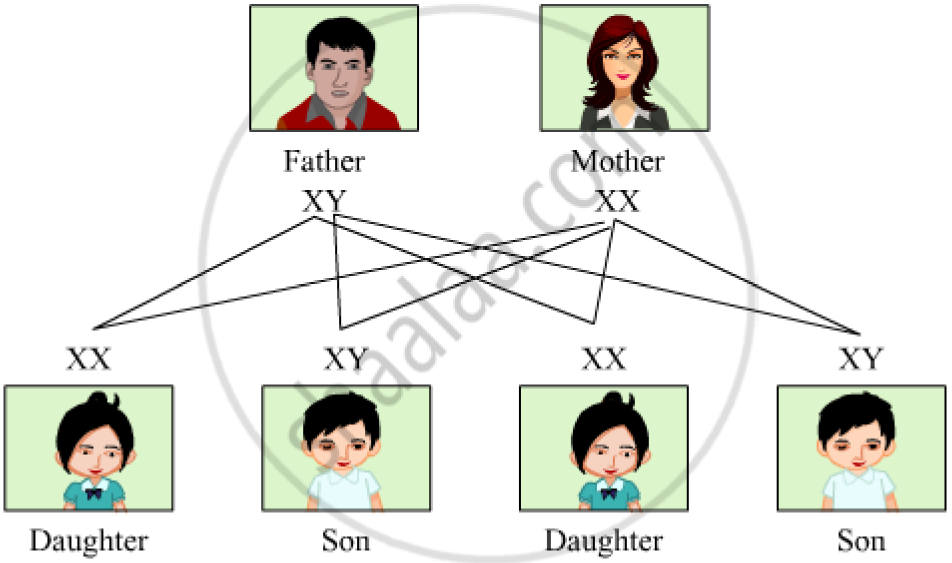

नई दिल्ली, 23 सितंबर :(इंडिया साइंस वायर)स्तनधारी जीवों, जिसमें मनुष्य भी शामिल हैं, में लिंग निर्धारण करने वाले दो गुणसूत्रों – एक्स)X) गुण सूत्र और वाई)Y) गुणसूत्र की भूमिका होती है। पुरुषों में एक Y और एक X गुण सूत्र होता है, जबकि महिलाओं में दो X गुणसूत्र होते हैं। किसी पिता का Y गुणसूत्र बिना किसी बदलाव के उसके पुत्रों में जाता है। इसलिए, Y गुणसूत्र के अध्ययन से किसी भी पुरुष के पितृवंश समूह का पता लगाया जा सकता है।

एक नये अध्ययन में, भारतीय वैज्ञानिकों ने Y क्रोमोसोम के बारे में चौंकाने वाला खुलासा किया है, जो बताता है कि लिंग निर्धारण के अलावा कुछ अन्य प्रक्रियाओं में भी Y क्रोमोसोम की भूमिका हो सकती है। इस अध्ययन में, वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि वाई गुणसूत्र पुरुष प्रजनन में शामिल अन्य गुणसूत्रों पर जीन को नियंत्रित करता है। यह अध्ययन, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर)की हैदराबाद स्थित घटक प्रयोगशाला सीएसआईआरकोशिकीय एवं आणविक - के वैज्ञानिकों द्वारा किया गया है। (सीसीएमबी) जीवविज्ञान केन्द्र

गुणसूत्र या क्रोमोसोम)Chromosome) सभी वनस्पतियों व जीवों की कोशिकाओं में पाये जाने वाले तंतु रूपी पिंड होते हैं, जो आनुवांशिक गुणों को निर्धारित व संचारित करने के लिए जाने जाते हैं। Y गुणसूत्र को पुरुष निर्धारण गुणसूत्र के रूप में जाना जाता है। यह अपने साथी X की तुलना में एक छोटा गुणसूत्र है। सीएसआईआरजीवविज्ञान कोशिकीय एवं आणविक- द्वारा इस अध्ययन से संबंधित जारी बय (सीसीएमबी) केन्द्र◌ान में बताया गया है कि पहले यह ज्ञात नहीं था कि लिंग निर्धारण के अलावा इसका कोई अन्य कार्य भी होता है।

Y गुणसूत्र पर डीएनए अनुक्रम कई प्रतियों में मौजूद होते हैं और उनमें से बहुत कम प्रोटीन के लिए कोडिंग का काम करते हैं। अब तक यह समझा जाता था कि वे Y गुणसूत्रों पर कुछ प्रोटीन कोडिंग जीन्स के लिए पैकिंग सामग्री के रूप में कार्य करते हैं। कोई स्पष्ट कार्य नहीं होने के कारण, Y गुणसूत्र के डीएनए के अधिकांश भाग को व्यर्थ माना जाता था। सीएसआईआर-के वैज्ञानिक प्रोफेसर (सीसीएमबी) कोशिकीय एवं आणविक जीवविज्ञान केन्द्र राशेल जेसुदासन के नेतृत्व में किए गए इस अध्ययन में Y गुणसूत्र डीएनए के आश्चर्यजनक अभिनव नियामक कार्यों के बारे खुलासा किया गया है।

चूहों के Y क्रोमोसम पर किए गए इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने पाया है कि डीएनए के एक गुच्छे का चूहे के वाई गुणसूत्र पर दोहराव होता है, जो वृषण या शुक्रगन्थि में-, विशेष रूप से प्रजनन के लिए आवश्यक अन्य गुणसूत्रों से व्यक्त जीन को नियंत्रित करता है। उन्होंने यह भी दिखाया है कि ये दोहराव प्रजातिविशिष्ट हैं-, यानी वे अन्य प्रजातियों में मौजूद नहीं हैं। शोधकर्ताओं का कहना यह भी है कि ये दोहराव छोटे आरएनए)RNA) के एक वर्ग को जन्म देते हैं, जिन्हें पीआईआरएनए)piRNA) कहा जाता है।

प्रोफेसर जेसुदासन कहते हैं – "मानव Y गुणसूत्र पर हमारे पहले के अध्ययनों में देखा गया है कि Y गुणसूत्र पर लिंग और प्रजातिविशिष्ट दोहराव प्रजनन के लिए महत्वपूर्ण ग-ुणसूत्र संख्या-1 से संचरित प्रोटीन कोडिंग-RNA को नियंत्रित करता है। इस अध्ययन में, Y गुणसूत्र और अन्य गुणसूत्रों के बीच परस्पर क्रिया की यह पहली रिपोर्ट है। इस प्रकार, दो अध्ययनों को समेकित करते हुए, हम Y गुणसूत्र द्वारा प्रजनन से जुड़े जीनों का अधिक व्यापक विनियमन देख सकते हैं।"

वे कहते हैं – "जैसेजैसे प्रजातियां विकसित होती हैं-, ये दोहराव भी साथसाथ विकसित होते रहते हैं-, और धीरेधीरे - रहते हैं। इस प्रकार प्रजातियों के प्रजनन को नियंत्रित करने में सक्षम नहीं, ऐसा प्रतीत होता है कि ये दोहराव प्रजातियों की पहचान और विकासक्रम का आधार हैं।-" प्रोफेसर जेसुदासन वर्तमान में आनुवंशिकी विभाग, उस्मानिया विश्वविद्यालय, हैदराबाद में सलाहकार क्रोलॉजीऔर इंटर यूनिवर्सिटी सेंटर फॉर जीनोमिक्स ऐंड जीन टे (अनुसंधान), कार्यवत्तम कैंपस, केरल विश्वविद्यालय, त्रिवेंद्रम में एक एमेरिटस वैज्ञानिक के रूप में कार्यरत हैं। उनके नेतृत्व में किया गया यह (केएससीएसटीई) अध्ययन शोध पत्रिका बीएमसी बायोलॉजी में प्रकाशित किया गया है।

DownToEarth | डाउन टू अर्थ

MGNREGA could also help India sequester carbon: Study

MGNREGA may have helped capture a total carbon of 102 million tonnes equivalent in 2017-18 through plantations and soil quality improvement works, according to an IISc study

Published: Thursday 23 September 2021

The Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme (MGNREGS) can also help India meet its target to create an additional carbon sink to the extent of 2.5-3 billion tonnes equivalent of carbon dioxide by 2030, through improved forest and tree cover.

This has been demonstrated by a study conducted by the Bengaluru-based Indian Institute of Science (IISc).

The study estimated that the scheme may have helped capture a total carbon of 102 million tonnes equivalent in 2017-18 through plantations and soil quality improvement works.

The annual capacity for carbon sequestration could steadily increase to about 249 million tonnes of carbon dioxide equivalent by 2030, according to the estimate.

The study calculated carbon sequestration by assessing biomass in plantations and carbon stored in the soil of work sites in villages across the country except for two agro-ecological zones:

The researchers found that drought-proofing activities, including tree plantations, forest restoration and grassland development, captured the maximum carbon, accounting for a little over 40 per cent of the total carbon sequestration under MGNREGS.

The carbon captured from drought-proofing ranged from 0.29 tonne per hectare to 4.50 tonne per hectare per year depending on the region.

Land development activities, including earthen bunding, stone bunding and land leveling, captured 0.1 tonne per hectare per year to 1.97 tonne per hectare per year while minor irrigation sequestered 0.08 to 1.93 tonne per hectare per year.

The study covered 32 districts, which accounted for about five per cent of the total number of districts in India.

In each district, two blocks were selected and in each block, three villages were shortlisted based on their population (small, medium, and large).

In a research published in the science journal *PLOS One*, the scientists noted, “The activities implemented under MGNREGS become all the more important as the forest sector alone may not be able to meet the NDC carbon sink target of 2.5 to 3 billion tonnes of CO_2 by 2030”.

They have suggested incorporation of tree planting, especially fruit and fodder yielding trees into resource management activities under MGNREGS.

This will generate alternate income and livelihood sources for people while carbon sequestration will be a co-benefit.

Periodic monitoring and reporting of the carbon sequestration benefits will be required, which is also a requirement for adaptation communication under Article 7 of the Paris Agreement, they said. (**India Science Wire**)

Millions of tons of carbon absorbed through MGNREGS plantations

TOPICS: Carbon Carbon Dioxide

Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme (MGNREGS)

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 24TH SEPTEMBER 2021

India's rural Job scheme could also help sequester carbon

When was MGNREGS launched?

New Delhi, Sep 24: The Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme (**MGNREGS)** launched in 2006 to ensure livelihood security of rural people can also help India meet its target to create additional carbon sink to the extent of 2.5 to 3 billion tonnes equivalent of carbon dioxide by 2030, through an improved forest and tree covers, as per the Paris agreement on Climate Change. This has been demonstrated by a study conducted by the Bengaluru-based Indian Institute of Science (IISc).

MGNREGS may have helped capture a total carbon of 102 million tonnes equivalent in 2017-18 through plantations

It has been estimated that the scheme may have helped capture a total carbon of 102 million tonnes equivalent in 2017-18 through plantations and soil quality improvement works and that the annual capacity for carbon sequestration could steadily increase to about 249 million tonnes of **carbon dioxide** equivalent by 2030.

The study calculated carbon sequestration by assessing biomass in plantations and **carbon** stored in the soil of work sites in villages across the country except for two agro-ecological zones — Western Himalayas, Ladakh plateau and north Kashmir; and Andaman and Nicobar, and Lakshadweep islands.

The researchers found that drought-proofing activities, including tree plantations, forest restoration and grassland development, captured the maximum carbon, accounting for a little over 40% of the total carbon sequestration under MGNREGS.

The **carbon captured from drought-proofing** ranged from 0.29 tonne per hectare to 4.50 tonne per hectare per year depending on the region. Land development activities, including earthen bunding, stone bunding and land levelling, captured 0.1 tonnes per

hectare per year to 1.97 tonnes per hectare per year while minor irrigation sequestered 0.08 to 1.93 tonne per hectare per year.

The study covered 32 districts, which accounted for about five per cent of the total number of districts in India. In each district, two blocks were selected and in each block, three villages were shortlisted based on their population (small, medium, and large).

In a research published in the science journal PLOS One, the scientists noted, “The activities implemented under MGNREGS become all the more important as the forest sector alone may not be able to meet the NDC carbon sink target of 2.5 to 3 billion tonnes of CO_2 by 2030”.

They have suggested the incorporation of tree planting, especially fruit and fodder yielding trees into resource **management activities under MGNREGS**. This will generate alternate income and livelihood sources for people while carbon sequestration will be a co-benefit. Periodic monitoring and reporting of the carbon sequestration benefits will be required, which is also a requirement for adaptation communication under Article 7 of the Paris Agreement, they said.

(India Science Wire)

Topics: Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme, MGNREGS, livelihood, rural, carbon sink, carbon dioxide, forest, tree, climate change, Indian Institute of Science, IISc, plantation, soil quality, biomass, drought-proofing, grassland, database, district, fruit, fodder.

Indus Scrolls
Indian to the core

India’s rural Job scheme could also help sequester carbon

by India Science Wire September 24, 2021 in Indian Sciences

The Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Scheme (MGNREGS) launched in 2006 to ensure livelihood security of rural people can also help India meet its target to create additional carbon sink to the extent of 2.5 to 3 billion tonnes equivalent of carbon dioxide by 2030, through an improved forest and tree covers, as per the Paris agreement on Climate Change.

This has been demonstrated by a study conducted by the Bengaluru-based Indian Institute of Science (IISc). It has been estimated that the scheme may have helped capture a total carbon of 102 million tonnes equivalent in 2017-18 through plantations and soil quality improvement works and that the annual capacity for carbon sequestration could steadily increase to about 249 million tonnes of carbon dioxide equivalent by 2030.

The study calculated carbon sequestration by assessing biomass in plantations and carbon stored in the soil of work sites in villages across the country except for two agro-ecological zones — Western Himalayas, Ladakh plateau and north Kashmir; and Andaman and Nicobar, and Lakshadweep islands.

The researchers found that drought-proofing activities, including tree plantations, forest restoration and grassland development, captured the maximum carbon, accounting for a little over 40% of the total carbon sequestration under MGNREGS.

The carbon captured from drought-proofing ranged from 0.29 tonne per hectare to 4.50 tonne per hectare per year depending on the region. Land development activities, including earthen bunding, stone bunding and land leveling, captured 0.1 tonne per hectare per year to 1.97 tonne per hectare per year while minor irrigation sequestered 0.08 to 1.93 tonne per hectare per year.

The study covered 32 districts, which accounted for about five per cent of the total number of districts in India. In each district, two blocks were selected and in each block, three villages were shortlisted based on their population (small, medium, and large).

In a research published in the science journal PLOS One, the scientists noted, "The activities implemented under MGNREGS become all the more important as the forest sector alone may not be able to meet the NDC carbon sink target of 2.5 to 3 billion tonnes of CO_2 by 2030".
They have suggested incorporation of tree planting, especially fruit and fodder yielding trees into
resource management activities
under MGNREGS.

This will generate alternate income and livelihood sources for people while carbon sequestration will be a co-benefit. Periodic monitoring and reporting of the carbon sequestration benefits will be required, which is also a requirement for adaptation communication under Article 7 of the Paris Agreement, they said.

फाड़ डालो डॉट कॉम
धाँसू ख़बरें और ख़बरों की चीर-फाड़

कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर, बताएगी नई तकनीक

By Ram Bharose

सितम्बर 23, 2021

कोविड-19 संक्रमण की गंभीरता नापने की नई तकनीक

नई दिल्ली, 23 सितंबर 2021: कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर है यह पता चल जाए तो प्रभावी उपचार में मदद मिल सकती है। कोविड -19 की जांच के लिए उपयोग होने वाला आरटीपीसीआर टेस्ट यह तो बता - सकता है कि कोई व्यक्ति कोरोना वायरस से संक्रमित है या नहीं। पर, यह परीक्षण संक्रमण की गंभीरता को निर्धारित नहीं कर सकता। भारतीय शोधकर्ताओं ने अब एक नये अध्ययन में यह पाया है कि किसी व्यक्ति के नासॉफिरिन्जियल नमूनों में विशिष्ट प्रोटीन का स्तर, संक्रमण की निम्न और उच्च गंभीरता के बीच अंतर कर

सकता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण की गंभीरता की जानकारी अस्पतालों को समय पर स्वास्थ्य देखभाल संसाधनों को व्यवस्थित करने में मदद करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि जिन लोगों को गंभीर देखभाल की आवश्यकता होती है, उन्हें आसानी से पहचाना जा सके।

इस अध्ययन में, कोविड -19 संक्रमण की तीव्रता को निर्धारित करने के लिए शोधकर्ताओं ने मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग किया है।

आमतौर पर, आरटीपीसीआर परीक्षण में वायरस के न्यूक्लिक एसिड का पता लगाने के लिए रिवर्स -पोलीमरेज़ चेन रिएक्शन का उपयोग होता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण के विभिन्न -ट्रांसक्रिप्शन चरणों में जारी विशिष्ट वायरल या होस्ट प्रोटीन से कई महत्वपूर्ण तथ्य जुड़े हुए हैं।

वे बताते हैं कि किस चरण में कौनसा प्रोटीन निकलता है-, इसकी पहचान करके रोग की गंभीरता का पता लगा सकते हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार, मास स्पेक्ट्रोमेट्री एक ऐसा उपकरण है, जो यह पता लगाने में सक्षम है कि क्या कोई विशेष प्रोटीन नमूने में मौजूद है, और किसी नमूने में उसकी मात्रा कितने प्रतिशत है। नासॉफिरिन्जियल स्वैब, नैदानिक परीक्षण के लिए नाक और गले से नमूना एकत्र करने की विधि है। इस तरह प्राप्त नमूनों का विश्लेषण रोग के लिए जिम्मेदार सूक्ष्मजीवों या अन्य नैदानिक मार्करों की उपस्थिति का पता लगाने के लिए किया जाता है।

आईआईटी बॉम्बे के प्रोफेसर संजीव श्रीवास्तव के नेतृत्व में यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), बॉम्बे और कस्तूरबा अस्पताल, मुंबई के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

शोधकर्ता यह जानना चाहते थे कि क्या मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग कोविड -19 संक्रमण की पुष्टि के लिए प्राथमिक नैदानिक परीक्षण के रूप में भी हो सकता है?

यह जानना इसलिए आवश्यक था, क्योंकि कोविड-19 की गंभीरता का पता लगाने और संक्रमण का पता लगाने के लिए अलग अलग परीक्षणों का उपयोग चिकित्सा कर्मचारियों के काम को बढ़ाने वाली गतिविधि-साबित होगी। अध्ययन में, रोगियों के तीन समूहों से नासॉफिरिन्जियल नमूने एकत्र किए गए हैं; जिनमें कोविड-19 पॉजिटिव, कोविड-19 निगेटिव और कोविड-19 से उबर चुके लोग शामिल हैं।

शोधकर्ताओं ने 25 प्रोटीनों की पहचान की है, जो कोविड-19 पॉजिटिव रोगियों में अधिक मात्रा में मौजूद थे। उन्होंने मास स्पेक्ट्रोमेट्री तकनीक का उपयोग करके 25 प्रोटीनों की पहचान की है, और उनकी मात्रा का आकलन किया है, जिसे सेलेक्टेड रिएक्शन मॉनिटरिंग)SRM) परीक्षण कहा जाता है। मास स्पेक्ट्रोमेट्री किसी भी बायोमॉलिक्यूल की पहचान कर सकती है। जबकि-, एसआरएम परीक्षण सिर्फ प्रोटीन पर लक्षित होता है। इसलिए, प्रोटीन की पहचान और उसकी मात्रा के मापन के लिए एसआरएम अत्यधिक संवेदनशील विधि है।

इन 25 प्रोटीनों का उपयोग संभावित रूप से यह निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है कि कोई नमूना कोविड पॉजिटिव है, या फिर वह कोविड निगेटिव है। पहचाने गए प्रोटीन के कटऑफ प्रतिशत को निर्धारित

करने के लिए एक बड़े समूह पर एक मात्रात्मक नैदानिक अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है। यह मास स्पेक्ट्रोमेट्री को नैदानिक परीक्षण के रूप में उपयोग करने में सक्षम बनाएगा।

शोधकर्ताओं ने कोविड-19 से उबर चुके लोगों के नमूनों का उपयोग यह पता लगाने के लिए किया है कि क्या ये प्रोटीन संक्रमण की गंभीरता या फिर उससे उबरने की दिशा में प्रगति का संकेत देता है!

शोधकर्ताओं का प्रयास ऐसे प्रोटीन को चिह्नित करना था, जो गंभीर और गैरगंभीर मामलों को अलग कर - -सके। कोविड19 के 24 पॉजिटिव नमूनों में 11 गैर गंभीर और-13 गंभीर रोगी नमूने शामिल थे।

यह माना जाता है कि यदि रोगी तीव्र श्वसन संकट सिंड्रोम अथवा निमोनिया से पीड़ित हो, या फिर उसका ऑक्सीजन संतृप्ति स्तर 87% से कम होता है, तो वह गंभीर संक्रमण से ग्रस्त हो सकता है।

शोधकर्ताओं ने गंभीर और गैरअलग विश्लेषण किया है। उन्होंने छह महत्वपूर्ण -गंभीर समूहों के नमूनों का अलग- प्रोटीन की पहचानकी है, जो गैर-गंभीर और गंभीर कोविड-19 रोगी के बीच अंतर कर सकते हैं। आईआईटी, बॉम्बे द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

शोधकर्ता यह भी जाँचना चाहते थे कि क्या नई दवा के डिजाइन की प्रतीक्षा करने के बजाय किसी मौजूदा दवा का उपयोग पहचाने गए प्रोटीन को लक्षित करने के लिए किया जा सकता है? इसके लिए, उन्होंने संक्रमित मेजबान में परिवर्तित सेलुलर प्रक्रियाओं में शामिल प्रोटीन के लिए वर्तमान दवाओं)29 एफडीएअनुमोदित-, नौ क्लीनिकल, और 20 पूर्वकी बाध्यकारी दक्षता की जाँच की है। ऐसा करके (परीक्षण दवाओंक्लीनिकल -, शोधकर्ताओं ने कई ड्रग उम्मीदवारों और छोटे अणुओं की पहचान की है, जो संभावित रूप से महत्वपूर्ण प्रोटीन को बांध और बाधित कर सकते हैं।

शोध टीम की एक सदस्य डॉ कृति बताती हैं कि “दवाओं का विकास एक महंगी और समय लेने वाली प्रक्रिया है। कोविड-19 से निपटने के लिए एक वैकल्पिक चिकित्सीय दृष्टिकोण खोजना महत्वपूर्ण है।” “इनमें से अधिकतर दवाएं एफडीए द्वारा अनुमोदित हैं और बीमारियों के अन्य समूहों का मुकाबला करने के लिए उपयोग की जा रही हैं। इस प्रकार, इन दवाओं का वैकल्पिक उपयोग सुरक्षित रूप से हो सकता है।”

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (आईआईटी) और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (सीएसआईआर), बॉम्बे के अनुदान पर आधारित यह अध्ययन शोध पत्रिका आईसाइंस में प्रकाशित किया गया है।

कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर, बताएगी नई तकनीक

By RD Times Hindi | September 23, 2021

नई दिल्ली, 23 सितंबर: कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर है यह पता चल जाए तो प्रभावी उपचार में मदद मिल सकती है। कोविड -19 की जांच के लिए उपयोग होने वाला आरटीपीसीआर टेस्ट यहतो बता सकता है कि कोई व्यक्ति कोरोना -वायरस से संक्रमित है या नहीं। पर, यह परीक्षण संक्रमण की गंभीरता को निर्धारित नहीं कर सकता। भारतीय शोधकर्ताओं ने अब एक नये अध्ययन में यह पाया है कि किसी व्यक्ति के नासॉफिरिन्जियल नमूनों में विशिष्ट प्रोटीन का स्तर, संक्रमण की निम्न और उच्च गंभीरता के बीच अंतर कर सकता है।शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण की गंभीरता की जानकारी अस्पतालों को समय पर स्वास्थ्य देखभाल संसाधनों को व्यवस्थित करने में मदद करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि जिन लोगों को गंभीर देखभाल की आवश्यकता होती है, उन्हें आसानी से पहचाना जा सके।

इस अध्ययन में, कोविड -19 संक्रमण की तीव्रता को निर्धारित करने के लिए शोधकर्ताओं ने मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग किया है। आमतौर पर, आरटीपीसीआर परीक्षण में वायरस के न्यूक्लिक एसिड का पत-ा लगाने के लिए रिवर्स ट्रांसक्रिप्शनपोलीमरेज़ चेन रिएक्शन का उपयोग होता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण के विभिन्न चरणों में -सा प्रोटीन -जारी विशिष्ट वायरल या होस्ट प्रोटीन से कई महत्वपूर्ण तथ्य जुड़े हुए हैं। वे बताते हैं कि किस चरण में कौन निकलता है, इसकी पहचान करके रोग की गंभीरता का पता लगा सकते हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार, मास स्पेक्ट्रोमेट्री एक ऐसा उपकरण है, जो यह पता लगाने में सक्षम है कि क्या कोई विशेष प्रोटीन नमूने में मौजूद है, और किसी नमूने में उसकी मात्रा कितने प्रतिशत है।नासॉफिरिन्जियल स्वैब, नैदानिक परीक्षण के लिएनाक और गले से नमूना एकत्र करने की विधि है।इस तरह प्राप्त नमूनों का विश्लेषण रोग के लिए जिम्मेदार सूक्ष्मजीवों या अन्य नैदानिक मार्करों की उपस्थिति का पता लगाने के लिए किया जाता है।

आईआईटी बॉम्बे के प्रोफेसर संजीव श्रीवास्तवके नेतृत्व में यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), बॉम्बे और कस्तूरबा अस्पताल, मुंबई के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

शोधकर्ता यह जानना चाहते थे कि क्या मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग कोविड -19 संक्रमण की पुष्टि के लिए प्राथमिक नैदानिक परीक्षणकेरूपमें भी हो सकता है? यह जानना इसलिए आवश्यक था, क्योंकिकोविड-19 कीगंभीरताकापतालगानेऔरसंक्रमण का पता लगाने केलिएअलगअलगपरीक्षणों का उपयोग चिकित्सा कर्मचारियों के - काम को बढ़ाने वाली गतिविधि साबित होगी।अध्ययन में, रोगियों के तीन समूहों से नासॉफिरिन्जियल नमूने एकत्र किए गए हैं; जिनमेंकोविड-19 पॉजिटिव, कोविड-19 निगेटिव और कोविड-19 से उबर चुके लोग शामिल हैं।

शोधकर्ताओं ने 25 प्रोटीनों की पहचान की है, जो कोविड-19 पॉजिटिव रोगियों में अधिक मात्रा में मौजूद थे। उन्होंने मास स्पेक्ट्रोमेट्री तकनीक का उपयोग करके 25 प्रोटीनों की पहचान की है, और उनकी मात्रा का आकलन किया है, जिसे सेलेक्टेड रिएक्शन मॉनिटरिंग)SRM) परीक्षण कहा जाता है। मास स्पेक्ट्रोमेट्री किसी भी बायोमॉलिक-्यूल की पहचान कर सकती है। जबकि, एसआरएम परीक्षण सिर्फ प्रोटीन पर लक्षित होता है। इसलिए, प्रोटीन की पहचान और उसकी मात्रा के मापन के लिए एसआरएम अत्यधिक संवेदनशीलविधि है।

इन 25 प्रोटीनों का उपयोग संभावित रूप से यह निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है कि कोई नमूना कोविड पॉजिटिव है, या फिर वह कोविड निगेटिव है। पहचाने गए प्रोटीन के कटऑफ प्रतिशत को निर्धारित करने के लिए एक बड़े समूह पर एक मात्रात्मक नैदानिक अध्ययनकिएजानेकीआवश्यकताहै।यहमासस्पेक्ट्रोमेट्रीकोनैदानिकपरीक्षणकेरूपमेंउपयोगकरनेमेंसक्षमबनाएगा।

शोधकर्ताओं ने कोविड -19 से उबर चुके लोगों के नमूनों का उपयोग यह पता लगाने के लिए किया है कि क्या ये प्रोटीन संक्रमण की गंभीरता या फिर उससे उबरने की दिशा में प्रगति का संकेत देता है!

शोधकर्ताओं का प्रयास ऐसे प्रोटीन को चिह्नित करना था, जो गंभीर और गैरगंभीर मामलों को- अलग कर सके। कोविड-19 के 24 पॉजिटिव नमूनों में 11 गैर गंभीर और-13 गंभीर रोगी नमूने शामिल थे। यह माना जाता है कि यदि रोगी तीव्र श्वसन संकट सिंड्रोम अथवा निमोनिया से पीड़ित हो, या फिर उसका ऑक्सीजन संतृप्ति स्तर 87% से कम होता है, तो वह गंभीर संक्रमण से ग्रस्त हो सकता है। शोधकर्ताओं ने गंभीर और गैरअलग विश्लेषण -गंभीर समूहों के नमूनों का अलग-किया है। उन्होंने छह महत्वपूर्ण प्रोटीन की पहचान की है, जो गैर-गंभीर और गंभीर कोविड-19 रोगी के बीच अंतर कर सकते हैं।आईआईटी, बॉम्बे द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

शोधकर्ता यह भी जाँचना चाहते थे कि क्या नई दवा के डिजाइन की प्रतीक्षा करने के बजाय किसी मौजूदा दवा का उपयोग पहचाने गए प्रोटीन को लक्षित करने के लिए किया जा सकता है? इसके लिए, उन्होंने संक्रमित मेजबान में परिवर्तित सेलुलर प्रक्रियाओं में शामिल प्रोटीन के लिए वर्तमान दवाओं)29 एफडीएअनुमोदित-, नौ क्लीनिकल, और 20 पूर्वकीबाध्यकारीदक्षताकीजाँचकीहै।ऐसाकरके (परीक्षणदवाओंक्लीनिकल -, शोधकर्ताओं ने कई ड्रग उम्मीदवारों और छोटे अणुओं की पहचान की है, जो संभावित रूप से महत्वपूर्ण प्रोटीन को बांध और बाधित कर सकते हैं।

शोध टीम की एक सदस्य डॉ कृति बताती हैं कि "दवाओं का विकास एक महंगी और समय लेने वाली प्रक्रिया है। कोविड-19 से निपटने के लिए एक वैकल्पिक चिकित्सीय दृष्टिकोण खोजना महत्वपूर्ण है।" "इनमें से अधिकतर दवाएं एफडीए द्वारा अनुमोदित हैं और बीमारियों के अन्य समूहों का मुकाबला करने के लिए उपयोग की जा रही हैं। इस प्रकार, इन दवाओं का वैकल्पिक उपयोग सुरक्षित रूप से हो सकता है।"

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (आईआईटी) और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (सीएसआईआर), बॉम्बे के अनुदान पर आधारितयह अध्ययन शोध पत्रिका आईसाइंस में प्रकाशित किया गया है। (इंडिया साइंस वायर)

राष्ट्रीय रक्षक

कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर, बताएगी नई तकनीक

लेखक: Snigdha Verma - सितंबर 23, 2021

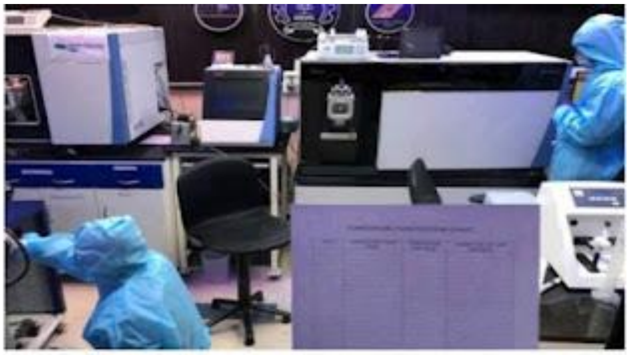

Image Credit: IIT Bombay

नई दिल्ली-कोविड :(साइंस वायर इंडिया)19 संक्रमण कितना गंभीर है यह पता चल जाए तो प्रभावी उपचार में मदद मिल सकती है। कोविड -19 की जांच के लिए उपयोग होने वाला आरटीपीसीआर टेस्ट यह तो बता सकता है - कि कोई व्यक्ति कोरोना वायरस से संक्रमित है या नहीं। पर, यह परीक्षण संक्रमण की गंभीरता को निर्धारित नहीं कर सकता। भारतीय शोधकर्ताओं ने अब एक नये अध्ययन में यह पाया है कि किसी व्यक्ति के नासॉफिरिन्जियल नमूनों में विशिष्ट प्रोटीन का स्तर, संक्रमण की निम्न और उच्च गंभीरता के बीच अंतर कर सकता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण की गंभीरता की जानकारी अस्पतालों को समय पर स्वास्थ्य देखभाल संसाधनों को व्यवस्थित करने में मदद करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि जिन लोगों को गंभीर देखभाल की आवश्यकता होती है, उन्हें आसानी से पहचाना जा सके।

इस अध्ययन में, कोविड -19 संक्रमण की तीव्रता को निर्धारित करने के लिए शोधकर्ताओं ने मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग किया है। आमतौर पर, आरटीपीसीआर परीक्षण में वायरस के न्यूक्लिक एसिड का पता लगाने के लिए - पोलीमरेज़ चेन रिएक्शन का उपयोग होता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण के विभिन्न -रिवर्स ट्रांसक्रिप्शन विशिष्ट वायरल या हो चरणों में जारीस्ट प्रोटीन से कई महत्वपूर्ण तथ्य जुड़े हुए हैं। वे बताते हैं कि किस चरण में कौनसा प्रोटीन निकलता है-, इसकी पहचान करके रोग की गंभीरता का पता लगा सकते हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार, मास स्पेक्ट्रोमेट्री एक ऐसा उपकरण है, जो यह पता लगाने में सक्षम है कि क्या कोई विशेष प्रोटीन नमूने में मौजूद है, और किसी नमूने में उसकी मात्रा कितने प्रतिशत है। नासॉफिरिन्जियल स्वैब, नैदानिक परीक्षण के लिए नाक और गले से नमूना एकत्र करने की विधि है। इस तरह प्राप्त नमूनों का विश्लेषण रोग के लिए जिम्मेदार सूक्ष्मजीवों या अन्य नैदानिक मार्करों की उपस्थिति का पता लगाने के लिए किया जाता है।

आईआईटी बॉम्बे के प्रोफेसर संजीव श्रीवास्तव के नेतृत्व में यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), बॉम्बे और कस्तूरबा अस्पताल, मुंबई के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

शोधकर्ता यह जानना चाहते थे कि क्या मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग कोविड -19 संक्रमण की पुष्टि के लिए प्राथमिक नैदानिक परीक्षण के रूप में भी हो सकता है? यह जानना इसलिए आवश्यक था, क्योंकि कोविड-19 की गंभीरता का पता लगाने और संक्रमण का पता लगाने के लिए अलगपरीक्षणों का उपयोग चि अलग-कित्सा कर्मचारियों के काम को बढ़ाने वाली गतिविधि साबित होगी। अध्ययन में, रोगियों के तीन समूहों से नासॉफिरिन्जियल नमूने एकत्र किए गए हैं; जिनमें कोविड-19 पॉजिटिव, कोविड-19 निगेटिव और कोविड-19 से उबर चुके लोग शामिल हैं।

शोधकर्ताओं ने 25 प्रोटीनों की पहचान की है, जो कोविड-19 पॉजिटिव रोगियों में अधिक मात्रा में मौजूद थे। उन्होंने मास स्पेक्ट्रोमेट्री तकनीक का उपयोग करके 25 प्रोटीनों की पहचान की है, और उनकी मात्रा का आकलन किया है, जिसे सेलेक्टेड रिएक्शन मॉनिटरिंग)SRM) परीक्षण कहा जाता है। मास स्पेक्ट्रोमेट्री किसी भी बायो-मॉलिक्यूल की पहचान कर सकती है। जबकि, एसआरएम परीक्षण सिर्फ प्रोटीन पर लक्षित होता है। इसलिए, प्रोटीन की पहचान और उसकी मात्रा के मापन के लिए एसआरएम अत्यधिक संवेदनशील विधि है।

इन 25 प्रोटीनों का उपयोग संभावित रूप से यह निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है कि कोई नमूना कोविड पॉजिटिव है, या फिर वह कोविड निगेटिव है। पहचाने गए प्रोटीन के कटऑफ प्रतिशत को निर्धारित करने के लिए एक बड़े समूह पर एक मात्रात्मक नैदानिक अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है। यह मास स्पेक्ट्रोमेट्री को नैदानिक परीक्षण के रूप में उपयोग करने में सक्षम बनाएगा।

शोधकर्ताओं ने कोविड -19 से उबर चुके लोगों के नमूनों का उपयोग यह पता लगाने के लिए किया है कि क्या ये प्रोटीन संक्रमण की गंभीरता या फिर उससे उबरने की दिशा में प्रगति का संकेत देता है!

शोधकर्ताओं का प्रयास ऐसे प्रोटीन को चिह्नित करना था, जो गंभीर और गैरगंभीर मामलों को अलग कर सके। --कोविड19 के 24 पॉजिटिव नमूनों में 11 गैर गंभीर और-13 गंभीर रोगी नमूने शामिल थे। यह माना जाता है कि यदि रोगी तीव्र श्वसन संकट सिंड्रोम अथवा निमोनिया से पीड़ित हो, या फिर उसका ऑक्सीजन संतृप्ति स्तर 87% से कम होता है, तो वह गंभीर संक्रमण से ग्रस्त हो सकता है। शोधकर्ताओं ने गंभीर और गैरगंभीर समूहों के नमूनों -अलग विश्लेषण किया है। उन्होंने छह महत्वपूर्ण प्रोटीन की पहचान की है-का अलग, जो गैरगंभीर और गंभीर --कोविड19 रोगी के बीच अंतर कर सकते हैं। आईआईटी, बॉम्बे द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

शोधकर्ता यह भी जाँचना चाहते थे कि क्या नई दवा के डिजाइन की प्रतीक्षा करने के बजाय किसी मौजूदा दवा का उपयोग पहचाने गए प्रोटीन को लक्षित करने के लिए किया जा सकता है? इसके लिए, उन्होंने संक्रमित मेजबान में परिवर्तित सेलुलर प्रक्रियाओं में शामिल प्रोटीन के लिए वर्तमान दवाओं)29 एफडीएअनुमोदित-, नौ क्लीनिकल, और 20 पूर्वकी बाध्यकारी दक्षता की जाँच की है। ऐसा करके (परीक्षण दवाओंक्लीनिकल -, शोधकर्ताओं ने कई ड्रग उम्मीदवारों और छोटे अणुओं की पहचान की है, जो संभावित रूप से महत्वपूर्ण प्रोटीन को बांध और बाधित कर सकते हैं।

शोध टीम की एक सदस्य डॉ कृति बताती हैं कि दवाओं का विकास एक महंगी और समय लेने वाली प्रक्रिया है। " -कोविड19 से निपटने के लिए एक वैकल्पिक चिकित्सीय दृष्टिकोण खोजना महत्वपूर्ण है।" "इनमें से अधिकतर दवाएं एफडीए द्वारा अनुमोदित हैं और बीमारियों के अन्य समूहों का मुकाबला करने के लिए उपयोग की जा रही हैं। इस प्रकार, इन दवाओं का वैकल्पिक उपयोग सुरक्षित रूप से हो सकता है।"

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (आईआईटी) और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (सीएसआईआर), बॉम्बे के अनुदान पर आधारित यह अध्ययन शोध पत्रिका आईसाइंस में प्रकाशित किया गया है।

भारत हेराल्ड

कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर, बताएगी नई तकनीक

5 days ago

नई दिल्ली, 23 सितंबर: कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर है यह पता चल जाए तो प्रभावी उपचार में मदद मिल सकती है। कोविड -19 की जांच के लिए उपयोग होने वाला आरटी है सकता बता यहतो टेस्ट पीसीआर-पर नहीं। या है संक्रमित से वायरस कोरोना व्यक्ति कोई कि, यह परीक्षण संक्रमण की गंभीरता को निर्धारित नहीं कर सकता। भारतीय शोधकर्ताओं ने अब एक नये अध्ययन में यह पाया है कि किसी व्यक्ति के नासॉफिरिन्जियल नमूनों में विशिष्ट प्रोटीन का स्तर, संक्रमण की निम्न और उच्च गंभीरता के बीच अंतर कर सकता है।शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण की गंभीरता की जानकारी अस्पतालों को समय पर स्वास्थ्य देखभाल संसाधनों को व्यवस्थित करने में मदद करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि जिन लोगों को गंभीर देखभाल की आवश्यकता होती है, उन्हें आसानी से पहचाना जा सके।

इस अध्ययन में, कोविड -19 संक्रमण की तीव्रता को निर्धारित करने के लिए शोधकर्ताओं ने मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग किया है। आमतौर पर, आरटीन्यूक् के वायरस में परीक्षण पीसीआर-लिक एसिड का पता लगाने के लिए रिवर्स ट्रांसक्रिप्शन के संक्रमण कि है कहना का शोधकर्ताओं है। होता उपयोग का रिएक्शन चेन पोलीमरेज़-किस कि हैं बताते वे हैं। हुए जुड़े तथ्य महत्वपूर्ण कई से प्रोटीन होस्ट या वायरल विशिष्ट जारी में चरणों विभिन्न प्र सा-कौन में चरणोटीन निकलता है, इसकी पहचान करके रोग की गंभीरता का पता लगा सकते हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार, मास स्पेक्ट्रोमेट्री एक ऐसा उपकरण है, जो यह पता लगाने में सक्षम है कि क्या कोई विशेष प्रोटीन नमूने में मौजूद है, और किसी नमूने में उसकी मात्रा कितने प्रतिशत है।नासॉफिरिन्जियल स्वैब, नैदानिक परीक्षण के लिएनाक और गले से नमूना एकत्र करने की विधि है।इस तरह प्राप्त नमूनों का विश्लेषण रोग के लिए जिम्मेदार सूक्ष्मजीवों या अन्य नैदानिक मार्करों की उपस्थिति का पता लगाने के लिए किया जाता है।

आईआईटी बॉम्बे के प्रोफेसर संजीव श्रीवास्तवके नेतृत्व में यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), बॉम्बे और कस्तूरबा अस्पताल, मुंबई के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

शोधकर्ता यह जानना चाहते थे कि क्या मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग कोविड -19 संक्रमण की पुष्टि के लिए प्राथमिक नैदानिक परीक्षणकेरूपमें भी हो सकता है? यह जानना इसलिए आवश्यक था, क्योंकिकोविड-19 कीगंभीरताकापतालगानेऔरसंक्रमण का पता लगाने केलिएअलग चिकित्सा उपयोग का अलगपरीक्षणों-में अध्ययन होगी। साबित गतिविधि वाली बढ़ाने को काम के कर्मचारियों, रोगियों के तीन समूहों से

नासॉफिरिन्जियल नमूने एकत्र किए गए हैं; जिनमेंकोविड-19 पॉजिटिव, कोविड-19 निगेटिव और कोविड-19 से उबर चुके लोग शामिल हैं।

शोधकर्ताओं ने 25 प्रोटीनों की पहचान की है, जो कोविड-19 पॉजिटिव रोगियों में अधिक मात्रा में मौजूद थे। उन्होंने मास स्पेक्ट्रोमेट्री तकनीक का उपयोग करके 25 प्रोटीनों की पहचान की है, और उनकी मात्रा का आकलन किया है, जिसे सेलेक्टेड रिएक्शन मॉनिटरिंग)SRM) परीक्षण कहा जाता है। मास स्पेक्ट्रोमेट्री किसी भी बायोमॉलिक-्यूल की पहचान कर सकती है। जबकि, एसआरएम परीक्षण सिर्फ प्रोटीन पर लक्षित होता है। इसलिए, प्रोटीन की पहचान और उसकी मात्रा के मापन के लिए एसआरएम अत्यधिक संवेदनशीलविधि है।

इन 25 प्रोटीनों का उपयोग संभावित रूप से यह निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है कि कोई नमूना कोविड पॉजिटिव है, या फिर वह कोविड निगेटिव है। पहचाने गए प्रोटीन के कटऑफ प्रतिशत को निर्धारित करने के लिए एक बड़े समूह पर एक मात्रात्मक नैदानिक अध्ययनकिएजानेकीआवश्यकताहै।यहमासस्पेक्ट्रोमेट्रीकोनैदानिकपरीक्षणकेरूपमेंउपयोगकरनेमेंसक्षमबनाएगा।

शोधकर्ताओं ने कोविड -19 से उबर चुके लोगों के नमूनों का उपयोग यह पता लगाने के लिए किया है कि क्या ये प्रोटीन संक्रमण की गंभीरता या फिर उससे उबरने की दिशा में प्रगति का संकेत देता है!

शोधकर्ताओं का प्रयास ऐसे प्रोटीन को चिह्नित करना था, जो गंभीर और गैरको मामलों गंभीर- अलग कर सके। कोविड-19 के 24 पॉजिटिव नमूनों में 11 गैर और गंभीर-13 गंभीर रोगी नमूने शामिल थे। यह माना जाता है कि यदि रोगी तीव्र श्वसन संकट सिंड्रोम अथवा निमोनिया से पीड़ित हो, या फिर उसका ऑक्सीजन संतृप्ति स्तर 87% से कम होता है, तो वह गंभीर संक्रमण से ग्रस्त हो सकता है। शोधकर्ताओं ने गंभीर और गैर-है की पहचान की प्रोटीन महत्वपूर्ण छह उन्होंने है। किया विश्लेषण अलग-अलग का नमूनों के समूहों गंभीर, जो गैर-कोविड गंभीर और गंभीर-19 रोगी के बीच अंतर कर सकते हैं।आईआईटी, बॉम्बे द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

शोधकर्ता यह भी जाँचना चाहते थे कि क्या नई दवा के डिजाइन की प्रतीक्षा करने के बजाय किसी मौजूदा दवा का उपयोग पहचाने गए प्रोटीन को लक्षित करने के लिए किया जा सकता है? इसके लिए, उन्होंने संक्रमित मेजबान में परिवर्तित सेलुलर प्रक्रियाओं में शामिल प्रोटीन के लिए वर्तमान दवाओं)29 एफडीएअनुमोदित-, नौ क्लीनिकल, और 20 पूर्वकीबाध्यकारीदक्षताकीजाँचकीहै।ऐसाकरके (परीक्षणदवाओं क्लीनिकल-, शोधकर्ताओं ने कई ड्रग उम्मीदवारों और छोटे अणुओं की पहचान की है, जो संभावित रूप से महत्वपूर्ण प्रोटीन को बांध और बाधित कर सकते हैं।

शोध टीम की एक सदस्य डॉ कृति बताती हैं कि "दवाओं का विकास एक महंगी और समय लेने वाली प्रक्रिया है। कोविड-19 से निपटने के लिए एक वैकल्पिक चिकित्सीय दृष्टिकोण खोजना महत्वपूर्ण है।" "इनमें से अधिकतर दवाएं एफडीए द्वारा अनुमोदित हैं और बीमारियों के अन्य समूहों का मुकाबला करने के लिए उपयोग की जा रही हैं। इस प्रकार, इन दवाओं का वैकल्पिक उपयोग सुरक्षित रूप से हो सकता है।"

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (आईआईटी) संस्थान प्रौद्योगिकी भारतीय और (सीएसआईआर), बॉम्बे के अनुदान पर आधारितयह अध्ययन शोध पत्रिका आईसाइंस में प्रकाशित किया गया है। साइंस इंडिया) (वायर

कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर, बताएगी नई तकनीक

24/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 24 सितंबर -कोविड :(वायर इंडिया साइंस)19 संक्रमण कितना गंभीर है यह पता चल जाए तो प्रभावी उपचार में मदद मिल सकती है। कोविड -19 की जांच के लिए उपयोग होने वाला आरटीपीसीआर टेस्ट यह तो बता सकता है कि कोई -व्यक्ति कोरोना वायरस से संक्रमित है या नहीं। पर, यह परीक्षण संक्रमण की गंभीरता को निर्धारित नहीं कर सकता। भारतीय शोधकर्ताओं ने अब एक नये अध्ययन में यह पाया है कि किसी व्यक्ति के नासॉफिरिन्जियल नमूनों में विशिष्ट प्रोटीन का स्तर, संक्रमण की निम्न और उच्च गंभीरता के बीच अंतर कर सकता है।

शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण की गंभीरता की जानकारी अस्पतालों को समय पर स्वास्थ्य देखभाल संसाधनों को व्यवस्थित करने में मदद करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि जिन लोगों को गंभीर देखभाल की आवश्यकता होती है, उन्हें आसानी से पहचाना जा सके। इस अध्ययन में, कोविड -19 संक्रमण की तीव्रता को निर्धारित करने के लिए शोधकर्ताओं ने मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग किया है। आमतौर पर, आरटीपीसीआर परीक्षण में वायरस के न्यूक्लिक- एसिड का पता लगाने के लिए रिवर्स ट्रांसक्रिप्शनपोलीमरेज़ चेन रिएक्शन का उपयोग होता है।-

शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण के विभिन्न चरणों में जारी विशिष्ट वायरल या होस्ट प्रोटीन से कई महत्वपूर्ण तथ्य जुड़े हुए हैं। वे बताते हैं कि किस चरण में कौनसा प्रोट -ीन निकलता है, इसकी पहचान करके रोग की गंभीरता का पता लगा सकते हैं।

शोधकर्ताओं के अनुसार, मास स्पेक्ट्रोमेट्री एक ऐसा उपकरण है, जो यह पता लगाने में सक्षम है कि क्या कोई विशेष प्रोटीन नमूने में मौजूद है, और किसी नमूने में उसकी मात्रा कितने प्रतिशत है।

नासॉफिरिन्जियल स्वैब, नैदानिक परीक्षण के लिए नाक और गले से नमूना एकत्र करने की विधि है। इस तरह प्राप्त नमूनों का विश्लेषण रोग के लिए जिम्मेदार सूक्ष्मजीवों या अन्य नैदानिक मार्करों की उपस्थिति का पता लगाने के लिए किया जाता है। आईआईटी बॉम्बे के प्रोफेसर संजीव श्रीवास्तव के नेतृत्व में यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), बॉम्बे और कस्तूरबा अस्पताल, मुंबई के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है। शोधकर्ता यह जानना चाहते थे कि क्या मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग कोविड -19 संक्रमण की पुष्टि के लिए प्राथमिक नैदानिक परीक्षण के रूप में भी हो सकता है?

यह जानना इसलिए आवश्यक था, क्योंकि कोविड-19 की गंभीरता का पता लगाने और संक्रमण का पता लगाने के लिए अलगअलग परीक्षणों का उपयोग चिकित्सा कर्मचारियों के काम को बढ़ाने वाली गतिविधि साबित होगी। अध्ययन में-, रोगियों के तीन समूहों से नासॉफिरिन्जियल नमूने एकत्र किए गए हैं; जिनमें कोविड-19 पॉजिटिव, कोविड-19 निगेटिव और कोविड-19 से उबर चुके लोग शामिल हैं। शोधकर्ताओं ने 25 प्रोटीनों की पहचान की है, जो कोविड-19 पॉजिटिव रोगियों में अधिक मात्रा में मौजूद थे।

उन्होंने मास स्पेक्ट्रोमेट्री तकनीक का उपयोग करके 25 प्रोटीनों की पहचान की है, और उनकी मात्रा का आकलन किया है, जिसे सेलेक्टेड रिएक्शन मॉनिटरिंग)SRM) परीक्षण कहा जाता है। मास स्पेक्ट्रोमेट्री किसी भी बायोमॉलिक्यूल की पहचान - कर सकती है। जबकि, एसआरएम परीक्षण सिर्फ प्रोटीन पर लक्षित होता है। इसलिए, प्रोटीन की पहचान और उसकी मात्रा के मापन के लिए एसआरएम अत्यधिक संवेदनशील विधि है। इन 25 प्रोटीनों का उपयोग संभावित रूप से यह निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है कि कोई नमूना कोविड पॉजिटिव है, या फिर वह कोविड निगेटिव है।

पहचाने गए प्रोटीन के कटऑफ प्रतिशत को निर्धारित करने के लिए एक बड़े समूह पर एक मात्रात्मक नैदानिक अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है। यह मास स्पेक्ट्रोमेट्री को नैदानिक परीक्षण के रूप में उपयोग करने में सक्षम बनाएगा। शोधकर्ताओं ने कोविड -19 से उबर चुके लोगों के नमूनों का उपयोग यह पता लगाने के लिए किया है कि क्या ये प्रोटीन संक्रमण की गंभीरता या फिर उससे उबरने की दिशा में प्रगति का संकेत देता हैशोधकर्ताओं का प्रयास ऐसे प्रोटीन को चिह्नित ! करना था, जो गंभीर और गैरगंभीर मामलों को अलग कर सके।-

कोविड-19 के 24 पॉजिटिव नमूनों में 11 गैर गंभीर और-13 गंभीर रोगी नमूने शामिल थे। यह माना जाता है कि यदि रोगी तीव्र श्वसन संकट सिंड्रोम अथवा निमोनिया से पीड़ित हो, या फिर उसका ऑक्सीजन संतृप्ति स्तर 87% से कम होता है, तो वह गंभीर संक्रमण से ग्रस्त हो सकता है। शोधकर्ताओं ने गंभीर और गैरगंभीर- समूहों के नमूनों का अलग-अलग विश्लेषण किया है। उन्होंने छह महत्वपूर्ण प्रोटीन की पहचान की है, जो गैर-गंभीर और गंभीर कोविड-19 रोगी के बीच अंतर कर सकते हैं। आईआईटी, बॉम्बे द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

शोधकर्ता यह भी जाँचना चाहते थे कि क्या नई दवा के डिजाइन की प्रतीक्षा करने के बजाय किसी मौजूदा दवा का उपयोग पहचाने गए प्रोटीन को लक्षित करने के लिए किया जा सकता है? इसके लिए, उन्होंने संक्रमित मेजबान में परिवर्तित सेलुलर प्रक्रियाओं में शामिल प्रोटीन के लिए वर्तमान दवाओं)29 एफडीएअनुमोदित-, नौ क्लीनिकल, और 20 पूर्वक्लीनिकल - की बाध्यकारी दक्षता की जाँच की है। ऐसा करके (परीक्षण दवाओं, शोधकर्ताओं ने कई ड्रग उम्मीदवारों और छोटे अणुओं की पहचान की है, जो संभावित रूप से महत्वपूर्ण प्रोटीन को बांध और बाधित कर सकते हैं।

शोध टीम की एक सदस्य डॉ कृति बताती हैं कि "दवाओं का विकास एक महंगी और समय लेने वाली प्रक्रिया है। कोविड-19 से निपटने के लिए एक वैकल्पिक चिकित्सीय दृष्टिकोण खोजना महत्वपूर्ण है।" "इनमें से अधिकतर दवाएं एफडीए द्वारा अनुमोदित हैं और बीमारियों के अन्य समूहों का मुकाबला करने के लिए उपयोग की जा रही हैं। इस प्रकार, इन दवाओं का वैकल्पिक उपयोग सुरक्षित रूप से हो सकता है।" वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद और भारतीय (सीएसआईआर) (आईआईटी) प्रौद्योगिकी संस्थान, बॉम्बे के अनुदान पर आधारित यह अध्ययन शोध पत्रिका आईसाइंस में प्रकाशित किया गया है।

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर, बताएगी नई तकनीक

By **Rupesh Dharmik** - September 23, 2021

नई दिल्ली, 23 सितंबर: कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर है यह पता चल जाए तो प्रभावी उपचार में मदद मिल सकती है। कोविड -19 की जांच के लिए उपयोग होने वाला आरटीपीसीआर टेस्ट यहतो बता सकता है - कि कोई व्यक्ति कोरोना वायरस से संक्रमित है या नहीं। पर, यह परीक्षण संक्रमण की गंभीरता को निर्धारित नहीं कर सकता। भारतीय शोधकर्ताओं ने अब एक नये अध्ययन में यह पाया है कि किसी व्यक्ति के नासॉफिरिन्जियल नमूनों में विशिष्ट प्रोटीन का स्तर, संक्रमण की निम्न और उच्च गंभीरता के बीच अंतर कर सकता है।शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण की गंभीरता की जानकारी अस्पतालों को समय पर स्वास्थ्य देखभाल संसाधनों को व्यवस्थित करने में मदद करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि जिन लोगों को गंभीर देखभाल की आवश्यकता होती है, उन्हें आसानी से पहचाना जा सके।

इस अध्ययन में, कोविड -19 संक्रमण की तीव्रता को निर्धारित करने के लिए शोधकर्ताओं ने मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग किया है। आमतौर पर, आरटीपीसीआर परीक्षण- में वायरस के न्यूक्लिक एसिड का पता लगाने के लिए रिवर्स ट्रांसक्रिप्शनपोलीमरेज़ चेन रिएक्शन का उपयोग होता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण के -

टीन से कई महत्वपूर्ण तथ्य जुड़े हुए हैं। वे बताते हैं कि किविभिन्न चरणों में जारी विशिष्ट बायरल या होस्ट प्रोस चरण में कौनसा प्रोटीन निकलता है-, इसकी पहचान करके रोग की गंभीरता का पता लगा सकते हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार, मास स्पेक्ट्रोमेट्री एक ऐसा उपकरण है, जो यह पता लगाने में सक्षम है कि क्या कोई विशेष प्रोटीन नमूने में मौजूद है, और किसी नमूने में उसकी मात्रा कितने प्रतिशत है।नासॉफिरिन्जियल स्वैब, नैदानिक परीक्षण के लिएनाक और गले से नमूना एकत्र करने की विधि है।इस तरह प्राप्त नमूनों का विश्लेषण रोग के लिए जिम्मेदार सूक्ष्मजीवों या अन्य नैदानिक मार्करों की उपस्थिति का पता लगाने के लिए किया जाता है।

आईआईटी बॉम्बे के प्रोफेसर संजीव श्रीवास्तवके नेतृत्व में यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), बॉम्बे और कस्तूरबा अस्पताल, मुंबई के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

शोधकर्ता यह जानना चाहते थे कि क्या मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग कोविड -19 संक्रमण की पुष्टि के लिए प्राथमिक नैदानिक परीक्षणकेरूपमें भी हो सकता है? यह जानना इसलिए आवश्यक था, क्योंकिकोविड-19 कीगंभीरताकापतालगानेऔरसंक्रमण का पता लगाने केलिएअलगका उपयोग चिकित्सा अलगपरीक्षणों-कर्मचारियों के काम को बढ़ाने वाली गतिविधि साबित होगी। अध्ययन में, रोगियों के तीन समूहों से नासॉफिरिन्जियल नमूने एकत्र किए गए हैं; जिनमेंकोविड-19 पॉजिटिव, कोविड-19 निगेटिव और कोविड-19 से उबर चुके लोग शामिल हैं।

शोधकर्ताओं ने 25 प्रोटीनों की पहचान की है, जो कोविड-19 पॉजिटिव रोगियों में अधिक मात्रा में मौजूद थे। उन्होंने मास स्पेक्ट्रोमेट्री तकनीक का उपयोग करके 25 प्रोटीनों की पहचान की है, और उनकी मात्रा का आकलन किया है, जिसे सेलेक्टेड रिएक्शन मॉनिटरिंग)SRM) परीक्षण कहा जाता है। मास स्पेक्ट्रोमेट्री किसी भी बायोमॉलिक्यूल की पहचान कर सकती है। जबकि-, एसआरएम परीक्षण सिर्फ प्रोटीन पर लक्षित होता है। इसलिए, प्रोटीन की पहचान और उसकी मात्रा के मापन के लिए एसआरएम अत्यधिक संवेदनशीलविधि है।

इन 25 प्रोटीनों का उपयोग संभावित रूप से यह निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है कि कोई नमूना कोविड पॉजिटिव है, या फिर वह कोविड निगेटिव है। पहचाने गए प्रोटीन के कटऑफ प्रतिशत को निर्धारित करने के लिए एक बड़े समूह पर एक मात्रात्मक नैदानिक अध्ययनकिएजानेकीआवश्यकताहै।यहमासस्पेक्ट्रोमेट्रीकोनैदानिकपरीक्षणकेरूपमेंउपयोगकरनेमेंसक्षमबनाएगा।

शोधकर्ताओं ने कोविड -19 से उबर चुके लोगों के नमूनों का उपयोग यह पता लगाने के लिए किया है कि क्या ये प्रोटीन संक्रमण की गंभीरता या फिर उससे उबरने की दिशा में प्रगति का संकेत देता है!

शोधकर्ताओं का प्रयास ऐसे प्रोटीन को चिह्नित करना था, जो गंभीर और गैरगंभीर मामलों को अलग कर --सके। कोविड19 के 24 पॉजिटिव नमूनों में 11 गैर गंभीर और-13 गंभीर रोगी नमूने शामिल थे। यह माना जाता है कि यदि रोगी तीव्र श्वसन संकट सिंड्रोम अथवा निमोनिया से पीड़ित हो, या फिर उसका ऑक्सीजन संतृप्ति स्तर 87% से कम होता है, तो वह गंभीर संक्रमण से ग्रस्त हो सकता है। शोधकर्ताओं ने गंभीर और गैर- गंभीर समूहों के नमूनों काअलगअलग विश्लेषण किया है। उन्होंने छह महत्वपूर्ण प्रोटीन की पहचान की है-, जो गैर-गंभीर और गंभीर कोविड-19 रोगी के बीच अंतर कर सकते हैं।आईआईटी, बॉम्बे द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

शोधकर्ता यह भी जाँचना चाहते थे कि क्या नई दवा के डिजाइन की प्रतीक्षा करने के बजाय किसी मौजूदा दवा का उपयोग पहचाने गए प्रोटीन को लक्षित करने के लिए किया जा सकता है? इसके लिए, उन्होंने संक्रमित मेजबान में परिवर्तित सेलुलर प्रक्रियाओं में शामिल प्रोटीन के लिए वर्तमान दवाओं)29 एफडीएअनुमोदित-, नौ क्लीनिकल, और 20 पूर्वकीबाध्यकारीदक्षताकीजाँचकीहै।ऐसाकरके (परीक्षणदवाओंक्लीनिकल -, शोधकर्ताओं ने कई ड्रग उम्मीदवारों और छोटे अणुओं की पहचान की है, जो संभावित रूप से महत्वपूर्ण प्रोटीन को बांध और बाधित कर सकते हैं।

शोध टीम की एक सदस्य डॉ कृति बताती हैं कि "दवाओं का विकास एक महंगी और समय लेने वाली प्रक्रिया है। कोविड-19 से निपटने के लिए एक वैकल्पिक चिकित्सीय दृष्टिकोण खोजना महत्वपूर्ण है।" "इनमें से अधिकतर दवाएं एफडीए द्वारा अनुमोदित हैं और बीमारियों के अन्य समूहों का मुकाबला करने के लिए उपयोग की जा रही हैं। इस प्रकार, इन दवाओं का वैकल्पिक उपयोग सुरक्षित रूप से हो सकता है।"

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (आईआईटी) की संस्थानऔर भारतीय प्रौद्योगि (सीएसआईआर), बॉम्बे के अनुदान पर आधारितयह अध्ययन शोध पत्रिका आईसाइंस में प्रकाशित किया गया है। इंडिया साइंस) (वायर

कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर, बताएगी नई तकनीक

By Ram Bharose

सितम्बर 23, 2021

कोविड-19 संक्रमण की गंभीरता नापने की नई तकनीक

नई दिल्ली, 23 सितंबर 2021: कोविड-19 संक्रमण कितना गंभीर है यह पता चल जाए तो प्रभावी उपचार में मदद मिल सकती है। कोविड -19 की जांच के लिए उपयोग होने वाला आरटीपीसीआर टेस्ट यह तो बता - सकता है कि कोई व्यक्ति कोरोना वायरस से संक्रमित है या नहीं। पर, यह परीक्षण संक्रमण की गंभीरता को निर्धारित नहीं कर सकता। भारतीय शोधकर्ताओं ने अब एक नये अध्ययन में यह पाया है कि किसी व्यक्ति के नासॉफिरिन्जियल नमूनों में विशिष्ट प्रोटीन का स्तर, संक्रमण की निम्न और उच्च गंभीरता के बीच अंतर कर

सकता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण की गंभीरता की जानकारी अस्पतालों को समय पर स्वास्थ्य देखभाल संसाधनों को व्यवस्थित करने में मदद करेगी और यह सुनिश्चित करेगी कि जिन लोगों को गंभीर देखभाल की आवश्यकता होती है, उन्हें आसानी से पहचाना जा सके।

इस अध्ययन में, कोविड -19 संक्रमण की तीव्रता को निर्धारित करने के लिए शोधकर्ताओं ने मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग किया है।

आमतौर पर, आरटीपीसीआर परीक्षण में वायरस के न्यूक्लिक एसिड का पता लगाने के लिए रिवर्स -पोलीमरेज़ चेन रिएक्शन का उपयोग होता है। शोधकर्ताओं का कहना है कि संक्रमण के विभिन्न -ट्रांसक्रिप्शन चरणों में जारी विशिष्टवायरल या होस्ट प्रोटीन से कई महत्वपूर्ण तथ्य जुड़े हुए हैं।

वे बताते हैं कि किस चरण में कौनसा प्रोटीन निकलता है-, इसकी पहचान करके रोग की गंभीरता का पता लगा सकते हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार, मास स्पेक्ट्रोमेट्री एक ऐसा उपकरण है, जो यह पता लगाने में सक्षम है कि क्या कोई विशेष प्रोटीन नमूने में मौजूद है, और किसी नमूने में उसकी मात्रा कितने प्रतिशत है। नासॉफिरिन्जियल स्वैब, नैदानिक परीक्षण के लिए नाक और गले से नमूना एकत्र करने की विधि है। इस तरह प्राप्त नमूनों का विश्लेषण रोग के लिए जिम्मेदार सूक्ष्मजीवों या अन्य नैदानिक मार्करों की उपस्थिति का पता लगाने के लिए किया जाता है।

आईआईटी बॉम्बे के प्रोफेसर संजीव श्रीवास्तव के नेतृत्व में यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), बॉम्बे और कस्तूरबा अस्पताल, मुंबई के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

शोधकर्ता यह जानना चाहते थे कि क्या मास स्पेक्ट्रोमेट्री का उपयोग कोविड -19 संक्रमण की पुष्टि के लिए प्राथमिक नैदानिक परीक्षण के रूप में भी हो सकता है?

यह जानना इसलिए आवश्यक था, क्योंकि कोविड-19 की गंभीरता का पता लगाने और संक्रमण का पता लगाने के लिए अलगअलग परीक्षणों क-ा उपयोग चिकित्सा कर्मचारियों के काम को बढ़ाने वाली गतिविधि साबित होगी। अध्ययन में, रोगियों के तीन समूहों से नासॉफिरिन्जियल नमूने एकत्र किए गए हैं; जिनमें कोविड-19 पॉजिटिव, कोविड-19 निगेटिव और कोविड-19 से उबर चुके लोग शामिल हैं।

शोधकर्ताओं ने 25 प्रोटीनों की पहचान की है, जो कोविड-19 पॉजिटिव रोगियों में अधिक मात्रा में मौजूद थे। उन्होंने मास स्पेक्ट्रोमेट्री तकनीक का उपयोग करके 25 प्रोटीनों की पहचान की है, और उनकी मात्रा का आकलन किया है, जिसे सेलेक्टेड रिएक्शन मॉनिटरिंग)SRM) परीक्षण कहा जाता है। मास स्पेक्ट्रोमेट्री किसी भी बायोमॉलिक्यूल की पहचान कर सकती है। जबकि-, एसआरएम परीक्षण सिर्फ प्रोटीन पर लक्षित होता है। इसलिए, प्रोटीन की पहचान और उसकी मात्रा के मापन के लिए एसआरएम अत्यधिक संवेदनशील विधि है।

इन 25 प्रोटीनों का उपयोग संभावित रूप से यह निर्धारित करने के लिए किया जा सकता है कि कोई नमूना कोविड पॉजिटिव है, या फिर वह कोविड निगेटिव है। पहचाने गए प्रोटीन के कटऑफ प्रतिशत को निर्धारित

करने के लिए एक बड़े समूह पर एक मात्रात्मक नैदानिक अध्ययन किए जाने की आवश्यकता है। यह मास स्पेक्ट्रोमेट्री को नैदानिक परीक्षण के रूप में उपयोग करने में सक्षम बनाएगा।

शोधकर्ताओं ने कोविड -19 से उबर चुके लोगों के नमूनों का उपयोग यह पता लगाने के लिए किया है कि क्या ये प्रोटीन संक्रमण की गंभीरता या फिर उससे उबरने की दिशा में प्रगति का संकेत देता है!

शोधकर्ताओं का प्रयास ऐसे प्रोटीन को चिह्नित करना था, जो गंभीर और गैरगंभीर मामलों को अलग कर - -सके। कोविड19 के 24 पॉजिटिव नमूनों में 11 गैर गंभीर और-13 गंभीर रोगी नमूने शामिल थे।

यह माना जाता है कि यदि रोगी तीव्र श्वसन संकट सिंड्रोम अथवा निमोनिया से पीड़ित हो, या फिर उसका ऑक्सीजन संतृप्ति स्तर 87% से कम होता है, तो वह गंभीर संक्रमण से ग्रस्त हो सकता है।

शोधकर्ताओं ने गंभीर और गैर अलग-गंभीर समूहों के नमूनों का अलग-विश्लेषण किया है। उन्होंने छह महत्वपूर्ण प्रोटीन की पहचान की है, जो गैर-गंभीर और गंभीर कोविड-19 रोगी के बीच अंतर कर सकते हैं। आईआईटी, बॉम्बे द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

शोधकर्ता यह भी जाँचना चाहते थे कि क्या नई दवा के डिजाइन की प्रतीक्षा करने के बजाय किसी मौजूदा दवा का उपयोग पहचाने गए प्रोटीन को लक्षित करने के लिए किया जा सकता है? इसके लिए, उन्होंने संक्रमित मेजबान में परिवर्तित सेलुलर प्रक्रियाओं में शामिल प्रोटीन के लिए वर्तमान दवाओं)29 एफडीएअनुमोदित-, नौ क्लीनिकल, और 20 पूर्वक्लीनिक-ल परीक्षण दवाओंकी बाध्यकारी दक्षता की जाँच की है। ऐसा करके (, शोधकर्ताओं ने कई ड्रग उम्मीदवारों और छोटे अणुओं की पहचान की है, जो संभावित रूप से महत्वपूर्ण प्रोटीन को बांध और बाधित कर सकते हैं।

शोध टीम की एक सदस्य डॉ कृति बताती हैं कि "दवाओं का विकास एक महंगी और समय लेने वाली प्रक्रिया है। **कोविड-19 से निपटने के लिए एक वैकल्पिक चिकित्सीय दृष्टिकोण** खोजना महत्वपूर्ण है।" "इनमें से अधिकतर दवाएं एफडीए द्वारा अनुमोदित हैं और बीमारियों के अन्य समूहों का मुकाबला करने के लिए उपयोग की जा रही हैं। इस प्रकार, इन दवाओं का वैकल्पिक उपयोग सुरक्षित रूप से हो सकता है।"

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (आईआईटी) और भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (सीएसआईआर), बॉम्बे के अनुदान पर आधारित यह अध्ययन शोध पत्रिका आईसाइंस में प्रकाशित किया गया है।

Telangana Today
FOR LOCAL TO GLOBAL NEWS

DBT Institute to help Vietnamese company develop COVID vaccine

BY INDIA SCIENCE WIRE PUBLISHED: 24TH SEP 2021 7:31 PM

THSTI signs MoU with Vietnamese company for developing a new COVID vaccine.

New Delhi: After helping several Indian companies in the development of vaccines for COVID-19 including clinical trials, the Department of Biotechnology (DBT)'s Translational Health Science and Technology Institute (THSTI) has entered into a research collaboration with Nanogen Pharmaceutical Biotechnology JSC, a Vietnamese pharmaceutical company which is in the process of developing a vaccine for the disease.

The Ambassador of Vietnam to India, Pham Sanh Chau, who led the Vietnamese team that visited THSTI on September 23, to sign the MoU, thanked THSTI, DBT, and the Ministry of External Affairs for extending their support to evaluate a vaccine candidate, named NanoCovax developed by Nanogen. He expressed confidence that the MoU will pave way for more such opportunities between India and Vietnam and contribute to vaccine research in both countries.

THSTI Director, Dr. Pramod Garg, highlighted the importance of cooperation between India and Vietnam in Science & Technology besides other areas as envisioned and championed by Prime Minister, Mr Narendra Modi. He hoped that this collaboration will add another vaccine in the global collective fight against COVID-19.

Ambassador of India to Vietnam, Pranay Verma, who joined from Hanoi, mentioned the wider areas of collaboration between two countries and noted the efforts of the Government of India in supporting and helping Vietnam during the ongoing COVID-19 pandemic with supplies of Oxygen tankers and Oxygen concentrators. He emphasized the importance of international collaboration against global pandemic.

Secretary, Department of Biotechnology, Dr Renu Swarup, congratulated THSTI for leveraging its expertise and facilities not only for India but also globally. She applauded the scientists and appreciated their efforts in developing vaccines and therapeutics. The session concluded with a vote of thanks by Ms. Vidhya Krishnamoorthy, THSTI.

RD TIMES.in

DBT Institute to help Vietnamese company develop COVID vaccine

By **RD Times Online** - September 24, 2021

THSTI signs MoU with Vietnamese company for developing a new COVID vaccine.

New Delhi, Sep 24: After helping several Indian companies in the development of vaccines for COVID-19 including clinical trials, the Department of Biotechnology (DBT)'s Translational Health Science and Technology Institute (THSTI)has entered into a research collaboration with Nanogen Pharmaceutical Biotechnology JSC, a Vietnamese pharmaceutical company which is in the process of developing a vaccine for the disease.

The Ambassador of Vietnam to India, Mr. Pham Sanh Chau, who led the Vietnamese team that visited THSTI on September 23, to sign the MoU, thanked THSTI, DBT, and the Ministry of External Affairs for extending their support to evaluate a vaccine candidate, named NanoCovax developed by Nanogen. He expressed confidence that the MoU will pave way for more

such opportunities between India and Vietnam and contribute to vaccine research in both countries.

THSTI Director, Dr. Pramod Garg, highlighted the importance of cooperation between India and Vietnam in Science & Technology besides other areas as envisioned and championed by Prime Minister, Mr Narendra Modi. He hoped that this collaboration will add another vaccine in the global collective fight against COVID-19.

Ambassador of India to Vietnam, Mr PranayVerma, who joined from Hanoi, mentioned the wider areas of collaboration between the two countries and noted the efforts of the Government of India in supporting and helping Vietnam during the ongoing COVID-19 pandemic with supplies of Oxygen tankers and Oxygen concentrators. He emphasized the importance of international collaboration against the global pandemic.

Secretary, Department of Biotechnology, Dr RenuSwarup, congratulated THSTI for leveraging its expertise and facilities not only for India but also globally. She applauded the scientists and appreciated their efforts in developing vaccines and therapeutics. The session concluded with a vote of thanks by Ms. VidhyaKrishnamoorthy, THSTI. (India Science Wire)

Voice of the Nation
ORGANISER

DBT Institute to help Vietnamese company develop COVID vaccine

WEBDESK Sep 25, 2021, 09:00 AM IST

The Ambassador of Vietnam to India led the Vietnamese team that visited THSTI to sign the MoU, thanked THSTI, DBT, and the Ministry of External Affairs for extending their support to evaluate a vaccine named NanoCovax developed by Nanogen.

New Delhi: After helping several Indian companies in the development of vaccines for COVID-19 including clinical trials, the Department of Biotechnology (DBT)'s Translational Health Science and Technology Institute (THSTI) has entered into a research collaboration with Nanogen Pharmaceutical Biotechnology JSC, a Vietnamese pharmaceutical company which is in the process of developing a vaccine for the disease.

The Ambassador of Vietnam to India, Mr. Pham Sanh Chau, who led the Vietnamese team that visited THSTI on September 23 to sign the MoU, thanked THSTI, DBT, and the Ministry of

External Affairs for extending their support to evaluate a vaccine named NanoCovax developed by Nanogen. He expressed confidence that the MoU will pave the way for more such opportunities between India and Vietnam and contribute to vaccine research in both countries.

THSTI Director, Dr. Pramod Garg, highlighted the importance of cooperation between India and Vietnam in Science & Technology besides other areas as envisioned and championed by Prime Minister Mr Narendra Modi. He hoped that this collaboration would add another vaccine in the global collective fight against COVID-19.

Ambassador of India to Vietnam, Mr Pranay Verma, who joined from Hanoi, mentioned the wider areas of collaboration between the two countries and noted the efforts of the Government of India in supporting and helping Vietnam during the ongoing COVID-19 pandemic with supplies of Oxygen tankers and Oxygen concentrators. He emphasized the importance of international collaboration against the global pandemic.

Secretary, Department of Biotechnology, Dr Renu Swarup, congratulated THSTI for leveraging its expertise and facilities for India and globally. She applauded the scientists and appreciated their efforts in developing vaccines and therapeutics. The session concluded with a vote of thanks by Ms. Vidhya Krishnamoorthy, THSTI.

Courtesy: India Science Wire

The Indian Bulletin
www.theindianbulletin.com

DBT Institute to help Vietnamese company develop COVID vaccine

By **The Indian Bulletin Online** - September 24, 2021

THSTI signs MoU with Vietnamese company for developing a new COVID vaccine.

New Delhi, Sep 24: After helping several Indian companies in the development of vaccines for COVID-19 including clinical trials, the Department of Biotechnology (DBT)’s Translational Health Science and Technology Institute (THSTI)has entered into a research collaboration with Nanogen Pharmaceutical Biotechnology JSC, a Vietnamese pharmaceutical company which is in the process of developing a vaccine for the disease.

The Ambassador of Vietnam to India, Mr. Pham Sanh Chau, who led the Vietnamese team that visited THSTI on September 23, to sign the MoU,

thanked THSTI, DBT, and the Ministry of External Affairs for extending their support to evaluate a vaccine candidate, named NanoCovax developed by Nanogen. He expressed confidence that the MoU will pave way for more such opportunities between India and Vietnam and contribute to vaccine research in both countries.

THSTI Director, Dr. Pramod Garg, highlighted the importance of cooperation between India and Vietnam in Science & Technology besides other areas as envisioned and championed by Prime Minister, Mr Narendra Modi. He hoped that this collaboration will add another vaccine in the global collective fight against COVID-19.

Ambassador of India to Vietnam, Mr PranayVerma, who joined from Hanoi, mentioned the wider areas of collaboration between the two countries and noted the efforts of the Government of India in supporting and helping Vietnam during the ongoing COVID-19 pandemic with supplies of Oxygen tankers and Oxygen concentrators. He emphasized the importance of international collaboration against the global pandemic.

Secretary, Department of Biotechnology, Dr RenuSwarup, congratulated THSTI for leveraging its expertise and facilities not only for India but also globally. She applauded the scientists and appreciated their efforts in developing vaccines and therapeutics. The session concluded with a vote of thanks by Ms. VidhyaKrishnamoorthy, THSTI. (India Science Wire)

AbhyudayTimes

DBT Institute to help Vietnamese company develop COVID vaccine

By **Abhyuday Times** - September 24, 2021

New Delhi, Sep 24: After helping several Indian companies in the development of vaccines for COVID-19 including clinical trials, the Department of Biotechnology (DBT)'s Translational Health Science and Technology Institute (THSTI)has entered into a research collaboration with Nanogen Pharmaceutical Biotechnology JSC, a Vietnamese pharmaceutical company which is in the process of developing a vaccine for the disease.

The Ambassador of Vietnam to India, Mr. Pham Sanh Chau, who led the Vietnamese team that visited THSTI on September 23, to sign the MoU, thanked THSTI, DBT, and the Ministry of External Affairs for extending their support to evaluate a vaccine candidate, named NanoCovax developed by Nanogen. He expressed confidence that the MoU will pave way for more such opportunities between India and Vietnam and contribute to vaccine research in both countries.

THSTI Director, Dr. Pramod Garg, highlighted the importance of cooperation between India and Vietnam in Science & Technology besides other areas as envisioned and championed by Prime Minister, Mr Narendra Modi. He hoped that this collaboration will add another vaccine in the global collective fight against COVID-19.

Ambassador of India to Vietnam, Mr PranayVerma, who joined from Hanoi, mentioned the wider areas of collaboration between the two countries and noted the efforts of the Government of India in supporting and helping Vietnam during the ongoing COVID-19 pandemic with supplies of Oxygen tankers and Oxygen concentrators. He emphasized the importance of international collaboration against the global pandemic.

Secretary, Department of Biotechnology, Dr RenuSwarup, congratulated THSTI for leveraging its expertise and facilities not only for India but also globally. She applauded the scientists and appreciated their efforts in developing vaccines and therapeutics. The session concluded with a vote of thanks by Ms. VidhyaKrishnamoorthy, THSTI. (India Science Wire)

Republic NewsIndia

DBT Institute to help Vietnamese company develop COVID vaccine

By **Rupesh Dharmik** - September 24, 2021

THSTI signs MoU with Vietnamese company for developing a new COVID vaccine.

New Delhi, Sep 24: After helping several Indian companies in the development of vaccines for COVID-19 including clinical trials, the Department of Biotechnology (DBT)’s Translational Health Science and Technology Institute (THSTI)has entered into a research collaboration with Nanogen Pharmaceutical Biotechnology JSC, a Vietnamese pharmaceutical company which is in the process of developing a vaccine for the disease.

The Ambassador of Vietnam to India, Mr. Pham Sanh Chau, who led the Vietnamese team that visited THSTI on September 23, to sign the MoU, thanked THSTI, DBT, and the Ministry of External Affairs for extending their

support to evaluate a vaccine candidate, named NanoCovax developed by Nanogen. He expressed confidence that the MoU will pave way for more such opportunities between India and Vietnam and contribute to vaccine research in both countries.

THSTI Director, Dr. Pramod Garg, highlighted the importance of cooperation between India and Vietnam in Science & Technology besides other areas as envisioned and championed by Prime Minister, Mr Narendra Modi. He hoped that this collaboration will add another vaccine in the global collective fight against COVID-19.

Ambassador of India to Vietnam, Mr PranayVerma, who joined from Hanoi, mentioned the wider areas of collaboration between the two countries and noted the efforts of the Government of India in supporting and helping Vietnam during the ongoing COVID-19 pandemic with supplies of Oxygen tankers and Oxygen concentrators. He emphasized the importance of international collaboration against the global pandemic.

Secretary, Department of Biotechnology, Dr RenuSwarup, congratulated THSTI for leveraging its expertise and facilities not only for India but also globally. She applauded the scientists and appreciated their efforts in developing vaccines and therapeutics. The session concluded with a vote of thanks by Ms. VidhyaKrishnamoorthy, THSTI. (India Science Wire)

Indus Scrolls
Indian to the core

DBT Institute to help Vietnamese company develop COVID vaccine

by **India Science Wire** September 24, 2021 in **Uncategorized**

After helping several Indian companies in the development of vaccines for COVID-19 including clinical trials, the Department of Biotechnology (DBT)'s Translational Health Science and Technology Institute (THSTI) has entered into a research collaboration with Nanogen Pharmaceutical Biotechnology JSC, a Vietnamese pharmaceutical company which is in the process of developing a vaccine for the disease.

The Ambassador of Vietnam to India, Mr. Pham Sanh Chau, who led the Vietnamese team that visited THSTI on September 23, to sign the MoU, thanked THSTI, DBT, and the Ministry of External Affairs for extending their support to evaluate a vaccine candidate, named NanoCovax developed by Nanogen. He expressed confidence that the MoU will pave way for more such opportunities between India and Vietnam and contribute to vaccine research in both countries.

THSTI Director, Dr. Pramod Garg, highlighted the importance of cooperation between India and Vietnam in Science & Technology besides other areas as

envisioned and championed by Prime Minister, Mr Narendra Modi. He hoped that this collaboration will add another vaccine in the global collective fight against COVID-19.

Ambassador of India to Vietnam, Mr Pranay Verma, who joined from Hanoi, mentioned the wider areas of collaboration between two countries and noted the efforts of the Government of India in supporting and helping Vietnam during the ongoing COVID-19 pandemic with supplies of Oxygen tankers and Oxygen concentrators. He emphasized the importance of international collaboration against global pandemic.

Secretary, Department of Biotechnology, Dr Renu Swarup, congratulated THSTI for leveraging its expertise and facilities not only for India but also globally. She applauded the scientists and appreciated their efforts in developing vaccines and therapeutics. The session concluded with a vote of thanks by Ms. Vidhya Krishnamoorthy, THSTI.

IndianSentinel
www.indiansentinel.in

DBT Institute to help Vietnamese company develop COVID vaccine

4 days ago

THSTI signs MoU with Vietnamese company for developing a new COVID vaccine.

New Delhi, Sep 24: After helping several Indian companies in the development of vaccines for COVID-19 including clinical trials, the Department of Biotechnology (DBT)'s Translational Health Science and Technology Institute (THSTI)has entered into a research collaboration with Nanogen Pharmaceutical Biotechnology JSC, a Vietnamese pharmaceutical company which is in the process of developing a vaccine for the disease.

The Ambassador of Vietnam to India, Mr. Pham Sanh Chau, who led the Vietnamese team that visited THSTI on September 23, to sign the MoU, thanked THSTI, DBT, and the Ministry of External Affairs for extending their support to evaluate a vaccine candidate,

named NanoCovax developed by Nanogen. He expressed confidence that the MoU will pave way for more such opportunities between India and Vietnam and contribute to vaccine research in both countries.

THSTI Director, Dr. Pramod Garg, highlighted the importance of cooperation between India and Vietnam in Science & Technology besides other areas as envisioned and championed by Prime Minister, Mr Narendra Modi. He hoped that this collaboration will add another vaccine in the global collective fight against COVID-19.

Ambassador of India to Vietnam, Mr PranayVerma, who joined from Hanoi, mentioned the wider areas of collaboration between the two countries and noted the efforts of the Government of India in supporting and helping Vietnam during the ongoing COVID-19 pandemic with supplies of Oxygen tankers and Oxygen concentrators. He emphasized the importance of international collaboration against the global pandemic.

Secretary, Department of Biotechnology, Dr RenuSwarup, congratulated THSTI for leveraging its expertise and facilities not only for India but also globally. She applauded the scientists and appreciated their efforts in developing vaccines and therapeutics. The session concluded with a vote of thanks by Ms. VidhyaKrishnamoorthy, THSTI. (India Science Wire)

BioVoice Get Heard!
www.biovoicenews.com

THSTI to help Vietnam based Nanogen to develop COVID vaccine

The team at Translational Health Science and Technology Institute (THSTI) will evaluate a vaccine candidate, named NanoCovax developed by Nanogen Pharmaceutical Biotechnology

By **BioVoice Correspondent** - September 27, 2021

THSTI signs MoU with Vietnamese company for developing a new COVID vaccine.

New Delhi: After helping several Indian companies in the development of vaccines for COVID-19 including clinical trials, the Department of Biotechnology (DBT)'s Translational Health Science and Technology Institute (THSTI) has entered into a research collaboration with Nanogen Pharmaceutical Biotechnology JSC, a Vietnamese pharmaceutical company which is in the process of developing a vaccine for the disease.

The Ambassador of Vietnam to India, Mr. Pham Sanh Chau, who led the Vietnamese team that visited THSTI on September 23, to sign the MoU, thanked THSTI, DBT, and the Ministry of External Affairs for extending their support to evaluate a vaccine candidate, named NanoCovax developed by Nanogen. He expressed confidence that the MoU will pave way for more such opportunities between India and Vietnam and contribute to vaccine research in both countries.

THSTI Director, Dr. Pramod Garg, highlighted the importance of cooperation between India and Vietnam in Science & Technology besides other areas as envisioned and championed by Prime Minister, Mr Narendra Modi. He hoped that this collaboration will add another vaccine in the global collective fight against COVID-19.

Ambassador of India to Vietnam, Mr Pranay Verma, who joined from Hanoi, mentioned the wider areas of collaboration between two countries and noted the efforts of the Government of India in supporting and helping Vietnam during the ongoing COVID-19 pandemic with supplies of Oxygen tankers and Oxygen concentrators. He emphasized the importance of international collaboration against global pandemic.

Secretary, Department of Biotechnology, Dr Renu Swarup, congratulated THSTI for leveraging its expertise and facilities not only for India but also globally. She applauded the scientists and appreciated their efforts in developing vaccines and therapeutics. The session concluded with a vote of thanks by Ms. Vidhya Krishnamoorthy, THSTI.

Telangana Today
FOR LOCAL TO GLOBAL NEWS

Newly devised sensor can detect explosives swiftly

BYINDIA SCIENCE WIRE   PUBLISHED: 24TH SEP 2021 7:55 PM

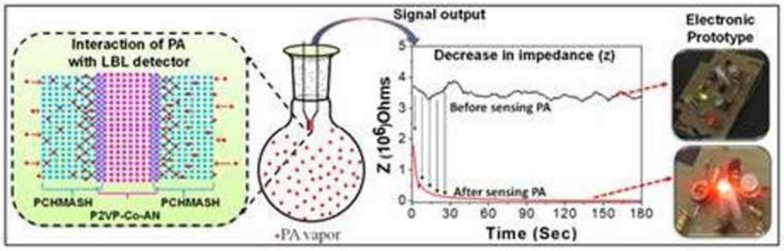

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance (Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

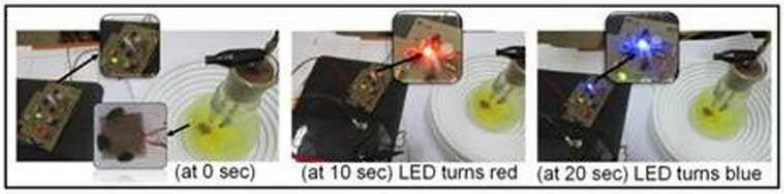

The change in the colour of LED at different exposure time to NAC vapour.

New Delhi: In a development that could be of immense use in criminal investigations, Indian scientists have come up with a thermally stable and cost-effective electronic polymer-based sensor for rapidly detecting nitro-aromatic chemicals used in high-energy explosives.

The detection of explosives without destroying them is essential for criminal investigations, minefield remediation, and several other military and security-related applications. Chemical sensors play a vital role in such cases.

Though the explosive poly-nitroaromatic compounds can be analyzed very well using sophisticated instrumental techniques, the quick decision making in criminology laboratories or reclaimed military sites, or to trace explosives in possession of extremists often require simple, cheap, and selective field techniques which will be non-destructive in nature.

Non-destructive sensing of nitroaromatic chemicals (NACs) is, however, difficult. Earlier studies were based mostly on photo-luminescent property. Detection based on conducting property has not been explored so far.

A team of scientists led by Dr. Neelotpal Sen Sarma from the Institute of Advanced Study in Science and Technology, Guwahati, an autonomous institute of the Department of Science & Technology, Government of India, has filled the gap.

They have developed a layer-by-layer (LBL) polymer detector. The detector consists of two organic polymers — poly-2-vinyl pyridine with acrylonitrile (P2VP-Co-AN) and copolysulfone of cholesterol methacrylate with hexane (PCHMASH), which undergo a drastic change in impedance (resistance in an ac circuit) in the presence of even very low concentrations of nitro-aromatic compounds within few seconds. A chemical called picric acid (PA) was chosen as the model NAC, and a simple and cost-effective electronic prototype was developed for its visual detection. The study team has filed a patent for the novel technology.

The device can be operated at room temperature, has a low response time and negligible interference from other chemicals. The fabrication is simple and is negligibly affected by humidity.

Voice of the Nation
ORGANISER

A newly devised sensor can detect explosives swiftly

WEBDESK Sep 25, 2021, 08:36 AM IST

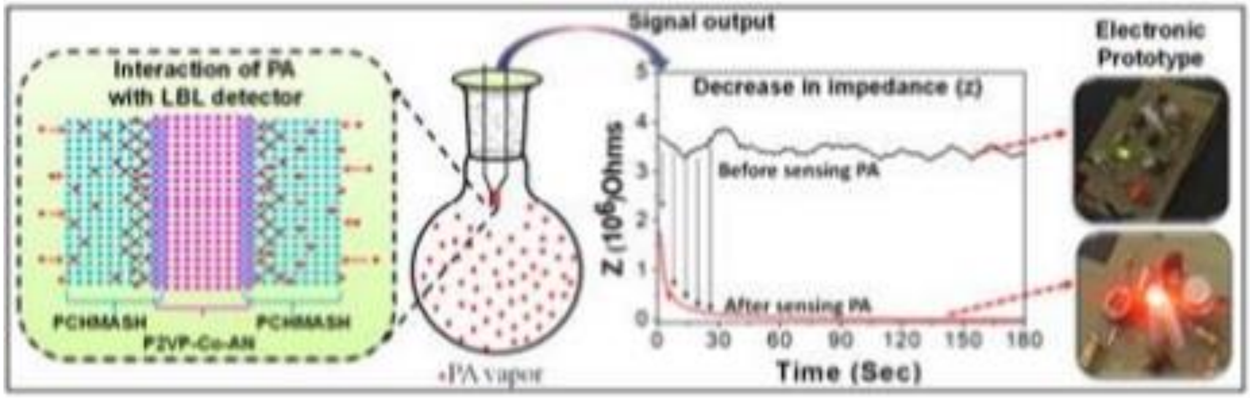

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance (Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

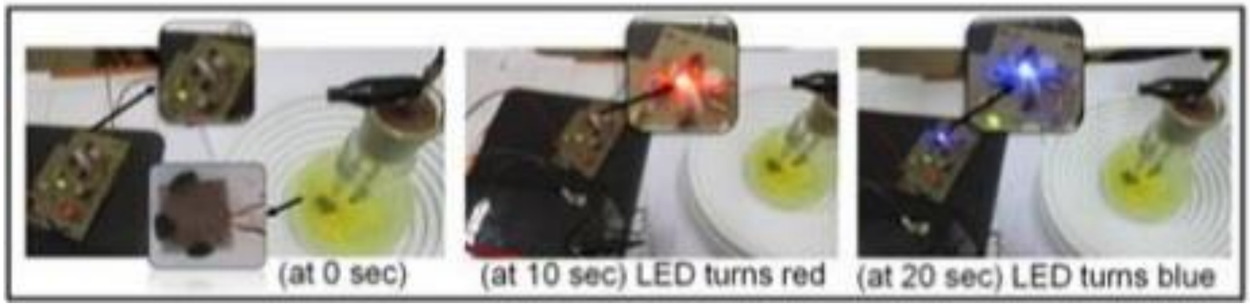

The detector consists of two organic polymers — poly-2-vinyl pyridine with acrylonitrile (P2VP-Co-AN) and copolysulfone of cholesterol methacrylate with hexane (PCHMASH), which undergo a drastic change in impedance (resistance in an ac circuit) in the presence of even very low concentrations of nitro-aromatic compounds within few seconds.

New Delhi: In a development that could be of immense use in criminal investigations, Indian scientists have developed a thermally stable and cost-effective electronic polymer-based sensor for rapidly detecting nitro-aromatic chemicals used in high-energy explosives.

Detecting explosives without destroying them is essential for criminal investigations, minefield remediation, and several other military and security-related applications. Chemical sensors play a vital role in such cases.

Though the explosive poly-nitroaromatic compounds can be analyzed very well using sophisticated instrumental techniques, the quick decision making in criminology laboratories or reclaimed military sites or to trace explosives in possession of extremists often require simple, cheap, and selective field techniques which will be non-destructive in nature.

Non-destructive sensing of nitroaromatic chemicals (NACs) is, however, difficult. Earlier studies were based mostly on photo-luminescent property. Detection based on conducting property has not been explored so far.

A team of scientists led by Dr. Neelotpal Sen Sarma from the Institute of Advanced Study in Science and Technology, Guwahati, an autonomous Institute of the Department of Science & Technology, Government of India, has filled the gap.

They have developed a layer-by-layer (LBL) polymer detector. The detector consists of two organic polymers — poly-2-vinyl pyridine with acrylonitrile (P2VP-Co-AN) and copolysulfone of cholesterol methacrylate with hexane (PCHMASH), which undergo a drastic change in impedance (resistance in an ac circuit) in the presence of even very low concentrations of nitro-aromatic compounds within few seconds. A chemical called picric acid (PA) was chosen as the model NAC, and a simple and cost-effective electronic prototype was developed for its visual detection. The study team has filed a patent for the novel technology.

The device can be operated at room temperature, has a low response time and negligible interference from other chemicals. The fabrication is simple and is negligibly affected by humidity.

Courtesy: India Science Wire

Newly devised sensor can detect explosives swiftly

by India Science Wire September 24, 2021 in Uncategorized

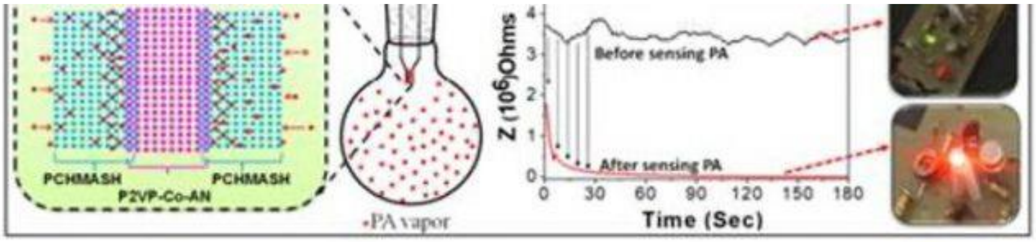

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance

(Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

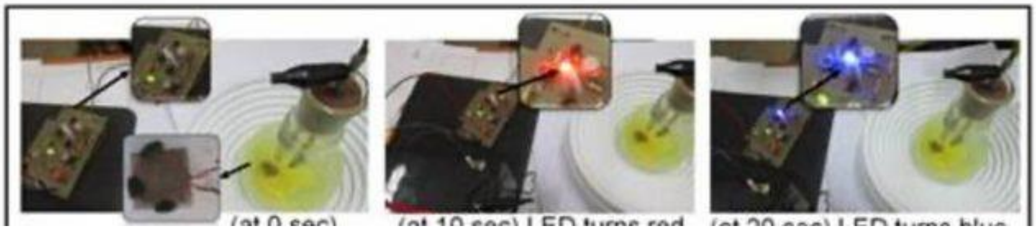

In a development that could be of immense use in criminal investigations, Indian scientists have come up with a thermally stable and cost-effective electronic polymer-based sensor for rapidly detecting nitro-aromatic chemicals used in high-energy explosives.

The detection of explosives without destroying them is essential for criminal investigations, minefield remediation, and several other military and security-related applications. Chemical sensors play a vital role in such cases.

Though the explosive poly-nitroaromatic compounds can be analyzed very well using sophisticated instrumental techniques, the quick decision making in criminology laboratories or reclaimed military sites, or to trace explosives in possession of extremists often require simple, cheap, and selective field techniques which will be non-destructive in nature.

Non-destructive sensing of nitroaromatic chemicals (NACs) is, however, difficult. Earlier studies were based mostly on photo-luminescent property. Detection based on conducting property has not been explored so far.

A team of scientists led by Dr. Neelotpal Sen Sarma from the Institute of Advanced Study in Science and Technology, Guwahati, an autonomous institute of the Department of Science & Technology, Government of India, has filled the gap.

They have developed a layer-by-layer (LBL) polymer detector. The detector consists of two organic polymers — poly-2-vinyl pyridine with acrylonitrile (P2VP-Co-AN) and copolysulfone of cholesterol methacrylate with hexane (PCHMASH), which undergo a drastic change in impedance (resistance in an ac circuit) in the presence of even very low concentrations of nitro-aromatic compounds within few seconds. A chemical called picric acid (PA) was chosen as the model NAC, and a simple and cost-effective electronic prototype was developed for its visual detection. The study team has filed a patent for the novel technology.

The device can be operated at room temperature, has a low response time and negligible interference from other chemicals. The fabrication is simple and is negligibly affected by humidity.

Hindustan Saga

Newly devised sensor can detect explosives swiftly

Hindustan Saga | 4 days ago

New Delhi, Sep 24: In a development that could be of immense use in criminal investigations, Indian scientists have come up with a thermally stable and cost-effective electronic polymer-based sensor for rapidly detecting nitro-aromatic chemicals used in high-energy explosives.

The detection of explosives without destroying them is essential for criminal investigations, minefield remediation, and several other military and security-related applications. Chemical sensors play a vital role in such cases.

Though the explosive poly-nitroaromatic compounds can be analyzed very well using sophisticated instrumental techniques, the quick decision making in criminology laboratories or reclaimed military sites, or to trace explosives in possession of extremists often require simple, cheap, and selective field techniques which will be non-destructive in nature.

Non-destructive sensing of nitroaromatic chemicals (NACs) is, however, difficult. Earlier studies were based mostly on photo-luminescent property. Detection based on conducting property has not been explored so far.

A team of scientists led by Dr.Neelotpal Sen Sarma from the Institute of Advanced Study in Science and Technology, Guwahati, an autonomous institute of the Department of Science & Technology, Government of India, has filled the gap.

They have developed a layer-by-layer (LBL) polymer detector. The detector consists of two organic polymers — poly-2-vinyl pyridine with acrylonitrile (P2VP-Co-AN) and copolysulfone of cholesterol methacrylate with hexane (PCHMASH), which undergo a drastic change in impedance (resistance in an ac circuit) in the presence of even very low concentrations of nitro-aromatic compounds within few seconds. A chemical called picric acid (PA) was chosen as the model NAC, and a simple and cost-effective electronic prototype was developed for its visual detection. The study team has filed a patent for the novel technology.

The device can be operated at room temperature, has a low response time and negligible interference from other chemicals. The fabrication is simple and is negligibly affected by humidity. (India Science Wire)

Newly devised sensor can detect explosives swiftly

By **Rupesh Dharmik** - September 24, 2021

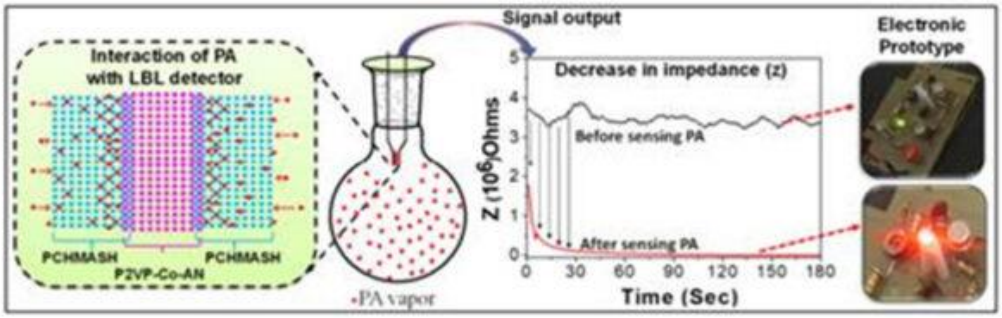

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance (Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

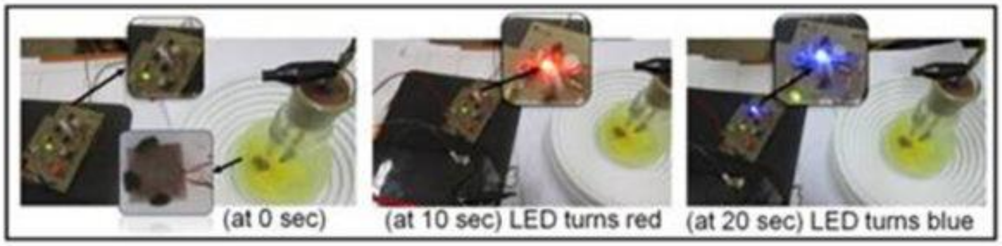

The change in the colour of LED at different exposure time to NAC vapour.

New Delhi, Sep 24: In a development that could be of immense use in criminal investigations, Indian scientists have come up with a thermally stable and cost-effective electronic polymer-based sensor for rapidly detecting nitro-aromatic chemicals used in high-energy explosives.

The detection of explosives without destroying them is essential for criminal investigations, minefield remediation, and several other military and

security-related applications. Chemical sensors play a vital role in such cases.

Though the explosive poly-nitroaromatic compounds can be analyzed very well using sophisticated instrumental techniques, the quick decision making in criminology laboratories or reclaimed military sites, or to trace explosives in possession of extremists often require simple, cheap, and selective field techniques which will be non-destructive in nature.

Non-destructive sensing of nitroaromatic chemicals (NACs) is, however, difficult. Earlier studies were based mostly on photo-luminescent property. Detection based on conducting property has not been explored so far.

A team of scientists led by Dr.Neelotpal Sen Sarma from the Institute of Advanced Study in Science and Technology, Guwahati, an autonomous institute of the Department of Science & Technology, Government of India, has filled the gap.

They have developed a layer-by-layer (LBL) polymer detector. The detector consists of two organic polymers — poly-2-vinyl pyridine with acrylonitrile (P2VP-Co-AN) and copolysulfone of cholesterol methacrylate with hexane (PCHMASH), which undergo a drastic change in impedance (resistance in an ac circuit) in the presence of even very low concentrations of nitro-aromatic compounds within few seconds. A chemical called picric acid (PA) was chosen as the model NAC, and a simple and cost-effective electronic prototype was developed for its visual detection. The study team has filed a patent for the novel technology.

The device can be operated at room temperature, has a low response time and negligible interference from other chemicals. The fabrication is simple and is negligibly affected by humidity. (India Science Wire)

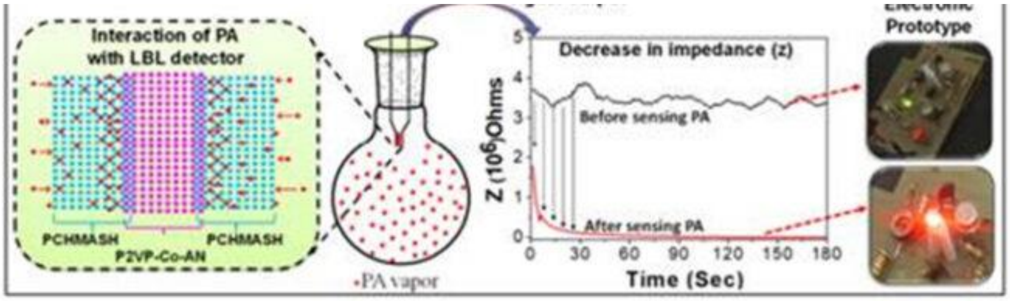

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance (Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

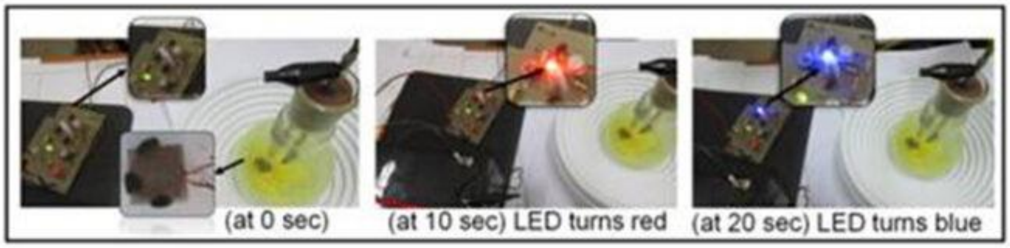

Newly devised sensor can detect explosives swiftly

RKD Live | 4 days ago

New Delhi, Sep 24: In a development that could be of immense use in criminal investigations, Indian scientists have come up with a thermally stable and cost-effective electronic polymer-based sensor for rapidly detecting nitro-aromatic chemicals used in high-energy explosives.

The detection of explosives without destroying them is essential for criminal investigations, minefield remediation, and several other military and security-related applications. Chemical sensors play a vital role in such cases.

Though the explosive poly-nitroaromatic compounds can be analyzed very well using sophisticated instrumental techniques, the quick decision making in criminology laboratories or reclaimed military sites, or to trace explosives in possession of extremists

often require simple, cheap, and selective field techniques which will be non-destructive in nature.

Non-destructive sensing of nitroaromatic chemicals (NACs) is, however, difficult. Earlier studies were based mostly on photo-luminescent property. Detection based on conducting property has not been explored so far.

A team of scientists led by Dr.Neelotpal Sen Sarma from the Institute of Advanced Study in Science and Technology, Guwahati, an autonomous institute of the Department of Science & Technology, Government of India, has filled the gap.

They have developed a layer-by-layer (LBL) polymer detector. The detector consists of two organic polymers — poly-2-vinyl pyridine with acrylonitrile (P2VP-Co-AN) and copolysulfone of cholesterol methacrylate with hexane (PCHMASH), which undergo a drastic change in impedance (resistance in an ac circuit) in the presence of even very low concentrations of nitro-aromatic compounds within few seconds. A chemical called picric acid (PA) was chosen as the model NAC, and a simple and cost-effective electronic prototype was developed for its visual detection. The study team has filed a patent for the novel technology.

The device can be operated at room temperature, has a low response time and negligible interference from other chemicals. The fabrication is simple and is negligibly affected by humidity. (India Science Wire)

Let INDIA SHINE

Newly devised sensor can detect explosives swiftly

By **Let India Shine** - September 24, 2021

New Delhi, Sep 24: In a development that could be of immense use in criminal investigations, Indian scientists have come up with a thermally stable and cost-effective electronic polymer-based sensor for rapidly detecting nitro-aromatic chemicals used in high-energy explosives.

The detection of explosives without destroying them is essential for criminal investigations, minefield remediation, and several other military and security-related applications. Chemical sensors play a vital role in such cases.

Though the explosive poly-nitroaromatic compounds can be analyzed very well using sophisticated instrumental techniques, the quick decision making in criminology laboratories or reclaimed military sites, or to trace explosives in possession of extremists often require simple, cheap, and selective field techniques which will be non-destructive in nature.

Non-destructive sensing of nitroaromatic chemicals (NACs) is, however, difficult. Earlier studies were based mostly on photo-luminescent property. Detection based on conducting property has not been explored so far.

A team of scientists led by Dr.Neelotpal Sen Sarma from the Institute of Advanced Study in Science and Technology, Guwahati, an autonomous institute of the Department of Science & Technology, Government of India, has filled the gap.

They have developed a layer-by-layer (LBL) polymer detector. The detector consists of two organic polymers — poly-2-vinyl pyridine with acrylonitrile (P2VP-Co-AN) and copolysulfone of cholesterol methacrylate with hexane (PCHMASH), which undergo a drastic change in impedance (resistance in an ac circuit) in the presence of even very low concentrations of nitro-aromatic compounds within few seconds. A chemical called picric acid (PA) was chosen as the model NAC, and a simple and cost-effective electronic prototype was developed for its visual detection. The study team has filed a patent for the novel technology.

The device can be operated at room temperature, has a low response time and negligible interference from other chemicals. The fabrication is simple and is negligibly affected by humidity. (India Science Wire)

Telangana Today
FOR LOCAL TO GLOBAL NEWS

Researchers devise method to tackle Covid-19 PPE waste

BY INDIA SCIENCE WIRE PUBLISHED: 24TH SEP 2021 8:00 PM

New Delhi: Researchers from the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Pune-based National Chemical Laboratory (CSIR-NCL), Reliance Industries Ltd (RIL), and several other companies from Pune have pooled their expertise to manufacture moulded plastic components from COVID-19 PPE waste.

The project, which is presently on a pilot scale, has been found to have the potential to be scaled up and replicated throughout the country to convert PPE waste into useful and safe products.

The pilot project is aided by Reliance Industries and CSIR-Indian Institute of Petroleum (CSIR-IIP) Dehradun, with funding from the CSIR. It mainly involved converting the decontaminated PPE waste (mainly comprising PPE suits/overalls) into an easily processable and upcycled agglomerated form (pellets or granules).

The waste PPE kits were collected and decontaminated by Passco Environmental Solutions, a waste management company located in Pune. CSIR-NCL has secured all regulatory approvals needed from Maharashtra Pollution Control Board (MPCB) to complete the pilot trial.

The scientists ensured that the polymer pellets show the right attributes necessary for successful conversion to produce non-food applications, including high-performance automotive components.

In a proof-of-concept study, a team from CSIR-NCL has also successfully demonstrated the lab-scale manufacture of moulded automotive products from the decontaminated PPE plastic waste (at M/s Niky Precision Engineers, Pune) by leveraging the existing recycling infrastructure available in Indian cities.

As per an estimate, more than 200 tons of COVID-19 related waste was generated across the country every day in May 2021. So far, this hazardous PPE waste is incinerated at central waste management facilities. However, incineration is energy-intensive and leads to the release of harmful greenhouse gasses.

Voice of the Nation
ORGANISER

Researchers devise a method to tackle COVID-19 PPE waste

WEBDESK Sep 25, 2021, 09:25 AM IST

The device is useful in converting the decontaminated PPE waste (mainly comprising PPE suits/overalls) into an easily processable and upcycled agglomerated form (pellets or granules).

New Delhi: Researchers from the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Pune-based National Chemical Laboratory (CSIR-NCL), Reliance Industries Ltd (RIL), and several other companies from Pune have pooled their expertise to manufacture moulded plastic components from COVID-19 PPE waste.

The project, which is present on a pilot scale, has been found to have the potential to be scaled up and replicated throughout the country to convert PPE waste into useful and safe products.

The pilot project is aided by Reliance Industries and CSIR-Indian Institute of Petroleum (CSIR-IIP) Dehradun, with funding from the CSIR. It mainly involved converting the decontaminated PPE waste (mainly comprising PPE suits/overalls) into an easily processable and upcycled agglomerated form (pellets or granules).

The waste PPE kits were collected and decontaminated by Passco Environmental Solutions, a waste management company located in Pune. CSIR-NCL has secured all regulatory approvals needed from the Maharashtra Pollution Control Board (MPCB) to complete the pilot trial.

The scientists ensured that the polymer pellets show the right attributes necessary for successful conversion to produce non-food applications, including high-performance automotive components.

In a proof-of-concept study, a team from CSIR-NCL has also successfully demonstrated the lab-scale manufacture of moulded automotive products from the decontaminated PPE plastic waste (at M/s Niky Precision Engineers, Pune) by leveraging the existing recycling infrastructure available in Indian cities.

As per an estimate, more than 200 tons of COVID-19 related waste was generated across the country every day in May 2021. So far, this hazardous PPE waste is incinerated at central waste management facilities. However, incineration is energy intensive and leads to the release of harmful greenhouse gasses.

Courtesy: India Science Wire

Researchers devise method to tackle Covid-19 PPE waste

September 24, 2021

New Delhi: Researchers from the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Pune-based National Chemical Laboratory (CSIR-NCL), Reliance Industries Ltd (RIL), and several other companies from Pune have pooled their expertise to manufacture mouldedplastic components from COVID-19 PPE waste. The project, which is presently on a pilot scale, has been found to have thepotential to [...]

Source: Telangana Today

Indus Scrolls
Indian to the core

Researchers devise method to tackle COVID-19 PPE waste

by India Science Wire September 24, 2021 in Uncategorized

Researchers from the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Pune-based National Chemical Laboratory (CSIR-NCL), Reliance Industries Ltd (RIL), and several other companies from Pune have pooled their expertise to manufacture moulded plastic components from COVID-19 PPE waste.

The project, which is presently on a pilot scale, has been found to have the potential to be scaled up and replicated throughout the country to convert PPE waste into useful and safe products.
The pilot project is aided by Reliance Industries and CSIR-Indian Institute of Petroleum (CSIR-IIP) Dehradun, with funding from the CSIR. It mainly involved

converting the decontaminated PPE waste (mainly comprising PPE suits/overalls) into an easily processable and upcycled agglomerated form (pellets or granules).

The waste PPE kits were collected and decontaminated by Passco Environmental Solutions, a waste management company located in Pune. CSIR-NCL has secured all regulatory approvals needed from Maharashtra Pollution Control Board (MPCB) to complete the pilot trial.
The scientists ensured that the polymer pellets show the right attributes necessary for successful conversion to produce non-food applications, including high-performance automotive components.

In a proof-of-concept study, a team from CSIR-NCL has also successfully demonstrated the lab-scale manufacture of moulded automotive products from the decontaminated PPE plastic waste (at M/s Niky Precision Engineers, Pune) by leveraging the existing recycling infrastructure available in Indian cities.

As per an estimate, more than 200 tons of COVID-19 related waste was generated across the country every day in May 2021. So far, this hazardous PPE waste is incinerated at central waste management facilities. However, incineration is energy-intensive and leads to the release of harmful greenhouse gasses.

RD TIMES.in Health

Researchers devise method to tackle COVID-19 PPE waste

RD Times Health | 3 days ago

Representative Image : Pixabay.com

New Delhi, Sep 24: Researchers from the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Pune-based National Chemical Laboratory (CSIR-NCL), Reliance Industries Ltd (RIL), and several other companies from Pune have pooled their expertise to manufacture moulded plastic components from COVID-19 PPE waste.

The project, which is presently on a pilot scale, has been found to have the potential to be scaled up and replicated throughout the country to convert PPE waste into useful and safe products.

The pilot project is aided by Reliance Industries and CSIR-Indian Institute of Petroleum (CSIR-IIP) Dehradun, with funding from the CSIR. It mainly involved converting the decontaminated PPE waste (mainly comprising PPE suits/overalls) into an easily processable and upcycled agglomerated form (pellets or granules).

The waste PPE kits were collected and decontaminated by Passco Environmental Solutions, a waste management company located in Pune. CSIR-NCL has secured all regulatory approvals needed from Maharashtra Pollution Control Board (MPCB) to complete the pilot trial.

The scientists ensured that the polymer pellets show the right attributes necessary for successful conversion to produce non-food applications, including high-performance automotive components.

In a proof-of-concept study, a team from CSIR-NCL has also successfully demonstrated the lab-scale manufacture of moulded automotive products from the decontaminated PPE plastic waste (at M/s Niky Precision Engineers, Pune) by leveraging the existing recycling infrastructure available in Indian cities.

As per an estimate, more than 200 tons of COVID-19 related waste was generated across the country every day in May 2021. So far, this hazardous PPE waste is incinerated at central waste management facilities. However, incineration is energy-intensive and leads to the release of harmful greenhouse gasses. (India Science Wire)

BioVoice Get Heard!
www.biovoicenews.com

Pune researchers devise method to tackle COVID-19 PPE waste

The project, which is presently on a pilot scale, has been found to have the potential to be scaled up and replicated throughout the country to convert PPE waste into useful and safe products

By **BioVoice News Desk** - September 27, 2021

New Delhi: Researchers from the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Pune-based National Chemical Laboratory (CSIR-NCL), Reliance Industries Ltd (RIL), and several other companies from Pune have pooled their expertise to manufacture moulded plastic components from COVID-19 PPE waste.

The project, which is presently on a pilot scale, has been found to have the potential to be scaled up and replicated throughout the country to convert PPE waste into useful and safe products.

The pilot project is aided by Reliance Industries and CSIR-Indian Institute of Petroleum (CSIR-IIP) Dehradun, with funding from the CSIR. It mainly involved converting the decontaminated PPE waste (mainly comprising PPE suits/overalls) into an easily processable and upcycled agglomerated form (pellets or granules).

The waste PPE kits were collected and decontaminated by Passco Environmental Solutions, a waste management company located in Pune. CSIR-NCL has secured all regulatory approvals needed from Maharashtra Pollution Control Board (MPCB) to complete the pilot trial.

The scientists ensured that the polymer pellets show the right attributes necessary for successful conversion to produce non-food applications, including high-performance automotive components.

In a proof-of-concept study, a team from CSIR-NCL has also successfully demonstrated the lab-scale manufacture of moulded automotive products from the decontaminated PPE plastic waste (at M/s Niky Precision Engineers, Pune) by leveraging the existing recycling infrastructure available in Indian cities.

As per an estimate, more than 200 tons of COVID-19 related waste was generated across the country every day in May 2021. So far, this hazardous PPE waste is incinerated at central waste management facilities. However, incineration is energy-intensive and leads to the release of harmful greenhouse gasses.

Republic NewsIndia

Researchers devise method to tackle COVID-19 PPE waste

By **Rupesh Dharmik** - September 24, 2021

Representative Image : Pixabay.com

New Delhi, Sep 24: Researchers from the Council of Scientific and Industrial Research (CSIR)'s Pune-based National Chemical Laboratory (CSIR-NCL), Reliance Industries Ltd (RIL), and several other companies from Pune have pooled their expertise to manufacture moulded plastic components from COVID-19 PPE waste.

The project, which is presently on a pilot scale, has been found to have the potential to be scaled up and replicated throughout the country to convert PPE waste into useful and safe products.

The pilot project is aided by Reliance Industries and CSIR-Indian Institute of Petroleum (CSIR-IIP) Dehradun, with funding from the CSIR. It mainly involved converting the decontaminated PPE waste (mainly comprising PPE suits/overalls) into an easily processable and upcycled agglomerated form (pellets or granules).

The waste PPE kits were collected and decontaminated by Passco Environmental Solutions, a waste management company located in Pune. CSIR-NCL has secured all regulatory approvals needed from Maharashtra Pollution Control Board (MPCB) to complete the pilot trial.

The scientists ensured that the polymer pellets show the right attributes necessary for successful conversion to produce non-food applications, including high-performance automotive components.

In a proof-of-concept study, a team from CSIR-NCL has also successfully demonstrated the lab-scale manufacture of moulded automotive products from the decontaminated PPE plastic waste (at M/s Niky Precision Engineers, Pune) by leveraging the existing recycling infrastructure available in Indian cities.

As per an estimate, more than 200 tons of COVID-19 related waste was generated across the country every day in May 2021. So far, this hazardous PPE waste is incinerated at central waste management facilities. However, incineration is energy-intensive and leads to the release of harmful greenhouse gasses. (India Science Wire)

व्यावसायिक उत्पादन के लिए हस्तांतरित की गई नई सोलर कुकिंग तकनीक

By RD Times Hindi | September 24, 2021

Representative Image : Pixabay.com

नई दिल्ली, 24 सितंबर: वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद की प्रयोगशाला सेंट्रल (सीएसआईआर) द्वारा विकसित सोलर डीसी कुकिंग सिस्टम की (सीएमईआरआई) मैकेनिकल इंजीनियरिंग रिसर्च इंस्टीट्यूट तकनीक को पश्चिम बंगाल की दो व्यावसायिक संस्थाओं– आसनसोल सोलर ऐंड एलईडी हाउसऔर मीको सोलर ऐंड इंफ्रास्ट्रक्चर एसोसिएट्सको हस्तांतरित किया गया है।

सोलर डीसी कुकिंग सिस्टमखाना पकाने की एक सौर ऊर्जा आधारित प्रणाली है, जिसमें एक सौर पीवी पैनल, चार्ज नियंत्रक, बैटरी बैंक और खाना पकाने का ओवन शामिल हैं। खास बात यह है कि इस चूल्हे को सोलर उर्जा की बैटरी से लगभग 5 घंटे तक चलाया जा सकता है। इसमें जरूरत के अनुसार एलपीजी गैस चूल्हे की ही तरह आंच को बढ़ाया या घटाया भी जा सकता है।इस सोलर डीसी चूल्हे के उपयोग से एलपीजी के खर्च को कम करने के साथ पर्यावरण को भी दूषित होने से बचाया जा सकेगा। यह तकनीक स्वच्छ खाना पकाने का

वातावरण, इन्वर्टर मुक्तसंचालन, तेज और समरूप ताप, और 1 टन प्रति घरप्रतिवर्ष कार्बन डाइऑक्साइड / मता प्रदान करती है।सीएमईआरआई की ओर से सीएसआर योजना के तहत इसे सबसे उत्सर्जन को बचाने की क्ष पहले आसनसोल के ब्रेल अकादमी में लगाया गया है।

सीएमईआरआई के निदेशक प्रोफेसर डॉ हरीश हिरानी ने इसके बारे में कहा किइस चूल्हे को ईजाद करने का उद्देश्य माइक्रो उद्योग को भी बढ़ावा देना है। इसे खर्च, गुणवत्ता और पर्यावरण को ध्यान में रखकर बनाया गया है। इस डीसी सोलर चूल्हा को विशेष तकनीक द्वारा बनाया गया है। एसी से डीसी परिवर्तनमें 25% ऊर्जा की हानि हो जाती है, जो इस प्रणाली में नहीं होगी। इसके अलावा लागत कम करने के लिए चूल्हे को नये रूप से डिजाइन किया है जो कम से कम वोल्टेज में भी चल सके। इसमें प्रयोग की गई क्वायल 48 वोल्ट पर कार्य कर सकती है। साथ ही बाजार में उपलब्ध बैटरी से भी यह चलाया जा सकता है। इसके अलावा सोलर पावर भी इसमें प्रयुक्त डीसी बैटरी को चार्ज करता है।

भारत में अनुमानतः28 करोड़ एलपीजी उपभोक्ता हैं। अगर वे सभी इस तकनीक का उपयोग करते हैं तो भारत में एक बड़ी सौर उर्जा क्रांति आ सकती है।

संस्थान के अनुसार, यह सिस्टम कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को काफी हद तक कम करता है क्योंकि एलपीजी के उपयोग से भी कार्बन डाइऑक्साइड गैस का उत्सर्जन होता है। (इंडिया साइंस वायर)

दी इंडियन बुलेटिन

व्यावसायिक उत्पादन के लिए हस्तांतरित की गई नई सोलर कुकिंग तकनीक

4 days ago

Representative Image : Pixabay.com

नई दिल्ली, 24 सितंबर: वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद सेंट्रल प्रयोगशाला की (सीएसआईआर) की सिस्टम कुकिंग डीसी सोलर विकसित द्वारा(सीएमईआरआई) इंस्टीट्यूट रिसर्च इंजीनियरिंग मैकेनिकल संस्थाओं व्यावसायिक दो की बंगाल पश्चिम को तकनीक– आसनसोल सोलर ऐंड एलईडी हाउसऔर मीको सोलर ऐंड इंफ्रास्ट्रक्चर एसोसिएट्सको हस्तांतरित किया गया है।

सोलर डीसी कुकिंग सिस्टमखाना पकाने की एक सौर ऊर्जा आधारित प्रणाली है, जिसमें एक सौर पीवी पैनल, चार्ज नियंत्रक, बैटरी बैंक और खाना पकाने का ओवन शामिल हैं। खास बात यह है कि इस चूल्हे को सोलर उर्जा की बैटरी से लगभग 5 घंटे तक चलाया जा सकता है। इसमें जरूरत के अनुसार एलपीजी गैस चूल्हे की ही तरह आंच को बढ़ाया या घटाया भी जा सकता है।इस सोलर डीसी चूल्हे के उपयोग से एलपीजी के खर्च को कम करने के साथ पर्यावरण को भी दूषित होने से बचाया जा सकेगा। यह तकनीक स्वच्छ खाना पकाने का

वातावरण, इन्वर्टर मुक्तसंचालन, तेज और समरूप ताप, और 1 टन प्रति घर डाइऑक्साइड कार्बन प्रतिवर्ष/ से ओर की है।सीएमईआरआई करती प्रदान क्षमता की बचाने को उत्सर्जनसीएसआर योजना के तहत इसे सबसे पहले आसनसोल के ब्रेल अकादमी में लगाया गया है।

सीएमईआरआई के निदेशक प्रोफेसर डॉ हरीश हिरानी ने इसके बारे में कहा किइस चूल्हे को ईजाद करने का उद्देश्य माइक्रो उद्योग को भी बढ़ावा देना है। इसे खर्च, गुणवत्ता और पर्यावरण को ध्यान में रखकर बनाया गया है। इस डीसी सोलर चूल्हा को विशेष तकनीक द्वारा बनाया गया है। एसी से डीसी परिवर्तनमें 25% ऊर्जा की हानि हो जाती है, जो इस प्रणाली में नहीं होगी। इसके अलावा लागत कम करने के लिए चूल्हे को नये रूप से डिजाइन किया है जो कम से कम वोल्टेज में भी चल सके। इसमें प्रयोग की गई क्वायल 48 वोल्ट पर कार्य कर सकती है। साथ ही बाजार में उपलब्ध बैटरी से भी यह चलाया जा सकता है। इसके अलावा सोलर पावर भी इसमें प्रयुक्त डीसी बैटरी को चार्ज करता है।

भारत में अनुमानतः28 करोड़ एलपीजी उपभोक्ता हैं। अगर वे सभी इस तकनीक का उपयोग करते हैं तो भारत में एक बड़ी सौर उर्जा क्रांति आ सकती है।

संस्थान के अनुसार, यह सिस्टम कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को काफी हद तक कम करता है क्योंकि एलपीजी के उपयोग से भी कार्बन डाइऑक्साइड गैस का उत्सर्जन होता है। (वायर साइंस इंडिया)

व्यावसायिक उत्पादन के लिए हस्तांतरित की गई नई सोलर कुकिंग तकनीक

25/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 25 सितंबर की प्रयोगशाला (सीएसआईआर) वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद :(इंडिया साइंस वायर) द्वारा विकसित सोलर डीसी कुकिंग सिस्टम की तकनीक को (सीएमईआरआई) सेंट्रल मैकेनिकल इंजीनियरिंग रिसर्च इंस्टीट्यूट पश्चिम बंगाल की दो व्यावसायिक संस्थाओं– आसनसोल सोलर ऐंड एलईडी हाउस और मीको सोलर ऐंड इंफ्रास्ट्रक्चर एसोसिएट्स को हस्तांतरित किया गया है।

सोलर डीसी कुकिंग सिस्टम खाना पकाने की एक सौर ऊर्जा आधारित प्रणाली है, जिसमें एक सौर पीवी पैनल, चार्ज नियंत्रक, बैटरी बैंक और खाना पकाने का ओवन शामिल हैं। खास बात यह है कि इस चूल्हे को सोलर उर्जा की बैटरी से लगभग 5 घंटे तक चलाया जा सकता है। इसमें जरूरत के अनुसार एलपीजी गैस चूल्हे की ही तरह आंच को बढ़ाया या घटाया भी जा सकता है।इस सोलर डीसी चूल्हे के उपयोग से एलपीजी के खर्च को कम करने के साथ पर्यावरण को भी दूषित होने से बचाया जा सकेगा।

यह तकनीक स्वच्छ खाना पकाने का वातावरण, इन्वर्टर मुक्त संचालन, तेज और समरूप ताप, और 1 टन प्रति घरप्रतिवर्ष / की क्षमता प्रदान करती है। सीएमईआरआई की ओर से सीएसआर योजना के तहत कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को बचाने इसे सबसे पहले आसनसोल के ब्रेल अकादमी में लगाया गया है।

सीएमईआरआई के निदेशक प्रोफेसर डॉ हरीश हिरानी ने इसके बारे में कहा कि इस चूल्हे को ईजाद करने का उद्देश्य माइक्रो उद्योग को भी बढ़ावा देना है। इसे खर्च, गुणवत्ता और पर्यावरण को ध्यान में रखकर बनाया गया है। इस डीसी सोलर चूल्हा को विशेष तकनीक द्वारा बनाया गया है।

एसी से डीसी परिवर्तन में 25% ऊर्जा की हानि हो जाती है, जो इस प्रणाली में नहीं होगी। इसके अलावा लागत कम करने के लिए चूल्हे को नये रूप से डिजाइन किया है जो कम से कम वोल्टेज में भी चल सके। इसमें प्रयोग की गई क्वायल 48 वोल्ट पर कार्य कर सकती है। साथ ही बाजार में उपलब्ध बैटरी से भी यह चलाया जा सकता है। इसके अलावा सोलर पावर भी इसमें प्रयुक्त डीसी बैटरी को चार्ज करता है।

भारत में अनुमानतः 28 करोड़ एलपीजी उपभोक्ता हैं। अगर वे सभी इस तकनीक का उपयोग करते हैं तो भारत में एक बड़ी सौर उर्जा क्रांति आ सकती है।

संस्थान के अनुसार, यह सिस्टम कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को काफी हद तक कम करता है क्योंकि एलपीजी के उपयोग से भी कार्बन डाइऑक्साइड गैस का उत्सर्जन होता है। (इंडिया साइंस वायर)

ISW/RM/HIN/25/09/2021

भारत हेराल्ड

व्यावसायिक उत्पादन के लिए हस्तांतरित की गई नई सोलर कुकिंग तकनीक

4 days ago

नई दिल्ली, 24 सितंबर: वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद सेंट्रल प्रयोगशाला की (सीएसआईआर) की सिस्टम कुकिंग डीसी सोलर विकसित द्वारा(सीएमईआरआई) इंस्टीट्यूट रिसर्च इंजीनियरिंग मैकेनिकल संस्थाओं व्यावसायिक दो की बंगाल पश्चिम को तकनीक– आसनसोल सोलर ऐंड एलईडी हाउसऔर मीको सोलर ऐंड इंफ्रास्ट्रक्चर एसोसिएट्सको हस्तांतरित किया गया है।

सोलर डीसी कुकिंग सिस्टमखाना पकाने की एक सौर ऊर्जा आधारित प्रणाली है, जिसमें एक सौर पीवी पैनल, चार्ज नियंत्रक, बैटरी बैंक और खाना पकाने का ओवन शामिल हैं। खास बात यह है कि इस चूल्हे को सोलर उर्जा की बैटरी से लगभग 5 घंटे तक चलाया जा सकता है। इसमें जरूरत के अनुसार एलपीजी गैस चूल्हे की ही तरह आंच को बढ़ाया या घटाया भी जा सकता है।इस सोलर डीसी चूल्हे के उपयोग से एलपीजी के खर्च को कम करने के साथ पर्यावरण को भी दूषित होने से बचाया जा सकेगा। यह तकनीक स्वच्छ खाना पकाने का वातावरण, इन्वर्टर मुक्तसंचालन, तेज और समरूप ताप, और 1 टन प्रति घर डाइऑक्साइड कार्बन प्रतिवर्ष/ सबसे इसे तहत के योजना सीएसआर से ओर की है।सीएमईआरआई करती प्रदान क्षमता की बचाने को उत्सर्जन है। गया लगाया में अकादमी ब्रेल के आसनसोल पहले

सीएमईआरआई के निदेशक प्रोफेसर डॉ हरीश हिरानी ने इसके बारे में कहा किइस चूल्हे को ईजाद करने का उद्देश्य माइक्रो उद्योग को भी बढ़ावा देना है। इसे खर्च, गुणवत्ता और पर्यावरण को ध्यान में रखकर बनाया गया है। इस डीसी सोलर चूल्हा को विशेष तकनीक द्वारा बनाया गया है। एसी से डीसी परिवर्तनमें 25% ऊर्जा की हानि हो जाती है, जो इस प्रणाली में नहीं होगी। इसके अलावा लागत कम करने के लिए चूल्हे को नये रूप से डिजाइन किया है जो कम से कम वोल्टेज में भी चल सके। इसमें प्रयोग की गई क्वायल 48 वोल्ट पर कार्य कर सकती है। साथ ही बाजार में उपलब्ध बैटरी से भी यह चलाया जा सकता है। इसके अलावा सोलर पावर भी इसमें प्रयुक्त डीसी बैटरी को चार्ज करता है।

भारत में अनुमानतः28 करोड़ एलपीजी उपभोक्ता हैं। अगर वे सभी इस तकनीक का उपयोग करते हैं तो भारत में एक बड़ी सौर उर्जा क्रांति आ सकती है।

संस्थान के अनुसार, यह सिस्टम कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को काफी हद तक कम करता है क्योंकि एलपीजी के उपयोग से भी कार्बन डाइऑक्साइड गैस का उत्सर्जन होता है। (वायर साइंस इंडिया)

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

व्यावसायिक उत्पादन के लिए हस्तांतरित की गई नई सोलर कुकिंग तकनीक

By **Rupesh Dharmik** - September 24, 2021

Representative Image : Pixabay.com

नई दिल्ली, 24 सितंबर: वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद की प्रयोगशाला सेंट्रल (सीएसआईआर) द्वारा विकसित सोलर डीसी कुकिंग सिस्टम की (सीएमईआरआई) मैकेनिकल इंजीनियरिंग रिसर्च इंस्टीट्यूट तकनीक को पश्चिम बंगाल की दो व्यावसायिक संस्थाओं– आसनसोल सोलर ऐंड एलईडी हाउसऔर मीको सोलर ऐंड इंफ्रास्ट्रक्चर एसोसिएट्सको हस्तांतरित किया गया है।

सोलर डीसी कुकिंग सिस्टमखाना पकाने की एक सौर ऊर्जा आधारित प्रणाली है, जिसमें एक सौर पीवी पैनल, चार्ज नियंत्रक, बैटरी बैंक और खाना पकाने का ओवन शामिल हैं। खास बात यह है कि इस चूल्हे को सोलर उर्जा की बैटरी से लगभग 5 घंटे तक चलाया जा सकता है। इसमें जरूरत के अनुसार एलपीजी गैस चूल्हे की ही तरह आंच को बढ़ाया या घटाया भी जा सकता है।इस सोलर डीसी चूल्हे के उपयोग से एलपीजी के खर्च को कम

करने के साथ पर्यावरण को भी दूषित होने से बचाया जा सकेगा। यह तकनीक स्वच्छ खाना पकाने का वातावरण, इन्वर्टर मुक्तसंचालन, तेज और समरूप ताप, और 1 टन प्रति घरप्रतिवर्ष कार्बन डाइऑक्साइड / क्षमता प्रदान करती है।सीएमईआरआई की ओर से सीएसआर योजना के तहत इसे सबसे उत्सर्जन को बचाने की पहले आसनसोल के ब्रेल अकादमी में लगाया गया है।

सीएमईआरआई के निदेशक प्रोफेसर डॉ हरीश हिरानी ने इसके बारे में कहा किइस चूल्हे को ईजाद करने का उद्देश्य माइक्रो उद्योग को भी बढ़ावा देना है। इसे खर्च, गुणवत्ता और पर्यावरण को ध्यान में रखकर बनाया गया है। इस डीसी सोलर चूल्हा को विशेष तकनीक द्वारा बनाया गया है। एसी से डीसी परिवर्तनमें 25% ऊर्जा की हानि हो जाती है, जो इस प्रणाली में नहीं होगी। इसके अलावा लागत कम करने के लिए चूल्हे को नये रूप से डिजाइन किया है जो कम से कम वोल्टेज में भी चल सके। इसमें प्रयोग की गई क्वायल 48 वोल्ट पर कार्य कर सकती है। साथ ही बाजार में उपलब्ध बैटरी से भी यह चलाया जा सकता है। इसके अलावा सोलर पावर भी इसमें प्रयुक्त डीसी बैटरी को चार्ज करता है।

भारत में अनुमानतः28 करोड़ एलपीजी उपभोक्ता हैं। अगर वे सभी इस तकनीक का उपयोग करते हैं तो भारत में एक बड़ी सौर उर्जा क्रांति आ सकती है।

संस्थान के अनुसार, यह सिस्टम कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जन को काफी हद तक कम करता है क्योंकि एलपीजी के उपयोग से भी कार्बन डाइऑक्साइड गैस का उत्सर्जन होता है। (इंडिया साइंस वायर)

ताजमहल की फीकी पड़ती चमक के पीछे प्रदूषित यमुना अध्ययन :

भारतीय शोधकर्ताओं ने धातुओं की सतह पर क्षरणउत्पादों- की पहचान कर ताजमहल को नुकसान पहुंचाने में वायुपहुंचाने में अम्लीय प्रदूषकों की भूमिका का अध्ययन किया है। उनका कहना है कि ताजमहल को नुकसान- वर्षा के अलावा दूसरे कारण भी जिम्मेदार हो सकते हैं।

India Science Wire   28 Sep 2021

अध्ययन में, प्रायोगिक धातुओं का उपयोग किया गया है, और यह जानने का प्रयास किया है कि वायु प्रदूषक क्षरण को कैसे प्रभावित करते हैं। शोधकर्ताओं ने कार्बन स्टील, जस्ता और तांबे के नमूने लिए हैं, और उन्हें वर्ष 2006 से 2010 तक ताजमहल के वातावरण के संपर्क में रखा गया है। सभी फोटोपिक्साबे :

दुनिया भर में मशहूर सत्रहवीं शताब्दी में भारत के आगरा में बना ताजमहल, एक यूनेस्को विश्व धरोहर है, जो अपने रूपधीरे काला और पीला पड़ता -सौंदर्य के लिए जाना जाता है। सफेद पत्थरों से बना यह स्मारक धीरे-

जा रहा है, जो चिंता का विषय है। यदि इसे नियंत्रित नहीं किया गया, तो यह विश्व धरोहर संरचना अपनी चमक और सुंदरता खो सकती है।

उद्योगों और वाहनों के प्रदूषण के कारण होने वाली अम्लीय वर्षा को आमतौर पर ताजमहल के पीलेपन के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। हालांकि, यह एक धीमी प्रक्रिया है, जिसकी निगरानी कठिन है। यदि स्मारक की सतह से प्रदूषकों का संपर्क छोटी अवधि के लिए हो, तो उससे भी कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिल पाता है। ऐसे में, क्षरण एवं मलिन होने की इस प्रक्रिया का अध्ययन काफी चुनौतीपूर्ण होता है। भारतीय शोधकर्ताओं ने धातुओं की सतह पर क्षरणउत्पादों की पहचान कर ताजमहल को नुक-सान पहुँचाने में वायुप्रदूषकों की भूमिका का - य वर्षा के अलावा दूसरे कारण अध्ययन किया है। उनका कहना है कि ताजमहल को नुकसान पहुँचाने में अम्ली भी जिम्मेदार हो सकते हैं।

इस इमारत की खूबसूरती को बिगाड़ने वाले प्रभावों पर उपलब्ध व्यापक अध्ययनों में गंभीर रूप से प्रदूषित यमुना नदी, जो ताजमहल के बहुत करीब से होकर बहती है, से आने वाले प्रदूषकों से संबंधित महत्वपूर्ण बिंदु को आमतौर पर छोड़ दिया जाता है। प्रदूषकों के इन संभावित प्रभावों का पता लगाने के लिए ताजमहल के परिसर को चार साल तक कार्बन स्टील, तांबे और जस्ता के नमूनों के संपर्क में रखा गया। ऐसा करने से शोधकर्ताओं को धातुओं की सतह के लक्षणों का अध्ययन करने से इन धातुओं से संबंधित सल्फाइड के गठन का पता चला है। अध्ययन में, इलेक्ट्रोकेमिकल प्रतिबाधा स्पेक्ट्रोस्कोपी)electrochemical impedance spectroscopy), रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी)Raman spectroscopy), और एक्स) रे विवर्तन-X-ray diffraction) जैसी तकनीकों का उपयोग किया गया है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि प्रदूषित यमुना नदी से हाइड्रोजन सल्फाइड का हानिकारक प्रभाव ताजमहल की सेहत पर पड़ा है। उन्होंने पाया कि ताँबे की क्षरण दर यहाँ 2.46 माइक्रोमीटर प्रतिवर्ष पायी गई है। इसके साथसाथ - उत्पादों की पहचान से शोधकर्ताओं को इस पर बने क्षरण (कॉपर सल्फाइड की मजबूत चोटियों) धातु की सतह

बात के पुख्ता प्रमाण मिले हैं कि प्रदूषित नदी से निकलने वाले हाइड्रोजन सल्फाइड ने धातु के क्षरण को तेज किया है। यह अध्ययन, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद से संबद्ध राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला, जमशेदपुर, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, दिल्ली के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

अध्ययन में, प्रायोगिक धातुओं का उपयोग किया गया है, और यह जानने का प्रयास किया है कि वायु प्रदूषक क्षरण को कैसे प्रभावित करते हैं। शोधकर्ताओं ने कार्बन स्टील, जस्ता और तांबे के नमूने लिए हैं, और उन्हें वर्ष 2006 से 2010 तक ताजमहल के वातावरण के संपर्क में रखा गया है। इस अवधि के दौरान पर्यावरण की स्थिति को ट्रैक करने के लिए, शोधकर्ताओं ने भारत मौसम विज्ञान विभाग से मौसम संबंधी डेटा और प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से प्राप्त प्रदूषण संबंधी डेटा का उपयोग किया है। उन्होने पाया कि सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड और पार्टिकुलेट मैटर वातावरण में प्रमुख प्रदूषक थे।

उम्मीद के विपरीत बारिश का पीएच 5.6 से 7.2 के बीच रहा, जो अम्लीय वर्षा की श्रेणी में नहीं आता। वर्षा जल में सल्फेट्स और अमोनियम आयनों की उच्च सांद्रता थी, जो मुख्य रूप से मानवीय गतिविधियों से आते हैं। शोधकर्ताओं ने रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी और एक्स रे-विवर्तन का उपयोग करके धातुओं पर संक्षारण उत्पादों का विश्लेषण किया है, जिसमें ऑक्साइड और सल्फाइड मुख्य घटक के रूप में पाये गए हैं। उनका कहना है कि ऑक्साइड तब बनते हैं, जब धातुएँ हवा में ऑक्सीजन के संपर्क में आती हैं। जबकि, अम्लीय वर्षा के साथ प्रतिक्रिया से सल्फेट और नाइट्रेट बनते हैं, सल्फाइड नहीं।

तांबे के क्षरण की दर जस्ता की तुलना में अधिक पायी गई। यह बात असामान्य थी, क्योंकि औद्योगिक वातावरण में जस्ता; ताँबे की तुलना में तेजी से संक्षारित होता है। यदि औद्योगिक प्रदूषक नहीं हैं, तो सल्फाइड बनने के लिए जिम्मेदार धातुओं को संक्षारित करने वाला तत्व क्या हो सकता है? इसके लिए, शोधकर्ता हाइड्रोजन सल्फाइड के क्षरण और सल्फाइड के निर्माण को जिम्मेदार मानते हैं। उनका मानना है कि पास से होकर बहने वाली यमुना नदी, जो प्रदूषित है, इसका स्रोत हो सकती है। ताजमहल के बगल में नदी का प्रवाह कम है, और यह उद्योगों और सीवेज से निकलने वाले अपशिष्ट से भरी हुई है। सीवेज बैक्टीरिया द्वारा विघटित हो जाता है, जिससे हाइड्रोजन सल्फाइड निकलता है, जिसकी दुर्गंध ताजमहल तक जाती है।

राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला के शोधकर्ता जितेंद्र कुमार सिंह का तर्क है कि प्रायोगिक धातुओं को नष्ट करने " वाली गैस, अन्य निर्माण सामग्री को भी प्रभावित कर सकती है।का कहना है कि ताजमहल के संगमरमर उन " पर प्रत्यक्ष प्रभाव का अध्ययन करने के लिए कम से कम10 वर्षों का एक्सपोजर आवश्यक है। हालांकि, अगर हाइड्रोजन सल्फाइड क्षरण के लिए जिम्मेदार है, तो नगर निगम के अधिकारियों को सीवेज डंपिंग पर नियमों की फिर से जाँच करने की आवश्यकता होगी।

यह अध्ययन इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एन्वायरमेंटल साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी में प्रकाशित किया गया है।

RD TIMES.in हिंदी

ताज की फीकी पड़ती चमक के पीछे प्रदूषित यमुना : अध्ययन

By RD Times Hindi | September 27, 2021

Photo Credit: Pixabay.com

नई दिल्ली, 27 सितंबर: धात्विकएवं अधात्विक संरचनाओं का क्षरण काफी हद तक उनके आसपास के वातावरण से नियंत्रित होता है। सत्रहवीं शताब्दी में भारत के आगरा में बना ताजमहल, एक यूनेस्को संयुक्त) राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठनविश्व धरोहर है (, जो अपने रूपसौंदर्य के लिए विश्व प्रसिद्ध - धीरे काला और पीला पड़ता जा रहा है-है।सफेद पत्थरों से बना यह स्मारक धीरे, जो चिंता का विषय है। यदि इसे नियंत्रित नहीं किया गया, तो यह विश्वधरोहर संरचना अपनी चमक और सुंदरता खो सकती है।

उद्योगों और वाहनों के प्रदूषण के कारण होने वाली अम्लीय वर्षा को आमतौर पर ताजमहल के पीलेपन के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। हालांकि, यहएक धीमी प्रक्रिया है, जिसकी निगरानी कठिन है। यदि स्मारक की सतह सेप्रदूषकों का संपर्क छोटी अवधि के लिए हो, तो उससे भी कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिल पाता है। ऐसे में, क्षरण एवं मलिन होने की इस प्रक्रिया का अध्ययन काफी चुनौतीपूर्ण होता है। भारतीय शोधकर्ताओं ने धातुओं

की सतह परक्षरणप्रदूषकों की भूमिका का -उत्पादों की पहचान कर ताजमहल को नुकसान पहुँचाने में वायु-कहना है कि ताजमहल को नुकसान पहुँचाने में अम्लीय वर्षा के अलावा दूसरे कारण अध्ययन किया है। उनका भी जिम्मेदार हो सकते हैं।

इस इमारत की खूबसूरती को बिगाड़ने वाले प्रभावों पर उपलब्ध व्यापक अध्ययनों में गंभीर रूप से प्रदूषित यमुना नदी, जो ताजमहल के बहुत करीब से होकर बहती है, से आने वाले प्रदूषकों से संबंधित महत्वपूर्ण बिंदु को आमतौर पर छोड़ दिया जाता है।प्रदूषकों के इन संभावित प्रभावों का पता लगाने के लिए ताजमहल के परिसर को चार साल तक कार्बन स्टील, तांबे और जस्ता के नमूनों के संपर्क में रखा गया।ऐसा करने से शोधकर्ताओं को धातुओं की सतह के लक्षणों का अध्ययन करने से इन धातुओं से संबंधित सल्फाइड के गठन का पता चला है। अध्ययन में,इलेक्ट्रोकेमिकल प्रतिबाधा स्पेक्ट्रोस्कोपी)electrochemical impedance spectroscopy), रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी)Raman spectroscopy), और एक्स) रे विवर्तन-X-ray diffraction) जैसी तकनीकोंकाउपयोग किया गया है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि प्रदूषित यमुना नदी से हाइड्रोजन सल्फाइड का हानिकारक प्रभाव ताजमहल की सेहत पर पड़ा है। उन्होंने पाया कि ताँबे की क्षरणदर यहाँ2.46 माइक्रोमीटर प्रतिवर्ष पायी गई है।इसके साथसाथ -पर बने क्षरण उत्पादों की पहचान से शोधकर्ताओं कोइस (इड की मजबूत चोटियोंकॉपर सल्फा) धातु की सतह बात के पुख्ता प्रमाणमिले हैं कि प्रदूषित नदी से निकलने वाले हाइड्रोजन सल्फाइड ने धातु के क्षरण को तेज किया है। यह अध्ययन, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद से संबद्ध राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला, जमशेदपुर, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, दिल्ली के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

अध्ययन में, प्रायोगिक धातुओं का उपयोग किया गया है,और यह जानने का प्रयास किया है कि वायु प्रदूषक क्षरण को कैसे प्रभावित करते हैं। शोधकर्ताओं ने कार्बन स्टील, जस्ता और तांबे के नमूने लिए हैं, और उन्हें वर्ष 2006 से 2010 तक ताजमहल के वातावरण के संपर्क में रखा गया है। इस अवधि के दौरान पर्यावरण की स्थिति को ट्रैक करने के लिए, शोधकर्ताओं ने भारत मौसम विज्ञान विभाग से मौसम संबंधी डेटा और प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से प्राप्त प्रदूषण संबंधी डेटा का उपयोग किया है। उन्होने पाया कि सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड और पार्टिकुलेट मैटर वातावरण में प्रमुख प्रदूषक थे।

उम्मीद के विपरीत बारिश का पीएच 5.6 से 7.2 के बीच रहा, जो अम्लीय वर्षा की श्रेणी में नहीं आता। वर्षा जल में सल्फेट्स और अमोनियम आयनों की उच्च सांद्रता थी, जो मुख्य रूप से मानवीय गतिविधियों से आते हैं।शोधकर्ताओं ने रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी और एक्सरे विवर्तन का उपयोग करके धातुओं पर संक्षारण उत्पादों का -विश्लेषण किया है, जिसमें ऑक्साइड और सल्फाइड मुख्य घटक के रूप में पाये गए हैं। उनका कहना है कि ऑक्साइड तब बनते हैं, जब धातुएँ हवा में ऑक्सीजन के संपर्क में आती हैं। जबकि, अम्लीय वर्षा के साथ प्रतिक्रिया से सल्फेट और नाइट्रेट बनते हैं, सल्फाइड नहीं।

ताँबे के क्षरण की दर जस्ता की तुलना में अधिक पायी गई। यह बात असामान्य थी, क्योंकि औद्योगिक वातावरण में जस्ता; ताँबे की तुलना में तेजी से संक्षारित होता है।यदि औद्योगिक प्रदूषक नहीं हैं, तो सल्फाइड बनने के लिए जिम्मेदार धातुओं को संक्षारित करने वाला तत्व क्या हो सकता है? इसके लिए, शोधकर्ता हाइड्रोजन सल्फाइड के क्षरण और सल्फाइड के निर्माण को जिम्मेदार मानतेहैं। उनका मानना है कि पास से होकर बहने वाली यमुना नदी, जो प्रदूषित है, इसका स्रोत हो सकती है।ताजमहल के बगल में नदी का प्रवाह

कम है, और यह उद्योगों और सीवेज से निकलने वाले अपशिष्ट से भरी हुई है। सीवेज बैक्टीरिया द्वारा विघटित हो जाता है, जिससे हाइड्रोजन सल्फाइड निकलता है, जिसकी दुर्गंध ताजमहल तक जाती है।

राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला के शोधकर्ता जितेंद्र कुमार सिंह का तर्क है कि “प्रायोगिक धातुओं को नष्ट करने वाली गैस, अन्य निर्माण सामग्री को भी प्रभावित कर सकती है।” उनका कहना है कि ताजमहल के संगमरमर पर प्रत्यक्ष प्रभाव का अध्ययन करने के लिए कम से कम 10 वर्षों का एक्सपोजर आवश्यक है। हालांकि, अगर हाइड्रोजन सल्फाइड क्षरण के लिए जिम्मेदार है, तो नगर निगम के अधिकारियों को सीवेज डंपिंग पर नियमों की फिर से जाँच करने की आवश्यकता होगी।

यह अध्ययन इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एन्वायरमेंटल साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी में प्रकाशित किया गया है। इंडिया) (साइंस वायर

By Ram Bharose 2 दिन ago — Categories: latest, पर्यावरण

ताज की फीकी पड़ती चमक के पीछे प्रदूषित यमुना अध्ययन :

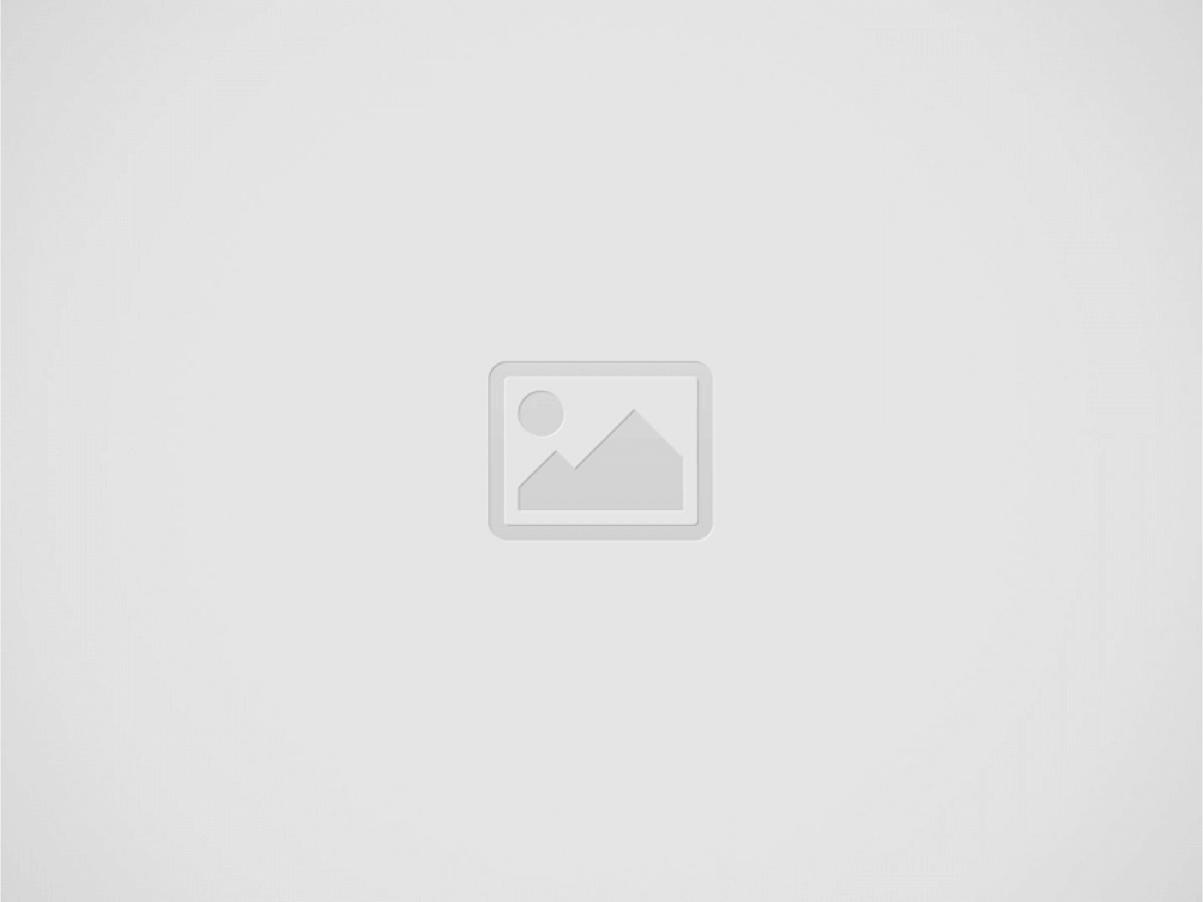

Taj Mahal

Polluted Yamuna behind Taj's fading glow: Study

नई दिल्ली, 27 सितंबर, 2021: धात्विक एवं अधात्विक संरचनाओं का क्षरण काफी हद तक उनके आसपास के वातावरण से नियंत्रित होता है। सत्रहवीं शताब्दी में भारत के आगरा में बना ताजमहल, एक यूनेस्को संयुक्त राष्ट्र) शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठनविश्व धरोहर है (, जो अपने रूपसौंदर्य के लिए विश्व प्रसिद्ध है। सफेद -

पत्थरों से बना यह स्मारक धीरेधीरे काला और पीला पड़ता जा रहा है-, जो चिंता का विषय है। यदि इसे नियंत्रित नहीं किया गया, तो यह विश्व धरोहर संरचना अपनी चमक और सुंदरता खो सकती है।

उद्योगों और वाहनों के प्रदूषण के कारण होने वाली अम्लीय वर्षा को आमतौर पर ताजमहल के पीलेपन के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। हालांकि, यह एक धीमी प्रक्रिया है, जिसकी निगरानी कठिन है। यदि स्मारक की सतह से प्रदूषकों का संपर्क छोटी अवधि के लिए हो, तो उससे भी कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिल पाता है। ऐसे में, क्षरण एवं मलिन होने की इस प्रक्रिया का अध्ययन काफी चुनौतीपूर्ण होता है।

ताजमहल को नुकसान पहुँचने के क्या कारण हैं ?

भारतीय शोधकर्ताओं ने धातुओं की सतह पर क्षरण-उत्पादों की पहचान कर ताजमहल को नुकसान पहुँचाने में वायु-किया है। उनका कहना है कि ताजमहल को नुकसान पहुँचाने में अम्लीय वर्षा के प्रदूषकों की भूमिका का अध्ययन अलावा दूसरे कारण भी जिम्मेदार हो सकते हैं।

इस इमारत की खूबसूरती को बिगाड़ने वाले प्रभावों पर उपलब्ध व्यापक अध्ययनों में गंभीर रूप से प्रदूषित यमुना नदी, जो ताजमहल के बहुत करीब से होकर बहती है, से आने वाले प्रदूषकों से संबंधित महत्वपूर्ण बिंदु को आमतौर पर छोड़ दिया जाता है। प्रदूषकों के इन संभावित प्रभावों का पता लगाने के लिए ताजमहल के परिसर को चार साल तक कार्बन स्टील, तांबे और जस्ता के नमूनों के संपर्क में रखा गया। ऐसा करने से शोधकर्ताओं को धातुओं की सतह के लक्षणों का अध्ययन करने से इन धातुओं से संबंधित सल्फाइड के गठन का पता चला है। अध्ययन में, **इलेक्ट्रोकेमिकल प्रतिबाधा स्पेक्ट्रोस्कोपी)electrochemical impedance spectroscopy), रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी)Raman spectroscopy), और एक्स) रे विवर्तन-X-ray diffraction**) जैसी तकनीकों का उपयोग किया गया है।

ताजमहल की सेहत पर हाइड्रोजन सल्फाइड का हानिकारक प्रभाव

शोधकर्ताओं ने पाया कि **प्रदूषित यमुना नदी (polluted yamuna river)** से **हाइड्रोजन सल्फाइड** का हानिकारक प्रभाव ताजमहल की सेहत पर पड़ा है। उन्होंने पाया कि ताँबे की क्षरण दर यहाँ 2.46 माइक्रोमीटर प्रतिवर्ष पायी गई है। इसके साथबने क्षरण उत्पाद पर (कॉपर सल्फाइड की मजबूत चोटियों) साथ धातु की सतह-ों की पहचान से शोधकर्ताओं को इस बात के पुख्ता प्रमाण मिले हैं कि प्रदूषित नदी से निकलने वाले हाइड्रोजन सल्फाइड ने धातु के क्षरण को तेज किया है। यह अध्ययन, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद से संबद्ध राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला, जमशेदपुर, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, दिल्ली के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

अध्ययन में, प्रायोगिक धातुओं का उपयोग किया गया है, और यह जानने का प्रयास किया है कि वायु प्रदूषक क्षरण को कैसे प्रभावित करते हैं। शोधकर्ताओं ने कार्बन स्टील, जस्ता और तांबे के नमूने लिए हैं, और उन्हें वर्ष 2006 से 2010 तक ताजमहल के वातावरण के संपर्क में रखा गया है। इस अवधि के दौरान पर्यावरण की स्थिति को ट्रैक करने के लिए, शोधकर्ताओं ने भारत मौसम विज्ञान विभाग से मौसम संबंधी डेटा और प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से प्राप्त प्रदूषण संबंधी डेटा का उपयोग किया है। उन्होने पाया कि सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड और पार्टिकुलेट मैटर वातावरण में प्रमुख प्रदूषक थे।

उम्मीद के विपरीत बारिश का पीएच 5.6 से 7.2 के बीच रहा, जो अम्लीय वर्षा की श्रेणी में नहीं आता। वर्षा जल में सल्फेट्स और अमोनियम आयनों की उच्च सांद्रता थी, जो मुख्य रूप से मानवीय गतिविधियों से आते हैं। शोधकर्ताओं ने रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी और एक्सरे विवर्तन का उपयोग करके धातुओं पर संक्षारण उत्पादों का विश्लेषण किया है-,

जिसमें ऑक्साइड और सल्फाइड मुख्य घटक के रूप में पाये गए हैं। उनका कहना है कि ऑक्साइड तब बनते हैं, जब धातुएँ हवा में ऑक्सीजन के संपर्क में आती हैं। जबकि, अम्लीय वर्षा के साथ प्रतिक्रिया से सल्फेट और नाइट्रेट बनते हैं, सल्फाइड नहीं।

ताँबे के क्षरण की दर जस्ता की तुलना में अधिक पायी गई। यह बात असामान्य थी, क्योंकि औद्योगिक वातावरण में जस्ता; ताँबे की तुलना में तेजी से संक्षारित होता है। यदि औद्योगिक प्रदूषक नहीं हैं, तो सल्फाइड बनने के लिए जिम्मेदार धातुओं को संक्षारित करने वाला तत्व क्या हो सकता है? इसके लिए, शोधकर्ता हाइड्रोजन सल्फाइड के क्षरण और सल्फाइड के निर्माण को जिम्मेदार मानते हैं। उनका मानना है कि पास से होकर बहने वाली यमुना नदी, जो प्रदूषित है, इसका स्रोत हो सकती है। ताजमहल के बगल में नदी का प्रवाह कम है, और यह उद्योगों और सीवेज से निकलने वाले अपशिष्ट से भरी हुई है। सीवेज बैक्टीरिया द्वारा विघटित हो जाता है, जिससे हाइड्रोजन सल्फाइड निकलता है, जिसकी दुर्गंध ताजमहल तक जाती है।

राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला के शोधकर्ता जितेंद्र कुमार सिंह का तर्क है कि प्रायोगिक धातुओं को नष्ट करने वाली " गैस, अन्य निर्माण सामग्री को भी प्रभावित कर सकती है।उनका कहना " है कि ताजमहल के संगमरमर पर प्रत्यक्ष प्रभाव का अध्ययन करने के लिए कम से कम 10 वर्षों का एक्सपोजर आवश्यक है। हालांकि, अगर हाइड्रोजन सल्फाइड क्षरण के लिए जिम्मेदार है, तो नगर निगम के अधिकारियों को सीवेज डंपिंग पर नियमों की फिर से जाँच करने की आवश्यकता होगी।

यह अध्ययन इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एन्वायरमेंटल साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी में प्रकाशित किया गया है।

(इंडिया साइंस वायर(

Topics: pollutants, deterioration, Taj Mahal, corrosion, metals, Environmental Science, metallic, non-metallic, structures, monuments, environment, UNESCO, River Yamuna, IGNCA, CPCB, IMD

भारत हेराल्ड

ताज की फीकी पड़ती चमक के पीछे प्रदूषित यमुना अध्ययन :

2 days ago

नई दिल्ली, 27 सितंबर: धात्विकएवं अधात्विक संरचनाओं का क्षरण काफी हद तक उनके आसपास के वातावरण से नियंत्रित होता है। सत्रहवीं शताब्दी में भारत के आगरा में बना ताजमहल, एक यूनेस्को संयुक्त) शैक्षिक राष्ट्र, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठनहै धरोहर विश्व (, जो अपने रूप प्रसिद्ध विश्व लिए के सौंदर्य-स् यह बना से पत्थरों दहै।सफेमारक धीरेहै रहा जा पड़ता पीला और काला धीरे-, जो चिंता का विषय है। यदि इसे नियंत्रित नहीं किया गया, तो यह विश्वधरोहर संरचना अपनी चमक और सुंदरता खो सकती है।

उद्योगों और वाहनों के प्रदूषण के कारण होने वाली अम्लीय वर्षा को आमतौर पर ताजमहल के पीलेपन के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। हालांकि, यहएक धीमी प्रक्रिया है, जिसकी निगरानी कठिन है। यदि स्मारक की सतह सेप्रदूषकों का संपर्क छोटी अवधि के लिए हो, तो उससे भी कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिल पाता है। ऐसे में, क्षरण एवं मलिन होने की इस प्रक्रिया का अध्ययन काफी चुनौतीपूर्ण होता है। भारतीय शोधकर्ताओं ने धातुओं की सतह परक्षरण का भूमिका की प्रदूषकों-वायु में पहुँचाने नुकसान को ताजमहल कर पहचान की उत्पादों-कारण दूसरे अलावा के वर्षा अम्लीय में पहुँचाने नुकसान को ताजमहल कि है कहना उनका है। किया अध्ययन हैं। सकते हो दारजिम्मे भी

इस इमारत की खूबसूरती को बिगाड़ने वाले प्रभावों पर उपलब्ध व्यापक अध्ययनों में गंभीर रूप से प्रदूषित यमुना नदी, जो ताजमहल के बहुत करीब से होकर बहती है, से आने वाले प्रदूषकों से संबंधित महत्वपूर्ण बिंदु को आमतौर पर छोड़ दिया जाता है।प्रदूषकों के इन संभावित प्रभावों का पता लगाने के लिए ताजमहल के परिसर को चार साल तक कार्बन स्टील, तांबे और जस्ता के नमूनों के संपर्क में रखा गया।ऐसा करने से शोधकर्ताओं को धातुओं की सतह के लक्षणों का अध्ययन करने से इन धातुओं से संबंधित सल्फाइड के गठन का पता चला है। अध्ययन में,इलेक्ट्रोकेमिकल प्रतिबाधा स्पेक्ट्रोस्कोपी)electrochemical impedance spectroscopy), रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी)Raman spectroscopy), और एक्स) विवर्तन रे-X-ray diffraction) जैसी तकनीकोंकाउपयोग किया गया है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि प्रदूषित यमुना नदी से हाइड्रोजन सल्फाइड का हानिकारक प्रभाव ताजमहल की सेहत पर पड़ा है। उन्होंने पाया कि ताँबे की क्षरणदर यहाँ2.46 माइक्रोमीटर प्रतिवर्ष पायी गई है।इसके साथ साथ-कोइस शोधकर्ताओं से पहचान की उत्पादों क्षरण बने पर (चोटियों मजबूत की सल्फाइड कॉपर) सतह की धातु क हैं प्रमाणमिले पुख्ता के बाति प्रदूषित नदी से निकलने वाले हाइड्रोजन सल्फाइड ने धातु के क्षरण को तेज किया है। यह अध्ययन, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद से संबद्ध राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला,

जमशेदपुर, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, दिल्ली के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

अध्ययन में, प्रायोगिक धातुओं का उपयोग किया गया है,और यह जानने का प्रयास किया है कि वायु प्रदूषक क्षरण को कैसे प्रभावित करते हैं। शोधकर्ताओं ने कार्बन स्टील, जस्ता और तांबे के नमूने लिए हैं, और उन्हें वर्ष 2006 से 2010 तक ताजमहल के वातावरण के संपर्क में रखा गया है। इस अवधि के दौरान पर्यावरण की स्थिति को ट्रैक करने के लिए, शोधकर्ताओं ने भारत मौसम विज्ञान विभाग से मौसम संबंधी डेटा और प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से प्राप्त प्रदूषण संबंधी डेटा का उपयोग किया है। उन्होने पाया कि सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड और पार्टिकुलेट मैटर वातावरण में प्रमुख प्रदूषक थे।

उम्मीद के विपरीत बारिश का पीएच 5.6 से 7.2 के बीच रहा, जो अम्लीय वर्षा की श्रेणी में नहीं आता। वर्षा जल में सल्फेट्स और अमोनियम आयनों की उच्च सांद्रता थी, जो मुख्य रूप से मानवीय गतिविधियों से आते हैं।शोधकर्ताओं ने रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी और एक्स का उत्पादों संक्षारण पर धातुओं करके उपयोग का विवर्तन रे-है किया विश्लेषण, जिसमें ऑक्साइड और सल्फाइड मुख्य घटक के रूप में पाये गए हैं। उनका कहना है कि ऑक्साइड तब बनते हैं, जब धातुएँ हवा में ऑक्सीजन के संपर्क में आती हैं। जबकि, अम्लीय वर्षा के साथ प्रतिक्रिया से सल्फेट और नाइट्रेट बनते हैं, सल्फाइड नहीं।

ताँबे के क्षरण की दर जस्ता की तुलना में अधिक पायी गई। यह बात असामान्य थी, क्योंकि औद्योगिक वातावरण में जस्ता; ताँबे की तुलना में तेजी से संक्षारित होता है।यदि औद्योगिक प्रदूषक नहीं हैं, तो सल्फाइड बनने के लिए जिम्मेदार धातुओं को संक्षारित करने वाला तत्व क्या हो सकता है? इसके लिए, शोधकर्ता हाइड्रोजन सल्फाइड के क्षरण और सल्फाइड के निर्माण को जिम्मेदार मानतेहैं। उनका मानना है कि पास से होकर बहने वाली यमुना नदी, जो प्रदूषित है, इसका स्रोत हो सकती है।ताजमहल के बगल में नदी का प्रवाह कम है, और यह उद्योगों और सीवेज से निकलने वाले अपशिष्ट से भरी हुई है। सीवेज बैक्टीरिया द्वारा विघटित हो जाता है, जिससे हाइड्रोजन सल्फाइड निकलता है, जिसकी दुर्गंध ताजमहल तक जाती है।

राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला के शोधकर्ता जितेंद्र कुमार सिंह का तर्क है कि "प्रायोगिक धातुओं को नष्ट करने वाली गैस, अन्य निर्माण सामग्री को भी प्रभावित कर सकती है।" उनका कहना है कि ताजमहल के संगमरमर पर प्रत्यक्ष प्रभाव का अध्ययन करने के लिए कम से कम 10 वर्षों का एक्सपोजर आवश्यक है। हालांकि, अगर हाइड्रोजन सल्फाइड क्षरण के लिए जिम्मेदार है, तो नगर निगम के अधिकारियों को सीवेज डंपिंग पर नियमों की फिर से जाँच करने की आवश्यकता होगी।

यह अध्ययन इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एन्वायरमेंटल साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी में प्रकाशित किया गया है। इंडिया)
(वायर साइंस

ताज की फीकी पड़ती चमक के पीछे प्रदूषित यमुना अध्ययन :

1 day ago

Photo Credit: Pixabay.com

नई दिल्ली, 27 सितंबर: धात्विकएवं अधात्विक संरचनाओं का क्षरण काफी हद तक उनके आसपास के वातावरण से नियंत्रित होता है। सत्रहवीं शताब्दी में भारत के आगरा में बना ताजमहल, एक यूनेस्को संयुक्त) शैक्षिक राष्ट्र, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठनवि (श्व धरोहर है, जो अपने रूप प्रसिद्ध विश्व लिए के सौंदर्य-है रहा जा पड़ता पीला और काला धीरे-धीरे स्मारक यह बना से पत्थरों है।सफेद, जो चिंता का विषय है। यदि इसे नियंत्रित नहीं किया गया, तो यह विश्वधरोहर संरचना अपनी चमक और सुंदरता खो सकती है।

उद्योगों और वाहनों के प्रदूषण के कारण होने वाली अम्लीय वर्षा को आमतौर पर ताजमहल के पीलेपन के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। हालांकि, यहएक धीमी प्रक्रिया है, जिसकी निगरानी कठिन है। यदि स्मारक की सतह सेप्रदूषकों का संपर्क छोटी अवधि के लिए हो, तो उससे भी कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिल पाता है। ऐसे में, क्षरण एवं मलिन होने की इस प्रक्रिया का अध्ययन काफी चुनौतीपूर्ण होता है। भारतीय शोधकर्ताओं ने धातुओं की सतह परक्षरण का भूमिका की प्रदूषकों-वायु में पहुँचाने नुकसान को ताजमहल कर पहचान की उत्पादों-

क ताजमहल कि है कहना उनका है। किया अध्ययनो नुकसान पहुँचाने में अम्लीय वर्षा के अलावा दूसरे कारण भी जिम्मेदार हो सकते हैं।

इस इमारत की खूबसूरती को बिगाड़ने वाले प्रभावों पर उपलब्ध व्यापक अध्ययनों में गंभीर रूप से प्रदूषित यमुना नदी, जो ताजमहल के बहुत करीब से होकर बहती है, से आने वाले प्रदूषकों से संबंधित महत्वपूर्ण बिंदु को आमतौर पर छोड़ दिया जाता है।प्रदूषकों के इन संभावित प्रभावों का पता लगाने के लिए ताजमहल के परिसर को चार साल तक कार्बन स्टील, तांबे और जस्ता के नमूनों के संपर्क में रखा गया।ऐसा करने से शोधकर्ताओं को धातुओं की सतह के लक्षणों का अध्ययन करने से इन धातुओं से संबंधित सल्फाइड के गठन का पता चला है। अध्ययन में,इलेक्ट्रोकेमिकल प्रतिबाधा स्पेक्ट्रोस्कोपी)electrochemical impedance spectroscopy), रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी)Raman spectroscopy), और एक्स) विवर्तन रे-X-ray diffraction) जैसी तकनीकोंकाउपयोग किया गया है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि प्रदूषित यमुना नदी से हाइड्रोजन सल्फाइड का हानिकारक प्रभाव ताजमहल की सेहत पर पड़ा है। उन्होंने पाया कि ताँबे की क्षरणदर यहाँ2.46 माइक्रोमीटर प्रतिवर्ष पायी गई है।इसके साथ साथ-चोटिय मजबूत की सल्फाइड कॉपर) सतह की धातुों शोधकर्ताओं से पहचान की उत्पादों क्षरण बने पर (को क्षरण के धातु ने सल्फाइड हाइड्रोजन वाले निकलने से नदी प्रदूषित कि हैं प्रमाणमिले पुख्ता के बात कोइस अध्ययन यह है। किया तेज, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद से संबद्ध राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला, जमशेदपुर, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, दिल्ली के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

अध्ययन में, प्रायोगिक धातुओं का उपयोग किया गया है,और यह जानने का प्रयास किया है कि वायु प्रदूषक क्षरण को कैसे प्रभावित करते हैं। शोधकर्ताओं ने कार्बन स्टील, जस्ता और तांबे के नमूने लिए हैं, और उन्हें वर्ष 2006 से 2010 तक ताजमहल के वातावरण के संपर्क में रखा गया है। इस अवधि के दौरान पर्यावरण की स्थिति को ट्रैक करने के लिए, शोधकर्ताओं ने भारत मौसम विज्ञान विभाग से मौसम संबंधी डेटा और प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से प्राप्त प्रदूषण संबंधी डेटा का उपयोग किया है। उन्होने पाया कि सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड और पार्टिकुलेट मैटर वातावरण में प्रमुख प्रदूषक थे।

उम्मीद के विपरीत बारिश का पीएच 5.6 से 7.2 के बीच रहा, जो अम्लीय वर्षा की श्रेणी में नहीं आता। वर्षा जल में सल्फेट्स और अमोनियम आयनों की उच्च सांद्रता थी, जो मुख्य रूप से मानवीय गतिविधियों से आते हैं।शोधकर्ताओं ने रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी और एक्स का उत्पादों संक्षारण पर धातुओं करके उपयोग का विवर्तन रे-है किया विश्लेषण, जिसमें ऑक्साइड और सल्फाइड मुख्य घटक के रूप में पाये गए हैं। उनका कहना है कि ऑक्साइड तब बनते हैं, जब धातुएँ हवा में ऑक्सीजन के संपर्क में आती हैं। जबकि, अम्लीय वर्षा के साथ प्रतिक्रिया से सल्फेट और नाइट्रेट बनते हैं, सल्फाइड नहीं।

ताँबे के क्षरण की दर जस्ता की तुलना में अधिक पायी गई। यह बात असामान्य थी, क्योंकि औद्योगिक वातावरण में जस्ता; ताँबे की तुलना में तेजी से संक्षारित होता है।यदि औद्योगिक प्रदूषक नहीं हैं, तो सल्फाइड बनने के लिए जिम्मेदार धातुओं को संक्षारित करने वाला तत्व क्या हो सकता है? इसके लिए, शोधकर्ता हाइड्रोजन सल्फाइड के क्षरण और सल्फाइड के निर्माण को जिम्मेदार मानतेहैं। उनका मानना है कि पास से होकर बहने वाली यमुना नदी, जो प्रदूषित है, इसका स्रोत हो सकती है।ताजमहल के बगल में नदी का प्रवाह कम है, और यह उद्योगों और सीवेज से निकलने वाले अपशिष्ट से भरी हुई है। सीवेज बैक्टीरिया द्वारा विघटित हो जाता है, जिससे हाइड्रोजन सल्फाइड निकलता है, जिसकी दुर्गंध ताजमहल तक जाती है।

राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला के शोधकर्ता जितेंद्र कुमार सिंह का तर्क है कि "प्रायोगिक धातुओं को नष्ट करने वाली गैस, अन्य निर्माण सामग्री को भी प्रभावित कर सकती है।" उनका कहना है कि ताजमहल के संगमरमर पर प्रत्यक्ष प्रभाव का अध्ययन करने के लिए कम से कम 10 वर्षों का एक्सपोजर आवश्यक है। हालांकि, अगर हाइड्रोजन सल्फाइड क्षरण के लिए जिम्मेदार है, तो नगर निगम के अधिकारियों को सीवेज डंपिंग पर नियमों की फिर से जाँच करने की आवश्यकता होगी।

यह अध्ययन इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एन्वायरमेंटल साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी में प्रकाशित किया गया है। इंडिया) (वायर साइंस

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

ताज की फीकी पड़ती चमक के पीछे प्रदूषित यमुना अध्ययन :

By **Rupesh Dharmik** - September 27, 2021

Photo Credit: Pixabay.com

नई दिल्ली, 27 सितंबर: धात्विकएवं अधात्विक संरचनाओं का क्षरण काफी हद तक उनके आसपास के वातावरण से नियंत्रित होता है। सत्रहवीं शताब्दी में भारत के आगरा में बना ताजमहल, एक यूनेस्को संयुक्त) राष्ट्र शैक्षिक, वैज्ञानिक और सांस्कृतिक संगठनविश्व धरोहर है (, जो अपने रूपसौंदर्य के लिए विश्व प्रसिद्ध - धीरे काला और पीला पड़त-है।सफेद पत्थरों से बना यह स्मारक धीरे ा जा रहा है, जो चिंता का विषय है। यदि इसे नियंत्रित नहीं किया गया, तो यह विश्वधरोहर संरचना अपनी चमक और सुंदरता खो सकती है।

उद्योगों और वाहनों के प्रदूषण के कारण होने वाली अम्लीय वर्षा को आमतौर पर ताजमहल के पीलेपन के लिए जिम्मेदार ठहराया जाता है। हालांकि, यहएक धीमी प्रक्रिया है, जिसकी निगरानी कठिन है। यदि स्मारक की सतह सेप्रदूषकों का संपर्क छोटी अवधि के लिए हो, तो उससे भी कोई स्पष्ट संकेत नहीं मिल पाता है। ऐसे में,

क्षरण एवं मलिन होने की इस प्रक्रिया का अध्ययन काफी चुनौतीपूर्ण होता है। भारतीय शोधकर्ताओं ने धातुओं की सतह परक्षरणप्रदूषकों की भूमिका का -उत्पादों की पहचान कर ताजमहल को नुकसान पहुँचाने में वायु- अध्ययन किया है। उनका कहना है कि ताजमहल को नुकसान पहुँचाने में अम्लीय वर्षा के अलावा दूसरे कारण भी जिम्मेदार हो सकते हैं।

इस इमारत की खूबसूरती को बिगाड़ने वाले प्रभावों पर उपलब्ध व्यापक अध्ययनों में गंभीर रूप से प्रदूषित यमुना नदी, जो ताजमहल के बहुत करीब से होकर बहती है, से आने वाले प्रदूषकों से संबंधित महत्वपूर्ण बिंदु को आमतौर पर छोड़ दिया जाता है।प्रदूषकों के इन संभावित प्रभावों का पता लगाने के लिए ताजमहल के परिसर को चार साल तक कार्बन स्टील, तांबे और जस्ता के नमूनों के संपर्क में रखा गया।ऐसा करने से शोधकर्ताओं को धातुओं की सतह के लक्षणों का अध्ययन करने से इन धातुओं से संबंधित सल्फाइड के गठन का पता चला है। अध्ययन में,इलेक्ट्रोकेमिकल प्रतिबाधा स्पेक्ट्रोस्कोपी) electrochemical impedance spectroscopy), रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी)Raman spectroscopy), और एक्स) रे विवर्तन-X-ray diffraction) जैसी तकनीकोंकाउपयोग किया गया है।

शोधकर्ताओं ने पाया कि प्रदूषित यमुना नदी से हाइड्रोजन सल्फाइड का हानिकारक प्रभाव ताजमहल की सेहत पर पड़ा है। उन्होंने पाया कि ताँबे की क्षरणदर यहाँ2.46 माइक्रोमीटर प्रतिवर्ष पायी गई है।इसके साथसाथ - पर बने क्षरण उत्पादों की पहचान से शोधकर्ताओं कोइस (कॉपर सल्फाइड की मजबूत चोटियों) धातु की सतह बात के पुख्ता प्रमाणमिले हैं कि प्रदूषित नदी से निकलने वाले हाइड्रोजन सल्फाइड ने धातु के क्षरण को तेज किया है। यह अध्ययन, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद से संबद्ध राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला, जमशेदपुर, केंद्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड और इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र, दिल्ली के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

अध्ययन में, प्रायोगिक धातुओं का उपयोग किया गया है,और यह जानने का प्रयास किया है कि वायु प्रदूषक क्षरण को कैसे प्रभावित करते हैं। शोधकर्ताओं ने कार्बन स्टील, जस्ता और तांबे के नमूने लिए हैं, और उन्हें वर्ष 2006 से 2010 तक ताजमहल के वातावरण के संपर्क में रखा गया है। इस अवधि के दौरान पर्यावरण की स्थिति को ट्रैक करने के लिए, शोधकर्ताओं ने भारत मौसम विज्ञान विभाग से मौसम संबंधी डेटा और प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से प्राप्त प्रदूषण संबंधी डेटा का उपयोग किया है। उन्होने पाया कि सल्फर डाइऑक्साइड, नाइट्रोजन ऑक्साइड और पार्टिकुलेट मैटर वातावरण में प्रमुख प्रदूषक थे।

उम्मीद के विपरीत बारिश का पीएच 5.6 से 7.2 के बीच रहा, जो अम्लीय वर्षा की श्रेणी में नहीं आता। वर्षा जल में सल्फेट्स और अमोनियम आयनों की उच्च सांद्रता थी, जो मुख्य रूप से मानवीय गतिविधियों से आते हैं।शोधकर्ताओं ने रामन स्पेक्ट्रोस्कोपी और एक्सरे विवर्तन का उपयोग करके धातुओं पर संक्षारण उत्पादों का - विश्लेषण किया है, जिसमें ऑक्साइड और सल्फाइड मुख्य घटक के रूप में पाये गए हैं। उनका कहना है कि ऑक्साइड तब बनते हैं, जब धातुएँ हवा में ऑक्सीजन के संपर्क में आती हैं। जबकि, अम्लीय वर्षा के साथ प्रतिक्रिया से सल्फेट और नाइट्रेट बनते हैं, सल्फाइड नहीं।

ताँबे के क्षरण की दर जस्ता की तुलना में अधिक पायी गई। यह बात असामान्य थी, क्योंकि औद्योगिक वातावरण में जस्ता; ताँबे की तुलना में तेजी से संक्षारित होता है।यदि औद्योगिक प्रदूषक नहीं हैं, तो सल्फाइड बनने के लिए जिम्मेदार धातुओं को संक्षारित करने वाला तत्व क्या हो सकता है? इसके लिए, शोधकर्ता हाइड्रोजन सल्फाइड के क्षरण और सल्फाइड के निर्माण को जिम्मेदार मानतेहैं। उनका मानना है कि पास से

होकर बहने वाली यमुना नदी, जो प्रदूषित है, इसका स्रोत हो सकती है।ताजमहल के बगल में नदी का प्रवाह कम है, और यह उद्योगों और सीवेज से निकलने वाले अपशिष्ट से भरी हुई है। सीवेज बैक्टीरिया द्वारा विघटित हो जाता है, जिससे हाइड्रोजन सल्फाइड निकलता है, जिसकी दुर्गंध ताजमहल तक जाती है।

राष्ट्रीय धातुकर्म प्रयोगशाला के शोधकर्ता जितेंद्र कुमार सिंह का तर्क है कि "प्रायोगिक धातुओं को नष्ट करने वाली गैस, अन्य निर्माण सामग्री को भी प्रभावित कर सकती है।" उनका कहना है कि ताजमहल के संगमरमर पर प्रत्यक्ष प्रभाव का अध्ययन करने के लिए कम से कम 10 वर्षों का एक्सपोजर आवश्यक है। हालांकि, अगर हाइड्रोजन सल्फाइड क्षरण के लिए जिम्मेदार है, तो नगर निगम के अधिकारियों को सीवेज डंपिंग पर नियमों की फिर से जाँच करने की आवश्यकता होगी।

यह अध्ययन इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एन्वायरमेंटल साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी में प्रकाशित किया गया है। इंडिया)
(साइंस वायर

RDTIMES.in हिंदी

विस्फोटकों का तुरंत पता लगाने वाला सेंसर विकसित

By RD Times Hindi | September 27, 2021

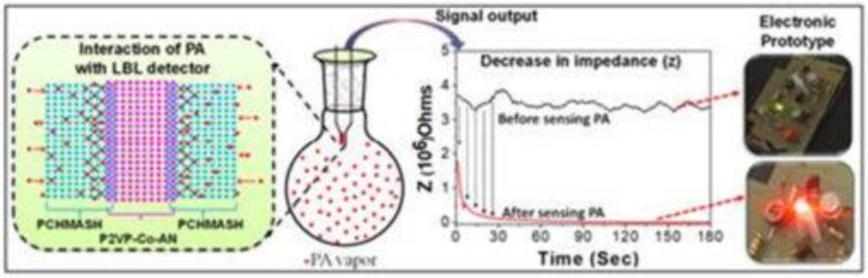

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance (Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

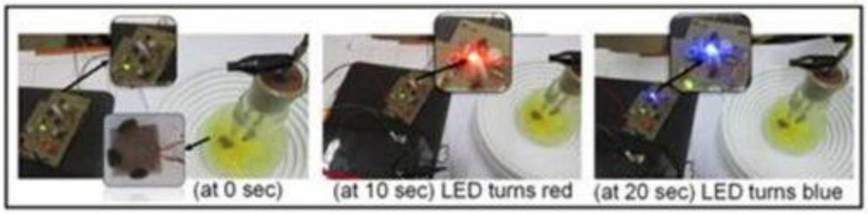

The change in the colour of LED at different exposure time to NAC vapour.

नई दिल्ली, 27 सितंबर: भारतीय वैज्ञानिकों को पहली बार तापीय रूप से स्थिर इलेक्ट्रॉनिक पॉलिमर-आधारित सेंसर विकसित करने में सफलता मिली है। यह सेंसर उच्च ऊर्जा वाले विस्फोटकों में इस्तेमाल होने एरॉमेटिक रसायनों की पहचान करने में सक्षम है। साथ ही य-वाले नाइट्रोह सेंसर काफी किफायती भी है। सुरक्षा, आपराधिक जांच, खनन गतिविधियों, सैन्य अनुप्रयोगों में विस्फोटकों का ध्वंस किए बिना उनकी पहचान करने में ऐसे सेंसर बहुत उपयोगी भूमिका निभाते हैं।

विस्फोटक पॉलीनाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों का विश्लेषण हालांकि आमतौर पर परिष्कृत व-ाह्य तकनीकों द्वारा भीकिया जा सकता है। लेकिन अपराध विज्ञान प्रयोगशालाओं या सैन्य अभियानों में त्वरित निर्णय लेने या चरमपंथियों के पास मौजूद विस्फोटकों का पता लगाने के लिए अक्सर द्रुत और सरल, तकनीकों की आवश्यकता होती है जोविस्फोटकों को नष्ट किये बिना उनकी मौजूदगी का पता लगा सकें। रसायन आधारित सेंसर्स इस में कहीं सक्षम हो सकते हैं।

लेकिन बिनाविध्वंस नाइट्रोएरॉमेटिक रसायनों की उपस्थिति का पता लगाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।इस - ल्युमिनेसेंट विशिष्टताओं पर आधारित-दिशा में अतीत में किए गए अध्ययन मुख्य रूप से फोटोरहे, लेकिन अभी तक उनकी संचालन प्रकृति के आधार पर पड़ताल संभव नहीं हो सकी थी।

इसी उद्देश्य से इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी इन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, गुवाहाटी के डॉ नीलोत्पन सेन सरमा के नेतृत्व में वैज्ञानिकों की एक टीम ने एक परतदार पॉलीमर डिटेक्टर विकसित किया है। डिटेक्टर में दो कार्बनिक पॉलिमरों आर्किलोनाइट्राइल के साथ पॉली-2-वाइनिल पाइरिडिन और हेक्सीन के साथ कॉलेस्ट्रॉल मेटाक्राइलेट के कोपोलाइसुलफोन का उपयोग किया गया है जिसके एसी सर्किट के प्रतिरोध में,नाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों की उपस्थिति की स्थिति में परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देने लगता है।

सेंसर डिवाइस में तीन परतें शामिल हैं। इनमें 1-हेक्सिन)PCHMASH) के साथ कोलेस्टेरिल मेथैक्रिलेट के पॉलिमर कोपॉलीसल्फ़ोन औरएक्रिलोनिट्राइल के साथ पॉली-2-विनाइल पाइरीडीन के कोपॉलीमर को स्टेनलेस स्टील द्वारा दोबाहरी परतों के बीच PCHMASHको जोड़ कर तैयार किया जाता है। सिस्टम की संवेदनशीलता विश्लेषक के वाष्प की उपस्थिति में समयके साथ प्रतिबाधा प्रतिक्रिया में परिवर्तन की निगरानी (पिक्रिक एसिड) के द्वारा निर्धारित की जाती है।

यह सेंसर डिवाइस प्रकृति में काफी सरल और प्रतिवर्ती है और अन्य सामान्य रसायनों और आर्द्रता की उपस्थिति में अलगअलग परिचालन तापमान के साथ इसकी प्रतिक्रिया में कोई परिवर्तन नहीं होता है।-

इस डिवाइस को कमरे के तापमान पर संचालित किया जा सकता है। इसमें प्रतिक्रिया समय कम होने के साथ ही अन्य रसायनों का नाममात्र हस्तक्षेप होता है। इसका निर्माण बहुत ही सरल है। साथ ही आर्द्रता से भी यह नगण्य रूप से प्रभावित होता है। इसमें उपयोग किए जाने वाले कोलेस्ट्रॉलआधारित पॉलिमर बायोडिग्रेडेबल - होते हैं।

डॉ नीलोत्पल सेन सरमा के अनुसार -‘एक पॉलिमर गैस सेंसर से बनी इलेक्ट्रॉनिक सेंसिंग डिवाइस किसी भी स्थान पर विस्फोटक का तुरंत पता लगा सकती है।’

इस शोध को भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय से वित्तीय सहायता प्राप्त हुईहै।शोधकर्ताओं ने इसके पेटेंट के लिए आवेदन भी किया है।(इंडिया साइंस वायर)

विस्फोटकों का तुरंत पता लगाने वाला सेंसर विकसित

27/09/2021 V3news India

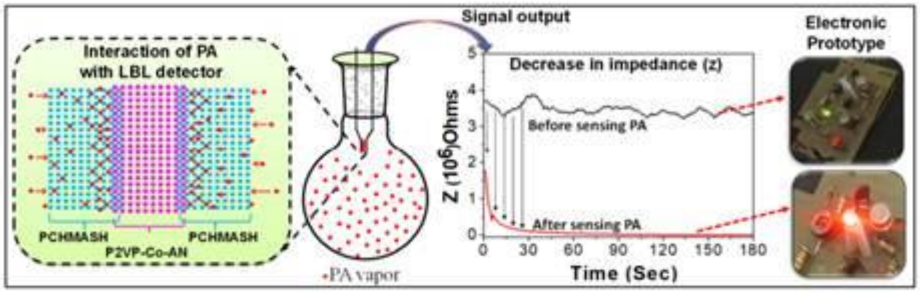

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance

(Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

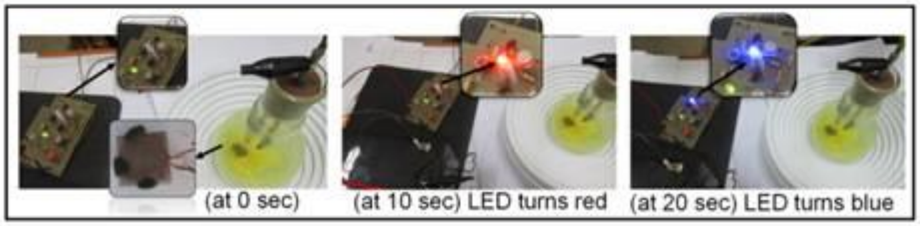

The change in the colour of LED at different exposure time to NAC vapour.

नई दिल्ली, 27 सितंबर भारतीय वैज्ञानिकों को पहली बार तापीय रूप से स्थिर इलेक्ट्रॉनिक :(इंडिया साइंस वायर) आधारित सेंसर विकसित करने-पॉलिमरमें सफलता मिली है। यह सेंसर उच्च ऊर्जा वाले विस्फोटकों में इस्तेमाल होने वाले नाइट्रोएरॉमेटिक रसायनों की पहचान करने में सक्षम है। साथ ही यह सेंसर काफी किफायती भी है। सुरक्षा-, आपराधिक जांच, खनन गतिविधियों, सैन्य अनुप्रयोगों में विस्फोटकों का ध्वंस किए बिना उनकी पहचान करने में ऐसे सेंसर बहुत उपयोगी भूमिका निभाते हैं।

विस्फोटक पॉलीनाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों का विश्लेषण हालांकि आमतौर पर परिष्कृत वाह्य तकनीकों द्वारा भी किया जा - सकता है। लेकिन अपराध विज्ञान प्रयोगशालाओं या सैन्य अभियानों में त्वरित निर्णय लेने याचरमपंथियों के पास मौजूद विस्फोटकों का पता लगाने के लिए अक्सर द्रुत और सरल, तकनीकों की आवश्यकता होती है जो विस्फोटकों को नष्ट किये बिना उनकी मौजूदगी का पता लगा सकें। रसायन आधारित सेंसर्स इस में कहीं सक्षम हो सकते हैं।

लेकिन बिनाविध्वंस नाइट्रोएरॉमेटिक रसाय-नों की उपस्थिति का पता लगाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस दिशा में अतीत में किए गए अध्ययन मुख्य रूप से फोटोल्युमिनेसेंट विशिष्टताओं पर आधारित रहे-, लेकिन अभी तक उनकी संचालन प्रकृति के आधार पर पड़ताल संभव नहीं हो सकी थी। इसी उद्देश्य से इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी इन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, गुवाहाटी के डॉ नीलोत्पन सेन सरमा के नेतृत्व में वैज्ञानिकों की एक टीम ने एक परतदार पॉलीमर डिटेक्टर विकसित किया है।

डिटेक्टर में दो कार्बनिक पॉलिमरों आर्किलोनाइट्राइल के साथ पॉली-2- वाइनिल पाइरिडिन और हेक्सीन के साथ कॉलेस्ट्रॉल मेटाक्राइलेट के कोपोलाइसुलफोन का उपयोग किया गया है जिसके एसी सर्किट के प्रतिरोध में, नाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों की उपस्थिति की स्थिति में परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देने लगता है। सेंसर डिवाइस में तीन परतें शामिल हैं। इनमें 1-हेक्सिन)PCHMASH) के साथ कोलेस्टेरिल मेथैक्रिलेट के पॉलिमर कोपॉलीसल्फ़ोन और एक्रिलोनिट्राइल के साथ पॉली-2-विनाइल पाइरीडीन के कोपॉलीमर को स्टेनलेस स्टील द्वारा दोबाहरी परतों के बीच PCHMASHको जोड़ कर तैयार किया जाता है।

सिस्टम की संवेदनशीलता विश्लेषक के वाष्प की उपस्थिति में स (पिक्रिक एसिड)मयके साथ प्रतिबाधा प्रतिक्रिया में परिवर्तन की निगरानी के द्वारा निर्धारित की जाती है। यह सेंसर डिवाइस प्रकृति में काफी सरल और प्रतिवर्ती है और अन्य सामान्य रसायनों और आर्द्रता की उपस्थिति में अलगअलग परिचालन तापमान के साथ इसकी प्रतिक्रिया में कोई-
परिवर्तन नहीं होता है। इस डिवाइस को कमरे के तापमान पर संचालित किया जा सकता है। इसमें प्रतिक्रिया समय कम होने के साथ ही अन्य रसायनों का नाममात्र हस्तक्षेप होता है। इसका निर्माण बहुत ही सरल है।

साथ ही आर्द्रता से भी यह नगण्य रूप से प्रभावित होता है। इसमें उपयोग किए जाने वाले कोलेस्ट्रॉलआधारित पॉलिमर -
-बायोडिग्रेडेबल होते हैं। डॉ नीलोत्पल सेन सरमा के अनुसार`एक पॉलिमर गैस सेंसर से बनी इलेक्ट्रॉनिक सेंसिंग डिवाइस किसी भी स्थान पर विस्फोटक का तुरंत पता लगा सकती है।' इस शोध को भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय से वित्तीय सहायता प्राप्त हुईहै।शोधकर्ताओं ने इसके पेटेंट के लिए आवेदन भी किया है।

विस्फोटकों का तुरंत पता लगाने वाला सेंसर विकसित

By **Rupesh Dharmik** - September 27, 2021

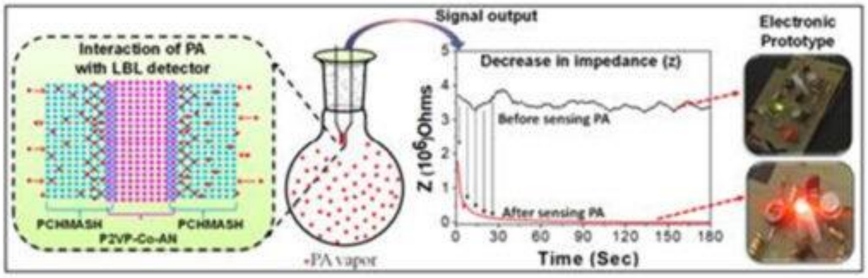

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance (Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

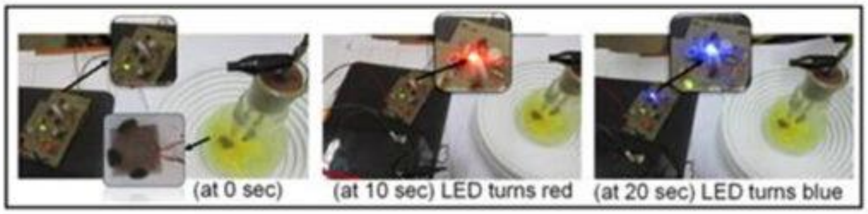

The change in the colour of LED at different exposure time to NAC vapour.

नई दिल्ली, 27 सितंबर: भारतीय वैज्ञानिकों को पहली बार तापीय रूप से स्थिर इलेक्ट्रॉनिक पॉलिमर-आधारित सेंसर विकसित करने में सफलता मिली है। यह सेंसर उच्च ऊर्जा वाले विस्फोटकों में इस्तेमाल होने एरॉमेटिक रसायनों की पहचान करने में सक्षम ह-वाले नाइट्रो ै। साथ ही यह सेंसर काफी किफायती भी है। सुरक्षा, आपराधिक जांच, खनन गतिविधियों, सैन्य अनुप्रयोगों में विस्फोटकों का ध्वंस किए बिना उनकी पहचान करने में ऐसे सेंसर बहुत उपयोगी भूमिका निभाते हैं।

विस्फोटक पॉलीनाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों का विश्लेषण हालांकि आमतौर पर- परिष्कृत वाह्य तकनीकों द्वारा भीकिया जा सकता है। लेकिन अपराध विज्ञान प्रयोगशालाओं या सैन्य अभियानों में त्वरित निर्णय लेने या चरमपंथियों के पास मौजूद विस्फोटकों का पता लगाने के लिए अक्सर द्रुत और सरल, तकनीकों की आवश्यकता

होती है जोविस्फोटकों को नष्ट किये बिना उनकी मौजूदगी का पता लगा सकें। रसायन आधारित सेंसर्स इस में कहीं सक्षम हो सकते हैं।

लेकिन बिनाविध्वंस नाइट्रोएरॉमेटिक रसायनों की उपस्थिति का पता लगाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।इस - ल्युमिनेसेंट विशिष्टताओं-दिशा में अतीत में किए गए अध्ययन मुख्य रूप से फोटो पर आधारित रहे, लेकिन अभी तक उनकी संचालन प्रकृति के आधार पर पड़ताल संभव नहीं हो सकी थी।

इसी उद्देश्य से इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी इन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, गुवाहाटी के डॉ नीलोत्पन सेन सरमा के नेतृत्व में वैज्ञानिकों की एक टीम ने एक परतदार पॉलीमर डिटेक्टर विकसित किया है। डिटेक्टर में दो कार्बनिक पॉलिमरों आर्किलोनाइट्राइल के साथ पॉली-2-वाइनिल पाइरिडिन और हेक्सीन के साथ कॉलेस्ट्रॉल मेटाक्राइलेट के कोपोलाइसुलफोन का उपयोग किया गया है जिसके एसी सर्किट के प्रतिरोध में,नाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों की उपस्थिति की स्थिति में परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देने लगता है।

सेंसर डिवाइस में तीन परतें शामिल हैं। इनमें 1-हेक्सिन)PCHMASH) के साथ कोलेस्टेरिल मेथैक्रिलेट के पॉलिमर कोपॉलीसल्फ़ोन औरएक्रिलोनिट्राइल के साथ पॉली-2-विनाइल पाइरीडीन के कोपॉलीमर को स्टेनलेस स्टील द्वारा दोबाहरी परतों के बीच PCHMASHको जोड़ कर तैयार किया जाता है। सिस्टम की संवेदनशीलता विश्लेषक के वाष्प की उपस्थिति में समयके साथ प्रतिबाधा प्रतिक्रिया में पर (पिक्रिक एसिड)िवर्तन की निगरानी के द्वारा निर्धारित की जाती है।

यह सेंसर डिवाइस प्रकृति में काफी सरल और प्रतिवर्ती है और अन्य सामान्य रसायनों और आर्द्रता की उपस्थिति में अलगअलग परिचालन तापमान के साथ इसकी प्रतिक्रिया में कोई परिवर्तन नहीं होता है।-

इस डिवाइस को कमरे के तापमान पर संचालित किया जा सकता है। इसमें प्रतिक्रिया समय कम होने के साथ ही अन्य रसायनों का नाममात्र हस्तक्षेप होता है। इसका निर्माण बहुत ही सरल है। साथ ही आर्द्रता से भी यह नगण्य रूप से प्रभावित होता है। इसमें उपयोग किए जाने वाले कोलेस्ट्रॉलआधारित पॉलिमर ब-ायोडिग्रेडेबल होते हैं।

डॉ नीलोत्पल सेन सरमा के अनुसार -'एक पॉलिमर गैस सेंसर से बनी इलेक्ट्रॉनिक सेंसिंग डिवाइस किसी भी स्थान पर विस्फोटक का तुरंत पता लगा सकती है।'

इस शोध को भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय से वित्तीय सहायता प्राप्त हुईहै।शोधकर्ताओं ने इसके पेटेंट के लिए आवेदन भी किया है।(इंडिया साइंस वायर)

दी इंडियन बुलेटिन

विस्फोटकों का तुरंत पता लगाने वाला सेंसर विकसित

1 day ago

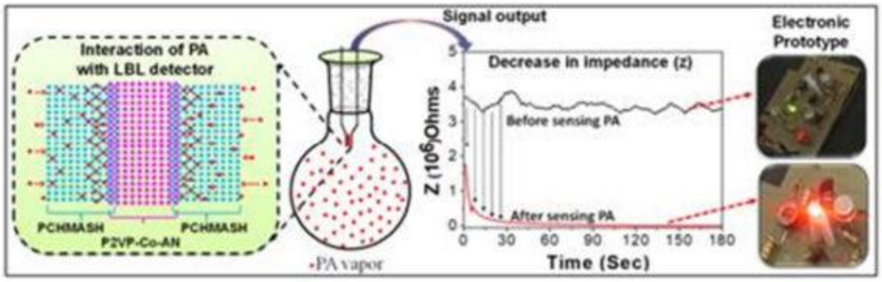

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance

(Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

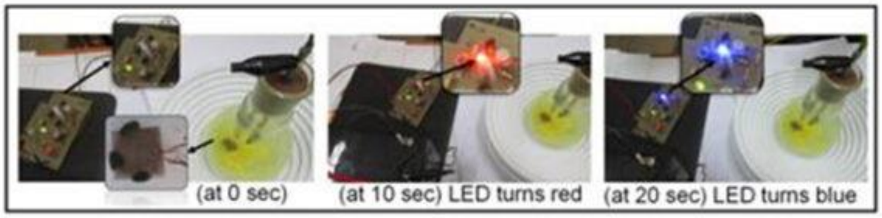

The change in the colour of LED at different exposure time to NAC vapour.

नई दिल्ली, 27 सितंबर: भारतीय वैज्ञानिकों को पहली बार तापीय रूप से स्थिर इलेक्ट्रॉनिक पॉलिमर- विकसित सेंसर आधारितकरने में सफलता मिली है। यह सेंसर उच्च ऊर्जा वाले विस्फोटकों में इस्तेमाल होने वाले नाइट्रो है। भी किफायती काफी सेंसर यह ही साथ है। सक्षम में करने पहचान की रसायनों एरॉमेटिक- सुरक्षा, आपराधिक जांच, खनन गतिविधियों, सैन्य अनुप्रयोगों में विस्फोटकों का ध्वंस किए बिना उनकी पहचान करने में ऐसे सेंसर बहुत उपयोगी भूमिका निभाते हैं।

विस्फोटक पॉली द्वारा तकनीकों वाह्य परिष्कृत पर आमतौर हालांकि विश्लेषण का यौगिकों नाइट्रोएरॉमेटिक- लेने निर्णय त्वरित में अभियानों सैन्य या प्रयोगशालाओं विज्ञान अपराध लेकिन है। सकता जा भीकिया या चरमपंथियों के पास मौजूद विस्फोटकों का पता लगाने के लिए अक्सर द्रुत और सरल, तकनीकों की आवश्यकता होती है जोविस्फोटकों को नष्ट किये बिना उनकी मौजूदगी का पता लगा सकें। रसायन आधारित सेंसर्स इस में कहीं सक्षम हो सकते हैं।

लेकिन बिनार नाइट्रोएरॉमेटिक विध्वंस-सायनों की उपस्थिति का पता लगाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।इस दिशा में अतीत में किए गए अध्ययन मुख्य रूप से फोटोरहे आधारित पर विशिष्टताओं ल्युमिनेसेंट-, लेकिन अभी तक उनकी संचालन प्रकृति के आधार पर पड़ताल संभव नहीं हो सकी थी।

इसी उद्देश्य से इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी इन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, गुवाहाटी के डॉ नीलोत्पन सेन सरमा के नेतृत्व में वैज्ञानिकों की एक टीम ने एक परतदार पॉलीमर डिटेक्टर विकसित किया है। डिटेक्टर में दो कार्बनिक पॉलिमरों पॉली साथ के आर्किलोनाइट्राइल-2-वाइनिल पाइरिडिन और हेक्सीन के साथ कॉलेस्ट्रॉल मेटाक्राइलेट के कोपोलाइसुलफोन का उपयोग किया गया है जिसके एसी सर्किट के प्रतिरोध में,नाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों की उपस्थिति की स्थिति में परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देने लगता है।

सेंसर डिवाइस में तीन परतें शामिल हैं। इनमें 1-हेक्सिन)PCHMASH) के साथ कोलेस्टेरिल मेथैक्रिलेट के पॉलिमर कोपॉलीसल्फ़ोन औरएक्रिलोनिट्राइल के साथ पॉली-2-विनाइल पाइरीडीन के कोपॉलीमर को स्टेनलेस स्टील द्वारा दोबाहरी परतों के बीच PCHMASHको जोड़ कर तैयार किया जाता है। सिस्टम की संवेदनशीलता विश्लेषक के वाष्प सम में उपस्थिति की (एसिड पिक्रिक)यके साथ प्रतिबाधा प्रतिक्रिया में परिवर्तन की निगरानी के द्वारा निर्धारित की जाती है।

यह सेंसर डिवाइस प्रकृति में काफी सरल और प्रतिवर्ती है और अन्य सामान्य रसायनों और आर्द्रता की उपस्थिति में अलग परिवर्तन कोई में प्रतिक्रिया इसकी साथ के तापमान परिचालन अलग-नहीं होता है।

इस डिवाइस को कमरे के तापमान पर संचालित किया जा सकता है। इसमें प्रतिक्रिया समय कम होने के साथ ही अन्य रसायनों का नाममात्र हस्तक्षेप होता है। इसका निर्माण बहुत ही सरल है। साथ ही आर्द्रता से भी यह नगण्य रूप से प्रभावित होता है। इसमें उपयोग किए जाने वाले कोलेस्ट्रॉल बायोडिग्रेडेबल मरपॉलि आधारित-हैं। होते

डॉ नीलोत्पल सेन सरमा के अनुसार -'एक पॉलिमर गैस सेंसर से बनी इलेक्ट्रॉनिक सेंसिंग डिवाइस किसी भी स्थान पर विस्फोटक का तुरंत पता लगा सकती है।'

इस शोध को भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय से वित्तीय सहायता प्राप्त हुईहै।शोधकर्ताओं ने इसके पेटेंट के लिए आवेदन भी किया है।(वायर साइंस इंडिया)

विस्फोटकों का तुरंत पता लगाने वाला सेंसर विकसित

By RD Times Hindi | September 27, 2021

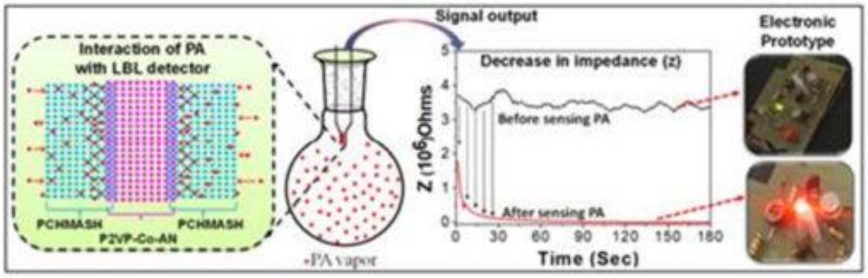

Schematic representation for the detection of PAvapour using LBL detectors via impedance (Z) measurements and the electronic prototype for visual detection of such chemicals.

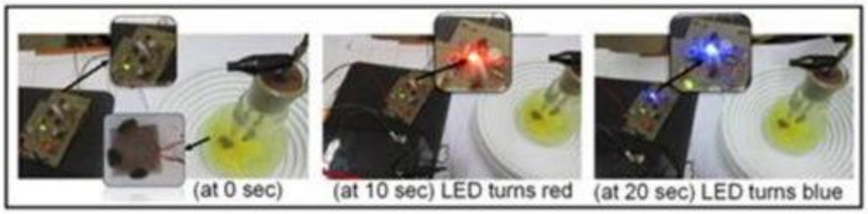

The change in the colour of LED at different exposure time to NAC vapour.

नई दिल्ली, 27 सितंबर: भारतीय वैज्ञानिकों को पहली बार तापीय रूप से स्थिर इलेक्ट्रॉनिक पॉलिमर-आधारित सेंसर विकसित करने में सफलता मिली है। यह सेंसर उच्च ऊर्जा वाले विस्फोटकों में इस्तेमाल होने एरॉमेटिक रसायनों की पहचान करने-वाले नाइट्रोमें सक्षम है। साथ ही यह सेंसर काफी किफायती भी है। सुरक्षा, आपराधिक जांच, खनन गतिविधियों, सैन्य अनुप्रयोगों में विस्फोटकों का ध्वंस किए बिना उनकी पहचान करने में ऐसे सेंसर बहुत उपयोगी भूमिका निभाते हैं।

विस्फोटक पॉलीनाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों का विश्लेषण हालां-कि आमतौर पर परिष्कृत वाह्य तकनीकों द्वारा भीकिया जा सकता है। लेकिन अपराध विज्ञान प्रयोगशालाओं या सैन्य अभियानों में त्वरित निर्णय लेने या चरमपंथियों के पास मौजूद विस्फोटकों का पता लगाने के लिए अक्सर द्रुत और सरल, तकनीकों की आवश्यकता होती है जोविस्फोटकों को नष्ट किये बिना उनकी मौजूदगी का पता लगा सकें। रसायन आधारित सेंसर्स इस में कहीं सक्षम हो सकते हैं।

लेकिन बिनाविध्वंस नाइट्रोएरॉमेटिक रसायनों की उपस्थिति का पता लगाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है।इस - ल्युमिनेसेंट-दिशा में अतीत में किए गए अध्ययन मुख्य रूप से फोटोविशिष्टताओं पर आधारित रहे, लेकिन अभी तक उनकी संचालन प्रकृति के आधार पर पड़ताल संभव नहीं हो सकी थी।

इसी उद्देश्य से इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी इन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, गुवाहाटी के डॉ नीलोत्पन सेन सरमा के नेतृत्व में वैज्ञानिकों की एक टीम ने एक परतदार पॉलीमर डिटेक्टर विकसित किया है। डिटेक्टर में दो कार्बनिक पॉलिमरों आर्किलोनाइट्राइल के साथ पॉली-2-वाइनिल पाइरिडिन और हेक्सीन के साथ कॉलेस्ट्रॉल मेटाक्राइलेट के कोपोलाइसुलफोन का उपयोग किया गया है जिसके एसी सर्किट के प्रतिरोध में,नाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों की उपस्थिति की स्थिति में परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देने लगता है।

सेंसर डिवाइस में तीन परतें शामिल हैं। इनमें 1-हेक्सिन)PCHMASH) के साथ कोलेस्टेरिल मेथैक्रिलेट के पॉलिमर कोपॉलीसल्फ़ोन औरएक्रिलोनिट्राइल के साथ पॉली-2-विनाइल पाइरीडीन के कोपॉलीमर को स्टेनलेस स्टील द्वारा दोबाहरी परतों के बीच PCHMASHको जोड़ कर तैयार किया जाता है। सिस्टम की संवेदनशीलता विश्लेषक के वाष्प की उपस्थिति में समयके साथ प्रतिबाधा प्रतिक्रिया में परिवर्तन की निगरानी (पिक्रिक एसिड) के द्वारा निर्धारित की जाती है।

यह सेंसर डिवाइस प्रकृति में काफी सरल और प्रतिवर्ती है और अन्य सामान्य रसायनों और आर्द्रता की उपस्थिति में अलगअलग परिचालन तापमान के साथ इसकी प्रतिक्रिया में कोई परिवर्तन नहीं होता है।-

इस डिवाइस को कमरे के तापमान पर संचालित किया जा सकता है। इसमें प्रतिक्रिया समय कम होने के साथ ही अन्य रसायनों का नाममात्र हस्तक्षेप होता है। इसका निर्माण बहुत ही सरल है। साथ ही आर्द्रता से भी यह नगण्य रूप से प्रभावित होता है। इसमें उपयोग किए जाने वाले कोलेस्ट्रॉलआधारित पॉलिमर बायोडिग्रेडेबल - होते हैं।

डॉ नीलोत्पल सेन सरमा के अनुसार -‘एक पॉलिमर गैस सेंसर से बनी इलेक्ट्रॉनिक सेंसिंग डिवाइस किसी भी स्थान पर विस्फोटक का तुरंत पता लगा सकती है।’

इस शोध को भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय से वित्तीय सहायता प्राप्त हुईहै।शोधकर्ताओं ने इसके पेटेंट के लिए आवेदन भी किया है।(इंडिया साइंस वायर)

भारत हेराल्ड

विस्फोटकों का तुरंत पता लगाने वाला सेंसर विकसित

2 days ago

नई दिल्ली, 27 सितंबर: भारतीय वैज्ञानिकों को पहली बार तापीय रूप से स्थिर इलेक्ट्रॉनिक पॉलिमर-होने इस्तेमाल में विस्फोटकों वाले ऊर्जा उच्च सेंसर यह है। मिली सफलता में करने विकसित सेंसर आधारित न वाले ाइट्रो है। भी किफायती काफी सेंसर यह ही साथ है। सक्षम में करने पहचान की रसायनों एरॉमेटिक-सुरक्षा, आपराधिक जांच, खनन गतिविधियों, सैन्य अनुप्रयोगों में विस्फोटकों का ध्वंस किए बिना उनकी पहचान करने में ऐसे सेंसर बहुत उपयोगी भूमिका निभाते हैं।

विस्फोटक पॉलीनाइ-ट्रोएरॉमेटिक यौगिकों का विश्लेषण हालांकि आमतौर पर परिष्कृत वाह्य तकनीकों द्वारा भीकिया जा सकता है। लेकिन अपराध विज्ञान प्रयोगशालाओं या सैन्य अभियानों में त्वरित निर्णय लेने या चरमपंथियों के पास मौजूद विस्फोटकों का पता लगाने के लिए अक्सर द्रुत और सरल, तकनीकों की आवश्यकता होती है जोविस्फोटकों को नष्ट किये बिना उनकी मौजूदगी का पता लगा सकें। रसायन आधारित सेंसर्स इस में कहीं सक्षम हो सकते हैं।

लेकिन बिना है।इस कार्य चुनौतीपूर्ण एक लगाना पता का उपस्थिति की रसायनों नाइट्रोएरॉमेटिक विध्वंस- गए किए में अतीत में दिशाअध्ययन मुख्य रूप से फोटोरहे आधारित पर विशिष्टताओं सेंटल्युमिने-, लेकिन अभी तक उनकी संचालन प्रकृति के आधार पर पड़ताल संभव नहीं हो सकी थी।

इसी उद्देश्य से इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड स्टडी इन साइंस एंड टेक्नोलॉजी, गुवाहाटी के डॉ नीलोत्पन सेन सरमा के नेतृत्व में वैज्ञानिकों की एक टीम ने एक परतदार पॉलीमर डिटेक्टर विकसित किया है। डिटेक्टर में दो कार्बनिक पॉलिमरों पॉली साथ के आर्किलोनाइट्राइल-2-वाइनिल पाइरिडिन और हेक्सीन के साथ कॉलेस्ट्रॉल मेटाक्राइलेट के कोपोलाइसुलफोन का उपयोग किया गया है जिसके एसी सर्किट के प्रतिरोध में,नाइट्रोएरॉमेटिक यौगिकों की उपस्थिति की स्थिति में परिवर्तन स्पष्ट दिखाई देने लगता है।

सेंसर डिवाइस में तीन परतें शामिल हैं। इनमें 1-हेक्सिन)PCHMASH) के साथ कोलेस्टेरिल मेथैक्रिलेट के पॉलिमर कोपॉलीसल्फ़ोन औरएक्रिलोनिट्राइल के साथ पॉली-2-विनाइल पाइरीडीन के कोपॉलीमर को स्टेनलेस स्टील द्वारा दोबाहरी परतों के बीच PCHMASHको जोड़ कर तैयार किया जाता है। सिस्टम की संवेदनशीलता विश्लेषक के वाष्प निगरानी की परिवर्तन में प्रतिक्रिया प्रतिबाधा साथ समयके में उपस्थिति की (एसिड पिक्रिक) है जाती की निर्धारित द्वारा के।

यह सेंसर डिवाइस प्रकृति में काफी सरल और प्रतिवर्ती है और अन्य सामान्य रसायनों और आर्द्रता की उपस्थिति में अलगहै। होता नहीं परिवर्तन कोई में प्रतिक्रिया इसकी साथ के तापमान परिचालन अलग-

इस डिवाइस को कमरे के तापमान पर संचालित किया जा सकता है। इसमें प्रतिक्रिया समय कम होने के साथ ही अन्य रसायनों का नाममात्र हस्तक्षेप होता है। इसका निर्माण बहुत ही सरल है। साथ ही आर्द्रता से भी यह नगण्य रूप से प्रभावित होता है। इसमें उपयोग किए जाने वाले कोलेस्ट्रॉल बायोडिग्रेडेबल पॉलिमर आधारित-हैं। होते

डॉ नीलोत्पल सेन सरमा के अनुसार -'एक पॉलिमर गैस सेंसर से बनी इलेक्ट्रॉनिक सेंसिंग डिवाइस किसी भी स्थान पर विस्फोटक का तुरंत पता लगा सकती है।'

इस शोध को भारत सरकार के इलेक्ट्रॉनिकी और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय से वित्तीय सहायता प्राप्त हुईहै।शोधकर्ताओं ने इसके पेटेंट के लिए आवेदन भी किया है।(वायर साइंस इंडिया)

Voice of the Nation
ORGANISER

IIT Delhi launches new online platform to facilitate researchers

WEBDESK Sep 29, 2021, 08:25 AM IST

IIT Delhi has developed a new platform whereby anyone from across India can create a user account, login to the CRF, and book an instrument online (https://crf.iitd.ac.in/) for their research work.

New Delhi: As part of an effort to boost the research ecosystem at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi, the Central Research Facility (CRF) was established in the year 2011, where all the central facilities were brought under a single umbrella. Since 2017, the CRF facilities have been significantly augmented with several state-of-the-art high-end experimental facilities. These have so far been catering to the needs of researchers from various departments and disciplines across the Institute.

A strong need was felt to enable sharing such facilities with the other users from other academic institutions and industries in the country. Taking a big step forward in this direction, IIT Delhi has developed a new platform whereby anyone from across India can create a user account, login to the CRF, and book an instrument online (https://crf.iitd.ac.in/) for their research work. With this step, all facilities of the CRF on the Institute's main campus in New Delhi and the Sonipat campus in Haryana are now available for researchers from across the country.

In the past five years, the CRF grew in leaps and bounds, thanks to the generous funding provided by the Institute and other agencies.
"Rs. 500 crores have been either spent or committed by IIT Delhi to establish various high-end facilities at the CRF. The main sources of funding include the IoE grant, special MoE grant, IIT Delhi grant through Industrial Research and Development, DST's Sophisticated Analytical and

Technical Help Institutes (SATHI) project, HEFA loan etc. Today, we have over 50 different facilities, owned and/or adopted by the CRF, which are already available to the users. This number is likely to get doubled in the next two years. The Institute would like to thank the Ministry of Education, Government of India; the DST and all other funding agencies that supported the CRF's establishment", said Prof V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi, while launching the platform on Tuesday (September 28).

In 2017, envisaging the growth of CRF, a new building was constructed at IIT Delhi's extension campus in Sonipat. Another building with a much larger area is also under construction in Sonipat right now, which will be completed by March 2022.

"Some of the most modern equipment like Physical Property Measurement System, X-Ray Photoemission Spectrometer, High-Resolution Transmission Electron Microscope, Molecular Beam Epitaxy, Universal Testing Machine, Electron Paramagnetic Resonance etc. are now housed in Sonipat and many more have been planned for the upcoming second building," said Prof Pankaj Srivastava, Head, Central Research Facility, IIT Delhi.

Setting up of the SATHI centre, a shared professionally managed Science and Technology infrastructure facility by the Department of Science and Technology (DST), Government of India, has further augmented the capabilities of the CRF by adding a plethora of new facilities that will be beneficial for both academic as well as industrial research. For example, a prototype facility is being developed to enable MSMEs to develop an idea with a design and get the prototype developed in-house. A pollution monitoring and control facility too has been sanctioned. Several new high-end spectrometers and microscopes are on their way in SATHI.

Courtesy: India Science Wire

NEWS WAVE

IIT Delhi launches new online platform SATHI to facilitate researchers

Arvind Gupta Tuesday, 28 September, 2021

Newswave @ New Delhi

As part of an effort to boost the research ecosystem at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi, the Central Research Facility (CRF) was established in the year 2011, where all the central facilities were brought under a single umbrella. The CRF facilities have been significantly augmented with several state-of-the-art high-endexperimental facilities.These have so far been catering to the needs of researchers from various departments and disciplines across the Institute.

A strong need was felt to enable sharing such facilities with the rest of the users from other academic institutions and industries in the country. Taking a big step forward in this direction, IIT Delhi has developed a new platform whereby anyone from across India can create a user account, login to the CRF, and book an instrument online (https://crf.iitd.ac.in/) for their research work. With this step, all facilities of the CRF on the Institute's maincampus in New Delhi as well as in the Sonipat campus in Haryana are now available for researchers from across the country.

High-end facilities at the CRF

"Rs. 500 crores have been either spent or committed by IIT Delhi to establish various high-end facilities at the CRF. The main sources of funding include the IoE grant, special MoE grant, IIT Delhi grant through Industrial Research and Development, DST's Sophisticated Analytical and Technical Help Institutes (SATHI) project, HEFA loan etc. Today, we have over 50 different facilities, owned and/or adopted by the CRF, which are already available to the users. This number is likely to get doubled in the next two years. The Institute would like to thank the Ministry of Education, Government of India; the DST and all other funding agencies that supported the CRF's establishment", said Prof V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi, while launching the platform on Tuesday.

In 2017, envisaging the growth of CRF, a new building was constructed at IIT Delhi's extension campus in Sonipat. Another building with a much larger area is also under construction in Sonipat right now, which will be completed by March 2022.

"Some of the most modern equipment like Physical Property Measurement System, X-Ray Photoemission Spectrometer, High-Resolution Transmission Electron Microscope, Molecular Beam Epitaxy, Universal Testing Machine, Electron Paramagnetic Resonance etc. are now housed in Sonipat and many more have been planned for the upcoming second building," said Prof Pankaj Srivastava, Head, Central Research Facility, IIT Delhi.

Setting up of the SATHI centre, a shared, professionally managed, Science and Technology infrastructure facility by the Department of Science and Technology (DST), Government of India, has further augmented the capabilities of the CRF by adding a plethora of new facilities that will be beneficial for both academic as well as industrial research.For example, a prototype facility is being developed that will enable MSMEs to come up with an idea with a design and get the prototype developed in-house. A pollution monitoring and control facility too has been sanctioned. Several new high-end spectrometers and microscopes are on their way in SATHI. (India Science Wire)

indianScoops

IIT Delhi launches new online platform to facilitate researchers

September 28, 2021

New Delhi, Sep 28th: As part of an effort to boost the research ecosystem at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi, the Central Research Facility (CRF) was established in the year 2011, where all the central facilities were brought under a single umbrella. Since 2017, the CRF facilities have been significantly augmented with several state-of-the-art high-and experimental facilities. These have so far been catering to the needs of researchers from various departments and disciplines across the Institute.

A strong need was felt to enable sharing such facilities with the rest of the users from other academic institutions and industries in the country. Taking a big step forward in this direction, IIT Delhi has developed a new platform whereby anyone from across India can create a user account, login to the CRF, and book an instrument online (https://crf.iitd.ac.in/) for their research work. With this step, all facilities of the CRF on

the Institute's main campus in New Delhi as well as in the Sonipat campus in Haryana are now available for researchers from across the country.

In the past five years, the CRF grew in leaps and bounds, thanks to the generous funding provided by the Institute as well as other agencies.

"Rs. 500 crores have been either spent or committed by IIT Delhi to establish various high-end facilities at the CRF. The main sources of funding include the IoE grant, special MoEgrant, IIT Delhi grant through Industrial Research and Development, DST's Sophisticated Analytical and Technical Help Institutes (SATHI) project, HEFA loan etc. Today, we have over 50 different facilities, owned and/or adopted by the CRF, which are already available to the users. This number is likely to get doubled in the next two years. The Institute would like to thank the Ministry of Education, Government of India; the DST and all other funding agencies that supported the CRF's establishment", said Prof V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi, while launching the platform on Tuesday.

In 2017, envisaging the growth of CRF, a new building was constructed at IIT Delhi's extension campus in Sonipat. Another building with a much larger area is also under construction in Sonipat right now, which will be completed by March 2022.

“Some of the most modern equipment like Physical Property Measurement System, X-Ray Photoemission Spectrometer, High-Resolution Transmission Electron Microscope, Molecular Beam Epitaxy, Universal Testing Machine, Electron Paramagnetic Resonance etc. are now housed in Sonipat and many more have been planned for the upcoming second building,” said Prof Pankaj Srivastava, Head, Central Research Facility, IIT Delhi.

Setting up of the SATHI centre, a shared, professionally managed, Science and Technology infrastructure facility by the Department of Science and Technology (DST), Government of India, has further augmented the capabilities of the CRF by adding a plethora of new facilities that will be beneficial for both academic as well as industrial research. For example, a prototype facility is being developed that will enable MSMEs to come up with an idea with a design and get the prototype developed in-house. A pollution monitoring and control facility too has been sanctioned. Several new high-end spectrometers and microscopes are on their way in SATHI. (India Science Wire)

IIT Delhi launches new online platform to facilitate researchers

by India Science Wire September 28, 2021 in Indian Sciences

As part of an effort to boost the research ecosystem at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi, the Central Research Facility (CRF) was established in the year 2011, where all the central facilities were brought under a single umbrella. Since 2017, the CRF facilities have been significantly augmented with several state-of-the-art high-end experimental facilities. These have so far been catering to the needs of researchers from various departments and disciplines across the Institute.

A strong need was felt to enable sharing such facilities with the rest of the users from other academic institutions and industries in the country. Taking a big step forward in this direction, IIT Delhi has developed a new platform whereby anyone from across India can create a user account, login to the CRF, and book an instrument online (https://crf.iitd.ac.in/) for their research work. With this step, all facilities of the CRF on the Institute's main campus in New Delhi as well as in the Sonipat campus in Haryana are now available for researchers from across the country.

In the past five years, the CRF grew in leaps and bounds, thanks to the generous funding provided by the Institute as well as other agencies.

“Rs. 500 crores have been either spent or committed by IIT Delhi to establish various high-end facilities at the CRF. The main sources of funding include the IoE grant, special MoE grant, IIT Delhi grant through Industrial Research and Development, DST’s Sophisticated Analytical and Technical Help Institutes (SATHI) project, HEFA loan etc. Today, we have over 50 different facilities, owned and/or adopted by the CRF, which are already available to the users. This number is likely to get doubled in the next two years. The Institute would like to thank the Ministry of Education, Government of India; the DST and all other funding agencies that supported the CRF’s establishment”, said Prof V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi, while launching the platform on Tuesday.

In 2017, envisaging the growth of CRF, a new building was constructed at IIT Delhi’s extension campus in Sonipat. Another building with a much larger area is also under construction in Sonipat right now, which will be completed by March 2022.

“Some of the most modern equipment like Physical Property Measurement System, X-Ray Photoemission Spectrometer, High-Resolution Transmission Electron Microscope, Molecular Beam Epitaxy, Universal Testing Machine, Electron Paramagnetic Resonance etc. are now housed in Sonipat and many more have been planned for the upcoming second building,” said Prof Pankaj Srivastava, Head, Central Research Facility, IIT Delhi.

Setting up of the SATHI centre, a shared, professionally managed, Science and Technology infrastructure facility by the Department of Science and Technology (DST), Government of India, has further augmented the capabilities of the CRF by adding a plethora of new facilities that will be beneficial for both academic as well as industrial research. For example, a prototype facility is being developed that will enable MSMEs to come up with an idea with a design and get the prototype developed in-house. A pollution monitoring and control facility too has been sanctioned. Several new high-end spectrometers and microscopes are on their way in SATHI.

Republic NewsIndia

IIT Delhi launches new online platform to facilitate researchers

By **Rupesh Dharmik** - September 28, 2021

New Delhi, Sep 28th: As part of an effort to boost the research ecosystem at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi, the Central Research Facility (CRF) was established in the year 2011, where all the central facilities were brought under a single umbrella. Since 2017, the CRF facilities have been significantly augmented with several state-of-the-art high-and experimental facilities. These have so far been catering to the needs of researchers from various departments and disciplines across the Institute.

A strong need was felt to enable sharing such facilities with the rest of the users from other academic institutions and industries in the country. Taking a big step forward in this direction, IIT Delhi has developed a new platform whereby anyone from across India can create a user account, login to the

CRF, and book an instrument online (https://crf.iitd.ac.in/) for their research work. With this step, all facilities of the CRF on the Institute's main campus in New Delhi as well as in the Sonipat campus in Haryana are now available for researchers from across the country.

In the past five years, the CRF grew in leaps and bounds, thanks to the generous funding provided by the Institute as well as other agencies.

"Rs. 500 crores have been either spent or committed by IIT Delhi to establish various high-end facilities at the CRF. The main sources of funding include the IoE grant, special MoEgrant, IIT Delhi grant through Industrial Research and Development, DST's Sophisticated Analytical and Technical Help Institutes (SATHI) project, HEFA loan etc. Today, we have over 50 different facilities, owned and/or adopted by the CRF, which are already available to the users. This number is likely to get doubled in the next two years. The Institute would like to thank the Ministry of Education, Government of India; the DST and all other funding agencies that supported the CRF's establishment", said Prof V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi, while launching the platform on Tuesday.

In 2017, envisaging the growth of CRF, a new building was constructed at IIT Delhi's extension campus in Sonipat. Another building with a much larger

area is also under construction in Sonipat right now, which will be completed by March 2022.

“Some of the most modern equipment like Physical Property Measurement System, X-Ray Photoemission Spectrometer, High-Resolution Transmission Electron Microscope, Molecular Beam Epitaxy, Universal Testing Machine, Electron Paramagnetic Resonance etc. are now housed in Sonipat and many more have been planned for the upcoming second building,” said Prof Pankaj Srivastava, Head, Central Research Facility, IIT Delhi.

Setting up of the SATHI centre, a shared, professionally managed, Science and Technology infrastructure facility by the Department of Science and Technology (DST), Government of India, has further augmented the capabilities of the CRF by adding a plethora of new facilities that will be beneficial for both academic as well as industrial research. For example, a prototype facility is being developed that will enable MSMEs to come up with an idea with a design and get the prototype developed in-house. A pollution monitoring and control facility too has been sanctioned. Several new high-end spectrometers and microscopes are on their way in SATHI. (India Science Wire)

IIT Delhi launches new online platform to facilitate researchers

Editor | Sep 28, 2021 - 19:01

In an effort to strengthen the research ecosystem at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi, the Central Research Facility (CRF) was established in 2011 to consolidate all central facilities. Since 2017, several state-of-the-art high-end experimental facilities have been added to the CRF facilities. These have thus far served the needs of researchers from across the Institute's various departments and disciplines.

There was a strong desire to enable sharing of such facilities with other academic institutions and industries in the country. IIT Delhi has taken a significant step forward in this direction by developing a new platform through which researchers from across India can create a user account, login to the

CRF, and book an instrument online (https://crf.iitd.ac.in/). With this move, the CRF's facilities on both its main campus in New Delhi and its Sonipat campus in Haryana are now open to researchers from across the country.

The CRF has grown by leaps and bounds over the last five years, owing to generous funding from the Institute and other agencies.

"IIT Delhi has spent or committed Rs. 500 crores to establish various high-end facilities at the CRF. The IoE grant, a special MoE grant, an IIT Delhi grant through Industrial Research and Development, the DST's Sophisticated Analytical and Technical Help Institutes (SATHI) project, and a HEFA loan are the primary sources of funding. Today, the CRF owns and/or adopts over 50 different facilities that are already available to users. This figure is expected to double in the next two years. The Institute wishes to express its gratitude to the Ministry of Education, Government of India; the DST; and all other funding agencies that aided in the establishment of the CRF," Prof V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi, said during Tuesday's platform launch.

In 2017, with the growth of CRF in mind, a new building was constructed on IIT Delhi's Sonipat extension campus. Another much larger structure is currently under construction in Sonipat and is scheduled to be completed in March 2022.

"Some of the most cutting-edge equipment, including a Physical Property Measurement System, an X-Ray Photoemission Spectrometer, a High-Resolution Transmission Electron Microscope, Molecular Beam Epitaxy, a Universal Testing Machine, and an Electron Paramagnetic Resonance, is now housed in Sonipat, and many more are planned for the upcoming second building," said Prof Pankaj Srivastava, Head, Central Research Facility.

The establishment of the SATHI centre, a shared, professionally managed Science and Technology infrastructure facility by the Government of India's Department of Science and Technology (DST), has enhanced the CRF's capabilities by adding a slew of new facilities that will benefit both academic and industrial research. For instance, a prototype facility is being developed to enable MSMEs to develop an idea with a design and then develop the prototype in-house. Additionally, a pollution monitoring and control facility has been authorised. SATHI is in the process of procuring several new high-end spectrometers and microscopes.

जनसत्ता

कटहल के छिलके से बने नैनो कम्पोजिट घटा सकते हैं जल प्रदूषण

अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं, जिनकी आवश्यकता पौधों को विकसित होने के लिए होती है।

Written By जनसत्ता ऑनलाइन

नई दिल्ली | Updated: September 29, 2021 2:40:47 am

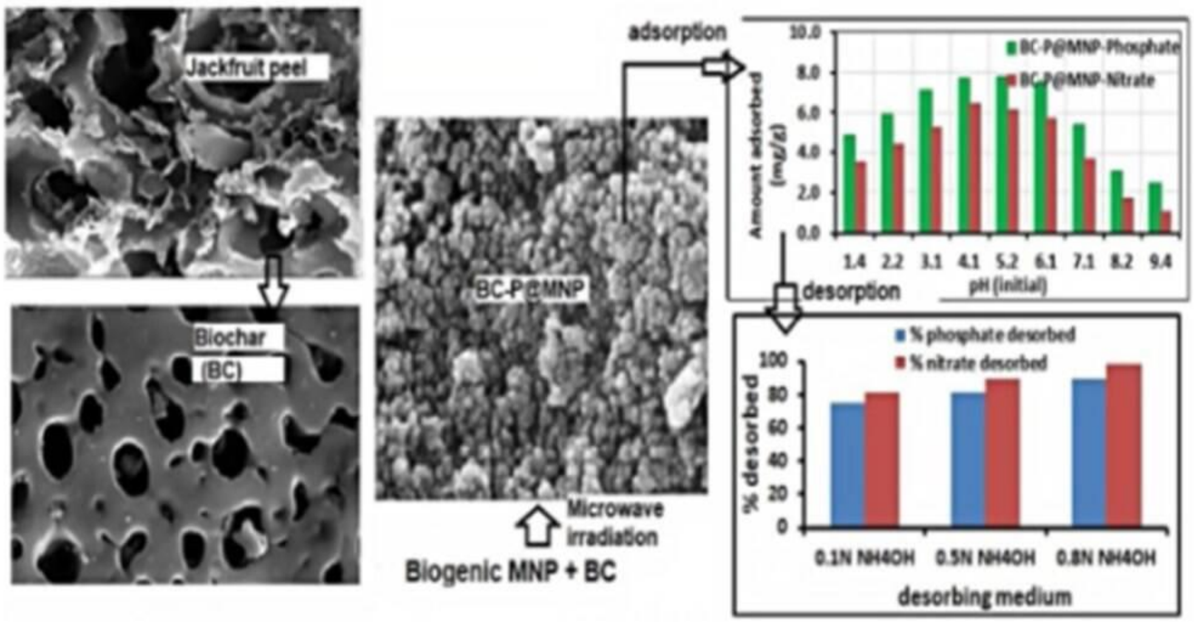

अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं, जिनकी आवश्यकता पौधों को विकसित होने के लिए होती है। फर्टिलाइजरतालाबों जैसे -अपशिष्ट खेतों से बहकर नदियों-जलस्रोतों में पहुँच जाते हैं, और वहाँ पाये जाने वाले पादप समूह के लिए पोषकतत्व का काम -करते हैं।

ये पोषक तत्व प्रायः जलस्रोतों की सतह पर शैवाल जैसी अवांछित पादप वृद्धि को भी प्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते हैं। इससे जल की सतह के नीचे फाइटोप्लैंकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है। इसके साथ ही, कुछ शैवाल विषैले तत्व भी उत्सर्जित करते हैं। बैक्टीरिया द्वारा

विघटित मृत शैवाल पानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे दुर्गंध पैदा होती है। कुछ बैक्टीरिया; मीथेन, जो एक ग्रीनहाउस गैस है, भी पैदा करते हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए एक पर्यावरणहितैषी तरीका खोज - कम्पोजिट विकसित किए हैं। उनका -निकाला है। उन्होंने कटहल के छिलके पर आधारित नैनो कम्पोजिट अपशिष्ट जल से नाइट्-कहना है कि ये नैनोरोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को अलग करने में मददगार हो सकते हैं। यह अध्ययन देहरादून स्थित ग्राफिक इरा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

नैनोकम्पोजिट तैयार करने के लिए उन्होंने सूखे कटहल के छिलके को गर्म करके उसका पाउडर - बनाया है। शोधकर्त ाओं का तर्क है कि पॉलीसेकेराइडयुक्त कटहल के छिलके के पाउडर से बने - कम्पोजिट में-नैनो, सोखने की बेहतर क्षमता के लिए आवश्यक उच्च छिद्र व्यास और सतह क्षेत्र होता है। उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें कटहल के छिलके के पाउडर पर चुंबकीय रूप से लगाया।

परीक्षण किया गया तो नैनो-कम्पोजिट ने पीएच-4 से पीएच-6 पर अधिकतम पोषक तत्व हटाने की दक्षता दिखायी। इस स्थिति में, प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों में शोधकर्ताओं ने पाया कि ये नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं। इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनोकम्पोजिट का परीक्षण किया। इसने अपशिष्ट जल - से96% तक फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटा दिया।

ग्राफिक इरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं कि “कटहल के छिलके पर आधारित नैनोकम्पोजिट ने चुनि-ंदा आयनों की उपस्थिति में भी अपशिष्ट जल से फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटाने में अपनी क्षमता प्रदर्शित की है।”

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, ‘छह चक्रों के पुनकम्पोजिट -उपयोग के बाद भी नैनो : में पोषक तत्वों को हटाने की क्षमता में केवल10 प्रतिशत कमी देखी गई है। इसका अर्थ है कि इस कम्पोजिट का पुनः उपयोग संभव है। पर्यावरण के अनुकूल नैनोकम्पोजिट पानी से पोषक तत्वों को - अलग करने का एक सस्ता तरीका है, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है।

यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल ऐंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक के अलावा वर्तिका गुप्ता एवं श्रेया कोटनाला शामिल हैं। इंड)िया साइंस वायर(

RD TIMES.in हिंदी

कटहल के छिलके से बने नैनोकम्पोजिट घटा सकते हैं - प्रदूषण-जल

By RD Times Hindi | September 28, 2021

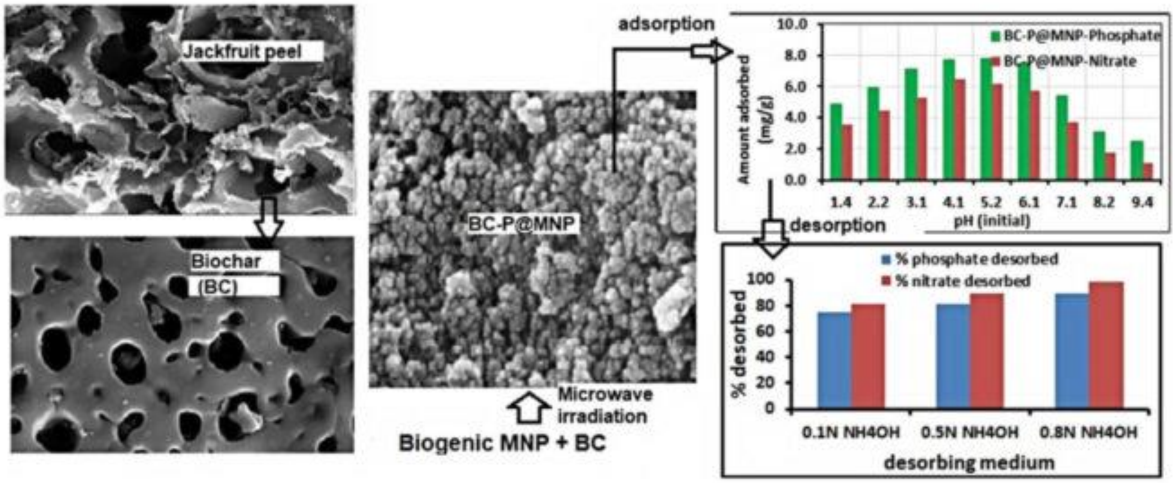

नई दिल्ली, 28 सितंबर: अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं, जिनकी आवश्यकतापौधों को विकसित होने के लिए होती है।फर्टिलाइजरतालाबोंजैसे -अपशिष्ट खेतों से बहकर नदियों-जलस्रोतों में पहुँच जाते हैं, और वहाँ पाये जाने वाले पादप समूह के लिए पोषकतत्व काकाम करते हैं।-

ये पोषक तत्व प्रायः जलस्रोतों की सतह पर शैवाल जैसी अवांछित पादप वृद्धि को भीप्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते हैं। इससे जल की सतह के नीचे फाइटोप्लैंकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है। इसके साथ ही, कुछ शैवाल विषैले तत्व भी उत्सर्जित करते हैं। बैक्टीरिया द्वारा विघटित मृत शैवालपानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे दुर्गंध पैदा होती है। कुछ बैक्टीरिया; मीथेन, जो एक ग्रीनहाउस गैस है, भी पैदा करते हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए एक पर्यावरणहितैषी तरीका खोज निकाला है। उन्होंने -कम्पोज-कटहल के छिलके पर आधारितनैनोिट विकसित किए हैं। उनका कहना है कि ये नैनोकम्पोजिट -

अपशिष्ट जल से नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को अलग करने में मददगार हो सकते हैं। यह अध्ययन देहरादून स्थित ग्राफिक इरा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

नैनोकम्पोजिट तैयार करने के लि-ए उन्होंने सूखे कटहल के छिलके को गर्म करके उसका पाउडर बनाया है। शोधकर्ताओं का तर्क है कि पॉलीसेकेराइडकम्पोजिट में-युक्त कटहल के छिलके के पाउडर से बने नैनो-, सोखने की बेहतर क्षमता के लिए आवश्यक उच्च छिद्र व्यास और सतह क्षेत्र होता है।उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें कटहल के छिलके के पाउडर पर चुंबकीय रूप से लगाया।

परीक्षण किया गया तो नैनो-कम्पोजिट ने पीएच-4 से पीएच-6 पर अधिकतम पोषक तत्व हटाने की दक्षता दिखायी। इस स्थिति में, प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों में शोधकर्ताओं ने पाया कि ये नैनोकम्प-ोजिट 99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं।इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनो कम्पोजिट का परीक्षण किया। इसने अपशिष्ट जल से-96% तक फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटा दिया।

ग्राफिक इरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं कि "कटहल के छिलके पर आधारित नैनो-कम्पोजिट ने चुनिंदा आयनों की उपस्थिति में भी अपशिष्ट जल से फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटाने में अपनी क्षमता प्रदर्शित की है।"

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, 'छह चक्रों के पुनजिटकम्पो-उपयोग के बाद भी नैनो : में पोषक तत्वों को हटाने की क्षमता में केवल 10 प्रतिशत कमी देखी गई है। इसका अर्थ है कि इस कम्पोजिट का पुनः उपयोग संभव है। पर्यावरण के अनुकूल नैनोकम्पोजिट पानी से पोषक तत्वों को अलग करने का एक सस्ता - तरीका है, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है।

यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल ऐंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक के अलावा वर्तिका गुप्ता एवं श्रेया कोटनाला शामिल हैं। इंडिया) (साइंस वायर

V3 NEWS इण्डिया

कटहल के छिलके से बने नैनोकम्पोजिट घटा सकते हैं -प्रदूषण-जल

28/09/2021 V3news India

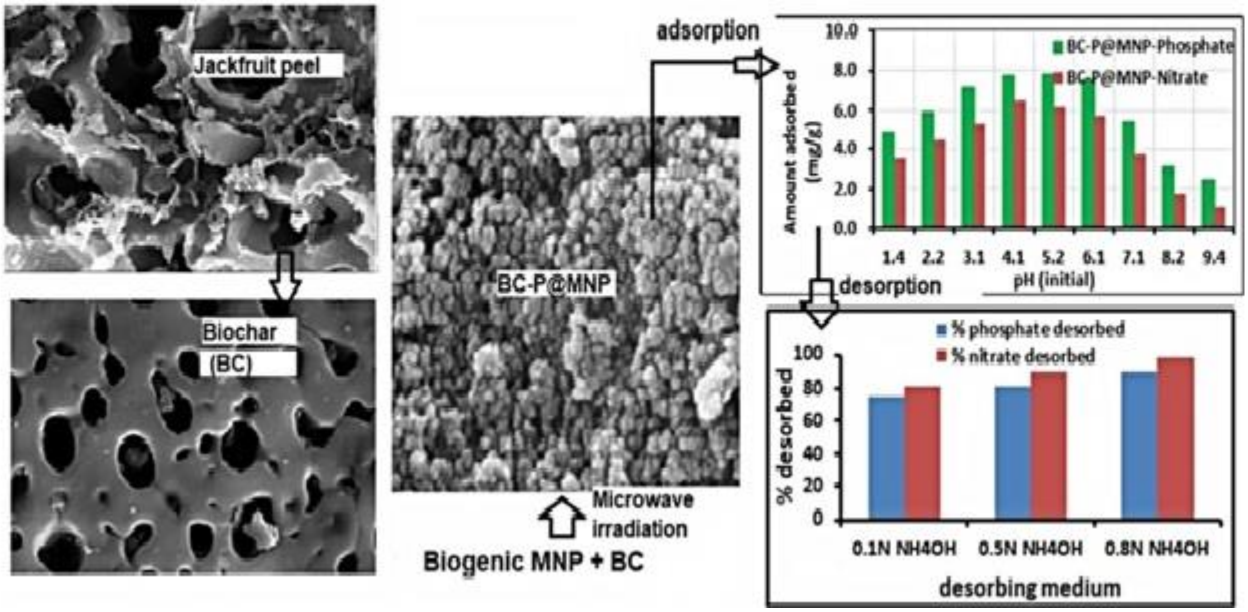

नई दिल्ली, 28 सितंबर अपशिष्ट जल में :(इंडिया साइंस वायर)नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं, जिनकी आवश्यकता पौधों को विकसित होने के लिए होती है। फर्टिलाइजरतालाबों जैसे -अपशिष्ट खेतों से बहकर नदियों-जलस्रोतों में पहुँच जाते हैं, और वहाँ पाये जाने वाले पादप समूह के लिए पोषकम करते हैं। येतत्व का का- पोषक तत्व प्रायः जलस्रोतों की सतह पर शैवाल जैसी अवांछित पादप वृद्धि को भी प्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते हैं।

इससे जल की सतह के नीचे फाइटोप्लैंकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है। इसके साथ ही, कुछ शैवाल विषैले तत्व भी उत्सर्जित करते हैं। बैक्टीरिया द्वारा विघटित मृत शैवाल पानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे दुर्गंध पैदा होती है। कुछ बैक्टीरिया; मीथेन, जो एक ग्रीनहाउस गैस है, भी पैदा करते हैं। भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए एक पर्यावरणकाला है।हितैषी तरीका खोज नि-

उन्होंने कटहल के छिलके पर आधारित नैनोकम्पोजिट अपशिष्ट जल से -कम्पोजिट विकसित किए हैं। उनका कहना है कि ये नैनो-नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को अलग करने में मददगार हो सकते हैं। यह अध्ययन देहरादून स्थित ग्राफिक इरा ओं द्वारा कियाविश्वविद्यालय के शोधकर्ता गया है। नैनोकम्पोजिट तैयार करने के लिए उन्होंने सूखे कटहल के छिलके को गर्म -करके उसका पाउडर बनाया है।

शोधकर्ताओं का तर्क है कि पॉलीसेकेराइडकम्पोजिट में-युक्त कटहल के छिलके के पाउडर से बने नैनो-, सोखने की बेहतर क्षमता के लिए आवश्यक उच्च छिद्र व्यास और सतह क्षेत्र होता है। उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें कटहल के

छिलके के पाउडर पर चुंबकीय रूप से लगाया। परीक्षण किया गया तो नैनो-कम्पोजिट ने पीएच-4 से पीएच-6 पर अधिकतम पोषक तत्व हटाने की दक्षता दिखायी।

इस स्थिति में, प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों में शोधकर्ताओं ने पाया कि ये नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं। इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनोकम्पोजिट का परीक्षण - ष्ट जल सेकिया। इसने अपशि96% तक फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटा दिया। ग्राफिक इरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं कि "कटहल के छिलके पर आधारित नैनोकम्पोजिट ने-
चुनिंदा आयनों की उपस्थिति में भी अपशिष्ट जल से फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटाने में अपनी क्षमता प्रदर्शित की है।"

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, 'छह चक्रों के पुनकम्पोजिट में पोषक तत्वों को-उपयोग के बाद भी नैनो :
हटाने की क्षमता में केवल 10 प्रतिशत कमी देखी गई है। इसका अर्थ है कि इस कम्पोजिट का पुनः उपयोग संभव है।
पर्यावरण के अनुकूल नैनोपानी से पोषक तत्वों को अलग करने का एक सस्ता तरीका है कम्पोजिट-, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है। यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल ऐंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक के अलावा वर्तिका गुप्ता एवं श्रेया कोटनाला शामिल हैं।

फाड़ डालो डॉट कॉम

धाँसू ख़बरें और ख़बरों की चीर-फाड़

कटहल के छिलके से बने नैनोकम्पोजिट घटा - प्रदूषण-सकते हैं जल

By Ram Bharose

सितम्बर 28, 2021 पर्यावरण, पानी

क्या कटहल के छिलके से बने नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं

Nano-composite made from jackfruit peel can reduce water pollution

नई दिल्ली, 28 सितंबर अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये :(इंडिया साइंस वायर) जाते हैं, जिनकी आवश्यकता पौधों को विकसित होने के लिए होती है। फर्टिलाइजरअपशिष्ट खेतों से बहकर - तालाबों जैसे जलस्रोतों में पहुँच जाते हैं-नदियों, और वहाँ पाये जाने वाले पादप समूह के लिए पोषकतत्व- का काम करते हैं।

ये पोषक तत्व प्रायः जलस्रोतों की सतह पर शैवाल जैसी अवांछित पादप वृद्धि को भी प्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते हैं। इससे जल की सतह के नीचे फाइटोप्लैंकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है। इसके साथ ही, कुछ शैवाल विषैले तत्व भी उत्सर्जित करते हैं। बैक्टीरिया द्वारा विघटित मृत शैवाल पानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे दुर्गंध पैदा होती है। कुछ बैक्टीरिया; मीथेन, जो एक ग्रीनहाउस गैस है, भी पैदा करते हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए एक **पर्यावरण**-हितैषी तरीका खोज निकाला है। उन्होंने कटहल के छिलके पर आधारित नैनोट कम्पोजि-कम्पोजिट विकसित किए हैं। उनका कहना है कि ये नैनो-अपशिष्ट जल से नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को अलग करने में मददगार हो सकते हैं। यह अध्ययन देहरादून स्थित ग्ाफिक इरा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

नैनोउडर बनाया है। कम्पोजिट तैयार करने के लिए उन्होंने सूखे कटहल के छिलके को गर्म करके उसका पा-कम्पोजिट में-युक्त कटहल के छिलके के पाउडर से बने नैनो-शोधकर्ताओं का तर्क है कि पॉलीसेकेराइड, सोखने की बेहतर क्षमता के लिए आवश्यक उच्च छिद्र व्यास और सतह क्षेत्र होता है। उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें कटहल के छिलके के पाउडर पर चुंबकीय रूप से लगाया।

परीक्षण किया गया तो नैनो-कम्पोजिट ने पीएच-4 से पीएच-6 पर अधिकतम पोषक तत्व हटाने की दक्षता दिखायी। इस स्थिति में, प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों में शोधकर्ताओं ने पाया कि ये नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं। इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनो कम्पोजिट का परीक्षण किया। इसने अपशिष्ट जल से-96% तक फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटा दिया।

ग्राफिक इरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं कि "कटहल के छिलके पर आधारित नैनो-कम्पोजिट ने चुनिंदा आयनों की उपस्थिति में भी अपशिष्ट जल से फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटाने में अपनी क्षमता प्रदर्शित की है।"

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, 'छह चक्रों के पुनकम्पोजिट में पोषक -उपयोग के बाद भी नैनो : तत्वों को हटाने की क्षमता में केवल10 प्रतिशत कमी देखी गई है। इसका अर्थ है कि इस कम्पोजिट का पुनः उपयोग संभव है। पर्यावरण के अनुकूल नैनो कम्पोजिट पानी से-पोषक तत्वों को अलग करने का एक सस्ता तरीका है, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है।

यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल ऐंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक के अलावा वर्तिका गुप्ता एवं श्रेया कोटनाला शामिल हैं। इंडिया) (साइंस वायर

Khabar जागरण24

कटहल के छिलके से बना नैनोकंपोजिट जल प्रदूषण को कम कर सकता है

September 29, 2021

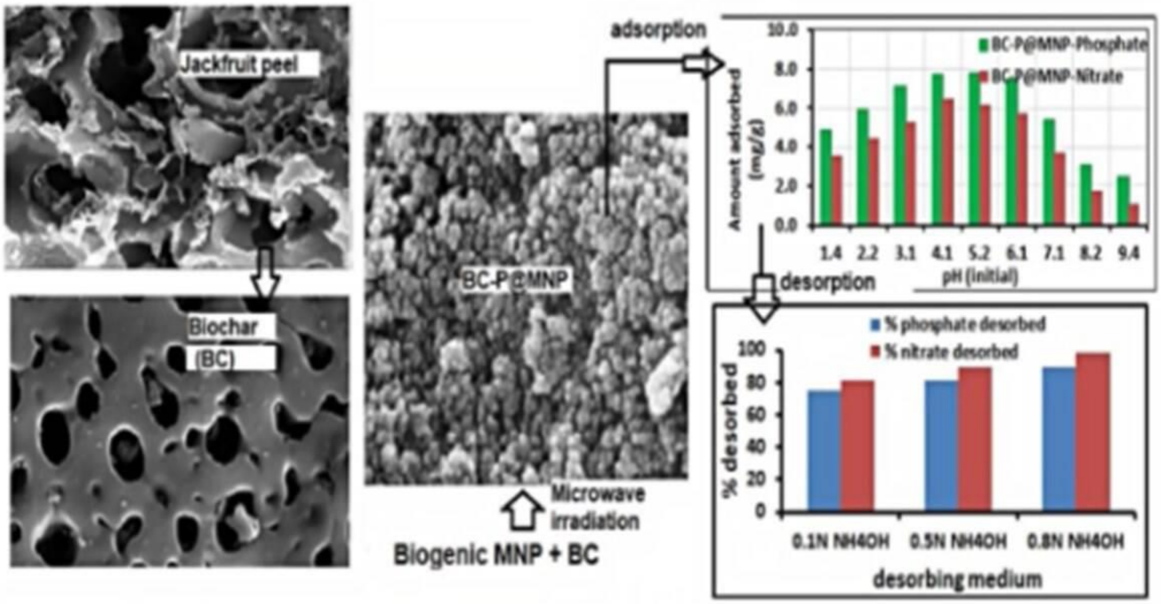

गंदे पानी में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व होते हैं, जो पौधों के विकास के लिए आवश्यक हैं। उर्वरकअपशिष्ट खेतों से नदियों और झीलों जैसे जलाशयों में प्रवाहित होता है और वहां पाए जाने वाले पौधों - के समूह के लिए पोषक तत्व के रूप में कार्य करता है।

इन पोषक तत्वों को अक्सर जल निकायों की सतह पर पौधों की वृद्धि, जैसे शैवाल, को बढ़ावा देने के लिए जाना जाता है। यह पानी की सतह के नीचे फाइटोप्लांकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया को रोकता है। इसके अलावा, कुछ शैवाल विषाक्त पदार्थों को भी छोड़ते हैं। बैक्टीरिया द्वारा विघटित मृत शैवाल पानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे गंध आती है। कुछ बैक्टीरिया; वे मीथेन भी पैदा करते हैं, जो एक ग्रीनहाउस गैस है।

भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए पर्यावरण के अनुकूल तरीका खोजा है। उन्होंने कटहल के छिलके पर आधारित नैनोकंपोजिट-कंपोजिट विकसित किए हैं। उनका कहना है कि ये नैनो- गंदे पानी से नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को अलग करने में मदद कर सकते हैं। यह अध्ययन देहरादून के ग्राफिक एरा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया था।

नैनोकम्पोजिट तैयार करने के लिए-, उन्होंने सूखे कटहल के छिलके को पाउडर बनाने के लिए गर्म किया। शोधकर्ताओं का तर्क है कि पॉलीसेकेराइड युक्त कटहल के छिलके के पाउडर से बने नैनोकम्पोजिट में अधिक - छिद्र व्यास और बढ़े हुए सतह क्षेत्र होते हैं जो अवशोषण क्षमता में सुधार करते हैं। उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें चुंबकीय रूप से कटहल केछिलके के पाउडर पर लगाया।

जब परीक्षण किया गया, तो नैनो- कम्पोजिट ने पीएच-4 से पीएच -6 तक अधिकतम पोषक तत्वों को हटाने की दक्षता दिखाई। इस स्थिति में, प्रयोगशाला परीक्षणों में, शोधकर्ताओं ने पाया कि यह नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को पानी से निकाल सकता है। इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनो समग्र का परीक्षण किया। यह गंदे पानी से-96% फॉस्फेट और नाइट्रेट को हटा देता है।

Advertisements

ग्राफिक एरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं, “कटहल के छिलके पर आधारित नैनो-कंपोजिट ने चुनिंदा आयनों की उपस्थिति में भी अपशिष्ट जल से फॉस्फेट और नाइट्रेट को हटाने की अपनी क्षमता का प्रदर्शन किया है।”

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, “छह पुनउपयोग के बाद भी :, नैनोकम्पोजिट पोषक तत्-वों को हटाने की क्षमता में केवल 10 प्रतिशत की कमी दिखाता है। इसका मतलब है कि इस जोड़ का पुनउपयोग : कंपोट्स पानी से पोषक तत्वों को अलग करने का एक सस्ता तरीका -करना संभव है। पर्यावरण के अनुकूल नैनो है, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है।

यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल एंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित हुआ है। अध्ययन में शामिल शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक, साथ ही वर्तिका गुप्ता और श्रेया कोटनाला शामिल थे। इंडिया) (साइंस वायर

जैकफ्रूट पील कैन रिड्यूस वॉटर पॉल्यूशन से बनी नैनो कम्पोजिट पोस्ट सबसे पहले जनसत्ता पर दिखाई दी।

.

Source Link

भारत हेराल्ड

कटहल के छिलके से बने नैनोकम्पोजिट - प्रदूषण-घटा सकते हैं जल

2 days ago

नई दिल्ली, 28 सितंबर: अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं, जिनकी आवश्यकतापौधों को विकसित होने के लिए होती है।फर्टिलाइजर तालाबोंजैसे-नदियों बहकर से खेतों अपशिष्ट- हैं जाते पहुँच में जलस्रोतों, और वहाँ पाये जाने वाले पादप समूह के लिए पोषकतत्व- काकाम करते हैं।

ये पोषक तत्व प्रायः जलस्रोतों की सतह पर शैवाल जैसी अवांछित पादप वृद्धि को भीप्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते हैं। इससे जल की सतह के नीचे फाइटोप्लैंकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है। इसके साथ ही, कुछ शैवाल विषैले तत्व भी उत्सर्जित करते हैं। बैक्टीरिया द्वारा विघटित मृत शैवालपानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे दुर्गंध पैदा होती है। कुछ बैक्टीरिया; मीथेन, जो एक ग्रीनहाउस गैस है, भी पैदा करते हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए एक पर्यावरणखोज तरीका हितैषी- निकाला है। उन्होंने कटहल के छिलके पर आधारितनैनो कम्पोजिट-नैनो ये कि है कहना उनका हैं। किए विकसित कम्पोजिट- यह हैं। सकते हो मददगार में करने अलग को तत्वों पोषक जैसे फास्फोरस और नाइट्रोजन से जल अपशिष्ट शोधकर् के विश्वविद्यालय इरा ग्राफिक स्थित देहरादून अध्ययनताओं द्वारा किया गया है।

नैनो है। बनाया पाउडर उसका करके गर्म को छिलके के कटहल सूखे उन्होंने लिए के करने तैयार कम्पोजिट- में कम्पोजिट-नैनो बने से पाउडर के छिलके के कटहल युक्त-पॉलीसेकेराइड कि है तर्क का शोधकर्ताओं, सोखने की बेहतर क्षमता के लिए आवश्यक उच्च छिद्र व्यास और सतह क्षेत्र होता है।उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें कटहल के छिलके के पाउडर पर चुंबकीय रूप से लगाया।

परीक्षण किया गया तो नैनो-पीएच ने कम्पोजिट-4 से पीएच-6 पर अधिकतम पोषक तत्व हटाने की दक्षता दिखायी। इस स्थिति में, प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों में शोधकर्ताओं ने पाया कि ये नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं।इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनो से जल अपशिष्ट इसने किया। परीक्षण का कम्पोजिट-96% तक फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटा दिया।

ग्राफिक इरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं कि “कटहल के छिलके पर आधारित नैनो-अपनी में हटाने को नाइट्रेट्स और फॉस्फेट से जल अपशिष्ट भी में उपस्थिति की आयनों चुनिंदा ने कम्पोजिट है। की प्रदर्शित क्षमता”

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, ‘छह चक्रों के पुन पोषक में कम्पोजिट-नैनो भी बाद के उपयोग : केवल में क्षमता की हटाने को तत्वों10 प्रतिशत कमी देखी गई है। इसका अर्थ है कि इस कम्पोजिट का पुनः उपयोग संभव है। पर्यावरण के अनुकूल नैनोसस्त एक का करने अलग को तत्वों पोषक से पानी कम्पोजिट-ा तरीका है, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है।

यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल ऐंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक के अलावा वर्तिका गुप्ता एवं श्रेया कोटनाला शामिल हैं। इंडिया)
(वायर साइंस

msn

जनसत्ता

कटहल के छिलके से बने नैनो कम्पोजिट घटा सकते हैं जल प्रदूषण

Bishwa Jha | 1 दिन पहले

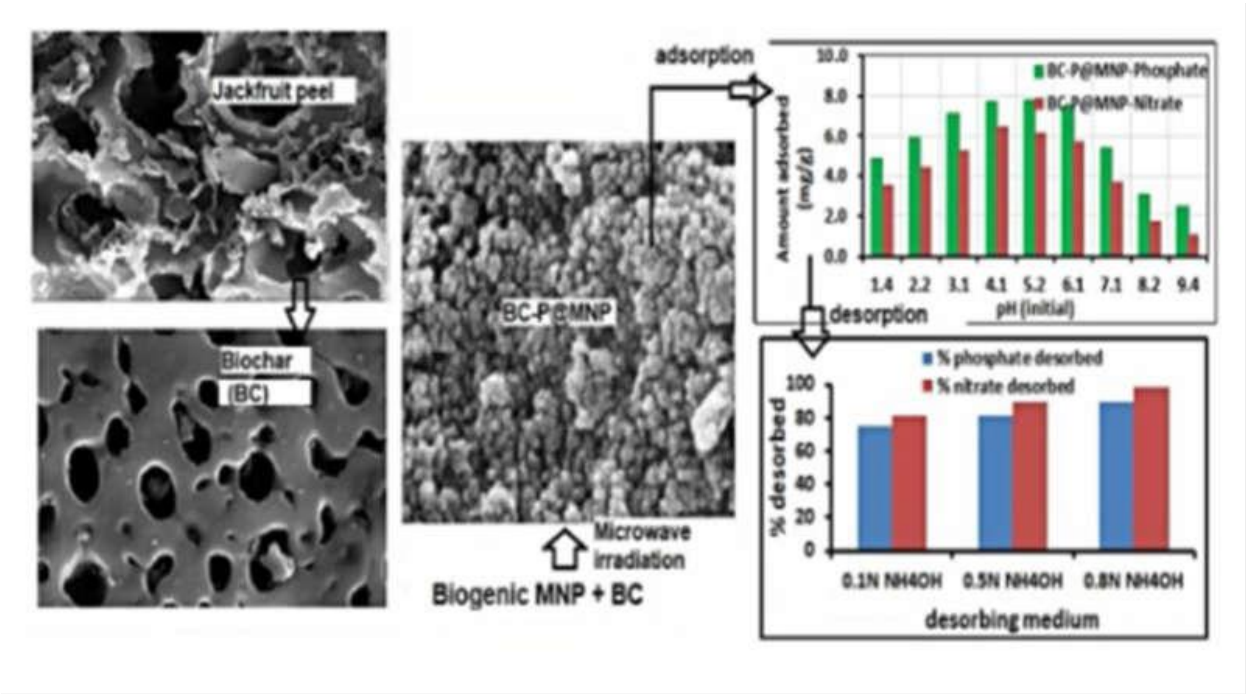

© Jansatta द्वारा प्रदत्त

अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं, जिनकी आवश्यकता पौधों को विकसित होने के लिए होती है। फर्टिलाइजरतालाबों जैसे जलस्रोतों में पहुँच जाते हैं-अपशिष्ट खेतों से बहकर नदियों-, और वहाँ पाये जाने वाले पादप समूह के लिए पोषकतत्व का काम करते हैं।-

ये पोषक तत्व प्रायः जलस्रोतों की सतह पर शैवाल जैसी अवांछित पादप वृद्धि को भी प्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते हैं। इससे जल की सतह के नीचे फाइटोप्लैंकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है। इसके साथ ही, कुछ शैवाल विषैले तत्व भी उत्सर्जित करते हैं। बैक्टीरिया द्वारा विघटित मृत शैवाल पानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे दुर्गंध पैदा होती है। कुछ बैक्टीरिया; मीथेन, जो एक ग्रीनहाउस गैस है, भी पैदा करते हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए एक पर्यावरणहितैषी तरीका खोज निकाला है। उन्होंने कटहल के - छिलके पर आधारित नैनोकम्पोजिट अपशिष्ट जल से नाइट्रोजन -कम्पोजिट विकसित किए हैं। उनका कहना है कि ये नैनो- और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को अलग करने में मददगार हो सकते हैं। यह अध्ययन देहरादून स्थित ग्राफिक इरा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

नैनोकम्पोजिट- तैयार करने के लिए उन्होंने सूखे कटहल के छिलके को गर्म करके उसका पाउडर बनाया है। शोधकर्ताओं का तर्क है कि पॉलीसेकेराइडकम्पोजिट में-युक्त कटहल के छिलके के पाउडर से बने नैनो-, सोखने की बेहतर क्षमता के लिए आवश्यक उच्च छिद्र व्यास और सतह क्षेत्र होता है। उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें कटहल के छिलके के पाउडर पर चुंबकीय रूप से लगाया।

परीक्षण किया गया तो नैनो-कम्पोजिट ने पीएच-4 से पीएच-6 पर अधिकतम पोषक तत्व हटाने की दक्षता दिखायी। इस स्थिति में, प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों में शोधकर्ताओं ने पाया कि ये नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं। इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनोकम्पोजिट का परीक्षण - किया। इसने अपशिष्ट जल से96% तक फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटा दिया।

ग्राफिक इरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं कि “कटहल के छिलके पर आधारित नैनोकम्पोजिट ने - चुनिंदा आयनों की उपस्थिति में भी अपशिष्ट जल से फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटाने में अपनी क्षमता प्रदर्शित की है।”

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, ‘छह चक्रों के पुन उपयोग :के बाद भी नैनोकम्पोजिट में पोषक तत्वों को - हटाने की क्षमता में केवल10 प्रतिशत कमी देखी गई है। इसका अर्थ है कि इस कम्पोजिट का पुनः उपयोग संभव है। पर्यावरण के अनुकूल नैनोकम्पोजिट पानी से पोषक तत्वों को अलग करने का एक सस्ता तरीका है-, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है।

यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल ऐंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक के अलावा वर्तिका गुप्ता एवं श्रेया कोटनाला शामिल हैं। इंडिया साइंस) (वायर

ASLI SARKARI RESULT
WWW.ASLISARKARIRESULT.COM

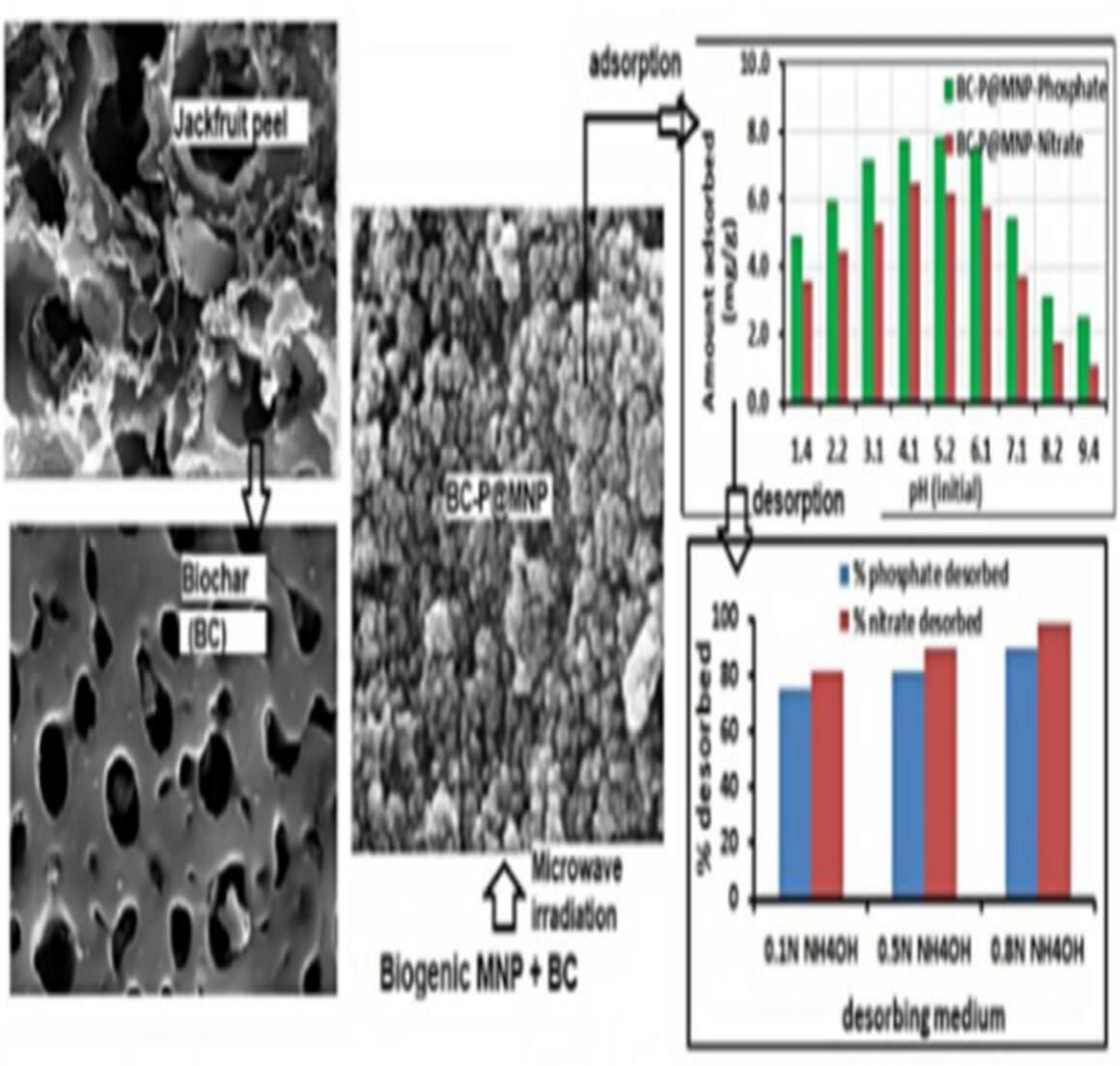

कटहल के छिलके से बने नैनो कम्पोजिट घटा सकते हैं जल प्रदूषण

By sarkari

अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं, जिनकी आवश्यकता पौधों को विकसित होने के लिए होती है। फर्टिलाइजरतालाबों जैसे जलस्रोतों में पहुँच जाते हैं-अपशिष्ट खेतों से बहकर नदियों-, और वहाँ पाये जाने वाले पादप समूह के लिए पोषकतत्व का काम करते हैं।-

ये पोषक तत्व प्रायः जलस्रोतों की सतह पर शैवाल जैसी अवांछित पादप वृद्धि को भी प्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते हैं। इससे जल की सतह के नीचे फाइटोप्लैंकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है। इसके साथ ही, कुछ शैवाल विषैले तत्व भी उत्सर्जित करते हैं। बैक्टीरिया द्वारा विघटित मृत शैवाल पानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे दुर्गंध पैदा होती है। कुछ बैक्टीरिया; मीथेन, जो एक ग्रीनहाउस गैस है, भी पैदा करते हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए एक पर्यावरणहितैषी तरीका खोज निकाला है। उन्होंने -कम्पोजिट अपशि-कम्पोजिट विकसित किए हैं। उनका कहना है कि ये नैनो-कटहल के छिलके पर आधारित नैनोष्ट जल से नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को अलग करने में मददगार हो सकते हैं। यह अध्ययन देहरादून स्थित ग्राफिक इरा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

नैनोकम्पोजिट तैयार करने के लिए उन्होंने सूखे कटहल के छिलके को गर्म करके उसका पाउडर बन-ाया है। शोधकर्ताओं का तर्क है कि पॉलीसेकेराइडकम्पोजिट में-युक्त कटहल के छिलके के पाउडर से बने नैनो-, सोखने की बेहतर क्षमता के लिए आवश्यक उच्च छिद्र व्यास और सतह क्षेत्र होता है। उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें कटहल के छिलके के पाउडर पर चुंबकीय रूप से लगाया।

परीक्षण किया गया तो नैनो-कम्पोजिट ने पीएच-4 से पीएच-6 पर अधिकतम पोषक तत्व हटाने की दक्षता दिखायी। इस स्थिति में, प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों में शोधकर्ताओं ने पाया कि ये नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं। इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनो-कम्पोजिट का परीक्षण किया। इसने अपशिष्ट जल से96% तक फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटा दिया।

ग्राफिक इरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं कि “कटहल के छिलके पर आधारित नैनो-कम्पोजिट ने चुनिंदा आयनों की उपस्थिति में भी अपशिष्ट जल से फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटाने में अपनी क्षमता प्रदर्शित की है।”

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, ‘छह चक्रों के पुनकम्पोजिट में पोषक तत्वों को -उपयोग के बाद भी नैनो : हटाने की क्षमता में केवल10 प्रतिशत कमी देखी गई है। इसका अर्थ है कि इस कम्पोजिट का पुनः उपयोग संभव है। पर्यावरण के अनुकूल नैनोकम्पोजिट पानी से पोषक तत्वों को अलग करने का एक सस्ता तरीका है-, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है।

यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल ऐंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक के अलावा वर्तिका गुप्ता एवं श्रेया कोटनाला शामिल हैं। इंडिया) (साइंस वायर

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

कटहल के छिलके से बने नैनोकम्पोजिट - प्रदूषण-घटा सकते हैं जल

By **Rupesh Dharmik** - September 28, 2021

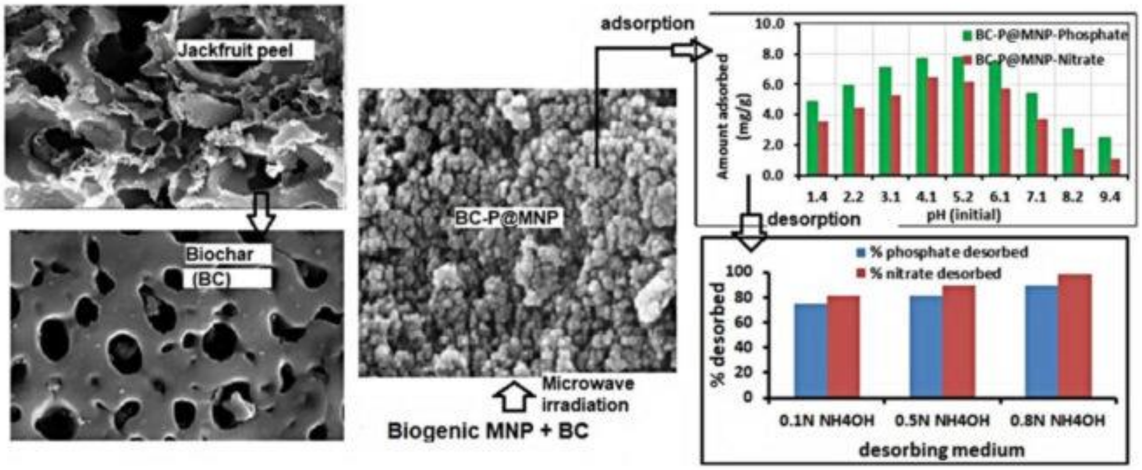

नई दिल्ली, 28 सितंबर: अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं, जिनकी आवश्यकतापौधों को विकसित होने के लिए होती है।फर्टिलाइजरतालाबोंजैसे -अपशिष्ट खेतों से बहकर नदियों-जलस्रोतों में पहुँच जाते हैं, और वहाँ पाये जाने वाले पादप समूह के लिए पोषकतत्व काकाम करते हैं।-

ये पोषक तत्व प्रायः जलस्रोतों की सतह पर शैवाल जैसी अवांछित पादप वृद्धि को भीप्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते हैं। इससे जल की सतह के नीचे फाइटोप्लैंकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है। इसके साथ ही, कुछ शैवाल विषैले तत्व भी उत्सर्जित करते हैं। बैक्टीरिया द्वारा विघटित मृत शैवालपानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे दुर्गंध पैदा होती है। कुछ बैक्टीरिया; मीथेन, जो एक ग्रीनहाउस गैस है, भी पैदा करते हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए एक पर्यावरणहितैषी तरीका खोज निकाला है। उन्होंने -हल के छिलके पकटर आधारितनैनोकम्पोजिट -कम्पोजिट विकसित किए हैं। उनका कहना है कि ये नैनो-

अपशिष्ट जल से नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्वों को अलग करने में मददगार हो सकते हैं। यह है। अध्ययन देहरादून स्थित ग्राफिक इरा विश्वविद्यालय के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया

नैनोकम्पोज-िट तैयार करने के लिए उन्होंने सूखे कटहल के छिलके को गर्म करके उसका पाउडर बनाया है। शोधकर्ताओं का तर्क है कि पॉलीसेकेराइडकम्पोजिट में-युक्त कटहल के छिलके के पाउडर से बने नैनो-, सोखने की बेहतर क्षमता के लिए आवश्यक उच्च छिद्र व्यास और सतह क्षेत्र होता है।उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें कटहल के छिलके के पाउडर पर चुंबकीय रूप से लगाया।

परीक्षण किया गया तो नैनो-कम्पोजिट ने पीएच-4 से पीएच-6 पर अधिकतम पोषक तत्व हटाने की दक्षता दिखायी। इस स्थिति में, प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों में शोधकर्ताओं ने पाया कि ये नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं।इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनो कम्पोजिट का परीक्षण किया। इसने अपशिष्ट जल से-96% तक फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटा दिया।

ग्राफिक इरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं कि “कटहल के छिलके पर आधारित नैनो-कम्पोजिट ने चुनिंदा आयनों की उपस्थिति में भी अपशिष्ट जल से फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटाने में अपनी क्षमता प्रदर्शित की है।”

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, ‘छह चक्रों के पुनउपयोग के ब :ाद भी नैनोकम्पोजिट में पोषक - तत्वों को हटाने की क्षमता में केवल10 प्रतिशत कमी देखी गई है। इसका अर्थ है कि इस कम्पोजिट का पुनः उपयोग संभव है। पर्यावरण के अनुकूल नैनोकम्पोजिट पानी से पोषक तत्वों को अलग करने का एक सस्ता - तरीका है, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है।

यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल ऐंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक के अलावा वर्तिका गुप्ता एवं श्रेया कोटनाला शामिल हैं। इंडिया) (साइंस वायर

दी इंडियन बुलेटिन

कटहल के छिलके से बने नैनोकम्पोजिट - प्रदूषण-घटा सकते हैं जल

2 days ago

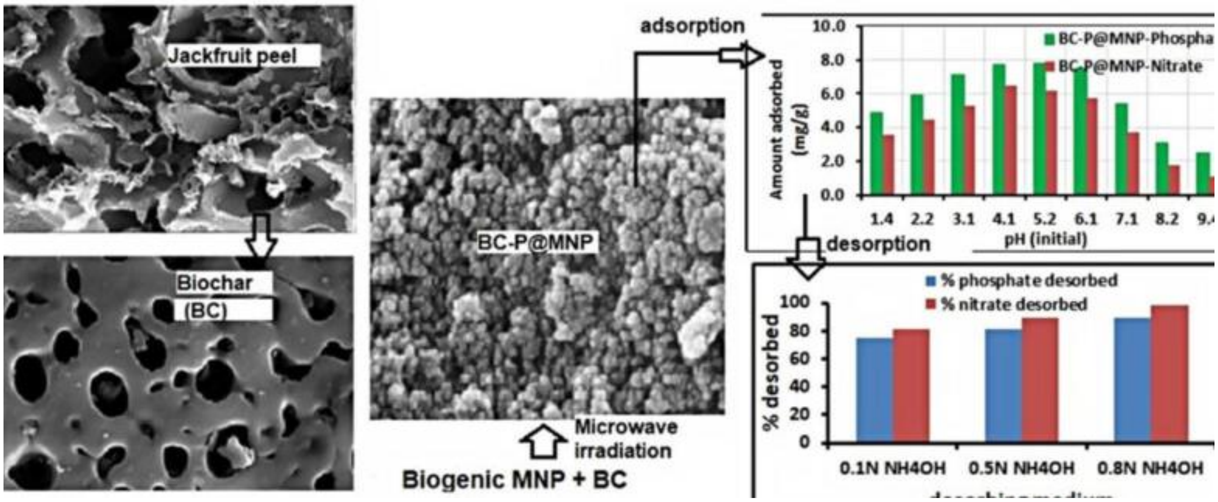

नई दिल्ली, 28 सितंबर: अपशिष्ट जल में नाइट्रोजन और फास्फोरस जैसे पोषक तत्व पाये जाते हैं, जिनकी आवश्यकतापौधों को विकसित होने के लिए होती है।फर्टिलाइजर तालाबोंजैसे-नदियों बहकर से खेतों अपशिष्ट-हैं जाते पहुँच में जलस्रोतों, और वहाँ पाये जाने वाले पादप समूह के लिए पोषकहैं। करते काकाम तत्व-

ये पोषक तत्व प्रायः जलस्रोतों की सतह पर शैवाल जैसी अवांछित पादप वृद्धि को भीप्रोत्साहित करने के लिए जाने जाते हैं। इससे जल की सतह के नीचे फाइटोप्लैंकटन की प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया बाधित होती है। इसके साथ ही, कुछ शैवाल विषैले तत्व भी उत्सर्जित करते हैं। बैक्टीरिया द्वारा विघटित मृत शैवालपानी की गुणवत्ता को खराब कर देते हैं, जिससे दुर्गंध पैदा होती है। कुछ बैक्टीरिया; मीथेन, जो एक ग्रीनहाउस गैस है, भी पैदा करते हैं।

भारतीय शोधकर्ताओं ने इस समस्या से निपटने के लिए एक पर्यावरण उन्होंने है। लानिका खोज तरीका हितैषी-य कि है कहना उनका हैं। किए विकसित कम्पोजिट-आधारितनैनो पर छिलके के कटहल◌े नैनो कम्पोजिट-यह हैं। सकते हो मददगार में करने अलग को तत्वों पोषक जैसे फास्फोरस और नाइट्रोजन से जल अपशिष्ट है। गया किया द्वारा शोधकर्ताओं के विश्वविद्यालय इरा ग्राफिक स्थित देहरादून अध्ययन

नैनोगर् को छिलके के कटहल सूखे उन्होंने लिए के करने तैयार कम्पोजिट-म करके उसका पाउडर बनाया है। शोधकर्ताओं का तर्क है कि पॉलीसेकेराइडमें कम्पोजिट-नैनो बने से पाउडर के छिलके के कटहल युक्त-, सोखने

की बेहतर क्षमता के लिए आवश्यक उच्च छिद्र व्यास और सतह क्षेत्र होता है।उन्होंने मशरूम से पॉलीसेकेराइड निकाले और उन्हें कटहल के छिलके के पाउडर पर चुंबकीय रूप से लगाया।

परीक्षण किया गया तो नैनो-पीएच ने कम्पोजिट-4 से पीएच-6 पर अधिकतम पोषक तत्व हटाने की दक्षता दिखायी। इस स्थिति में, प्रयोगशाला में किए गए परीक्षणों में शोधकर्ताओं ने पाया कि ये नैनो कम्पोजिट-99% फॉस्फेट और नाइट्रेट को पानी से हटा सकते हैं।इसके बाद शोधकर्ताओं ने लगातार बहने वाले अपशिष्ट जल प्रणाली में नैनो से जल अपशिष्ट इसने किया। परीक्षण का कम्पोजिट-96% तक फॉस्फेट और नाइट्रेट्स को हटा दिया।

ग्राफिक इरा यूनिवर्सिटी, देहरादून के शोधकर्ता बृज भूषण कहते हैं कि "कटहल के छिलके पर आधारित नैनो-अपनी में हटाने को नाइट्रेट्स और फॉस्फेट से जल अपशिष्ट भी में उपस्थिति की आयनों चुनिंदा ने कम्पोजिट है। की प्रदर्शित क्षमता"

उनकी सहयोगी अरुणिमा नायक कहती हैं, 'छह चक्रों के पुन पोषक में कम्पोजिट-नैनो भी बाद के उपयोग : क्षमता की हटाने को तत्वोंमें केवल 10 प्रतिशत कमी देखी गई है। इसका अर्थ है कि इस कम्पोजिट का पुनः उपयोग संभव है। पर्यावरण के अनुकूल नैनो सस्ता एक का करने अलग को तत्वों पोषक से पानी कम्पोजिट-है कातरी, जो जल प्रदूषण को कम कर सकता है।

यह अध्ययन जर्नल ऑफ इंडस्ट्रियल ऐंड इंजीनियरिंग केमिस्ट्री में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन से जुड़े शोधकर्ताओं में बृज भूषण और अरुणिमा नायक के अलावा वर्तिका गुप्ता एवं श्रेया कोटनाला शामिल हैं। इंडिया) साइंसवायर(

किसी विद्युतचालक में पुनः शुरू हो सकता है इलेक्ट्रॉन - का अवरुद्ध प्रवाहः अध्ययन

28/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 28 सितंबर गुवाहाटी के शोधकर्ताओं को ठोस (आईआईटी) भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान :(इंडिया साइंय वायर) पदार्थों में इलेक्ट्रॉनों या विद्युत चालकता के गुणों के संचालन से जुड़ी एक अनोखी खोज में सफलता मिली है। किसी कटे हुए या एक स्थिर आड़ की उपस्थिति में भी इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह को) तार में संवाहक चरित्र के फिर से उभरनेफिर से शुरू करनासे (संबंधित पहलुओं को लेकर अतीत में किसी ठोस जानकारी का अभाव रहा है।

इस शोध के विशिष्ट पहलू को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग के प्रोसौरभ बासु ने कहा .,'अपने अध्ययन में हमने दिखाया है कि विशेष परिस्थितियों में इलेक्ट्रॉन के लिए क्वांटम यांत्रिक सिद्धांत का लागू करने के बाद करंट रुकने के बाद उसे फिर से आरंभ किया जा सकता है। इसमें बाड़ और तारों के गुणों को नियंत्रित करने और उसकी आवृत्ति अनुकूलतना पर विशेष ध्यान देना होता है।'

मूल रूप से इलेक्ट्रॉन परमाणुओं के महत्वपूर्ण घटक हैं। ये परमाणु पदार्थ के निर्माण खंड हैं। इनके विषय में यह बहुत ही बुनियादी पहलू हैं। किसी चालक में प्रवाहित विद्युत धारा इलेक्ट्रॉनों की गति के कारण होती है। उनके मार्ग में कोई बाधा डालने से उसका प्रवाह बाधित होता है, जैसे तांबे के तार को दो भागों में काटकर और फिर उन्हें बीच में एक प्लास्टिक इन्सुलेटर टुकड़े के साथ जोड़ने की स्थिति में इलेक्ट्रॉनों का प्रवाह बंद हो जाएगा।

पहले यही माना जाता था कि अब तार में करंट का प्रवाह नहीं होगा, परंतु शोध इसमें नई रोशनी डालता है। दरअसल इस मामले में अतीत के अनुभवों को लेकर यही धारणा बलवती रही कि इलेक्ट्रॉन प्लास्टिक को एक अवरोध के रूप में देखते हैं जो

उन्हें आगे बढ़ने से रोकता है। इस शोध के महत्व पर आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डातपन . मिश्रा ने कहा कि इस शोध के अकादमिक महत्व के साथ ही यह भविष्य के लिए भी बहुत उपयोगी सिद्ध होगा, जिससे कई विभिन्न प्रकार की तकनीकें प्रभावित होंगी।

हालांकि इसके तात्कालिक व्यावहारिक उपयोग को लेकर फिलहाल कोई ठोस संकेत नहीं मिले हैं, लेकिन भविष्य के दृष्टिकोण से इस शोध के निष्कर्ष बहुत संभावनाएं जगाने वाले हैं। अमेरिकन फिजिकल सोसायटी के प्रतिष्ठित फिजिकल रीव्यू लैटर्स में इस शोध के निष्कर्ष प्रकाशित हुए हैं। इस शोध में आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग से प्रो सौरभ बासु एवं डॉ तपन मिश्रा और पीएचडी स्कॉलर शिल्पी रॉय शामिल हैं।

दी इंडियनबुलेटिन

किसी विद्युत चालक में पुनः शुरू हो-सकता है इलेक्ट्रॉन का अवरुद्ध प्रवाहः अध्ययन

2 days ago

शिल्पी रॉय, डॉ तपन मिश्राऔर प्रोफेसर सौरभ बसु (बाएं से दाएं)

नई दिल्ली, 28 सितंबर: भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान में पदार्थों ठोस को शोधकर्ताओं के गुवाहाटी (आईआईटी) किसी है। मिली सफलता में खोज अनोखी एक जुड़ी से संचालन के गुणों के चालकता विद्युत या इलेक्ट्रॉनोंकटे हुए तार में संवाहक चरित्र के फिर से उभरने को प्रवाह के इलेक्ट्रॉनों भी में उपस्थिति की आड़ स्थिर एक या) है। रहा अभाव का जानकारी ठोस किसी में अतीत लेकर को पहलुओं संबंधित से (करना शुरू से फिर

इस शोध के विशिष्ट पहलू को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग के प्रो ने बासु सौरभ . कहा,'अपने अध्ययन में हमने दिखाया है कि विशेष परिस्थितियों में इलेक्ट्रॉन के लिए क्वांटम यांत्रिक सिद्धांत का लागू करने के बाद करंट रुकने के बाद उसे फिर से आरंभ किया जा सकता है। इसमें बाड़ और तारों के गुणों को नियंत्रित करने और उसकी आवृत्ति अनुकूलतना पर विशेष ध्यान देना होता है।'

मूल रूप से इलेक्ट्रॉन परमाणुओं के महत्वपूर्ण घटक हैं। ये परमाणु पदार्थ के निर्माण खंड हैं। इनके विषय में यह बहुत ही बुनियादी पहलू हैं। किसी चालक में प्रवाहित विद्युत धारा इलेक्ट्रॉनों की गति के कारण होती है। उनके मार्ग में कोई बाधा डालने से उसका प्रवाह बाधित होताहै, जैसे तांबे के तार को दो भागों में काटकर और फिर उन्हें बीच में एक प्लास्टिक इन्सुलेटर टुकड़े के साथ जोड़ने की स्थिति में इलेक्ट्रॉनों का प्रवाह बंद हो जाएगा।

पहले यही माना जाता था कि अब तार में करंट का प्रवाह नहीं होगा, परंतु शोध इसमें नई रोशनी डालता है। दरअसल इस मामले में अतीत के अनुभवों को लेकर यही धारणा बलवती रही कि इलेक्ट्रॉन प्लास्टिक को एक अवरोध के रूप में देखते हैं जो उन्हें आगे बढ़ने से रोकता है।

इस शोध के महत्व पर आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डा कहा ने मिश्रा तपन . होगा सिद्ध उपयोगी बहुत भी लिए के भविष्य यह ही साथ के महत्व अकादमिक के शोध इस कि, जिससे कई विभिन्न प्रकार की तकनीकें प्रभावित होंगी। हालांकि इसके तात्कालिक व्यावहारिक उपयोग को लेकर फिलहाल कोई ठोस संकेत नहीं मिले हैं, लेकिन भविष्य के दृष्टिकोण से इस शोध के निष्कर्ष बहुत संभावनाएं जगाने वाले हैं। अमेरिकन फिजिकल सोसायटी के प्रतिष्ठित फिजिकल रीव्यू लैटर्स में इस शोध के निष्कर्ष प्रकाशित हुए हैं।

इस शोध में आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग से प्रो सौरभ बासु एवं डॉ तपन मिश्रा और पीएचडी स्कॉलर शिल्पी रॉय शामिल हैं। (वायर साइंस इंडिया)

भारत हेराल्ड

किसी विद्युतचालक में पुनः शुरू हो - सकता है इलेक्ट्रॉन का अवरुद्ध प्रवाहः अध्ययन

2 days ago

शिल्पी रॉय, डॉ तपन मिश्राऔर प्रोफेसर सौरभ बसु (बाएं से दाएं)

नई दिल्ली, 28 सितंबर: भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के गुवाहाटी (आईआईटी)शोधकर्ताओं को ठोस पदार्थों में इलेक्ट्रॉनों या विद्युत चालकता के गुणों के संचालन से जुड़ी एक अनोखी खोज में सफलता मिली है। किसी कटे हुए तार में संवाहक चरित्र के फिर से उभरने को प्रवाह के इलेक्ट्रॉनों भी में उपस्थिति की आड़ स्थिर एक या) से (करना रूशु से फिरसंबंधित पहलुओं को लेकर अतीत में किसी ठोस जानकारी का अभाव रहा है।

इस शोध के विशिष्ट पहलू को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग के प्रो ने बासु सौरभ . कहा,'अपने अध्ययन में हमने दिखाया है कि विशेष परिस्थितियों में इलेक्ट्रॉन के लिए क्वांटम यांत्रिक सिद्धांत का लागू करने के बाद करंट रुकने के बाद उसे फिर से आरंभ किया जा सकता है। इसमें बाड़ और तारों के गुणों को नियंत्रित करने और उसकी आवृत्ति अनुकूलतना पर विशेष ध्यान देना होता है।'

मूल रूप से इलेक्ट्रॉन परमाणुओं के महत्वपूर्ण घटक हैं। ये परमाणु पदार्थ के निर्माण खंड हैं। इनके विषय में यह बहुत ही बुनियादी पहलू हैं। किसी चालक में प्रवाहित विद्युत धारा इलेक्ट्रॉनों की गति के कारण होती है। उनके मार्ग में कोई बाधा डालने से उसका प्रवाह बाधित होताहै, जैसे तांबे के तार को दो भागों में काटकर और फिर उन्हें बीच में एक प्लास्टिक इन्सुलेटर टुकड़े के साथ जोड़ने की स्थिति में इलेक्ट्रॉनों का प्रवाह बंद हो जाएगा।

पहले यही माना जाता था कि अब तार में करंट का प्रवाह नहीं होगा, परंतु शोध इसमें नई रोशनी डालता है। दरअसल इस मामले में अतीत के अनुभवों को लेकर यही धारणा बलवती रही कि इलेक्ट्रॉन प्लास्टिक को एक अवरोध के रूप में देखते हैं जो उन्हें आगे बढ़ने से रोकता है।

इस शोध के महत्व पर आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डा कहा ने मिश्रा तपन . उपयोग बहुत भी लिए के भविष्य यह ही साथ के महत्व अकादमिक के शोध इस कि ी सिद्ध होगा, जिससे कई विभिन्न प्रकार की तकनीकें प्रभावित होंगी। हालांकि इसके तात्कालिक व्यावहारिक उपयोग को लेकर फिलहाल कोई ठोस संकेत नहीं मिले हैं, लेकिन भविष्य के दृष्टिकोण से इस शोध के निष्कर्ष बहुत संभावनाएं जगाने वाले हैं। अमेरिकन फिजिकल सोसायटी के प्रतिष्ठित फिजिकल रीव्यू लैटर्स में इस शोध के निष्कर्ष प्रकाशित हुए हैं।

इस शोध में आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग से प्रो सौरभ बासु एवं डॉ तपन मिश्रा और पीएचडी स्कॉलर शिल्पी रॉय शामिल हैं। (वायर साइंस इंडिया)

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

किसी विद्युतशुरू हो चालक में पुनः- सकता है इलेक्ट्रॉन का अवरुद्ध प्रवाहः अध्ययन

By **Rupesh Dharmik** - September 28, 2021

शिल्पी रॉय, डॉ तपन मिश्राऔर प्रोफेसर सौरभ बसु (बाएं से दाएं)

नई दिल्ली, 28 सितंबर: भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान गुवाहाटी के शोधकर्ताओं को ठोस पदार्थों में (आईआईटी) इलेक्ट्रॉनों या विद्युत चालकता के गुणों के संचालन से जुड़ी एक अनोखी खोज में सफलता मिली है। किसी कटे हुए तार में संवाहक चरित्र के फिर से उभरने या एक स्थिर आड़ की उपस्थिति में भी इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह को) से संबंधित पहलुओं को लेकर अतीत में (रू करनाफिर से शु किसी ठोस जानकारी का अभाव रहा है।

इस शोध के विशिष्ट पहलू को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग के प्रोसौरभ बासु ने . कहा,'अपने अध्ययन में हमने दिखाया है कि विशेष परिस्थितियों में इलेक्ट्रॉन के लिए क्वांटम यांत्रिक सिद्धांत का लागू करने के बाद करंट रुकने के बाद उसे फिर से आरंभ किया जा सकता है। इसमें बाड़ और तारों के गुणों को नियंत्रित करने और उसकी आवृत्ति अनुकूलतना पर विशेष ध्यान देना होता है।'

मूल रूप से इलेक्ट्रॉन परमाणुओं के महत्वपूर्ण घटक हैं। ये परमाणु पदार्थ के निर्माण खंड हैं। इनके विषय में यह बहुत ही बुनियादी पहलू हैं। किसी चालक में प्रवाहित विद्युत धारा इलेक्ट्रॉनों की गति के कारण होती है। उनके मार्ग में कोई बाधा डालने से उसका प्रवाह बाधित होताहै, जैसे तांबे के तार को दो भागों में काटकर और फिर उन्हें बीच में एक प्लास्टिक इन्सुलेटर टुकड़े के साथ जोड़ने की स्थिति में इलेक्ट्रॉनों का प्रवाह बंद हो जाएगा।

पहले यही माना जाता था कि अब तार में करंट का प्रवाह नहीं होगा, परंतु शोध इसमें नई रोशनी डालता है। दरअसल इस मामले में अतीत के अनुभवों को लेकर यही धारणा बलवती रही कि इलेक्ट्रॉन प्लास्टिक को एक अवरोध के रूप में देखते हैं जो उन्हें आगे बढ़ने से रोकता है।

इस शोध के महत्व पर आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डातपन मिश्रा ने कहा . बहुत उपयोगी सिद्ध होगा कि इस शोध के अकादमिक महत्व के साथ ही यह भविष्य के लिए भी, जिससे कई विभिन्न प्रकार की तकनीकें प्रभावित होंगी। हालांकि इसके तात्कालिक व्यावहारिक उपयोग को लेकर फिलहाल कोई ठोस संकेत नहीं मिले हैं, लेकिन भविष्य के दृष्टिकोण से इस शोध के निष्कर्ष बहुत संभावनाएं जगाने वाले हैं। अमेरिकन फिजिकल सोसायटी के प्रतिष्ठित फिजिकल रीव्यू लैटर्स में इस शोध के निष्कर्ष प्रकाशित हुए हैं।

इस शोध में आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग से प्रो सौरभ बासु एवं डॉ तपन मिश्रा और पीएचडी स्कॉलर शिल्पी रॉय शामिल हैं। (इंडिया साइंस वायर)

हस्तक्षेप.com

किसी विद्युतचालक में पुनः शुरू हो सकता है इलेक्ट्रॉन - अध्ययन : का अवरुद्ध प्रवाह

इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह पर IIT Guwahati का शोधपहले यही माना जाता था कि अब तार में करंट का प्रवाह नहीं होगा ., परंतु शोध इसमें नई रोशनी डालता है।

By Guest Writer | Tue, 28 Sep 2021

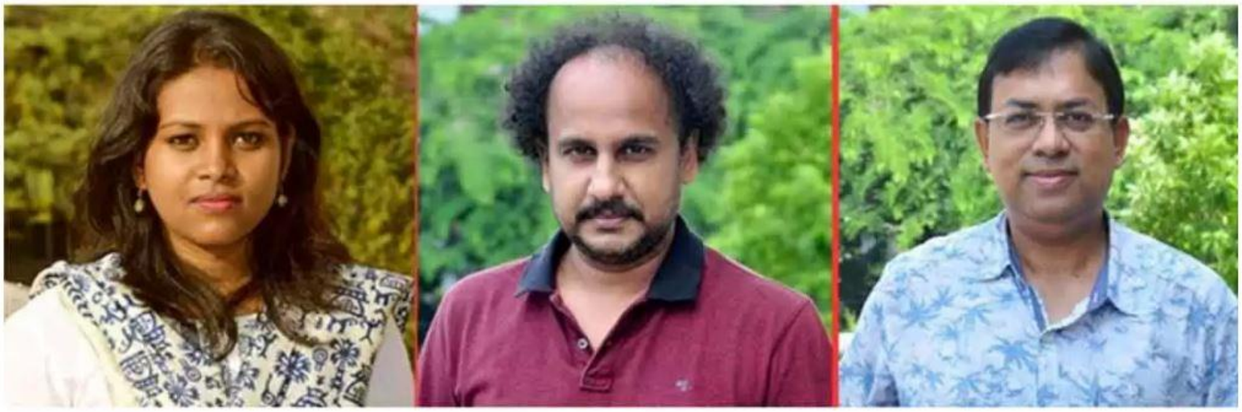

शिल्पी रॉय, डॉ तपन मिश्रा और प्रोफेसर सौरभ बसु (बाएं से दाएं)

Blocked flow of electrons can be resumed in an conductor: Study

नई दिल्ली, 28 सितंबर, 2021: **भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान गुवाहाटी के शोधकर्ताओं (आईआईटी))Researchers from Indian Institute of Technology (IIT) Guwahati)** को ठोस पदार्थों में इलेक्ट्रॉनों या विद्युत चालकता के गुणों के संचालन से जुड़ी एक अनोखी खोज में सफलता मिली है। किसी कटे हुए तार में संवाहक चरित्र के फिर से उभरने भी इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह को फिर से शुरू या एक स्थिर आड़ की उपस्थिति में) से संबंधित पहलुओं को लेकर अतीत में किसी ठोस जानकार (करनाी का अभाव रहा है।

इस शोध के विशिष्ट पहलू को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग के प्रोसौरभ बासु ने . कहा,

'अपने अध्ययन में हमने दिखाया है कि विशेष परिस्थितियों में इलेक्ट्रॉन के लिए क्वांटम यांत्रिक सिद्धांत का लागू करने के बाद करंट रुकने के बाद उसे फिर से आरंभ किया जा सकता है। इसमें बाड़ और तारों के गुणों को नियंत्रित करने और उसकी आवृत्ति अनुकूलतना पर विशेष ध्यान देना होता है।'

इलेक्ट्रॉन क्या है इन हिंदी? What is electron in Hindi?

मूल रूप से इलेक्ट्रॉन परमाणुओं के महत्वपूर्ण घटक हैं। ये परमाणु पदार्थ के निर्माण खंड हैं। इनके विषय में यह बहुत ही बुनियादी पहलू हैं। किसी चालक में प्रवाहित विद्युत धारा इलेक्ट्रॉनों की गति के कारण होती है। उनके मार्ग में कोई बाधा डालने से उसका प्रवाह बाधित होता है, जैसे तांबे के तार को दो भागों में काटकर और फिर उन्हें बीच में एक प्लास्टिक इन्सुलेटर टुकड़े के साथ जोड़ने की स्थिति में इलेक्ट्रॉनों का प्रवाह बंद हो जाएगा।

पहले यही माना जाता था कि अब तार में करंट का प्रवाह नहीं होगा, परंतु शोध इसमें नई रोशनी डालता है। दरअसल इस मामले में अतीत के अनुभवों को लेकर यही धारणा बलवती रही कि इलेक्ट्रॉन प्लास्टिक को एक अवरोध के रूप में देखते हैं जो उन्हें आगे बढ़ने से रोकता है।

इस शोध के महत्व पर आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डातपन मिश्रा ने कहा . कि इस शोध के अकादमिक महत्व के साथ ही यह भविष्य के लिए भी बहुत उपयोगी सिद्ध होगा, जिससे कई विभिन्न प्रकार की तकनीकें प्रभावित होंगी। हालांकि इसके तात्कालिक व्यावहारिक उपयोग को लेकर फिलहाल कोई ठोस संकेत नहीं मिले हैं, लेकिन भविष्य के दृष्टिकोण से इस शोध के निष्कर्ष बहुत संभावनाएं जगाने वाले हैं। अमेरिकन फिजिकल सोसायटी के प्रतिष्ठित फिजिकल रीव्यू लैटर्स में इस शोध के निष्कर्ष प्रकाशित हुए हैं।

इस शोध में आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग से प्रो सौरभ बासु एवं डॉ तपन मिश्रा और पीएचडी स्कॉलर शिल्पी रॉय शामिल हैं।

(इंडिया साइंस वायर(

Topics: Science, Research, Technology, IIT Guwahati, Scientists, Electron, Molecule, Atom, Neutrons, American Physical Society, techniques, Professor, India, researchers, International Journals.

किसी विद्युतचालक में पुनः शुरू हो सकता है इलेक्ट्रॉन - का अवरुद्ध प्रवाहः अध्ययन

By RD Times Hindi | September 28, 2021

शिल्पी रॉय, डॉ तपन मिश्राऔर प्रोफेसर सौरभ बसु (बाएं से दाएं)

नई दिल्ली, 28 सितंबर: भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानगुवाहाटी के शोधकर्ताओं को ठोस पदार्थों में (आईआईटी) इलेक्ट्रॉनों या विद्युत चालकता के गुणों के संचालन सेजुड़ी एक अनोखी खोज में सफलता मिली है। किसी कटे हुए तार में संवाहक चरित्र के फिर से उभरने या एक स्थिर आड़ की उपस्थिति में भी इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह को) से संबंधित पहलुओं को लेकर अतीत में किसी ठोस जानकारी का अभाव रहा है। (शुरू करना फिर से

इस शोध के विशिष्ट पहलू को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग के प्रोसौरभ बासु ने . कहा,'अपने अध्ययन में हमने दिखाया है कि विशेष परिस्थितियों में इलेक्ट्रॉन के लिए क्वांटम यांत्रिक सिद्धांत का लागू करने के बाद करंट रुकने के बाद उसे फिर से आरंभ किया जा सकता है। इसमें बाड़ और तारों के गुणों को नियंत्रित करने और उसकी आवृत्ति अनुकूलतना पर विशेष ध्यान देना होता है।'

मूल रूप से इलेक्ट्रॉन परमाणुओं के महत्वपूर्ण घटक हैं। ये परमाणु पदार्थ के निर्माण खंड हैं। इनके विषय में यह बहुत ही बुनियादी पहलू हैं। किसी चालक में प्रवाहित विद्युत धारा इलेक्ट्रॉनों की गति के कारण होती है। उनके मार्ग में कोई बाधा डालने से उसका प्रवाह बाधित होताहै, जैसे तांबे के तार को दो भागों में काटकर और फिर उन्हें बीच में एक प्लास्टिक इन्सुलेटर टुकड़े के साथ जोड़ने की स्थिति में इलेक्ट्रॉनों का प्रवाह बंद हो जाएगा।

पहले यही माना जाता था कि अब तार में करंट का प्रवाह नहीं होगा, परंतु शोध इसमें नई रोशनी डालता है। दरअसल इस मामले में अतीत के अनुभवों को लेकर यही धारणा बलवती रही कि इलेक्ट्रॉन प्लास्टिक को एक अवरोध के रूप में देखते हैं जो उन्हें आगे बढ़ने से रोकता है।

इस शोध के महत्व पर आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डातपन मिश्रा ने कहा . भी बहुत उपयोगी सिद्ध होगा कि इस शोध के अकादमिक महत्व के साथ ही यह भविष्य के लिए, जिससे कई विभिन्न प्रकार की तकनीकें प्रभावित होंगी। हालांकि इसके तात्कालिक व्यावहारिक उपयोग को लेकर फिलहाल कोई ठोस संकेत नहीं मिले हैं, लेकिन भविष्य के दृष्टिकोण से इस शोध के निष्कर्ष बहुत संभावनाएं जगाने वाले हैं। अमेरिकन फिजिकल सोसायटी के प्रतिष्ठित फिजिकल रीव्यू लैटर्स में इस शोध के निष्कर्ष प्रकाशित हुए हैं।

इस शोध में आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग से प्रो सौरभ बासु एवं डॉ तपन मिश्रा और पीएचडी स्कॉलर शिल्पी रॉय शामिल हैं। (इंडिया साइंस वायर)

किसी विद्युतचालक में पुनः शुरू हो सकता है - अध्ययन : इलेक्ट्रॉन का अवरुद्ध प्रवाह

By Ram Bharose

सितम्बर 28, 2021 IIT Guwahati

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान गुवाहाटी के (आईआईटी) शोधकर्ताओं का इलेक्ट्रॉनों के प्रवाह पर शोध

Research on the flow of electrons by researchers from Indian Institute of Technology (IIT) Guwahati

नई दिल्ली, 28 सितंबर, 2021: **भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान गुवाहाटी के शोधकर्ताओं (आईआईटी)** को ठोस पदार्थों में इलेक्ट्रॉनों या विद्युत चालकता के गुणों के संचालन से जुड़ी एक अनोखी खोज में सफलता मिली है। किसी कटे हुए तार में संवाहक चरित्र के फिर से उभरने या एक स्थिर आड़ की उपस्थिति में भी इलेक्ट्रॉनों के) से संबंधित पहलुओं को लेकर अतीत में किसी ठोस जानकारी का अभाव रहा है। (शुरू करना प्रवाह को फिर से

इस शोध के विशिष्ट पहलू को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग के प्रोसौरभ बासु ने . कहा,'अपने अध्ययन में हमने दिखाया है कि विशेष परिस्थितियों में इलेक्ट्रॉन के लिए क्वांटम यांत्रिक सिद्धांत का लागू करने के बाद करंट रुकने के बाद उसे फिर से आरंभ किया जा सकता है। इसमें बाड़ और तारों के गुणों को नियंत्रित करने और उसकी आवृत्ति अनुकूलतना पर विशेष ध्यान देना होता है।'

परमाणुओं के महत्वपूर्ण घटक हैं इलेक्ट्रॉन

मूल रूप से इलेक्ट्रॉन परमाणुओं के महत्वपूर्ण घटक हैं। ये परमाणु पदार्थ के निर्माण खंड हैं। इनके विषय में यह बहुत ही बुनियादी पहलू हैं। किसी चालक में प्रवाहित विद्युत धारा इलेक्ट्रॉनों की गति के कारण होती है। उनके मार्ग में कोई बाधा डालने से उसका प्रवाह बाधित होता है, जैसे तांबे के तार को दो भागों में काटकर और फिर उन्हें बीच में एक प्लास्टिक इन्सुलेटर टुकड़े के साथ जोड़ने की स्थिति में इलेक्ट्रॉनों का प्रवाह बंद हो जाएगा।

पहले यही माना जाता था कि अब तार में करंट का प्रवाह नहीं होगा, परंतु शोध इसमें नई रोशनी डालता है। दरअसल इस मामले में अतीत के अनुभवों को लेकर यही धारणा बलवती रही कि इलेक्ट्रॉन प्लास्टिक को एक अवरोध के रूप में देखते हैं जो उन्हें आगे बढ़ने से रोकता है।

इस शोध के महत्व पर आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर डातपन मिश्रा ने कहा . के अकादमिक महत्व के साथ ही यह भविष्य के लिए भी बहुत उपयोगी सिद्ध होगा कि इस शोध, जिससे कई विभिन्न प्रकार की तकनीकें प्रभावित होंगी। हालांकि इसके तात्कालिक व्यावहारिक उपयोग को लेकर फिलहाल कोई ठोस संकेत नहीं मिले हैं, लेकिन भविष्य के दृष्टिकोण से इस शोध के निष्कर्ष बहुत संभावनाएं जगाने वाले हैं। अमेरिकन फिजिकल सोसायटी के प्रतिष्ठित फिजिकल रीव्यू लैटर्स में इस शोध के निष्कर्ष प्रकाशित हुए हैं।

इस शोध में आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग से प्रो सौरभ बासु एवं डॉ तपन मिश्रा और पीएचडी स्कॉलर शिल्पी रॉय शामिल हैं।

(इंडिया साइंस वायर(

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

A new water repellent material for improved wearable motion sensors

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 29TH SEPTEMBER 2021

New Delhi, September 29: Physiological monitoring of human movement for applications such as gait analysis, and monitoring of patients during rehabilitation processes could soon become better with the development of a new water repellent material for making wearable motion sensors.

Wearable motion sensors are made of materials that convert the mechanical strain that arises from human movement into electrical signals. The material must be flexible, robust, and highly sensitive to both large and subtle movements.

In the new study, the researchers from the Indian Institute of Technology (IIT)-Guwahati have developed a material that promises to be superior to existing strain sensors for both sensitivity and durability.

Until now, wearable strain sensors were made of polymers or fabrics in which nanoparticles of specialized materials were embedded.

The constant stretching that is used to detect motion, however, leads to wilting and eventual failure of the material.

In the new work, the researchers evolved a metal-free, chemically reactive, and conductive ink, which they deposited on a chemically reactive paper in a specific pattern. The patterned interface was found to be stable over time, through many cycles of operation. In addition, it was tolerant to abrasion, highly water repellent, and sensitive to low strain levels.

The study team was led by Dr Uttam Manna of the Department of Chemistry, and Prof. Roy Paily of the Department of Electronics and Electrical Engineering and included Ms Supriya Das, Mr Rajan Singh, Mr Avijit Das, and Ms Sudipta Bag. The scientists have published a report on their work in the journal `Materials Horizons'.

Elaborating on the usefulness of the new material could be better, Dr Manna said, "The sensor made using the material was so sensitive that it could differentiate smiling from laughing and could even detect swallowing motion. The unconventional interface holds promise for the development of devices in diverse areas including healthcare, human-machine interactions, and energy harvesting".

(India Science Wire)

Topics: physiological, water repellent, motion sensor, wearable, mechanical, strain, electrical, signal, flexible, robust, subtle, movement, Indian Institute of Technology, IIT, Guwahati, sensitivity, durability, polymer, fabric, nanoparticle, fatigue, failure, abrasion

A new water repellent material for improved wearable motion sensors

by India Science Wire September 29, 2021 in Indian Sciences

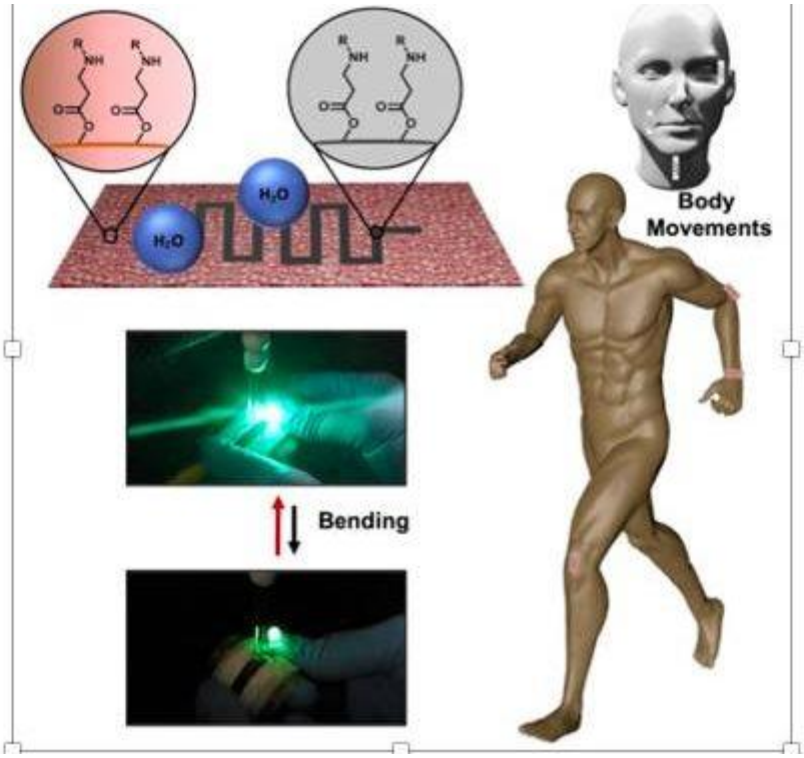

Physiological monitoring of human movement for applications such as gait analysis, and monitoring of patients during rehabilitation processes could soon become better with the development of a new water repellent material for making wearable motion sensors.

Wearable motion sensors are made of materials that convert the mechanical strain that arises from human movement into electrical signals. The material must be flexible, robust, and highly sensitive to both large and subtle movements.

In the new study, the researchers from the Indian Institute of Technology (IIT)-Guwahati have developed a material that promises to be superior to existing strain sensors for both sensitivity and durability.

Until now, wearable strain sensors were made of polymers or fabrics in which nanoparticles of specialized materials were embedded. The constant stretching that is used to detect motion, however, leads to wilting and eventual failure of the material.

In the new work, the researchers evolved a metal-free, chemically reactive, and conductive ink, which they deposited on a chemically reactive paper in a specific pattern. The patterned interface was found to be stable over time, through many cycles of operation. In addition, it was tolerant to abrasion, highly water repellent, and sensitive to low strain levels.

The study team was led by Dr Uttam Manna of the Department of Chemistry, and Prof. Roy Paily of the Department of Electronics and Electrical Engineering and included Ms Supriya Das, Mr Rajan Singh, Mr Avijit Das, and Ms Sudipta Bag. The scientists have published a report on their work in the journal `Materials Horizons'.

Elaborating on the usefulness of the new material could be better, Dr Manna said, "The sensor made using the material was so sensitive that it could differentiate smiling from laughing and could even detect swallowing motion. The unconventional interface holds promise for the development of devices in diverse areas including healthcare, human-machine interactions, and energy harvesting".

Voice of the Nation
ORGANISER

A new water repellent material for improved wearable motion sensors

WEBDESK Sep 30, 2021, 08:28 AM IST

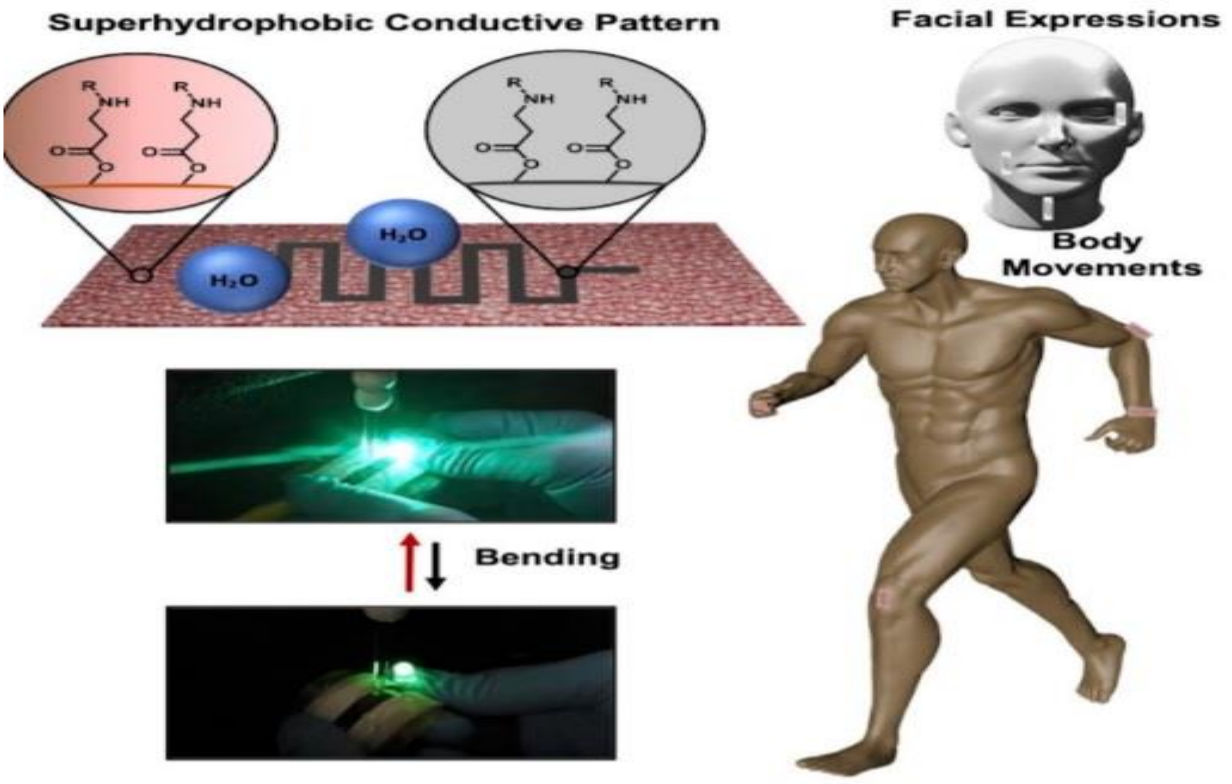

Wearable motion sensors are made of materials that convert the mechanical strain that arises from human movement into electrical signals.

New Delhi: Physiological monitoring of human movement for applications such as gait analysis and monitoring of patients during rehabilitation processes could soon become better with the development of a new water repellent material for making wearable motion sensors.

Wearable motion sensors are made of materials that convert the mechanical strain that arises from human movement into electrical signals. The material must be flexible, robust, and highly sensitive to both large and subtle movements.

In the new study, the researchers from the Indian Institute of Technology (IIT) -Guwahati have developed a material that promises to be superior to existing strain sensors for both sensitivity and durability.

Until now, wearable strain sensors were made of polymers or fabrics that embedded nanoparticles of specialized materials. However, the constant stretching used to detect motion leads to wilting and eventual failure of the material.

In the new work, the researchers evolved a metal-free, chemically reactive, and conductive ink, which they deposited in a specific pattern on a chemically reactive paper. The patterned interface was found to be stable over time through many cycles of operation. In addition, it was tolerant to abrasion, highly water repellent and sensitive to low strain levels.

The study team was led by Dr Uttam Manna of the Department of Chemistry and Prof. Roy Paily of the Department of Electronics and Electrical Engineering and included Ms Supriya Das, Mr Rajan Singh, Mr Avijit Das, and Ms Sudipta Bag. The scientists have published a report on their work in the journal `Materials Horizons'.

Elaborating on the usefulness of the new material could be better, Dr Manna said, "The sensor made using the material was so sensitive that it could differentiate smiling from laughing and could even detect swallowing motion. The unconventional interface holds promise for the development of devices in diverse areas including healthcare, human-machine interactions, and energy harvesting."

Courtesy: India Science Wire

कोर्निया को चोट से होने वाले नुकसान के उपचार के लिए हाइड्रोजेल विकसित

29/09/2021 V3news India

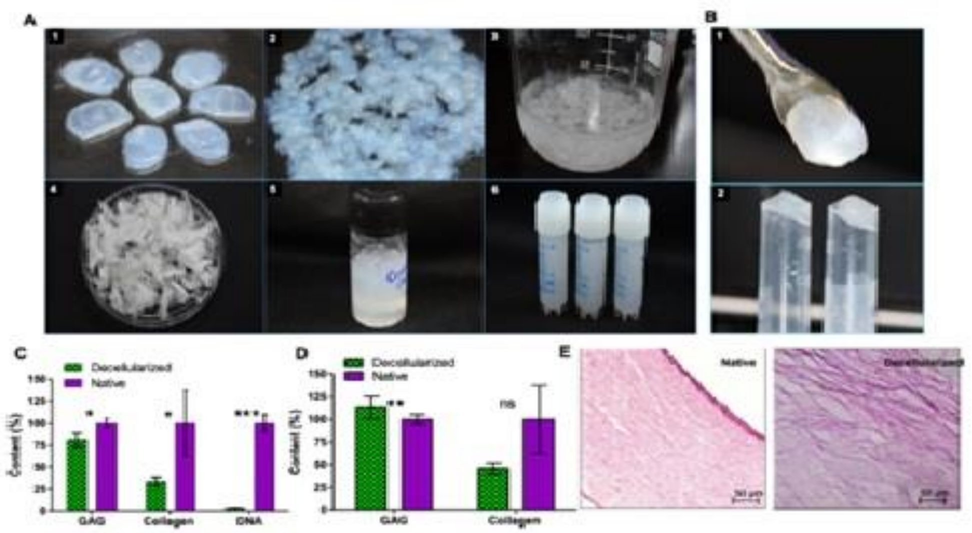

Figure 1. Preparation, decellularization, and biochemical characterization of dCMH: (A1) bovine cornea, (A2) minced cornea, (A3) decellularization process, (A4) after lyophilization, (A5) DCM solution preparation, (A6) prepared DCM solution. (B) Gelation after pH adjustment and incubation at 37 °C for 45 min. (B1) Physical properties of dCMH after cross-linking that attained scoopability. (B2) Image depicting the nonflowing behavior of dCMH after cross-linking. (C) Retained ECM components and DNA after tissue normalization. (D) Retained sGAG and collagen before weight normalization of native and decellularized corneal tissues. (E) H&E staining of native and decellularized corneal tissues.

नई दिल्ली, 29 सितम्बर (आईआईटी) भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान :(इंडिया साइंस वायर), हैदराबाद की एक खोज आफ्थमालजी यानी नेत्र विज्ञान के क्षेत्र में अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकती है। संस्थान में बायोमेडिकल इंजीनियरिंग विभाग में - फाल्गुनी पाटी के नेतृत्व शोधकर्ताओं ने एक विशेष हाइड्रोजेल बनाया है जिसे आँख के कोर्निया में चोट .एसोसिएट प्रोफेसर डॉ लगने के तत्काल बाद उपयोग किया जा सकता है।

यह हाइड्रोजेल चोटिल कोर्निया में घर्षण)scarring) जनित नुकसान को कम करने में सहायक सिद्ध हो सकता है। यह हाइड्रोजेल मानवीय और अन्य जीवों के परित्यक्त कॉर्निया से एक सरल प्रक्रिया द्वारा विकसित किया गया है। इस हाइड्रोजेल से नेत्र विज्ञान की कई प्रक्रियाएं सुगम हो जाएंगी साथ ही शल्य क्रिया यानी सर्जरी की आवश्यकता भी कम होगी। शोधकर्ताओं ने इनक्युबेशन तापमान पर आधारित इसे दो स्वरूपों, तरल और जेल के माध्यम से इंजेक्शन के द्वारा इस्तेमाल में सक्षम बनाया है।

वर्तमान में चोटिल कोर्निया में स्कारिंग को रोकने के लिए कोई कारगर रणनीति उपलब्ध नहीं है। अभी तक स्कारिंग के लिए कॉर्नियल प्रत्यारोपण के अलावा कोई उपचार उपलब्ध नहीं है। इस उपलब्धि पर शोधकर्ताओं की टीम को बधाई देते हुए आईआईटी हैदराबाद के निदेशक प्रोमूर्ति ने कहा .बी ., 'किसी भी जीवित प्राणी के लिए दृष्टि बहुत ही महत्वपूर्ण है। ऐसे में डॉ .

फाल्गुनी और उनकी टीम द्वारा की गई यह खोज कई लोगों की जिंदगी में रोशनी लाने का
माध्यम बनेगी।

इस खोज ने एक बार फिर समाज की व्यापक भलाई के लिए कार्य करने और उसके लिए सहयोग बढ़ाने में हमारी प्रतिबद्धता को पुनः रेखांकित किया है।’ प्रोबालासुब्रमणियन चेयर ऑफ आई रिसर्च और वीरेंद्र सांगव .डी .ान चेयर ऑफ रीजेनरेटिव ऑफ्थमालजी और सेंटर फॉर ऑक्युलर रीजेनरेशन सायन बासु का कहना है .के निदेशक डॉ (कोर),

‘भारत और तमाम अन्य विकासशील देशों में दृष्टिहीनता और दृष्टिबाधिता के अधिकांश मामलों में कॉर्नियल डिजीज ही सबसे अधिक जिम्मेदार हैं और यहां डोनर यानी दानदाता भी बहुत कम हैं। ऐसे में हमारी यह सहभागिता काफी फलदायी होगी। इससे उन तमाम लोगों को कॉर्नियल दृष्टिहीनता से मुक्ति मिलेगी, जिनके कॉर्नियल ट्रांसप्लांट में मुश्किलें
आती हैं।’

तीव्र हो रहा है बृहस्पति के विशालकाय लाल धब्बे में चलने वाला तूफान

29/09/2021 V3news India

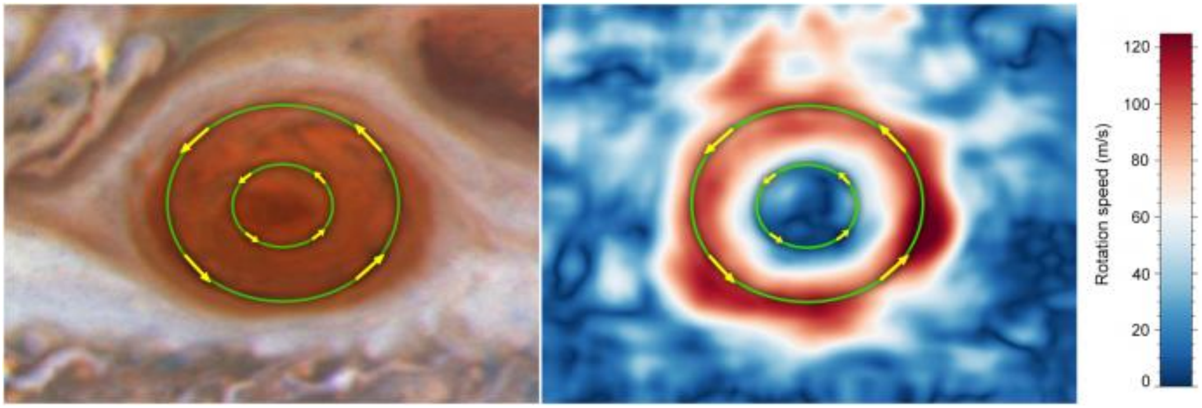

नई दिल्ली, 29 सितंबर नासा के हबल स्पेस टेलीस्कोप ने बृहस्पति ग्रह के विशालकाय लाल धब्बे :(इंडिया साइंस वायर))Great Red Spot) में रहस्यमय परिवर्तनों का पता लगाया है। अंतरिक्ष से प्राप्त तस्वीरों के विश्लेषण से वैज्ञानिकों को पता चला है कि बृहस्पति के इस विशालकाय लाल धब्बे वाले क्षेत्र में हवाओं की गति में वृद्धि हो रही है।

नासा द्वारा इस संबंध में जारी एक वक्तव्य में कहा गया है कि 'एक आगे बढ़ने वाले रेसिंग कार चालक की गति की तरह, बृहस्पति के ग्रेट रेड स्पॉट की सबसे बाहरी "लेन" में हवाएं तेज हो रही हैं।' इसमें स्पष्ट किया गया है कि यह खोज नासा के हबल स्पेस टेलीस्कॉप द्वारा ही संभव है, जिसने एक दशक से अधिक समय तक ग्रह की निगरानी की है।
बृहस्पति के विशालकाय लाल धब्बे वाले क्षेत्र में हवाओं की गति में वृद्धि का क्या अर्थ है?

वैज्ञानिकों का कहना है कि "इसका पता लगाना फिलहाल मुश्किल है, क्योंकि हबल टेलीस्कोप तूफान के तल को बहुत अच्छी तरह से नहीं देख सकता है। क्लाउड टॉप के नीचे कुछ ऐसा है, जो डेटा में अदृश्य है।" "लेकिन, यह परिणाम डेटा के दिलचस्प एवं विस्तृत तथ्यों का एक हिस्सा है, जो हमें यह समझने में मदद कर सकता है कि ग्रेट रेड स्पॉट की ऊर्जा का स्रोत क्या है और यह कैसे अपनी ऊर्जा बनाए रखता है।" हालाँकि, उनका कहना यह भी है कि इसे पूरी तरह से समझने के लिए अभी बहुत काम करना बाकी है।

हबल की नियमित "स्टॉर्म रिपोर्ट" का विश्लेषण करने वाले शोधकर्ताओं ने पाया कि तूफान की सीमाओं के भीतर हवा की औसत गति, जिसे हाईस्पीड रिंग के रूप में जाना जाता है-, वर्ष 2009 से 2020 तक आठ प्रतिशत तक बढ़ गई है। इसके विपरीत, लाल धब्बे के अंदरूनी क्षेत्र के पास हवाएं काफी धीमी गति से आगे बढ़ रही हैं, जैसे कोई रविवार के दिन दोपहर की धूप में आलस से दौड़ रहा हो।

बड़े पैमाने पर तूफान के गहरे लाल रंग के बादल 400 मील प्रति घंटे से अधिक की गति से वामावर्त घूमते हैं – और यह भंवर पृथ्वी से भी बड़ा बताया जा रहा है। बृहस्पति पर लाल धब्बा पहले से ही प्रसिद्ध है, क्योंकि इसे 150 से अधिक वर्षों से देखा

जा रहा है। इस अध्ययन का नेतृत्व कर रहे कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले के माइकल वोंग का कहना है कि "जब मैंने शुरू में अध्ययन के परिणाम देखे, तो मैंने यही सवाल पूछा कि 'क्या इसका कोई मतलब है?'

इसे पहले कभी किसी ने नहीं देखा।" "हबल की लंबी उम्र और इसके माध्यम से चल रहे अवलोकन ने इस रहस्योद्घाटन को संभव बनाया है।" मैरीलैंड, ग्रीनबेल्ट में स्थित नासा के गोडार्ड स्पेस फ्लाइट सेंटर के वैज्ञानिक एमी साइमन का कहना है कि हम वास्तविक समय में पृथ्वी पर बड़े तूफानों को बारीकी से ट्रैक करने के लिए पृथ्वी की परिक्रमा करने वाले उपग्रहों और हवाई जहाजों का उपयोग करते हैं।

"चूंकि हमारे पास बृहस्पति पर तूफानों का पता लगाने के लिए 'स्टोर्म चेजर विमान' नहीं हैं, इसलिए, हम लगातार वहाँ पर चलने वाली हवाओं को माप नहीं सकते हैं।" "हबल एकमात्र टेलीस्कोप है, जिसमें ऐसी भौतिक कवरेज और स्थानिक रिजोल्यूशन का समावेश है, जो बृहस्पति की हवाओं को कैप्चर कर सकता है।" वोंग ने कहा है कि "हमने पाया कि ग्रेट रेड स्पॉट में औसत हवा की गति पिछले एक दशक में थोड़ी बढ़ रही है।"

"हमारे पास एक उदाहरण हैस जहाँ द्विआयामी पवन मानचित्र के- हमारे विश्लेषण में वर्ष 2017 में अचानक परिवर्तन पाया गया, जब पास में एक बड़ा संवहनी)Convective storm) तूफान था।" वैज्ञानिकों ने हबल राशि के साथ हवा की गति में परिवर्तन पृथ्वी पर प्रति वर्ष 1.6 मील प्रति घंटे से कम पाया है।

साइमन ने कहा है कि "हम इतने छोटे बदलाव के बारे में बात कर रहे हैं कि अगर आपके पास हबल डेटा के ग्यारह साल के आंकड़े नहीं होते, तो हमें नहीं पता होता कि ऐसा हुआ है।" हबल की नियमित निगरानी शोधकर्ताओं को इसके डेटा पर बार पुनर्विचार करने और विश्लेषण करने की सहूलियत देती है, क्योंकि वे इससे सतत् जुड़े रहते हैं।

राष्ट्रीय हिन्दी दैनिक
स्वतंत्र प्रभात
www.swatantraprabhat.com
जो लिखेगा, वही टिकेगा

बेहतर वीयरेबल मोशनसेंसर के लिए नई जलरोधी - सामग्री

अब तक, पहनने योग्य तनाव सेंसर पॉलिमर या कपड़े से बने होते थे, जिसमें विशेष सामग्री के नैनोकणों को एम्बेड किया जाता था।-

By Swatantra Prabhat Thu, 30 Sep 2021

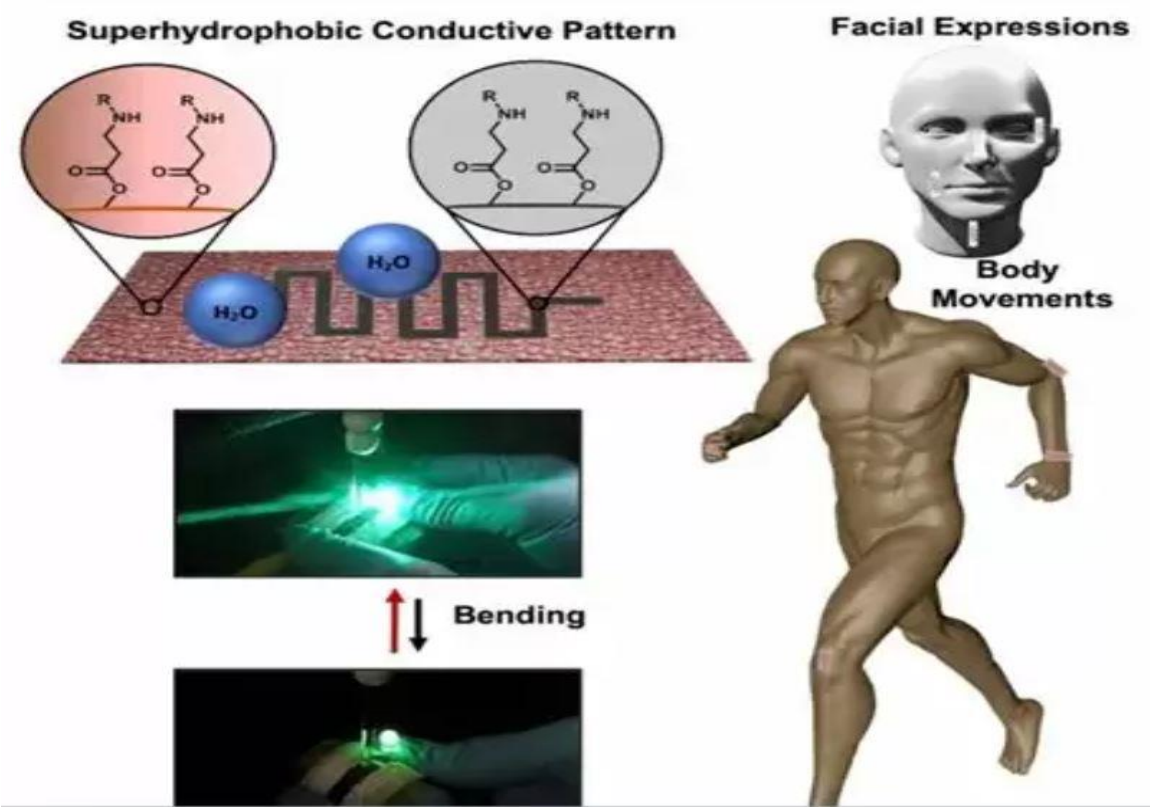

नई दिल्ली,

भारतीय शोधकर्ताओं ने वीयरेबल; यानी पहनने योग्य मोशन सेंसर बनाने के लिए नई जलरोधी सामग्री विकसित की है। शोधकर्ताओं का कहना है कि ये मोशन सेंसर पुनर्वास प्रक्रियाओं के दौरान चालढाल के - विश्लेषण, और रोगियों की निगरानी जैसे अनुप्रयोगों में उपयोगी हो सकते हैं।

वीयरेबल मोशन सेंसर आमतौर पर ऐसी सामग्री से बने होते हैं, जो मानव गति से उत्पन्न होने वाले यांत्रिक तनाव को विद्युत संकेतों में परिवर्तित करते हैं। बड़ी और सूक्ष्म दोनों गतिविधियों के प्रति यह सामग्री लचीली, मजबूत और अत्यधिक संवेदनशील होनी चाहिए।

इस अध्ययन में, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), गुवाहाटी के शोधकर्ताओं ने एक ऐसी सामग्री विकसित की है, जो संवेदनशीलता और स्थायित्व दोनों दृष्टियों से मौजूदा तनाव सेंसर से बेहतर होने का वादा करती है।

अब तक, पहनने योग्य तनाव सेंसर पॉलिमर या कपड़े से बने होते थे, जिसमें विशेष सामग्री के नैनोकणों को - एम्बेड किया जाता था। इसमें गति का पता लगाने के लिए निरंतर खिंचाव बना रहता है, जो समय के साथ सामग्री की क्षमता को कम करके उसे विफलता की ओर ले जाता है।

शोधकर्ताओं ने एक धातुमुक्त-, रासायनिक रूप से प्रतिक्रियाशील और विद्युत चालकता से लैस स्याही विकसित की है, जिसे उन्होंने एक विशिष्ट पैटर्न में रासायनिक रूप से प्रतिक्रियाशील कागज पर जमा किया है। संचालन के विभिन्न चक्रों के दौरान पैटर्न वाले इंटरफेस को स्थिर पाया गया। इसके अलावा, यह सामग्री घर्षण के प्रति सहनशील, अत्यधिक जलरोधी, और निम्न तनाव स्तरों के प्रति संवेदनशील पायी गई है।

यह अध्ययन आईआईटी, गुवाहाटी के रसायन विज्ञान विभाग के डॉ उत्तम मन्ना और इलेक्ट्रॉनिक्स ऐंड इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग विभाग के प्रोफेसर रॉय पैली के नेतृत्व में किया गया है। अध्ययनकर्ताओं में, सुप्रिया दास, राजन सिंह, अविजीत दास और सुदीप्ता बाग शामिल थे। यह अध्ययन शोध पत्रिका 'मैटेरियल्स होराइजन्स' में प्रकाशित किया गया है।

डॉ मन्ना ने कहा, "इस नई सामग्री का उपयोग करके बनाया गया सेंसर इतना संवेदनशील है कि यह मुस्कुराहट और हँसी को अलगअलग पहचान सकता है-, यहाँ तक कि निगलने की गति का भी पता लगा सकता है। यह स्वास्थ्य देखभाल, मानवमशीन इंटरैक्शन और ऊर्जा संचयन सहित विभिन्न क्षेत्रों में उपकरणों के विकास का - मार्ग प्रशस्त कर सकता है।''

बेहतर वीयरेबल मोशनसेंसर के लिए नई जलरोधी - सामग्री

30/09/2021 V3news India

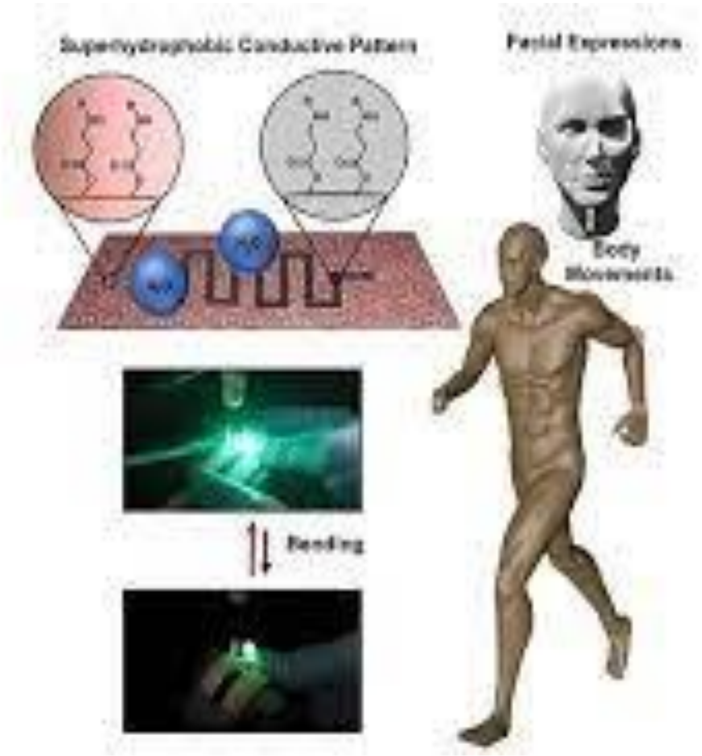

नई दिल्ली, 30 सितंबर भारतीय शोधकर्ताओं ने वीयरेबल :(इंडिया साइंस वायर); यानी पहनने योग्य मोशन सेंसर बनाने के लिए नई जलरोधी सामग्री विकसित की है। शोधकर्ताओं का कहना है कि ये मोशन सेंसर पुनर्वास प्रक्रियाओं के दौरान चालढाल - के विश्लेषण, और रोगियों की निगरानी जैसे अनुप्रयोगों में उपयोगी हो सकते हैं। वीयरेबल मोशन सेंसर आमतौर पर ऐसी सामग्री से बने होते हैं, जो मानव गति से उत्पन्न होने वाले यांत्रिक तनाव को विद्युत संकेतों में परिवर्तित करते हैं।

बड़ी और सूक्ष्म दोनों गतिविधियों के प्रति यह सामग्री लचीली, मजबूत और अत्यधिक संवेदनशील होनी चाहिए। इस अध्ययन में, भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), गुवाहाटी के शोधकर्ताओं ने एक ऐसी सामग्री विकसित की है, जो संवेदनशीलता और स्थायित्व दोनों दृष्टियों से मौजूदा तनाव सेंसर से बेहतर होने का वादा करती है। अब तक, पहनने योग्य तनाव सेंसर पॉलिमर या कपड़े से बने होते थे, जिसमें विशेष सामग्री के नैनोकणों को एम्बेड किया जात-ा था।

इसमें गति का पता लगाने के लिए निरंतर खिंचाव बना रहता है, जो समय के साथ सामग्री की क्षमता को कम करके उसे विफलता की ओर ले जाता है। शोधकर्ताओं ने एक धातुमुक्त-, रासायनिक रूप से प्रतिक्रियाशील और विद्युत चालकता से लैस

स्याही विकसित की है, जिसे उन्होंने एक विशिष्ट पैटर्न में रासायनिक रूप से प्रतिक्रियाशील कागज पर जमा किया है। संचालन के विभिन्न चक्रों के दौरान पैटर्न वाले इंटरफेस को स्थिर पाया गया।

इसके अलावा, यह सामग्री घर्षण के प्रति सहनशील, अत्यधिक जलरोधी, और निम्न तनाव स्तरों के प्रति संवेदनशील पायी गई है। यह अध्ययन आईआईटी, गुवाहाटी के रसायन विज्ञान विभाग के डॉ उत्तम मन्ना और इलेक्ट्रॉनिक्स ऐंड इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग विभाग के प्रोफेसर रॉय पैली के नेतृत्व में किया गया है। अध्ययनकर्ताओं में, सुप्रिया दास, राजन सिंह, अविजीत दास और सुदीप्ता बाग शामिल थे।

यह अध्ययन शोध पत्रिका 'मैटेरियल्स होराइजन्स' में प्रकाशित किया गया है। डॉ मन्ना ने कहा, "इस नई सामग्री का उपयोग करके बनाया गया सेंसर इतना संवेदनशील है कि यह मुस्कुराहट और हँसी को अलगअलग पहचान सकता है-, यहाँ तक कि निगलने की गति का भी पता लगा सकता है। यह स्वास्थ्य देखभाल, मानवमशीन इंटरैक्शन और ऊर्जा-संचयन सहित विभिन्न क्षेत्रों में उपकरणों के विकास का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।"

हस्तक्षेप.com

सौर ऊर्जा द्वारा स्वच्छ हाइड्रोजन और अमोनिया उत्पादन की राह हुई आसान

हाइड्रोजन और अमोनिया दोनों के उत्पादन में बड़ी मात्रा में ऊष्मीय ऊर्जा की खपत)thermal energy consumption) होती है और ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन)greenhouse gas emissions) भी होता है।

By amalendu upadhyay | Thu, 30 Sep 2021

स्वच्छ ऊर्जा का स्रोत है हाइड्रोजन | Hydrogen is the source of clean energy

Clean hydrogen and ammonia production made easy by solar energy

नई दिल्ली, 30 सितंबर 2021: हाइड्रोजन स्वच्छ ऊर्जा का स्रोत है और अमोनिया उर्वरक उद्योग का आधार है। यही कारण है कि **हाइड्रोजन एवं अमोनिया के उत्पादन में उपयोग होने वाली फोटोकैटलिटिक प्रक्रियाओं (Photocatalytic processes used in the production of hydrogen and**

ammonia) की क्षमता बढ़ाने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। हाइड्रोजन और अमोनिया दोनों के उत्पादन में बड़ी मात्रा में ऊष्मीय ऊर्जा की खपत होती है और ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन भी होता है।

भारतीय शोधकर्ताओं को अकार्बनिक उत्प्रेरक में एक विशिष्ट संरचना विकसित करके सौर ऊर्जा से कम लागत में हाइड्रोजन और अमोनिया उत्पादन की क्षमता विकसित करने में सफलता मिली है।

What is photocatalysis used for?

शोधकर्ताओं ने इन दोनों रसायनों के उत्पादन में जिस तकनीक का उपयोग किया है, उसे फोटोकैटलिसिस के नाम से जाना जाता है। उनका कहना है कि फोटोकैटलिसिस से न केवल ऊर्जा और लागत की बचत होगी, बल्कि पर्यावरण को भी लाभ हो सकता है। फोटोकैटलिसिस से तात्पर्य किसी उत्प्रेरक की उपस्थिति में होने वाली फोटोरिएक्शन प्रक्रिया में होने वाली वृद्धि से है। वहीं, फोटोरिएक्शन एक ऐसी रासायनिक प्रतिक्रिया है, जिसमें कणों की ऊर्जा बढ़ाने के लिए प्रकाश या अन्य विद्युत चुम्बकीय विकिरण शामिल होते हैं।

यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), मंडी और योगी वेमना विश्वविद्यालय, आंध्र प्रदेश के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

अर्मेनिया के एक अग्रणी रसायन विज्ञानी जियाकोमो सियामिशियन ने बहुत पहले वर्ष 1921 में अपने एक शोध पत्र ***'द फोटोकैमिस्ट्री ऑफ द फ्यूचर'*** में उस दौर के वैज्ञानिकों के सामने रसायनों के उत्पादन में सूरज की रोशनी का उपयोग करने की परिकल्पना पेश की, जैसा कि प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में पौधे करते हैं। इस दिशा में कुछ सफलता 1970 के दशक में मिली, जब शोधकर्ताओं ने फोटोकैटलिस्ट्स नामक विशेष प्रकाशसक्रिय - सामग्री का उपयोग करके सूरज की रोशनी का लाभ लेकर रसायनों के उत्पादन की संभावना सामने रखी। इस तरह एक नये युग की शुरुआत हुई, जिसे अब फोटोकैटलिसिस युग कहते हैं।

इस दौर में, कई फोटोकैटलिस्ट्स की खोज की गई है, ताकि विभिन्न उद्देश्यों से प्रकाशसक्षम प्रतिक्रियाओं को - सफलतापूर्वक किया जाए। नये फोटोकैटलिस्ट्स की खोज के लिए आज भी फोटोकेमिकल संश्लेषण के कई क्षेत्रों में अध्ययन किए जा रहे हैं।

शोधकर्ताओं का कहना है कि इस अध्ययन में फोटोकैटलिसिस के मुख्य व्यवधानों को दूर किया गया है। इसमें प्रकाश ग्रहण करने की सीमित क्षमता, फोटोजेनरेटेड चार्ज का पुनर्संयोजन और रासायनिक प्रतिक्रियाएं जारी रखने के लिए सूर्य प्रकाश के प्रभावी उपयोग हेतु उत्प्रेरक सक्रिय साइट की आवश्यकता शामिल है।

उन्होंने 'डिफेक्ट इंजीनियरिंग' नामक प्रक्रिया से कम लागत वाले फोटोकैटलिस्ट, कैल्शियम टाइटेनेट के गुणों में सुधार किया है और दो प्रकाशचालित प्रतिक्रियाओं के माध्यम से स्वच्छ हाइड्रोजन और अमोनिया के उत्पादन - में उनके प्रभावी होने का प्रदर्शन है। डिफेक्ट इंजीनियरिंग के लिए नियंत्रण के साथ ऑक्सीजन वैकेंसीज़ को शामिल किया गया। ये ऑक्सीजन वैकेंसीज़ सतह की प्रतिक्रियाओं को बढ़ावा देने के लिए बतौर उत्प्रेरक सक्रिय साइट का कार्य करती हैं और इस तरह फोटोकैटलिटिक का कार्य प्रदर्शन बढ़ता है।

यह अध्ययन डॉवेंकट कृष्णन ., एसोसिएट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ बेसिक साइंसेज, आईआईटी, मंडी के नेतृत्व में किया गया है।

उन्होंने बताया कि “हमने पत्तियों द्वारा रोशनी ग्रहण करने की क्षमता से प्रेरित होकर यह अध्ययन किया है। हमने कैल्शियम टाइटेनेट में पीपल के पत्ते की सतह और आंतरिक त्रिआयामी सूक्ष्म संरचनाएं बनायी हैं, जिससे प्रकाश संचय का गुण बढ़ाया जा सके।” इस तरह प्रकाश ग्रहण करने की क्षमता बढ़ायी गई है। इसके अलावा, ऑक्सीजन वैकेंसीज़ के रूप में ‘डिफेक्ट’ के समावेश से फोटोजेनरेटेड चार्ज के पुनर्संयोजन की समस्या के समाधान में मदद मिली है।

वैज्ञानिकों ने डिफेक्ट इंजीनियर्ड फोटोकैटलिस्ट की संरचना और स्वरूप की स्थिरता का अध्ययन किया है और यह दिखाया है किया कि उनके फोटोकैटलिस्ट में उत्कृष्ट संरचनात्मक स्थिरता थी, क्योंकि पुनर्चक्रण अध्ययन के बाद भी इंजीनियर्ड ऑक्सीजन वैकेंसीज़ डिफेक्ट्स अच्छी तरह बरकरार थे। उन्होंने पानी से हाइड्रोजन और नाइट्रोजन से अमोनिया बनाने के लिए उत्प्रेरक का उपयोग किया। इसके लिए सूर्य की किरणों का उपयोग परिवेशी तापमान और दबाव पर उत्प्रेरक के रूप में किया गया है।

डॉइंजीनियर्ड त्रिआयामी फोटोकैटलिस्ट के स्मार्ट डिजाइन को -वेंकट कृष्णन का कहना है कि यह शोध डिफेक्ट . दिशा देगा, जो स्वच्छ ऊर्जा और पर्यावरण अनुकूल उपयोगों के लिए आवश्यक है।

जर्नल ऑफ मैटेरियल्स केमिस्ट्री में प्रकाशित हुआ है यह शोध

यह अध्ययन शोध पत्रिका ‘जर्नल ऑफ मैटेरियल्स केमिस्ट्री’ में प्रकाशित किया गया है। डॉवेंकट कृष्णन के . अलावा, इस अध्ययन में आईआईटी, मंडी के शोधकर्ता डॉआशीष कुमार और आईआईटी ., दिल्ली के डॉ . शाश्वत भट्टाचार्य एवं मनीष कुमार और योगी वेमना विश्वविद्यालय, आंध्र प्रदेश के डॉनवकोटेश्वर राव तथा . शंकर शामिल हैं। .वी.प्रोफेसर एम

(इंडिया साइंस वायर(

Topics: IIT Mandi, IIT Delhi, Yogi Vemana University, Catalytic, Solar, Hydrogen, Ammonia

V3 NEWS इण्डिया

सौर ऊर्जा द्वारा स्वच्छ हाइड्रोजन और अमोनिया उत्पादन की राह हुई आसान

30/09/2021 V3news India

नई दिल्ली, 30 सितंबर हाइड्रोजन स्वच्छ ऊर्जा का स्रोत है और अमोनिया उर्वरक उद्योग का आधार :(इंडिया साइंस वायर) है। यही कारण हैकि हाइड्रोजन एवं अमोनिया के उत्पादन में उपयोग होने वाली फोटोकैटलिटिक प्रक्रियाओं की क्षमता बढ़ाने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। हाइड्रोजन और अमोनिया दोनों के उत्पादन में बड़ी मात्रा में ऊष्मीय ऊर्जा की खपत होती है और ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन भी होता है।

भारतीय शोधकर्ताओं को अकार्बनिक उत्प्रेरक में एक विशिष्ट संरचना विकसित करके सौर ऊर्जा से कम लागत में हाइड्रोजन और अमोनिया उत्पादन की क्षमता विकसित करने में सफलता मिली है। शोधकर्ताओं ने इन दोनों रसायनों के उत्पादन में जिस

तकनीक का उपयोग किया है, उसे फोटोकैटलिसिस के नाम से जाना जाता है। उनका कहना है कि फोटोकैटलिसिस से न केवल ऊर्जा और लागत की बचत होगी, बल्कि पर्यावरण को भी लाभ हो सकता है।

फोटोकैटलिसिस से तात्पर्य किसी उत्प्रेरक की उपस्थिति में होने वाली फोटोरिएक्शन प्रक्रिया में होने वाली वृद्धि से है। वहीं, फोटोरिएक्शन एक ऐसी रासायनिक प्रतिक्रिया है, जिसमें कणों की ऊर्जा बढ़ाने के लिए प्रकाश या अन्य विद्युत चुम्बकीय विकिरण शामिल होते हैं। यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), मंडी और योगी वेमना विश्वविद्यालय, आंध्र प्रदेश के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

अर्मेनिया के एक अग्रणी रसायन विज्ञानी जियाकोमो सियामिशियन ने बहुत पहले वर्ष 1921 में अपने एक शोध पत्र 'द फोटोकैमिस्ट्री ऑफ द फ्यूचर' में उस दौर के वैज्ञानिकों के सामने रसायनों के उत्पादन में सूरज की रोशनी का उपयोग करने की परिकल्पना पेश की, जैसा कि प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में पौधे करते हैं। इस दिशा में कुछ सफलता 1970 के दशक में मिली, जब शोधकर्ताओं ने फोटोकैटलिस्ट्स नामक विशेष प्रकाशसक्रिय सामग्री का उपयोग करके सूरज की रोशनी का लाभ लेकर -रसायनों के उत्पादन की संभावना सामने रखी।

इस तरह एक नये युग की शुरुआत हुई, जिसे अब फोटोकैटलिसिस युग कहते हैं। इस दौर में, कई फोटोकैटलिस्ट्स की खोज की गई है, ताकि विभिन्न उद्देश्यों से प्रकाशसक्षम प्रतिक्रियाओं को सफलतापूर्वक किया जाए। नये फोटो कैटलिस्ट्स की खोज के - लिए आज भी फोटोकेमिकल संश्लेषण के कई क्षेत्रों में अध्ययनकिए जा रहे हैं। शोधकर्ताओं का कहना है कि इस अध्ययन में फोटोकैटलिसिस के मुख्य व्यवधानों को दूर किया गया है।

इसमें प्रकाश ग्रहण करने की सीमित क्षमता, फोटोजेनरेटेड चार्ज का पुनर्संयोजन और रासायनिक प्रतिक्रियाएं जारी रखने के लिए सूर्य प्रकाश के प्रभावी उपयोग हेतु उत्प्रेरक सक्रिय साइट की आवश्यकता शामिल है। उन्होंने 'डिफेक्ट इंजीनियरिंग' नामक प्रक्रिया से कम लागत वाले फोटोकैटलिस्ट, कैल्शियम टाइटेनेट के गुणों में सुधार किया है और दो प्रकाशचालित प्रतिक्रियाओं -के माध्यम से स्वच्छ हाइड्रोजन और अमोनिया के उत्पादन मे ं उनके प्रभावी होने का प्रदर्शन है।

डिफेक्ट इंजीनियरिंग के लिए नियंत्रण के साथ ऑक्सीजन वैकेंसीज़ को शामिल किया गया। ये ऑक्सीजन वैकेंसीज़ सतह की प्रतिक्रियाओं को बढ़ावा देने के लिए बतौर उत्प्रेरक सक्रिय साइट का कार्य करती हैं और इस तरह फोटोकैटलिटिक का कार्य प्रदर्शन बढ़ता है। यह अध्ययन डॉवेंकट कृष्णन ., एसोसिएट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ बेसिक साइंसेज, आईआईटी, मंडी के नेतृत्व में किया गया है। उन्होंने बताया कि "हमने पत्तियों द्वारा रोशनी ग्रहण करने की क्षमता से प्रेरित होकर यह अध्ययन किया है।

हमने कैल्शियम टाइटेनेट में पीपल के पत्ते की सतह और आंतरिक त्रिआयामी सूक्ष्म संरचनाएं बनायी हैं, जिससे प्रकाश संचय का गुण बढ़ाया जा सके।" इस तरह प्रकाश ग्रहण करने की क्षमता बढ़ायी गई है। इसके अलावा, ऑक्सीजन वैकेंसीज़ के रूप में 'डिफेक्ट' के समावेश से फोटोजेनरेटेड चार्ज के पुनर्संयोजन की समस्या के समाधान में मदद मिली है।

वैज्ञानिकों ने डिफेक्ट इंजीनियर्ड फोटोकैटलिस्ट की संरचना और स्वरूप की स्थिरता का अध्ययन किया है और यह दिखाया है किया कि उनके फोटोकैटलिस्ट में उत्कृष्ट संरचनात्मक स्थिरता थी, क्योंकि पुनर्चक्रण अध्ययन के बाद भी इंजीनियर्ड ऑक्सीजन वैकेंसीज़ डिफेक्ट्स अच्छी तरह बरकरार थे। उन्होंने पानी से हाइड्रोजन और नाइट्रोजन से अमोनिया बनाने के लिए उत्प्रेरक का उपयोग किया। इसके लिए सूर्य की किरणों का उपयोग परिवेशी तापमान और दबाव पर उत्प्रेरक के रूप में किया गया है।

डॉ. वेंकट कृष्णन का कहना है कि यह शोध डिफेक्ट-इंजीनियर्ड त्रिआयामी फोटो कैटलिस्ट के स्मार्ट डिजाइन को दिशा देगा, जो स्वच्छ ऊर्जा और पर्यावरण अनुकूल उपयोगों के लिए आवश्यक है। यह अध्ययन शोध पत्रिका 'जर्नल ऑफ मैटेरियल्स केमिस्ट्री' में प्रकाशित किया गया है। डॉ. वेंकट कृष्णन के अलावा, इस अध्ययन में आईआईटी, मंडी के शोधकर्ता डॉ. आशीष कुमार और आईआईटी, दिल्ली के डॉ. शाश्वत भट्टाचार्य एवं मनीष कुमार और योगी वेमना विश्वविद्यालय, आंध्र प्रदेश के डॉ. नवकोटेश्वर राव तथा प्रोफेसर एम.वी. शंकर शामिल हैं।

सौर ऊर्जा द्वारा स्वच्छ हाइड्रोजन और अमोनिया उत्पादन की राह हुई आसान

By Ram Bharose

सितम्बर 30, 2021 आईआईटी, केमिस्ट्री, हाइड्रोजन

स्वच्छ ऊर्जा का स्रोत है हाइड्रोजन

नई दिल्ली, 30 सितंबर 2021: हाइड्रोजन **स्वच्छ ऊर्जा का स्रोत** है और अमोनिया उर्वरक उद्योग का आधार है। यही कारण है कि **हाइड्रोजन एवं अमोनिया के उत्पादन में उपयोग होने वाली फोटोकैटलिटिक प्रक्रिया**ओं की क्षमता बढ़ाने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। हाइड्रोजन और अमोनिया दोनों के उत्पादन में बड़ी मात्रा में **ऊष्मीय ऊर्जा की खपत** होती है और **ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन** भी होता है।

भारतीय शोधकर्ताओं को अकार्बनिक उत्प्रेरक में एक विशिष्ट संरचना विकसित करके सौर ऊर्जा से कम लागत में हाइड्रोजन और अमोनिया उत्पादन की क्षमता विकसित करने में सफलता मिली है।

शोधकर्ताओं ने इन दोनों रसायनों के उत्पादन में जिस तकनीक का उपयोग किया है, उसे फोटोकैटलिसिस के नाम से जाना जाता है। उनका कहना है कि फोटोकैटलिसिस से न केवल ऊर्जा और लागत की बचत होगी, बल्कि पर्यावरण को भी लाभ हो सकता है। फोटोकैटलिसिस से तात्पर्य किसी उत्प्रेरक की उपस्थिति में होने वाली फोटोरिएक्शन प्रक्रिया में होने वाली वृद्धि से है। वहीं, फोटोरिएक्शन एक ऐसी रासायनिक प्रतिक्रिया है, जिसमें कणों की ऊर्जा बढ़ाने के लिए प्रकाश या अन्य विद्युत चुम्बकीय विकिरण शामिल होते हैं। यह अध्ययन भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी), मंडी और योगी वेमना विश्वविद्यालय, आंध्र प्रदेश के शोधकर्ताओं द्वारा किया गया है।

अर्मेनिया के एक अग्रणी रसायन विज्ञानी जियाकोमो सियामिशियन ने बहुत पहले वर्ष 1921 में अपने एक शोध पत्र ***'द फोटोकैमिस्ट्री ऑफ द फ्यूचर'*** में उस दौर के वैज्ञानिकों के सामने रसायनों के उत्पादन में सूरज की रोशनी का उपयोग करने की परिकल्पना पेश की, जैसा कि प्रकाश संश्लेषण प्रक्रिया में पौधे करते हैं। इस दिशा में कुछ सफलता 1970 के दशक में मिली, जब शोधकर्ताओं ने फोटोकैटलिस्ट्स नामक विशेष प्रकाश-सक्रिय सामग्री का उपयोग करके सूरज की रोशनी का लाभ लेकर रसायनों के उत्पादन की संभावना सामने रखी। इस तरह एक नये युग की शुरुआत हुई, जिसे अब फोटोकैटलिसिस युग कहते हैं। इस दौर में, कई फोटोकैटलिस्ट्स की खोज की गई है, ताकि विभिन्न उद्देश्यों से प्रकाश-सक्षम प्रतिक्रियाओं को सफलतापूर्वक किया जाए। नये फोटोकैटलिस्ट्स की खोज के लिए आज भी फोटोकेमिकल संश्लेषण के कई क्षेत्रों में अध्ययन किए जा रहे हैं।

शोधकर्ताओं का कहना है कि इस अध्ययन में फोटोकैटलिसिस के मुख्य व्यवधानों को दूर किया गया है। इसमें प्रकाश ग्रहण करने की सीमित क्षमता, फोटोजेनरेटेड चार्ज का पुनर्संयोजन और रासायनिक प्रतिक्रियाएं जारी रखने के लिए सूर्य प्रकाश के प्रभावी उपयोग हेतु उत्प्रेरक सक्रिय साइट की आवश्यकता शामिल है। उन्होंने 'डिफेक्ट इंजीनियरिंग' नामक प्रक्रिया से कम लागत वाले फोटोकैटलिस्ट, कैल्शियम टाइटेनेट के गुणों में सुधार किया है और दो प्रकाश-चालित प्रतिक्रियाओं के माध्यम से स्वच्छ हाइड्रोजन और अमोनिया के उत्पादन में उनके प्रभावी होने का प्रदर्शन है। डिफेक्ट इंजीनियरिंग के लिए नियंत्रण के साथ ऑक्सीजन वैकेंसीज़ को शामिल किया गया। ये ऑक्सीजन वैकेंसीज़ सतह की प्रतिक्रियाओं को बढ़ावा देने के लिए बतौर उत्प्रेरक सक्रिय साइट का कार्य करती हैं और इस तरह फोटोकैटलिटिक का कार्य प्रदर्शन बढ़ता है।

यह अध्ययन डॉ. वेंकट कृष्णन, एसोसिएट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ बेसिक साइंसेज, आईआईटी, मंडी के नेतृत्व में किया गया है। उन्होंने बताया कि "हमने पत्तियों द्वारा रोशनी ग्रहण करने की क्षमता से प्रेरित होकर यह अध्ययन किया है। हमने कैल्शियम टाइटेनेट में पीपल के पत्ते की सतह और आंतरिक त्रिआयामी सूक्ष्म संरचनाएं बनायी हैं, जिससे प्रकाश संचय का गुण बढ़ाया जा सके।" इस तरह प्रकाश ग्रहण करने की क्षमता बढ़ायी गई है। इसके अलावा, ऑक्सीजन वैकेंसीज़ के रूप में 'डिफेक्ट' के समावेश से फोटोजेनरेटेड चार्ज के पुनर्संयोजन की समस्या के समाधान में मदद मिली है।

वैज्ञानिकों ने डिफेक्ट इंजीनियर्ड फोटोकैटलिस्ट की संरचना और स्वरूप की स्थिरता का अध्ययन किया है और यह दिखाया है किया कि उनके फोटोकैटलिस्ट में उत्कृष्ट संरचनात्मक स्थिरता थी, क्योंकि पुनर्चक्रण अध्ययन के बाद भी इंजीनियर्ड ऑक्सीजन वैकेंसीज़ डिफेक्ट्स अच्छी तरह बरकरार थे। उन्होंने पानी से हाइड्रोजन और

नाइट्रोजन से अमोनिया बनाने के लिए उत्प्रेरक का उपयोग किया। इसके लिए सूर्य की किरणों का उपयोग परिवेशी तापमान और दबाव पर उत्प्रेरक के रूप में किया गया है।

डॉ. वेंकट कृष्णन का कहना है कि यह शोध डिफेक्ट-इंजीनियर्ड त्रिआयामी फोटोकैटलिस्ट के स्मार्ट डिजाइन को दिशा देगा, जो स्वच्छ ऊर्जा और पर्यावरण अनुकूल उपयोगों के लिए आवश्यक है।

जर्नल ऑफ मैटेरियल्स केमिस्ट्री में प्रकाशित हुआ है यह शोध

यह अध्ययन शोध पत्रिका 'जर्नल ऑफ मैटेरियल्स केमिस्ट्री' में प्रकाशित किया गया है। डॉ. वेंकट कृष्णन के अलावा, इस अध्ययन में आईआईटी, मंडी के शोधकर्ता डॉ. आशीष कुमार और आईआईटी, दिल्ली के डॉ. शाश्वत भट्टाचार्य एवं मनीष कुमार और योगी वेमना विश्वविद्यालय, आंध्र प्रदेश के डॉ. नवकोटेश्वर राव तथा प्रोफेसर एम.वी. शंकर शामिल हैं।

(इंडिया साइंस वायर)